तृतीय सेमेस्टर
Third Semester

जनांकिकी **एम.ए.ई.सी. - 605**

Demography **M.A.E.C. - 605**

विषय-सूची

खण्ड – 1 परिचय (Introduction)	**पृष्ठ संख्या 1-82**
इकाई 1- जनांकिकी- आशय, प्रकृति, क्षेत्र और महत्व (Demography- Meaning, Nature, Scope and Importance)	1-17
इकाई 2- माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त (The Malthusian Theory of Population)	18-38
इकाई 3- अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त (Optimum Theory of Population)	39-53
इकाई 4- जनांकिकी संक्रमण का सिद्धान्त (Theory of Demographic Transition)	54-67
इकाई 5- जनसंख्या वृद्धि के घटक एवं उनकी अन्तर्निर्भरता (Components of Population Growth and their interdependence)	68-82
खण्ड – 2 जनसंख्या की गुणवत्ता और मापन (Quality of Population and Measurement)	**पृष्ठ संख्या 83-153**
इकाई 6- जनसंख्या की गुणवत्ता की अवधारणा (Concept of Population Quality)	83-94
इकाई 7- जनसंख्या की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारक (Effective Factors of Population Quality)	95-105
इकाई 8- मापन 1. कुल जन्म-दर, प्रजनन दर, कुल प्रजनन दर, पुर्न उत्पादकीय दर, सकल पुनःउत्पादकीय दर, शुद्ध पुनःउत्पादकीय दर एवं अन्तर्सम्बन्ध (Measurement-1 Total Birth Rate, Fertility Rate, Total Fertility Rate, Reproductive Rate, Gross Reproductive Rate, Net Reproductive Rate and interconnection)	106-141

इकाई 9- मापन 2. कुल मृत्यु दर, शिशु मृत्यु दर, बाल मृत्यु दर, मातृत्व मृत्यु दर, जीवन-प्रत्याशा एवं अन्तर्सम्बन्ध (Measurement-2 Total Mortality Rate, Infant Mortality Rate, Child Mortality Rate Maternal Mortality Rate) 142-153

खण्ड – 3 जनसंख्या प्रक्षेपण एवं मानव संसाधन विकास (Population Projection and Human Resource Development) **पृष्ठ संख्या 154-230**

इकाई 10- जनसंख्या प्रक्षेपण- स्थाई, स्थैतिक एवं अर्ध-स्थैतिक जनसंख्या (Population Projection- Stable, Stationary and Quasi-stationary) 154-170

इकाई 11- जीवन सारणी, जन्म-मृत्यु सांख्यिकी,एवं लाजिस्टिक वक्र (Life Tables, Birth and Death Statistics and Logistic Curve) 171-186

इकाई 12- मानव संसाधन विकास (Human Resource Development) 187-209

इकाई 13- जनसंख्या एवं आर्थिक विकास (Population and Economic Development) 210-230

Suggested Readings:

1. Agarwal, S.N. (1972) ***India's population problem***, Tata Mcgraw Hill Co., Bombay.
2. Choubey, P.K. (2000) ***Population Policy in India***, Kanishk Publication, New Delhi.
3. Gulati, S.C. (1988) ***Fertility in India and Econometric Study of Metropolis***, Sage Publication, New Delhi**.**
4. Gulati, S.C. and Srinivasan, K. (1998) ***Basic Demographic Techniques and Applications***, Saga Publication, New Delhi.

इकाई-1 जनांकिकी- आशय, क्षेत्र प्रकृति और महत्व
(Demography- Meaning, Nature, Scope and Importance)

1.1 प्रस्तावना (Introduction)
1.2 उद्देश्य (Objective)
1.3 जनांकिकी का अर्थ या आशय (Meaning of Demography)
  1.3.1 संकुचित दृष्टिकोण (Narrow Approach)
  1.3.2 व्यापक दृष्टिकोण (Broad Approach)
1.4 जनांकिकी का क्षेत्र (Scope of Demography)
  1.4.1 जनांकिकी की विषय सामग्री (Subject-matter of Demography)
    1.4.1.1 जनसंख्या का आकार (Size of Population)
    1.4.1.2 जनसंख्या की संरचना अथवा गठन (Composition of Population)
    1.4.1.3 जनसंख्या का वितरण (Distribution of Population)
    1.4.1.4 जनसंख्या को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors affecting Population)
    1.4.1.5 जनसंख्या नीति (Population Policy)
1.5 जनांकिकी की प्रकृति (Nature of Demography)
  1.5.1 जनांकिकीय विश्लेषण की रीतियाँ (Methods of Demographic Analysis)
    1.5.1.1 व्यक्ति, विशिष्ट या सुक्ष्म जनांकिकी रीति (Micro Demographic Method)
    1.5.1.2 व्यापक जनांकिकी रीति (Macro Demographic Method)
1.6 जनांकिकी का अन्य शास्त्रों से सम्बन्ध (Relation of Demography to other disciplines)
  1.6.1 जीवशास्त्र एवं जनांकिकी (Biology & Demography)
  1.6.2 समाजशास्त्र एवं जनांकिकी (Sociology and Demography)
  1.6.3 भूगोल एवं जनांकिकी (Geography and Demography)
  1.6.4 अर्थशास्त्र एवं जनांकिकी (Economics and Demography)
  1.6.5 मानवशास्त्र एवं जनांकिकी (Anthropology and Demography)
1.7 जनांकिकी का महत्व (Importance of Demography)
1.8 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
1.9 सारांश (Summary)
1.10 शब्दावली (Glossary)
1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers for Practice Question)
1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References/Bibliography)
1.13 उपयोगी/सहायक पाठ्य सामग्री (Useful/Helpful Texts)
1.14 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1.1 प्रस्तावना

जनांकिकी के परिचयात्मक अध्ययन में आपका स्वागत है। आप अच्छी तरह से जानते हैं कि जनसंख्या के प्रति मनुष्य की जिज्ञासा उसके आविर्भाव के समय से ही रही है। आर्थिक विकास की तीव्रता से उन्मुख वर्तमान गतिशील संसार के समस्त देश अपने देश में उपलब्ध संसाधनों का यथासम्भव अनुकूलतम उपयोग कर मानव संसाधन के विकास के प्रति जागरूक हैं और अपने देश में उपलब्ध जनसंख्या के विषय में गुणात्मक एवं संख्यात्मक दृष्टिकोण से सम्यक जानकारी प्राप्त करना चाहते है। यही कारण है कि जनाकिकी आज अर्थशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों तथा शिक्षाविदों के अध्ययन का व्यापक अंग बन गया है। अन्य विज्ञानों की अपेक्षा अध्ययन की इस नयी शाखा के विस्तृत अध्ययन एवं विश्लेषण से पूर्व हमें इसका आशय (Meaning), प्रकृति (Nature), क्षेत्र (Scope) एवं महत्व (Importance) की जानकारी प्राप्त करना श्रेयस्कर होगा। आइये, सर्वप्रथम इसके आशय (Meaning) को जानने के पूर्व इस इकाई के अध्ययन का उद्देश्य हम समझें।

1.2 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई का उद्देश्य आपको निम्न विषय बिन्दुओं को समझने में मदद करना है, यथा

- ✓ जनांकिकी का अर्थ या आशय।
- ✓ संकुचित एवं व्यापक दृष्टिकोण से आशय
- ✓ जनांकिकी का क्षेत्र, विषय सामग्री, जनसंख्या का आकार, जनसंख्या की संरचना, अथवा गठन, जनसंख्या का वितरण।
- ✓ जनसंख्या को प्रभावित करने वाले तत्त्व कौन-कौन हैं?
- ✓ जनसंख्या नीति एवं अर्थ
- ✓ जनांकिकी की प्रकृति, व्यष्टि या सूक्ष्म जनांकिकी रीति, व्यापक, या समष्टि जनांकिकी रीति।
- ✓ जनांकिकी का अर्थशास्त्रों से सम्बन्ध यथा-जीवशास्त्र एवं जनांकिकी, समाजशास्त्र एवं जनांकिकी, भूगोल एवं जनांकिकी, अर्थशास्त्र एवं जनांकिकी, मानवशास्त्र एवं जनांकिकी।
- ✓ जनांकिकी के अध्ययन का क्या महत्व है?

1.3 जनांकिकी का अर्थ या आशय (Meaning of Demography)

'Demography' शब्द जिसका हिन्दी में अर्थ **जनांकिकी** होता है की उत्पत्ति ग्रीक भाषा से हुई है। **'Demography'** ग्रीक भाषा के दो शब्दों से मिलकर बना है। प्रथम शब्द है **Demas** (डिमास) जिसका अर्थ होता है- **मनुष्य (People)** और दूसरा शब्द है **Grapho** (ग्राफो) जिसका अर्थ होता है- **लिखना या अंकित करना (To draw or write about people)**। इस प्रकार Demography का शाब्दिक अर्थ हुआ- **मनुष्य या जनता के विषय में लिखना या अंकित करना हुआ। (To draw or write about people)**। जैसा कि **आशिले गुइलार्ड (Achille Guillard)** ने संक्षेप में कहा है ***"यह वह विज्ञान है, जो मनुष्यों की संख्या के विषय में अध्ययन करता है। (It is the science which studies the number of people)"***

'Demography' (जनांकिकी) शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग फ्रांसीसी विद्वान **आशिले गुइलार्ड (Achille Guillard)** द्वारा **1855** में अपनी पुस्तक **'Elements destatique human on demographic compare'** में किया गया। लेकिन एक विशिष्ट और स्वतंत्र विज्ञान के रूप में इसकी नींव इंग्लैण्ड के विद्वान **जॉन ग्रान्ट (John Graunt)** द्वारा 1662 में रखी जा चुकी थी। **जॉन ग्रान्ट** ने 1662 में अपनी

महत्वपूर्ण कृति जिसका नाम **'Natural and Political observation made upon mortality'** था द्वारा जनांकिकी का सूत्रपात कर दिया था। यही कारण है कि इन्हें जनांकिकी के जनक की संज्ञा प्राप्त है।

'Demography' शब्द के जन्म के पूर्व जनसंख्या सम्बन्धी अध्ययनों के लिए कुछ अन्य नाम भी समय-समय पर प्रचलित रहे हैं यथा **डिमोलाजी (Demology)** व **जनसंख्या का अध्ययन (Population studies)** आदि पर ये शब्द अधिक दिन तक नहीं चल सके, और न ही लोकप्रिय हो सके। अतः 1662 में **आशिले गुइलार्ड (Achille Guillard)** द्वारा ग्रीक भाषा का शब्द **'डिमोग्राफी (Demography)'** ही अधिक लोकप्रिय एवं प्रचलित है। इस प्रकार संक्षेप में शाब्दिक अर्थ से हमें demography का आशय विदित हो जाता है कि डिमोग्राफी जनसंख्या की विशेषताओं का अध्ययन और विश्लेषण करने वाला विज्ञान है।

विभिन्न विद्वानों ने 'जनांकिकी' से क्या आशय समझा है यह भी जानना आवश्यक है क्योंकि विद्वानों की दृष्टि अर्थ के समत्व को हमें ठीक से समझाता है। जनांकिकी की परिभाषाओं पर यदि दृष्टि डाली जाए तो स्पष्ट होता है कि समाजशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों एवं शिक्षाविदों द्वारा जनांकिकी की परिभाषा पर दिये गये विचारों में एकत्व नहीं है। कुछ विद्वानों ने इस शास्त्र के विषय-वस्तु को आधार मानकर परिभाषा दी है तो कुछ विद्वान ने इसकी वैज्ञानिकता, उपयोगिता एवं महत्ता को ध्यान में रखकर इसे परिभाषित किया है। एक अर्थशास्त्री जनसंख्या को श्रमपूर्ति के रूप में उपभोक्ता के रूप में देखता है और जनांकिकी के अध्ययन को विकास के अर्थशास्त्र का अंग मानता है। समाजशास्त्रियों द्वारा जनांकिकी में जनसंख्या के सामाजिक पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। जीव शास्त्री तथा भूगोलशास्त्री जनांकिकी में जैविक तथ्यों एवं भौगोलिक वितरण का अध्ययन करते हैं। यही कारण है कि किसी एक परिभाषा में सभी तत्त्वों को एक साथ समावेश कर प्रस्तुत करना कठिन है। अध्ययन सरलता की दृष्टि से विभिन्न जनांकिकीविदों द्वारा दी गई परिभाषा को आइये हम दो शीर्षकों में वर्गीकृत कर अध्ययन करते हैं

(अ) संकुचित दृष्टिकोण।

(ख) व्यापक दृष्टिकोण।

1.3.1 संकुचित दृष्टिकोण (Narrow Approach)

संकुचित दृष्टिकोण की परिभाषाओं में जनसंख्या के परिमाणात्मक पहलू को सम्मिलित किया जाता है तथा जीवन समंकों के अध्ययन एवं विश्लेषण में सांख्यिकीय पद्धतियों को महत्त्व प्रदान किया जाता है। प्रायः जनसंख्या को प्रभावित करने वाले पांच कारकों- प्रजनन, विवाह, मृत्यु, प्रवास एवं सामाजिक गतिशीलता का अध्ययन दो शीर्षकों जनसंख्या की संरचना अथवा गठन तथा समयानुसार परिवर्तन के अन्तर्गत किया जाता है। यह पांचों कारक जनसंख्या के आकार, प्रादेशिक वितरण, संरचना के निर्धारण में सदैव सक्रिय रहते हैं और जनसंख्या को गतिशील बनाये रखते हैं।

संकुचित दृष्टिकोण वाली जनांकिकी की प्रमुख परिभाषाएं निम्न हैं

आशिले गुइलार्ड (Achille Guillard) के अनुसार, ***"यह (जनांकिकी) जनसंख्या की सामान्य गति और भौतिक, सामाजिक तथा बौद्धिक दशाओं का गणितीय ज्ञान है। (It is a mathematical knowledge of the general movement and of physical, social, moral and intellectual conditions pf population…)"***

लिवासियर (Levasseur) के अनुसार, ***"यह (जनांकिकी) साधारणतया जनसंख्या का विज्ञान है जो मुख्यतया जन्मों, विवाहों, मृत्युओं तथा जनसंख्या के प्रवास की गति को सुनिश्चित करने के साथ ही साथ उन नियमों की खोज कराने का भी प्रयास करता है जो इन गतियों को नियमन करते हैं। (It is***

simply science of population, a science which ascertains movements- chiefly births, marriage, deaths and migrations of population and which endeavours to discover the lawa which control these movements.)"

बी. बेन्जामिन (B. Benjamin) के अनुसार, ***"जनांकिकी, मानवीय जनसंख्या का समूहों के रूप में वृद्धि, विकास एवं गतिशीलता से सम्बन्धित अध्ययन है। (Demography is concerned with the growth, development and movement of human population as aggregates.)"***

जी. सी. व्हिपल (G. C. Whipple) के अनुसार, ***"जनांकिकी वह विज्ञान है जो सांख्यिकीय-पद्धति द्वारा मानवीय-पीढ़ी, उसके विकास, ह्रास एवं मृत्यु आदि का व्यवस्थित अध्ययन करता है। (Demography is the science of human generation, growth, decay and death as studied by the statistical methods." -Whipple, G. C: Vital Statistics,)"***

जी. वान मैयर (G. Von Mayer) के अनुसार, "***जनांकिकी जनसंख्या की दशा एवं गतिशीलता का सांख्यिकीय विश्लेषण है, जिसके अन्तर्गत जनगणना (Census) एवं जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं (Vital processes) का पंजीयन किया जाता है तथा इस प्रकार से प्राप्त मौलिक जनगणना एवं पंजीकृत आँकड़ों के आधार पर जनसंख्या की दशा में गतिशीलता का सांख्यिकीय विश्लेषण किया जा सकता है। (Demography is the numerical analysis of the State and movements of human popu lation inclusive of census enumerations and registration of vital processes and of whatever qualitative statistical analysis can be made of the State and movements of population on the basis of fundamental census and registration data.)"*** इस परिभाषा में जनांकिकी को मानव-जीवन का लेखा-जोखा रखने वाली सांख्यिकीय पद्धति के रूप में विकसित किया गया है जिसके अन्तर्गत जनसंख्या और प्रमुख जैवकीय घटनाओं का नियमित रूप से अध्ययन एवं विश्लेषण होता रहता है।

पी. आर. कॉक्स (P. R. Cox) के शब्दों में ***"जनांकिकी वह विज्ञान है, जिसमें मानवीय जनसंख्या के अध्ययन में सांख्यिकीय प्रणालियों, मुख्यतः जनसंख्या के आकार, वृद्धि तथा ह्रास, जीवित व्यक्तियों की संख्या तथा अनुपात, किसी क्षेत्र विशेष में जन्मे तथा मृत ऐसे प्रकार्यों की माप, जैसे- प्रजननता, मृत्यु तथा विवाह दर है। (Demography is the science which denotes the study of human populations, by statis tical methods and deals primarily with the size and growth of dimunition, with the number and proportion of persons living, being born or dying with some area or region and with the measurement of related functions such as rates of fertility, mortality and marriage.)"***

1.3.2 व्यापक दृष्टिकोण (Broad Approach)

व्यापक दृष्टिकोण वाली परिभाषाओं में जनसंख्या के परिमाणात्मक अध्ययन एवं विश्लेषण के साथ-साथ गुणात्मक पहलू पर भी ध्यान दिया गया है। ऐसा करके जनांकिकी को एक विस्तृत सामान्य एवं व्यावहारिक विज्ञान के रूप में विकसित करने का प्रयास किया है। इससे सम्बन्धित कुछ परिभाषाएं इस प्रकार हैं:

हाउजर एवं डंकन (Hauser and Dancan) के अनुसार, ***"जनांकिकी जनसंख्या के आकार, क्षेत्रीय***

वितरण, गठन व उनमें परिवर्तन के घटक, जो कि जन्म, मृत्यु, क्षेत्रीय गमन (प्रवास) एवं सामाजिक गतिशीलता (स्तर में परिवर्तन) के रूप में जाने जाते हैं, का अध्ययन करता है।'' इस परिभाषा में जनसंख्या की संरचना के अन्तर्गत जनसंख्या के परिणात्मक तथा गुणात्मक दोनों पक्षों का समावेश है। परिभाषा में सामाजिक गतिशीलता के अध्ययन पर विशेष बल दिया गया है क्योंकि जनसंख्या के जन्म, मृत्यु से ही परिवर्तन नहीं आता वरन् सामाजिक स्तर में परिवर्तन जैसे अविवाहित से विवाहित हो जाना, विवाहित से विधुर/विधवा, बेरोजगार से रोजगार होना आदि भी महत्वपूर्ण कारक है जो जनसंख्या को प्रभावित करते हैं।

थाम्पसन एवं लेविस (Thompson and Lewis) के अनुसार, ***''इसकी (जनांकिकी) रूचि वर्तमान समय की जनसंख्या के आकार, संरचना तथा वितरण में ही नहीं बल्कि समय-समय पर इन पक्षों में हो रहे परिवर्तनों एवं इन परिवर्तन के कारणों में भी है।'*** उपरोक्त परिभाषा का उल्लेख दोनो अमेरिकन जनांकिकीविदों ने 1930 में अपनी पुस्तक **"Population Problems"** में किया था। इन्होंने अपने Population Study में जनसंख्या का आकार (Size of Population), जनसंख्या की संरचना (Composition of Population) एवं जनसंख्या का वितरण (Distribution of Population) को शामिल कर जनांकिकी के अध्ययन को व्यापक बनाने का प्रयास किया।

3. **प्रो0 डोनाल्ड जे. बोग (Prof. Donold J. Bogue)** - प्रो0 बोग अमेरिका के शिकागो विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र के प्राध्यापक रहे हैं। 1969 में प्रकाशित अपनी पुस्तक **Principles of demography** में जनांकिकी के आधारभत नियमों, प्रक्रियाओं एवं विषयवस्त की विधिवत् विवेचना प्रस्तुत की। प्रो0 बोग के अनुसार, ***''जनांकिकी पांच प्रकार की जनांकिकी प्रक्रियाओं, प्रजननशीलता, मृत्युकम, विवाह, प्रवास तथा सामाजिक गतिशीलता का परिणामात्मक अध्ययन है***। कुछ अन्य परिभाषाएं

1. **बर्कले (Barclay)** के अनुसार, ***''जनसंख्या के आंशिक चित्रण को कभी-कभी जनांकिकी के रूप में जाना जाता है तथा इसमें कुछ विशिष्ट प्रकार के समंकों के द्वारा निरूपित व्यक्तियों का समग्र दृष्टिकोण से अध्ययन किया जाता है। जनांकिकी का सम्बन्ध समूह व्यवहार से होता है न कि किसी व्यक्तिगत व्यवहार से।''***

2. **स्पेंगलर एवं डंकन (Spengler and Duncan)** के अनुसार, ***''बहुत से अन्य विषयों की भांति जनांकिकी भी अपने में विविध विषयों को समेटे हुए है, परन्तु आज इसका क्षेत्र समन्वित ज्ञान के निकाय तक ही सीमित है जो कुल जनसंख्या तथा उसमें परिमार्जन करने वाले तत्वों से सम्बन्धित है। इन तत्वों के अन्तर्गत समुदायों का आकार, जन्म, विवाह तथा मृत्यु दरें, आयु संरचना तथा प्रवास को सम्मिलित किया जाता है।''***

3. **विक्टर पेट्रोव (Victor Petrov)** के अनुसार, ***''जनांकिकी वह विज्ञान है जो जनसंख्या की संरचना तथा आवागमन का अध्ययन करता है।''*** उपर्युक्त परिभाषाओं से हम जनांकिकी का अर्थ या आशय को व्यापक रूप में जान गये हैं कि जनांकिकी के अन्तर्गत जनसंख्या के समस्त निर्धारक तत्वों तथा उनके परिणामों का अध्ययन किया जाता है। इसके अन्तर्गत जनसंख्या के परिमाणात्मक तथा गुणात्मक दोनों ही पक्षों का अध्ययन व विश्लेषण किया जाता है।

1.4 जनांकिकी का क्षेत्र (Scope of demography)

जनांकिकी के छात्र के रूप में इस तथ्य से आप परिचित हैं कि जनांकिकी एक गतिशील विज्ञान है। अतः इसके क्षेत्र में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ0 जॉन मेनार्ड कीन्स ने कहा है कि क्षेत्र (Scope) के अध्ययन में तीन बातें शामिल होना चाहिए

1. सम्बन्धित शास्त्र (जनांकिकी) की विषय सामग्री
2. सम्बन्धित शास्त्र (जनांकिकी) की प्रकृति या स्वभाव
3. सम्बन्धित शास्त्र (जनांकिकी) का अन्य शास्त्रों (या विज्ञानों) से सम्बन्ध

1.4.1 जनांकिकी की विषय सामग्री

जनांकिकी के विषय में अध्ययन करने पर आपको ज्ञात हो गया है कि जनांकिकी की सर्वसम्मत या सर्वमान्य परिभाषा देना बहुत की कठिन है। इसके क्षेत्र और विषय सामग्री का कोई सर्वसम्मत तथ्य प्राप्त नहीं है। इस सन्दर्भ में दो दृष्टिकोण है यथाव्यापक दृष्टिकोण- जिसके अन्तर्गत प्रमुख रूप से स्पेंग्लर (Spangler), वॉन्स (Vance), राइडर (Ryder), लोरिमेर (Lorimer) तथा मूरे (Moore) आदि के विचारों को सम्मिलित किया जा सकता है। दूसरा दृष्टिकोण संकुचित दृष्टिकोण- जिसके अन्तर्गत प्रमुख रूप में हाउजर एवं डंकन (P.H. Houser and D. Duncan), बर्कले (Barclay), थाम्पसन तथा लेविस (Thompson and Lewis) व आइरीन टेउबर (Irene Teauber) आदि के विचारों को सम्मिलित किया जा सकता है।

वर्तमान समय में जनांकिकी विज्ञान की व्यापकता एवं उपादेयता के आधार पर इस शास्त्र की विषय सामग्री को विद्वानों ने निम्न पांच भागों में विभाजित किया है

1. जनसंख्या का आकार (Size of Population)
2. जनसंख्या की संरचना अथवा गठन (Composition of Population)
3. जनसंख्या का वितरण (Distribution of Population)
4 जनसंख्या को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors Influencing Change in Population)
5. जनसंख्या नीति (Population Policy)।

आइये क्रमबद्ध रूप में उपर्युक्त पांचों बिन्दुओं का अध्ययन करते हैं।

1.4.1.1 जनसंख्या का आकार (Size of Population)

किसी समय, किसी स्थान विशेष में रहने वाली मानव समुदाय की सम्पूर्ण जनसंख्या को उस स्थान विशेष की जनसंख्या का आकार कहा जाता है। कहने में तो यह आसान लगता है लेकिन ऐसा है नहीं। यह एक जटिल प्रक्रिया के अन्तर्गत आता है। जनसंख्या का आकार जानने के लिए पहले स्थान (Place), समय (Time) तथा व्यक्ति (Person) को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाता है उसके बाद पंजीकरण (Registration) अथवा निदर्शन (Sample) अथवा जनगणना (Census) के आधार पर जनसंख्या के आकार का आकलन किया जाता है। इस प्रक्रिया में मात्र आकार (Size) ही जान लेना पर्याप्त नहीं होता वरन् जनसंख्या में परिवर्तन- वृद्धि, हास या स्थिरता भी जानना आवश्यक होता है। परिवर्तन के साथ परिवर्तन की दर एवं भविष्य में उसके वृद्धि या घटने की दर का अनुमान भी लगाया जाता है। इसके अलावा इस तथ्य का विश्लेषण करना आवश्यक होता है कि जनसंख्या परिवर्तन के लिए कौन-कौन से कारक महत्वपर्ण हैं? ये कारक प्रमख । रूप से जन्म (Natality), मृत्यु (Mortality) तथा प्रवास (Migration) है जिन्हें जनांकिकी प्रक्रिया के रूप में अध्ययन किया जाता है। एक ओर जनसंख्या जहाँ जैविकीय तत्वों से प्रभावित होती है तो दूसरी ओर उस देश के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक तत्व भी महत्वपूर्ण हो जाते हैं। यही कारण है कि जनांकिकीविद् को जीवविज्ञानी, समाजशास्त्री अर्थशास्त्री, गणितज्ञ और सांख्यिकीवेत्ता की भी भूमिका निभानी पड़ती है।

1.4.1.2 जनसंख्या की संरचना अथवा गठन (Composition of Population)

जनसंख्या की संरचना अथवा गठन का अध्ययन करना जनांकिकी का दूसरा महत्वपूर्ण विषय है। जनसंख्या का आकार जहां परिमाणात्मक व्याख्या करता है। वहीं जनसंख्या की संरचना से गुणात्मक विश्लेषण संभव हो पाता है। इसके अध्ययन से हमें उस स्थान विशेष की जनसंख्या की विशेषताओं की स्पष्ट जानकारी हो पाती है। दो स्थानों

की जनसंख्या का आकार समान होने पर भी उनमें आयु, लिंग, जाति, धर्म तथा निवास आदि की भिन्नता हो सकती है। सामाजिक संरचनागत विकास, भिन्नता, समानता, विशेषता ऐसे महत्वपूर्ण तथ्य सामने आते हैं जो गुणात्मक व्याख्या को स्पष्ट समझाते हैं। इस तरह जनसंख्या का आकार व्यष्टिगत व्याख्या (Macro Analysis) करता है तो जनसंख्या की संरचना व्यक्तिगत व्याख्या (Micro Analysis) करता है। **प्रो0 हाले** के अनुसार जनसंख्या की संरचना के अध्ययन से प्रमुख चार उद्देश्य प्राप्त होते हैं

1. इससे विभिन्न जनसमुदाय में परस्पर तुलना (Inter Population Composition) संभव हो पाता है।
2. किसी समाज में श्रमशक्ति (Labour Force) का अनुमान लगाया जा सकता है।
3. जनसंख्या संरचना को जानने के बाद ही जनांकिकी प्रक्रिया को समझ सकते हैं। यथा जन्म दर एवं मृत्यु दर जानने के लिए आयु संरचना तथा लैंगिक संरचना जानना आवश्यक है।
4. संरचना सम्बन्धी सूचनाओं द्वारा सामाजिक व्यवस्था और उसमें संभावित परिवर्तन का अनुमान लगा सकते हैं।

जनांकिकी विशेषताओं के आधार पर जनसंख्या का वर्गीकरण (Classification) किया जा सकता है जैसे

•आयु संरचना (Age Composition)

लैंगिक संरचना (Sex Composition) -

कार्यशील जनसंख्या (Working Population)

• Taifach upeifa (Marital Status) -

शैक्षणिक स्तर (Educational Standard) -

धर्मानुसार या जाति के अनुसार वितरण (Distribution by Religion or Caste)

आयु एवं लैंगिक वितरण जनांकिकी में अत्यन्त महत्वपूर्ण कारक हैं। यदि समाज में बच्चों की संख्या अधिक होगी तो मृत्यु दर अधिक होगी, श्रमशक्ति कम होगी। फलतः राष्ट्रीय विकास में, उत्पादन में योगदान नगण्य होगा। वृद्ध अधिक होंगे तब भी यही बात होगी। लेकिन युवा शक्ति अधिक है तो उसका योगदान विशिष्ट होगा। इसके अलावा ग्रामीण व शहरी जनसंख्या, वैवाहिक स्थिति, कार्य, व्यवसाय, शिक्षा तथा धर्म जाति ऐसे घटक हैं जो जन्मदर, मृत्युदर एवं प्रवास को प्रभावित कर जनसंख्या को निर्धारित करते हैं। जनसंख्या की संरचना एवं जनसंख्या की प्रक्रिया परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। **थाम्पसन तथा लेविस** के शब्दों में, ***"जनसंख्या की संरचना तथा उसकी मृत्युदर, प्रजनन दर तथा शुद्ध प्रवास के मध्य परस्पर अनुक्रमात्मक (Reciprocal) सम्बन्ध पाया जाता है। अर्थात् सरचना, आयु तथा लिग की सरचना के माध्यम से प्रभावित करती हैं।"***

जनसंख्या की संरचना के सम्बन्ध में डंकन तथा **हाउजर** कहते हैं, ***"जनसंख्या संरचना के अन्तर्गत जनसंख्या की आयु, लिंग तथा वैवाहिक स्थिति जैसे पहलू ही नहीं आते, बल्कि स्वास्थ्य स्तर, बौद्धिक स्तर, प्रशिक्षण से प्राप्त तकनीकि की क्षमता आदि गुण भी शामिल किये जाते हैं।'***

1.4.1.3 जनसंख्या का वितरण (Distribution of Population)

जनसंख्या का वितरण, जनांकिकी के अध्ययन क्षेत्र का तीसरा महत्वपूर्ण भाग है। इसके अन्तर्गत यह अध्ययन किया जाता है कि विश्व अथवा उसके किसी भू–भाग में जनसंख्या का वितरण कैसा है? तथा इस वितरण में परिवर्तन का स्वरूप कैसा है? प्रो0 डोनाल्ड जे0 बोग का मत है कि किसी देश की जनसंख्या का अध्ययन दो प्रकार से किया जा सकता है

1. समग्रात्मक विधि (Aggregative Method) - इस विधि के अनुसार देश को एक समग्र इकाई मानकर उसकी जनसंख्या के आकार, गठन व परिवर्तनों का अनुमान लगाया जाता है।
2. वितरणात्मक विधि (Distribution Method) - इस विधि के अनुसार किसी भी देश के छोटे-छोटे खण्डों की जनसंख्या के आकार व गठन का अध्ययन किया जाता है तदोपरान्त निष्कर्ष निकालना चाहिए। वास्तव में दोनों

विधियाँ एक दसरे के विरोधी नहीं वरन् पूरक हैं।

जनसंख्या सम्बन्धी आंकड़े दो आधार पर एकत्रित किये जाते हैं

(1) भौगोलिक इकाई यथामहाद्वीप, रेगिस्तानी क्षेत्र, पर्वतीय तथा सम्पूर्ण विश्व का आधार मानकर तथा

(2) प्रशासनिक इकाई यथा- देश, प्रदेश, जिला, शहर, ब्लॉक, नगर निगम, जिला परिषद, नगरपालिका, ग्राम व मुहल्ले आदि को आधार मानकर। थाम्पसन तथा लेविस ने विश्व की जनसंख्या के वितरण का अध्ययन करने के लिए नगरीकरण तथा औद्योगीकरण के आधार पर तीन श्रेणियाँ बनाई है

1. उन्नत नगरीय औद्योगिक क्षेत्र (Advanced Urban Industrial Region)
2. नव-नगरीय औद्योगिक क्षेत्र (New-urban Industrial Region)
3. नगरीय एवं औद्योगिक विकास से पूर्व की स्थिति जनसंख्या के वितरण का अध्ययन जनघनत्व के आधार पर आसानी से किया जा सकता है। विभिन्न उद्देश्यानुसार घनत्व जानकर जनसंख्या का दबाव का अनुमान कर सकते हैं, जैसे- जनघनत्व, कृषि घनत्व, आर्थिक घनत्व आदि। जन घनत्व के निर्धाय तत्वों को तीन भागों में बांट सकते हैं

(i) भौगोलिक और प्राकृतिक कारक- जलवायु, वनस्पति, भू–संरचना पर्वत, पठार, मैदान, हिम क्षेत्र, वन क्षेत्र, रेगिस्तानी क्षेत्र इत्यादि।

(ii) सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक कारक- उद्योग, व्यापार, व्यवसाय, शहरीकरण, रोजगार आदि।

(iii) जनांकिकीय कारक- इसके अन्तर्गत जन्मदर, मृत्युदर तथा प्रवास दर को सम्मिलित
किया जाता है।

1.4.1.4 जनसंख्या को प्रभावित करने वाले तत्व (Factors Influencing Change in Population)

उपर्युक्त अध्ययन से हम यह जान गये है कि विभिन्न तत्वों से प्रभावित जनसंख्या में सतत् परिवर्तन होता रहता है। इन परिवर्तनों की गति, दिशा, दशा के अनुसार भावी जनसंख्या का अनुमान लगाना जनांकिकी के अध्ययन क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। जनांकिकी प्रवृत्तियों के साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक परिवर्तन भी जनसंख्या की संरचना तथा आकार को प्रभावित करते हैं।

1.4.1.5 जनसंख्या नीति (Population Policy)

आप समझ गये होंगे कि आधुनिक जगत् में जनसंख्या नीति जनांकिकी के अध्ययन क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण अंग बन गया है। जनसंख्या नीति, जनांकिकी के प्रति सरकारी चिन्तन एवं निर्धारण नियंत्रण हेतु दस्तावेज होता है। जनसंख्या का आकार देश के साधनों के अनुरूप कैसे सामंजस्य बैठाये, वृद्धि या हास की दर कितनी रहे? कैसे परिमाणात्मक या गुणात्मक सुधार लाया जाय इस पर जनसंख्या नीति में विचार प्रस्तुत होता है। परिवार कल्याण या नियोजन प्रभावी ढंग से क्रियान्वित हो? कौन-कौन से नियंत्रण हेतु सरकारी उपाय हो, प्रोत्साहन या दण्ड का स्वरूप कैसा हो इत्यादि नियोजन की विशद व्याख्या नीति में निरूपित रहती है। विश्व जनसंख्या सम्मेलनों एवं क्षेत्रीय जनसंख्या अध्ययन केन्द्रों में जनसंख्या सम्बन्धी निम्न विषयों का अध्ययन व विश्लेषण किया जाता है जिसे जनांकिकी क्षेत्र (Scope of Demography) के अन्तर्गत सम्मिलित कर सकते हैं यथा

1. प्रजनन शक्ति एवं प्रजनन दर
2. मृत्युक्रम एवं अस्वस्थता
3. विवाह एवं वैवाहिक दरें-प्रस्थिति
4. आयु तथा लैंगिक संरचना
5. आवास एवं प्रवास
6. प्रक्षेपण (Population Projection)

7. जनसंख्या एवं साधन
8. जनसंख्या का आकार, गठन एवं वितरण
9. परिवार कल्याण, नियोजन
10. जनांकिकीय मापन
11. जनांकिकीय शोध
12. प्रशिक्षण
13. श्रमपूर्ति के जनांकिकी पहलू।
14. जनसंख्या के गुणात्मक स्तम्भ- शिक्षा, आवास, जीवन शैली
15. जनसंख्या एवं सामाजिक आर्थिक विकास

1.5 जनांकिकी की प्रकृति (Nature of Demography)

आइये जनांकिकी की प्रकृति समझने में आपकी मदद करें- यह (जनांकिकी) वह विज्ञान है जो मानव जनसंख्या के विषय में अध्ययन करता है। चूंकि यह मनुष्य की संख्या एवं मानवीय विशेषताओं का अध्ययन करता है अतः यह सतत परिवर्तनशील प्रवृत्तियों का अध्ययन करता है क्योंकि किसी भी क्षेत्र यथा- देश, राज्य, जिला, नगर या गांव की जनसंख्या जन्म एवं अन्तः प्रवास (In-migration) से बढ़ती है और मृत्यु और वाह्य प्रवास (Out-migration) से घटती है। इस प्रक्रिया में जनसंख्या के निर्धारक तत्व लैंगिक स्वरूप, आयु- संरचना, वैवाहिक प्रस्थिति, शैक्षिक प्रगति, श्रमिकों का वर्गीकरण व आर्थिक क्रियाओं में भी परिवर्तन होता रहता है। इससे सम्बन्धित समस्त सूचनाएं या आंकड़े तभी मिलते है जब सतत् अधिकार सम्पन्न संस्थायें इस कार्य को सावधानीपूर्वक पंजीकरण करते हुए करती हैं।

जनांकिकी विज्ञान है। वैज्ञानिकता ही इसकी प्रकृति है। क्रमबद्ध अध्ययन ही विज्ञान है। विज्ञान ज्ञान का वह क्रमबद्ध रूप है जो किसी विशेष घटना या तथ्य के कारण तथा परिणामों के पारस्परिक सम्बन्ध को प्रकट करता है। यहां स्मरणीय है कि तथ्यों को केवल इकट्ठा करना ही विज्ञान नहीं है बल्कि विज्ञान होने के लिए तथ्यों का क्रमबद्ध रूप में एकत्रित करना, उनका वर्गीकरण व विश्लेषण करना और उसके फलस्वरूप कुछ नियमों एवं सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना होता है। संक्षेप में आइये जानते हैं कि विज्ञान होने के लिए निम्न बातों का ज्ञान होना आवश्यक है

1. ज्ञान का अध्ययन क्रमबद्ध होना चाहिए।
2. विज्ञान के अपने नियम और सिद्धान्त होने चाहिए।
3. यह सिद्धान्त कारण और परिणाम के सम्बन्ध के आधार पर निर्मित होने चाहिए।
4. ये नियम सार्वभौमिक रूप से सत्य होने चाहिए। जनांकिकी को एक विज्ञान माना जाता है जिसके पक्ष में निम्न तर्क दिये जाते हैं

1. वैज्ञानिक तकनीकि का प्रयोग- जनांकिकी में अध्ययन की वैज्ञानिक तकनीकि का प्रयोग किया जाता है। इसमें तथ्यों का संकलन प्रश्नावली एवं अनुसूची के माध्यम से किया जाता है तथा तथ्यों के विश्लेषण द्वारा सामान्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जाता है।
2. तथ्यपरक अध्ययन- जनांकिकी के अन्तर्गत जनगणना की सहायता से जनसंख्या का तथ्यपरक अध्ययन किया जाता है। जनगणना में जनसंख्या की वस्तुगत गणना की जाती है।
3. कारण-परिणाम- इसके अन्तर्गत कारण–परिणाम सम्बन्धों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाता है।
4. सार्वभौमिकता- इसके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों की सत्यता सार्वभौमिक होती है।
5. सत्यता का परीक्षण- जनांकिकी सिद्धान्तों की सत्यता का परीक्षण किया जा सकता है।
6. पूर्वानुमान- जनांकिकी विधियों के विश्लेषणात्मक अध्ययन से भविष्य की घटनाओं का पूर्वानुमान लगाया जा

सकता है। जनांकिकी एक स्थैतिक विज्ञान (Static Science) नहीं है अपितु प्रावैगिक विज्ञान है। इसमें एक अवधि के अन्तर्गत जनसंख्या में होने वाले परिवर्तनों तथा भविष्य में जनसंख्या के परिवर्तनों का अनुमान लगाया जाता है। चूंकि यह समय एवं परिवर्तनों का अध्ययन करता है। अत: यह प्रावैगिक विज्ञान (Dynamic Science) है। अन्ततः इस तरह कहा जा सकता है कि जनांकिकी न केवल सैद्धान्तिक विज्ञान है वरन् इसे व्यावहारिक विज्ञान की भी संज्ञा प्रदान की जा सकती है।

1.5.1 जनांकिकीय विश्लेषण की रीतियां (Techniques of Demographic Analysis)

जनांकिकी के अन्तर्गत जनसंख्या की स्थिति तथा उसमें होने वाले परिवर्तनों के माप का अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाता है। जनांकिकी के सभी तत्व गतिशील होते हैं तथा इनमें निरन्तर परिवतेन होता रहता है फलतः निरन्तर आंकड़े इकट्ठा करना, वर्गीकरण, सम्पादन, विश्लेषण होता रहता है। सामान्यतया, जनांकिकी के अध्ययन हेतु दो प्रमुख रीतियों से किया जाता है- (1) विशिष्ट रीति (2) व्यापक रीति।

1.5.1.1 व्यक्ति, विशिष्ट या सूक्ष्म जनांकिकी रीति (Micro Demographic Method)

इस रीति के अन्तर्गत किसी देश के व्यष्टि या विशिष्ट समूहों, घटकों तथा उनसे सम्बन्धित समस्याओं एवं घटनाओं का अध्ययन किया जाता है। इस विश्लेषण में संरचना का अध्ययन महत्वपूर्ण होता है। सूक्ष्म या व्यष्टि विश्लेषण की सहायता से एक सीमित क्षेत्र की जनांकिकीय विशेषताओं का गहनता से अध्ययन करना सम्भव हो जाता है। अनुसन्धान की दृष्टि से यह विश्लेषण अत्यन्त उपयोगी है क्योंकि इसकी सहायता से किसी छोटे से क्षेत्र की सम्यक जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

1.5.1.2 व्यापक या समष्टि जनांकिकीय रीति (Macro Demographic Method)

व्यापक या समष्टि विश्लेषण जनांकिकीय रीति के अन्तर्गत किसी देश के विभिन्न समुदायों एवं क्षेत्रों की जनांकिकीय घटनाओं को पृथक-पृथक करके सामूहिक रूप से अध्ययन किया जाता है। इससे विभिन्न देशों की जनांकिकीय स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करने में सहायता मिलती है। यही कारण है कि संयुक्त राष्ट्र संघ ने विश्व के समस्त देशों से जनगणना (Census) को एक ही समय से सम्बन्धित करने का आग्रह किया है। इस रीति से जनसंख्या की वृद्धि-दर, जन्म-दर, मृत्यु-दर, विवाह की दर, जीवन तालिका, जनसंख्या पिरामिड, राष्ट्रीय जनसंख्या नीति का विश्लेषण आसान हो जाता है। इस रीति से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर तुलनात्मक अध्ययन सहज हो जाता है। जनांकिकीय विश्लेषण के लिए दोनों रीतियों का प्रयोग आवश्यक है वास्तव में उपर्युक्त दो रीतियाँ भिन्न-भिन्न अवश्य हैं लेकिन दोनों अन्तरविरोधी नहीं वरन् एक दूसरी के पूरक हैं। विश्लेषण के लिए एक ही रीति नहीं वरन् दोनों रीतियों का प्रयोग जनांकिकी के लिए श्रेयस्कर होगा। इस दृष्टि से यदि यह कहा जाय कि इन दोनों दृष्टिकोणों से तथ्य का सम्मिलित अध्ययन विषय के ज्ञान को पूर्णता प्रदान करता है तो गलत न होगा। अमेरिकी जनांकिकीविद् थाम्पसन एवं लेविस ने अपनी पुस्तक Population problems में स्पष्ट किया है कि जनसंख्या के विभिन्न पदों के म अध्ययन को जनसंख्या अध्ययन (Population study) कहा जाता है। "इसकी (जनांकिकी की) रूचि केवल वर्तमान जनसंख्या के आकार, संरचना तथा वितरण में ही नहीं, बल्कि समय-समय पर इन पहलुओं में होने वाले परिवर्तनों तथा इन परिवर्तनों के कारकों में भी है।"।

1.6 जनांकिकी का अन्य शास्त्रों से सम्बन्ध

(Relationship of Demography with other disciplines) मानव समुदाय के आकार, संरचना एवं वितरण का विश्लेषण करने वाला शास्त्र जनांकिकी है। मानव समुदाय के अध्ययन के अन्य अनेक पहलू हैं, जैसे- सामाजिक, जैविकीय, भौगोलिक, आर्थिक आदि। इन सभी शास्त्रों का अध्ययन विषय मनुष्य ही है। अन्तर केवल इतना है कि प्रत्येक शास्त्र मनुष्य की केवल एक प्रकार की भूमिका को ही अपना विषयवस्तु बनाता है। आर्थिक पहलू का अध्ययन करने वाला शास्त्र अर्थशास्त्र, प्राकृतिक पर्यावरण से सम्बन्ध रखने वाला शास्त्र भूगोल, समाज

में मनुष्य की भूमिका का अध्ययन समाजशास्त्र में होता है। अतः यह स्वाभाविक है कि प्रत्येक शास्त्र का एक दूसरे शास्त्र के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। ये सभी विषय एक दूसरे की सीमाओं में अतिक्रमण भी करते रहते हैं क्योंकि किसी भी सामाजिक विज्ञान को सदैव के लिए स्थिर सीमाओं के अन्तर्गत बांध नहीं सकते। सामाजिक विज्ञान की उपयोगिता इसी बात में है कि उसमें अन्तरशास्त्रीय दृष्टिकोण अपनाया जाता है। जनांकिकी अपनी विषय सामग्री के अध्ययन के लिए अन्य विज्ञानों पर उतना ही आश्रित है जितना अन्य विज्ञान जनांकिकी पर। रसियन जनांकिकीविद **Victor Petrov** लिखते हैं कि, ***"चुंकि सभी सामाजिक घटनाओं का विषय जनसंख्या होता है, अतः जनांकिकी सभी सामाजिक एवं अन्य विज्ञानों का स्पर्श करती है।"***

अब तक के अध्ययन से हमें स्पष्ट हो जाता है कि जनांकिकी का क्षेत्र व्यापक होता जा रहा है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से जनांकिकी अपने विषय सामग्री के अध्ययन के लिए जिन अन्य ज्ञान की शाखाओं से सम्बन्धित है तथा उससे सम्बन्धित जिन तथ्यों का अध्ययन करती है, वे निम्न हैं

1.6.1 जीवशास्त्र एवं जनांकिकी (Zoology and Demography)

जनसंख्या जीवशास्त्रीय तथ्य है अतः जनांकिकी के अन्तर्गत जनसंख्या के निम्न जीवशास्त्रीय तथ्यों का अध्ययन किया जाता है

1. जन्मदर एवं मृत्यु दर
2. जन्मदर एवं मृत्यु दर में परिवर्तन
3. जन्मदर एवं मृत्यु दर की प्रवृत्तियां
4. लैंगिक अनुपात
5. आयु संरचना
6. स्वास्थ्य स्तर
7. जनसंख्या वृद्धि आदि

1.6.2 समाजशास्त्र एवं जनांकिकी (Sociology and Demography)

जनसंख्या एक सामाजिक प्रमेय है। इस दृष्टि से समाजशास्त्र के अन्तर्गत जनसंख्या सम्बन्धी निम्नलिखित तथ्यों का अध्ययन किया जाता है

1. पारिवारिक संरचना
2. समाज एवं समुदाय
3. धर्म का स्वरूप
4. शिक्षा का स्तर
5. जाति व्यवस्था
6. संस्कृति एवं संस्कार
7. प्रवास के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण

जनांकिकी अध्ययन के समाजशास्त्रीय पहलू को स्पष्ट करते हुए **F.W. Notestein** ने कहा है कि, ***"जब एक जनसंख्याशास्त्री जन्मदर के आंकड़ों को व्यक्त करता है तब उसकी याद रखना पड़ता है कि प्रत्येक संख्या एक पुत्र था पुत्री की अभिव्यक्ति करती है, जब मृत्यु के आंकड़े सामने आते हैं तब उसे याद रखना पड़ता है कि प्रत्येक संख्या एक दुखद घटना को व्यक्त करती है; जब वह विवाह का अध्ययन करता है तो उसे याद रखना पड़ता है कि उसका सम्बन्ध मानव समाज की एक आधारभूत संस्था से है।'***

1.6.3 भूगोल एवं जनांकिकी (Geography and Demography)

जनसंख्या परिस्थितिशास्त्रीय घटना है। भूगोल एवं जनांकिकी को **एकरमैन** ने बड़े ही अच्छे ढंग से व्यक्त किया है।

"आधुनिक भूगोलवेत्ताओं ने पृथ्वी के सांस्कृतिक पहलू को लिया है। उन्होंने इसको जातीय एवं जैविक सिद्धान्तों तथा स्थान से सम्बन्धित कर विश्लेषित करने का प्रयास किया तथा सांस्कृतिक पहलुओं को भौतिक एवं जीवन सम्बन्धी विशेषताओं से सह-सम्बन्धित किया। इसके लिए विभिन्न क्षेत्रों में जनसंख्या के वितरण का अध्ययन किया। यह वितरण का पहलू जनांकिकी तथा भूगोल दोनों में शामिल है।" इस दृष्टि से भूगोल विषय में जनसंख्या की निम्न विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है

1. भौगोलिक वितरण।
2. भौगोलिक वितरण के कारण।
3. नगरीकरण।
4. प्रवास।

1.6.4 अर्थशास्त्र एवं जनांकिकी

अर्थशास्त्र के अन्तर्गत जनसंख्या सम्बन्धी निम्न विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है

1. जनसंख्या और रोजगार की स्थिति।
2. जनसंख्या का जीवन स्तर।
3. आय का स्तर।
4. जनसंख्या और खाद्य सामग्री का सम्बन्ध।
5. जनसंख्या की गतिशीलता।
6. श्रम-पूंजी का निर्माण।
7. विनियोजन।
8. उत्पादकता।
9. जनसंख्या की कार्यक्षमता।
10. श्रमशक्ति नियोजन (Man Power Planning)

जनांकिकी एवं अर्थशास्त्र के सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करते हुए **जे0जे0 स्पेंग्लर** ने कहा है, ***"सामान्यतया जनसंख्या परिवर्तन को मात्र समंकों में परिवर्तन मान लिया जाता है जबकि जनसंख्या के परिवर्तन समस्त आर्थिक प्रणाली में परिवर्तन लाते हैं। अतः जनांकिकी चरों में आर्थिक चरों की परस्पर निर्भरता को ध्यान में रखना अनिवार्य है, यह भी आवश्यक है कि उन कारणों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए जो कि आर्थिक स्तरों में इस प्रकार परिवर्तन लाते हैं कि उनसे जनांकिकी घटकों में भी परिवर्तन आते हैं।"*** **प्रो० पीगू** के अनुसार, ***"मनुष्य आर्थिक क्रियाओं का उद्देश्य भी है और उत्पत्ति का साधन भी। इस तरह मनुष्य ही समस्त आर्थिक क्रियाओं का सृजक भी है तथा साध्य भी है।"*** उपर्युक्त विद्वानों के मतों से स्पष्ट है कि जनांकिकी तथा अर्थशास्त्र एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है।

1.6.5 जनांकिकी एवं मानवशास्त्र (Demography and Anthropology)

जनांकिकी तथा मानवशास्त्र में भी बहुत निकट का सह-सम्बन्ध पाया जाता है। आक्सफोर्ड यूनिवर्सल डिक्शनरी ने जनांकिकी को मानवशास्त्र के एक अंग के रूप में परिभाषित किया है - Demography is that branch of anthroplogy which treats of the statistics of births, deaths diseases etc. **प्रो0 हैरीसन एवं वायसी** ने मानवशास्त्र की जनांकिकी के लिए उपयोगिता को व्यक्त करते हुए लिखा है, ***"प्राचीन अवशेषों का अध्ययन करने की मानव विकास शास्त्र की विधि जनांकिकी के लिए बहुत उपयोगी है क्योंकि इसके माध्यम से हम इतिहास के गर्त में छपी हई सभ्यताओं से सम्बन्धित अनेक जनांकिकीय सूचनायें एकत्र कर लेते हैं।*** इन दोनों शास्त्रों में जिन समान विषयों का अध्ययन होता है, वे निम्न हैं:

अन्तः प्रजनन का अध्ययन (study of Inbreeding)
सजातीय प्रजनन (Indogamous Breeding)
3. समवर्गीय सहवास एवं प्रजनन (Assortative Mating and Breeding)
4. उत्परिवर्तन (Mutation)
5. जीन–प्रवाह (Gene flow)
इस तरह मानव शास्त्र तथा जनांकिकी एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है।

1.7 जनांकिकी का महत्त्व (Importance of Demography)

आप क्या जनांकिकी महत्त्व से परिचित हैं? इसका तात्पर्य यह है कि इस विषय का अध्ययन क्यों किया जाता है? इस विषय के अध्ययन से क्या लाभ है? व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में जनांकिकी की क्या उपयोगिता है इन्हीं प्रश्नों का उत्तर इस शीर्षक के अन्तर्गत जानने का प्रयास करेंगे।

जनांकिकी जनसंख्या के व्यवस्थित विवरण की वैज्ञानिक शाखा है। जनसंख्या समाज की महत्त्वपूर्ण इकाई है। सामाजिक एवं व्यक्तिगत दोनों दृष्टिकोण से इसका ज्ञान उपयोगी है। जनसंख्या के महत्त्व एवं समस्याओं के प्रति विश्व का ध्यान प्राचीन काल से ही मनुष्य के मस्तिष्क में रहा है लेकिन लोगों ने गम्भीरता से विचार करना तब शुरू किया जब 1798 में प्रो0 राबर्ट माल्थस ने जनसंख्या समस्या को एक वृहद् दृष्टिकोण से देखा और उसकी गंभीरता के प्रति दुनिया को सचेत किया। अपने विचारों में माल्थस ने जनसंख्या वृद्धि एवं खाद्यान्न उत्पादन में गणितीय विधाओं का परिचय देते हुए संभावित असन्तुलन की ओर संकेत करते हुए सचेत किया कि प्रकृति ने खाने की मेज पर निश्चित लोगों को बुलाया है। यदि उसे ज्यादा लोग खाने आयेंगे तो लोग भूखों मरेंगे। माल्थस के विचार, क्रान्तिकारी थे फलतः विवादों के कारण उपेक्षित रहे। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री इस बात के लिए भी निश्चित रहे कि अर्थव्यवस्था में सदैव पूर्ण रोजगार रहता है और अतिउत्पादन हो ही नहीं सकता। यदि होता है तो मात्र अल्पकालिक होगा जो स्वतः संतुलित हो जायेगा। परन्तु माल्थस के बाद की शताब्दी के तीसरे दशक में लोगों को विश्व में आयी सर्वव्यापी मन्दी ने लोगों को पुनः सोचने पर मजबूर कर दिया कि व्यापार चक्रों की खोज किया जाय। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र को मंदी ने ध्वस्त कर दिया। केन्द्रीय युग का सूत्रपात होता है जिसमें हस्तक्षेप की नीति पर मन्दी से उबरने के लिए बल दिया गया। जॉन मेनार्ड कीन्स ने स्पष्ट किया कि मंदी का प्रमुख कारण प्रभावपूर्ण मांग (effective demand) में भी अर्थात् उपभोगत वस्तुओं की मांग में कमी होना भी है। इसी समय से जनसंख्या के संरचनात्मक परिवर्तनों का अध्ययन किया जाने लगा।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अविकसित देशों ने विकास की गति तीव्र करने के लिए नियोजन पद्धति का आश्रय लिया। भारत ने भी पंचवर्षीय योजना को विकास का माध्यम बनाया। इन देशों के सम्मुख बढ़ती जनसंख्या नियोजन के सम्मुख बाधा बनकर खड़ी हो गयी। नियोजन से इन राष्ट्रों को लाभ तो हुआ। स्वास्थ्य सेवाओं की दशाओं में सुधार हुआ। मृत्यु-दर में कमी आयी लेकिन उच्च जन्म दर की स्थिति यथावत् रही। बढ़ती जनसंख्या ने विकास को निगल लिया। बढ़ती जनसंख्या ने उपभोग तो बढ़ाया लेकिन बचत की दर घटने से विनियोग एवं पूंजी निर्माण की गति को प्रभावित कर विकास रोक दिया। इन अविकसित देशों में मंदी की स्थिति उतनी भयानक नहीं रही जितनी विकसित देशों में रही क्योंकि यहां सीमान्त उपभोग प्रवृति वैसे ही अधिक रहती है। फलतः प्रभावी मांग (effective demand) की समस्या उतनी नहीं रही। विकसित देशों की स्थिति भिन्न रही। युद्ध में अत्यधिक प्रभावित तो अवश्य हुए लेकिन शिक्षा का स्तर एवं तकनीकि प्रौद्योगिकी के ज्ञान ने उन्हें शीघ्र ही संभलने में मदद भी किया। फलतः विकसित राष्ट्रो ने कम समय में ही विकास की पूर्व स्थिति प्राप्त कर ली जबकि अविकसित देश उतना अपेक्षित विकास की गति नहीं प्राप्त कर सके। इस तरह विकसित राष्ट्रों के यहां जनांकिकी का गुणात्मक पक्ष को अधिक महत्ता मिली जबकि अविकसित राष्ट्रों के यहाँ परिमाणात्मक पद के अध्ययन से महत्ता अधिक मिली।

आज जनांकिकी विज्ञान व्यावहारिक कार्यक्रमों में अपनी उल्लेखनीय भमिका निभा रहा है। **प्रो0 अशोक मित्रा** के अनुसार ***जनांकिकी के महत्व का अध्ययन करने की दृष्टि से समस्त अर्थव्यवस्थाओं को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है:***

1.7.1 विकसित अर्थव्यवस्थाएँ (Developed Economies)

विकसित राष्ट्रों में जनसंख्या की कुल मांग को पूर्ण रोजगार स्तर पर बनाये रखने का एक साधन माना जाता है। विकसित देशों में समस्या पूर्ति दक्ष थी नहीं वरन् मांग पक्ष की होती है। अतः वहां बढ़ती हुई जनसंख्या वस्तुओं एवं सेवाओं के प्रभावपूर्ण मांग में वृद्धि करती है जिससे उत्पादन एवं रोजगार में वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त जनसंख्या वृद्धि से श्रमशक्ति में वृद्धि हो जाती है जिससे उद्योगों में अतिरिक्त क्षमता का उपयोग किया जा सकता है। यही कारण है कि इन अर्थव्यवस्थाओं में जनसंख्या के गुणात्मक पक्ष : जनस्वास्थ्य; आवास, बीमा, शिक्षा, सामाजिक सुविधाएं आदि पर विशेष ध्यान दिया जाता है। **प्रो0 अशोक मित्रा** के ***अनुसार "विकसित बाजार अर्थव्यवस्थाओं में जनांकिकीय समंको का उपयोग सामान्यतया श्रमिकों की संख्या तथा उसकी विशेषताओं का उत्पादन फलन तथा बचत फलन से सम्बद्ध परिवारों की संख्या तक सीमित रहता है।"*** इस तरह स्पष्ट है कि विकसित देशों के आर्थिक विकास के मॉडल में जनांकिकी चर को महत्व प्रदान किया जाता

1.7.2 नियंत्रित एवं केन्द्रीय नियोजित अर्थव्यवस्थाएं

साम्यवादी एवं समाजवादी अर्थव्यवस्थाओं में जनसंख्या न तो मांग को प्रभावित करती है और न ही उपभोग की प्रकृति एवं दिशा को, क्योंकि इन अर्थव्यवस्थाओं में उपभोक्ता की स्वयं की अपनी स्वतंत्र सत्ता नही होती है। परन्तु इन राष्ट्रों में कार्यशील जनसंख्या, महिलाओं का आर्थिक क्रियाओं में योगदान, राष्ट्रीय आय, प्रति व्यक्ति आय, प्रजननशीलता, मृत्युक्रम, परिवार का आकार, स्वास्थ्य, शिशु-शिक्षा इत्यादि सभी जनांकिकी के ही अवयव हैं।

1.7.3 विकासशील अर्थव्यवस्थाएं (Developing Economies)

प्रो0 अशोक मित्रा का विचार है कि जनांकिकी विकासशील देशों में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। आंकड़ों में बाजीगरी से अभी बहुत उपयोगी परिणाम नहीं प्राप्त हो पा रहे हैं परन्तु इससे विषय की महत्ता कम नहीं हुई है। विकासशील राष्ट्रों में श्रम नियोजन एवं आर्थिक नियोजन में जनांकिकी की महत्ता अत्यधिक बढ़ी है। आर्थिक विकास इस प्रकार की अर्थव्यवस्थाओं में प्रमुख लक्ष्य होता है। फलतः आर्थिक विकास की प्रवृत्ति, व्यावसायिक ढांचा, ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या वृद्धि की दर, परिवार नियोजन, खाद्य समस्या, बेरोजगारी समस्या, श्रमिक समस्याएं एवं आर्थिक नीतियों का अध्ययन महत्त्वपूर्ण हो गया है। जनांकिकी के महत्त्व की विवेचना करते हुए **किंग्सले डेविस** ने लिखा है कि, ***"मानव समाज के आधार को समझने में जनांकिकी महत्त्वपूर्ण उपागम है।" प्रो0 थाम्पसन एवं लेविस ने लिखा है कि जनांकिकी एक ज्ञानदायक विज्ञान ही नहीं वरन् फलदायक विज्ञान भी है।"*** उन्होंने तीन लाभों का उल्लेख किया है।

1. जनांकिकी के अध्ययन से व्यक्ति यह समझ सकता है कि किस प्रकार समाजशास्त्रीय क्षेत्र में आंकड़ों का प्रयोग कर निष्कर्ष निकाला जाता है।

2. विश्व जनसंख्या; उसकी प्रवृत्तियों एवं महत्त्वपूर्ण जनांकिकीय चरों व सूचनाओं का ज्ञान प्राप्त होता है।

3 अध्ययनकर्ता अनेकानेक जनांकिकीय तकनीकि घटकों जैसे- प्रजननता, पुनरुत्पादन-दर, मृत्यु-दर, जन्मदर व जीवन प्रत्याशा आदि को समझ जाता है। जनांकिकी के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए ओरगेन्स्की लिखते हैं कि, "यदि आप यह जानना चाहते हैं कि राष्ट्र कितनी तेजी से अपने आर्थिक आधुनिकीकरण में प्रगति कर रहा है, तब कृषि, उद्योग तथा सेवाओं में कार्यरत जनसंख्या के प्रतिशत अनुपात पर दृष्टि डालिए। उनके रहन-सहन के स्तर को जानने के लिए जीवित रहने की प्रत्याशा पर दृष्टिपात कीजिए, क्योंकि इससे अच्छा जीवन स्तर का क्या माप हो सकता है कि कोई सभ्यता प्रत्येक व्यक्ति को जीवन के कितने वर्ष देती है। यदि आप राष्ट्रीय संस्कृति की अवस्था जानना

चाहते हैं तो साक्षरों की संख्या तथा उनके शैक्षिक स्तर इस विषय में कुछ जानकारी दे सकेंगे और जातीय भेदभाव के लिए जातिवार व्यवसायों, आय-स्तरों, शिक्षा तथा जीवन अवधि के स्तरों को देखिए। इसी प्रकार राष्ट्रीय शक्ति के अनुमान का आधार जनसंख्या के आकार के साथ-साथ आय तथा व्यवसाय की संख्याओं से लगाया जा सकता है।" वास्तव में एक प्रबुद्ध और कर्त्तव्यशील नागरिक के लिए जनसंख्या का ज्ञान आवश्यक है। आज के विश्व की अनेक गम्भीर समस्याओं में से तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या की आधार भूत समस्या है। इसके समाधान व अन्य क्षेत्रों में इसके सह-सम्बन्ध को जानने के लिए जनांकिकी का अध्ययन और ज्ञान समय की एक बहुत बड़ी मांग है।

1.8 अभ्यास प्रश्न

1. संकुचित दृष्टिकोण के अनुसार जनांकिकी से क्या आशय है?
2. व्यापक दृष्टिकोण के अनुसार जनांकिकी का क्या आशय है?
3. जनांकिकी की विषय सामग्री में किन-किन तत्त्वों का अध्ययन होता है? __
4. "जनांकिकी की वैज्ञानिकता ही इसकी प्रकृति है" क्या यह सही है?
5. जनांकिकी का अन्य किन-किन शास्त्रों से गहन सम्बन्ध है?
6. जनांकिकी के बढ़ते महत्व को रेखांकित करें।
7. जनसंख्या नीति से क्या आशय है?

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र 1-Demography, कहाँ के दो शब्दों से मिलकर बना है?

क- जर्मन

ख- इण्डोजर्मन

ग- इंग्लोइडियन

घ– ग्रीक

प्र 2-व्यापक दृष्टिकोण के अनुसार जनांकिकी का आशय बताने वाले जनांकिकीविद् हैं

क- आशिले गुइलार्ड

ख– थाम्पसा एवं लेविस

ग– जी.सी. ठिप्पल

घ– पी.आर. कॉक्स

प्र 3-जनसंख्या को प्रभावित नहीं करने वाले तत्त्व कौन हैं?

क- जन्म-दर

ख- मृत्यु-दर

ग- प्रवास

घ- व्याकरण

1.9 सारांश

प्रस्तुत इकाई सं0 01 में जनांकिकी से क्या आशय है, उसका क्षेत्र, प्रकृति और महत्त्व का अध्ययन किया गया है।

जनांकिकी के अर्थ का आशय स्पष्ट करने में इसके आंग्ल भाषा के शब्द Demography जो ग्रीक शब्द है की व्याख्या की गई है। उसके विकास के साथ-साथ विद्वानों के विचारों का भी अध्ययन आपने किया है और स्पष्ट हुआ कि जनांकिकी-जनसंख्या की विशेषताओं का अध्ययन और विश्लेषण करने वाला विज्ञान है। इसके संकुचित और व्यापक दृष्टिकोण को भी व्याख्या से आप परिचित हुए हैं। इससे सम्बन्धित जनांकिकी विदों के विचार महत्त्वपूर्ण हैं। जनांकिकी के क्षेत्र (Scope of demography) अध्ययन में इसकी विषय सामग्री, प्रकृति या स्वभाव एवं अन्य शास्त्रों से इसका सम्बन्ध किस प्रकार का है की भी व्याख्या आपने समझी है। विषय सामग्री के यन में जनसंख्या का आकार, संरचना अथवा गठन, वितरण, जनसंख्याओं को प्रभावित करने वाले तत्त्व एवं जनसंख्या नीति महत्त्वपूर्ण बिन्दु के रूप में आपको दिखायी पड़े हैं। जनांकिकी की प्रकृति का स्वभाव के अध्ययन में यह पाया गया है कि जनांकिकी विज्ञान की कसौटी पर खरा उतरता है अतः विज्ञान है। यह न केवल सैद्धान्तिक विज्ञान है वरन् इस व्यावहारिक विज्ञान भी माना जाता है। इसके अध्ययन में विश्लेषण की Micro demographic method एवं Macro demographic method दोनों का प्रयोग होता है यह अपने देखा है। इस जनांकिकी विज्ञान का सम्बन्ध विभिन्न शास्त्रों से है यथा- जीवशास्त्र, समाजशास्त्र, भूगोल, अर्थशास्त्र एवं मानवशास्त्र। अनांकिकी के बढ़ते महत्त्व को विकसित अर्थव्यवस्थओं, नियंत्रित एवं केन्द्रीय नियोजित अर्थव्यवस्थाओं एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के रूप में भी इसका अध्ययन आपने किया है।

1.10 शब्दावली

- Demography का हिन्दी में अर्थ जनांकिकी है,जिसकी उत्पत्ति ग्रीक भाषा Demos एवं Grapho से हुआ है जिसका अर्थ होता है लिखना या अंकित करना (To draw or write about people). ***"यह वह विज्ञान है जो मनुष्यों की संख्या के विषय में अध्ययन करता है"***- **Achille Guillard**.
- **जनांकिकी का अर्थ संकुचित दृष्टिकोण व्यापक दृष्टिकोण** - इसकी परिभाषाओं में जनसख्या सम्मिलित किया जाता है तथा जीवन समंको के अध्ययन एवं विश्लेषण में सांख्यिकी पद्धतियों को महत्त्व प्रदान किया जाता है। इसकी परिभाषाओं में जनसंख्या के परिमाणात्मक अध्ययन एवं विश्लेषण के साथ-साथ गुणात्मक पहलू पर भी ध्यान दिया जाता है|
- **जनांकिकी का क्षेत्र (Scope of demography)** इसमें तीन तथ्यों का अध्ययन सम्मिलित
- जनांकिकी विषय सामग्री (2) इसकी प्रकृति या स्वभाव एवं (3) - जनांकिकी का अन्य शास्त्रों से सम्बन्ध किस प्रकार का है।
- **जनसंख्या का आकार (Size of population)-** किसी समय किसी स्थान विशेष में रहने वाली मानव समुदाय की सम्पूर्ण जनसंख्या को उस स्थान विशेष की जनसंख्या आकार कहा जाता है। यह परिमाणात्मक व्याख्या करता है।
- **जनसंख्या की संरचना(Composition of population)** इसमें स्थान विशेष की जनसंख्या की आयु, लिंग, जाति, धर्म एवं समानता विभिन्नता का अध्ययन होता है। यह गुणात्मक व्याख्या करता है।
- **जनसंख्या नीति** जनांकिकी के प्रति सरकारी चिन्तन एवं निर्धारण- नियंत्रण हेतु महत्त्वपूर्ण दस्तावेज
- **जनांकिकी की प्रकृति-** वैज्ञानिकता ही इसकी प्रकृति है।
- **सूक्ष्म या व्यष्टि जनांकिकी रीति** -सीमित क्षेत्र की जनांकिकी विशेषताओं का गहनता से अध्ययन रीति।
- **व्यापक या समष्टि से जनांकिकी रीति** किसी देश के विभिन्न समुदायों एवं क्षेत्रों की सामूहिक गहनता

अध्ययन रीति

1.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्त र 1- घ, 2- ख, 3- घ।

1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- Dr. Premi, M.K., Ramanamma, A., Bambawale, Usha,. An Introduction to social demography, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Appleman, Philip (ed.) Thomos Robert Malthus: An Essay on the Principle of Population, New York: W.W. Norton and Co., Inc., 1976.
- Carr- Saunders, A.M., World Population: Past Growth and Present Trends, Oxford: Clarendon Press, 1936.
- Coale, Ansley J. and Edgar M. Hoover, Populationi Growth and Economic development in low income countries, Princeton University Press, 1958.
- Thompson, Warren S. and David T. Lewis: Population Problems; New York: Mc Graw Hill Book Co. 1976.

1.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

- डॉ0 मिश्रा, जे0पी0, जनांकिकी, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा। • डॉ0 बघेल, डी0एस0, जनांकिकी, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
- डॉ0 पन्त, जीवन चन्द्र, जनांकिकी, गोयल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ। • अशोक कुमार, जनसंख्या, एक समाज वैज्ञानिक अध्ययन, हिन्दी ग्रंथ अकादमी प्रयाग,
- उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ। • डॉ0 मलैया, के.सी., जनसंख्या शिक्षा, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

1.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. जनांकिकी के संकुचित एवं व्यापक दृष्टिकोण के अनुसार इसके आशय को स्पष्ट करें।
2. जनांकिकी के क्षेत्र, विषय सामग्री एवं प्रकृति की संक्षिप्त व्याख्या समझाइये।
3. जनांकिकी के जिन शास्त्रों से गहन सम्बन्ध है उसकी व्यापकता का उल्लेख करें।
4. आधुनिक युग में जनांकिकी के बढ़ते महत्त्व की व्याख्या विस्तार से करें।

इकाई-2 माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त
(Population Theory of Malthus)

2.1 प्रस्तावना
2.2 उददेश्य
2.3 माल्थस से पूर्व जनसंख्या सम्बन्धी विचारकों का चिन्तन
2.4. माल्थस- परिचय
2.5 प्रेरक तत्व
- 2.5.1 इंग्लैण्ड की आर्थिक स्थिति
- 2.5.2 औद्योगिक क्रान्ति
- 2.5.3 वणिकवादी प्रकृतिवादी अर्थशास्त्रियों के विचार
- 2.5.4 विलियम गाडविन
- 2.5.5 अन्य समकालीन विचारकों का प्रभाव

2.6. माल्थस का जनसंख्या सिद्धांत।
- 2.6.1 मान्यताएं
- 2.6.2 जनसंख्या ज्यामितीय अनुपात से बढ़ती है
- 2.6.3 खाद्य सामग्री अंकगणितीय अनुपात से बढ़ती है
- 2.6.4 जनसंख्या एवं खाद्य सामग्री में असन्तुलन
- 2.6.5 जनसंख्या पर प्रतिबन्ध
  - 2.6.5.1 प्राकृतिक अवरोध
  - 2.6.5.2 प्रतिबन्धात्मक अवरोध
- 2.6.6 माल्थस के सिद्धान्त की मार्शल द्वारा व्याख्या
- 2.6.7 सिद्धान्त की आलोचना

2.7. सिद्धान्त का मूल्यांकन/सिद्धान्त की व्यावहारिकता
2.8 माल्थस का सिद्धान्त एवं भारत
2.9 नव माल्थसवाद
2.10 अभ्यास प्रश्न
2.11 सारांश
2.12 शब्दावली
2.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.15 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.16 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

थामस राबर्ट माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त के अध्ययन में आपका स्वागत है। जनसंख्या की समस्या एक गंभीर एवं ज्वलन्त समस्या है। यह समस्या किसी एक देश का महाद्वीप की न होकर अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन गयी है। जनसंख्या की संख्या गणना में आपकी भी गणना हुई है। क्या आप जानना नहीं चाहेगे कि जनसंख्या की भी कोई समस्या होती है। जनसंख्या का कोई सिद्धान्त भी ऐसा है जो महत्वपूर्ण एवं लोकप्रिय सिद्धान्त है। इस लोकप्रिय सिद्धान्त के प्रतिपादक थामस राबटे माल्थस ही तो नहीं है। जन की समस्या प गंभीर, सुनियोजित एवं व्यवस्थित विचारों के प्रतिपादक प्रो0 माल्थस के क्या विचार हैं? कौन-कौन से ऐसे तत्व रहे हैं जिनसे प्रभावित होकर प्रो0 माल्थस ने इस विषय पर चिन्तन किया! जनसंख्या के निर्धारक तत्त्व कौन-कौन है? माल्थस ने जनसंख्या न बढ़ने देने पर क्या विचार संस्तुत किया है ? क्या इनके विचार पूर्ण, सर्वकालिक एवं सभी देशों पर लागू हैं ? इस इकाई के अध्ययन के द्वारा उपर्युक्त सभी बातों को जानने में आप सक्षम हो जायेंगे। महत्वपूर्ण विषय पर गंभीर चिन्तन, विषय को समझने में सहजता और सरलता प्रदान करता है।

2.2 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई का उद्देश्य निम्न विषयक बिंदुओं को समझने में मदद करना। यथा

- ✓ जनसंख्या सिद्धान्त के प्रतिपादक थामस रार्बट माल्थस से परिचित होना,
- ✓ माल्थस को प्रभावित करने वाले प्रेरक तत्व,
- ✓ माल्थस के जनसंख्या सिद्धांत का पर्ण विचार,
- ✓ जनसंख्या वृद्धि को रोकने के माल्थस के विचार,
- ✓ जनसंख्या सिद्धांत की आलोचना, मूल्यांकन एवं व्यावहारिकता
- ✓ भारत में माल्थस के सिद्धान्त की स्वीकार्यता,
- ✓ नवमाल्थसवाद सम्बन्धी विचारों को जानना।

2.3 माल्थस से पूर्व जनसंख्या सम्बन्धी विचारकों का चिन्तन

जनसंख्या के सम्बन्ध में माल्थस एवं माल्थस के बाद के आधुनिक युग में स्पष्ट चिन्तन पर्याप्त रूप से मिलते हैं लेकिन प्राचीन एवं मध्यकाल में विद्वानों के संगठित क्रमबद्ध एवं स्पष्ट विचार सुलभ नहीं हैं। प्राचीन साहित्यिक एवं धार्मिक ग्रन्थों, वेद-पुराणों, उपनिषदों एवं स्मृतियों में बड़े परिवार के अनेक दृष्टान्त वर्णित हैं। लेकिन इसका यह आशय नहीं है इन ग्रन्थों में बड़े परिवार रखने का प्रोत्साहन था। अनियंत्रित एवं उन्मुक्त प्रजनन को प्रोत्साहन देना समाज में कल्याणकारी नहीं माना गया। आधुनिक युग के विचारों की झलक इन साहित्यों में यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं। प्राचीन भारत की वर्णाश्रम व्यवस्था इसी ओर पर्याप्त संकेत करती है। मनुष्य के **'शतायु भव'** के अवधारणा को 25-25 वर्षों के चार अवस्थाओं में जीवन के व्यवस्थित विकास को स्पष्ट करती है। पहला पचीस वर्ष ब्रह्मचर्य, दूसरा पचीस गृहस्थ, तीसरा पचीस वानप्रस्थ तो अंतिम अवस्था सन्यास में विभाजित करती है। सामाजिक वैज्ञानिकों ने शिक्षा-दीक्षा एवं विवाह व गृहस्थी के मध्य स्पष्ट रेखा खींची है। तीसरा चरण तो मनुष्य को तो और बांधकर रख देता है। इसी प्रकार के विचार रामायण एवं महाभारत काल में देखने को मिलता है जहाँ विभिन्न आख्यानों, उपाख्यानों द्वारा नैतिक मूल्यों, ब्रह्मचर्य एवं आत्मसंयम को धर्म एवं नीति से जोड़ा गया है। कौटिल्य के **'अर्थशास्त्र** में भी जनसंख्या के गुणात्मक पहलू पर विचार देखने को मिलते हैं।

भारत के अलावा जनसंख्या सम्बन्धी विचारों की अन्य देशों के सापेक्ष अध्ययन करें तो स्पष्ट होता है कि

आधनिक विचारों के कछ कडियां उस काल खण्ड दिखायी देती हैं। प्राचीन काल में भी लोगों को इस बात का ज्ञान था कि जनसंख्या वृद्धि से प्रति व्यक्ति उत्पादन घट सकता है तथा लोगों का जीवन स्तर (living standard) गिर सकता है। इस तथ्य की जानकारी प्रसिद्ध चिन्तक कन्फ्यूसियस एवं प्राचीन चीनी विचारकों के साहित्य से प्राप्त होती है। इन विद्वानों ने कृषि के लिए एक आदर्श जनसंख्या की कल्पना की थी। उनका विचार था इस आदर्श अनुपात के बिगड़ने से अर्थव्यवस्था की स्थिति खराब हो सकती है। अतः जब भी किसी स्थान में कृषि पर जनसंख्या का दबाव बढ़ जाता है तो सरकार को चाहिए कि अधिक दबाव वाले क्षेत्र से जनसंख्या को कम दबाव वाले क्षेत्र की ओर स्थानांतरित कर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त चीनी साहित्य में जनसंख्या वृद्धि पर रोक लगाने का भी उल्लेख मिलता है। इन विचारकों के अनुसार खाद्यान्न की अपर्याप्तता के कारण मृत्यु दर बढ़ती है। बाल विवाहों के कारण शिशु मृत्यु-दर बढ़ती है। युद्ध के कारण जनसंख्या कम हो जाती है परन्तु ये विचारक यह स्पष्ट नहीं कर सके कि प्रजननशीलता मृत्युक्रम तथा प्रवास जनसंख्या तथा संसाधनों के मध्य सन्तुलन को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।

प्राचीन यूनानी विचारकों **प्लेटो (Plato)** तथा **अरस्तू (Aristotle)** ने भी जनसंख्या के आदर्श स्थिति के विषय में अपने विचार व्यक्त किये हैं। किसी भी समाज के आत्मनिर्भरता और सुरक्षा के लिए जितनी जनसंख्या की जरूरत हो उतना ही जनसंख्या बढ़नी चाहिए। अन्यथा की स्थिति में निर्धनता होगी और आर्थिक समस्याएं उत्पन्न होगी। दोनो ही विचारकों ने जनसंख्या कम करने के लिए आत्मसंयम पर बल दिया और उपनिवेशों की स्थापना का सुझाव दिया। अरस्तू ने जनसंख्या वृद्धि को रोकने के लिए गर्भपात और शिशु-त्याग को उचित माना है। उनके अनुसार, ***"उन सब राष्ट्रों में जहाँ जनसंख्या को सीमित किया जाता है, ऐसा नियम होना चाहिए कि केवल जनसंख्या को सीमित रखने के लिए प्रत्येक परिवार के लिए बच्चों की संख्या से निर्धारित चाहिए और यदि विवाहित दम्पत्तियों के निर्धारित संख्या से अधिक बच्चे हो जाय तो गर्भगत बच्चे में चेतना और जीवन संचार के पूर्व ही गर्भपात करा देना चाहिए।'*** प्लेटो ने 5,040 नागरिको वाले नगर राज्य को आदर्श माना जबकि अरस्तू के अनुसार आदर्श राज्य की जनसंख्या एक लाख से अधिक नहीं होनी चाहिए।

चीन के विचारकों की तरह रोम के विचारकों ने भी जनसंख्या का अध्ययन महान साम्राज्य के परिप्रेक्ष्य में किया। विशालराज्य की स्थापना के लिए ये जनसंख्या वृद्धि को अधिक महत्त्व देते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि रोम के विचारक जनसंख्या वृद्धि के प्रति उतने सचेत नहीं थे जितने की साम्राज्यवाद के लोगों के प्रति। रोमन विचारक **सिसरों (Cicero)** ने जनसंख्या वृद्धि पर रोक लगाने वाले तत्त्वों का तो उल्लेख किया लेकिन वृद्धि या कमी के निर्धारण सिद्धान्तों पर प्रकाश नहीं डाला।

मध्यकाल में ईसाई विचारकों पर सामन्तवाद तथा चर्चप्रधानता का स्पष्ट प्रभाव दिखायी पड़ता है। उस समय के विचारकों ने जनसंख्या समस्या का अध्ययन सदाचार (moral) और नीतिशास्त्र (ethics) के आधार पर किया और भौतिकता को कोई महत्त्व नहीं दिया। हत्या, गर्भपात, शिशु-हत्या, तलाक, बहुविवाह की निन्दा की और ब्रह्मचर्य संयम पर बल दिया। चौदहवीं शती के मुस्लिम **चिन्तक इब्न खाल्दून (Ibn Khaldun)** का जनसंख्या के संबंध में विचार उल्लेखनीय है। उन्होंने जनसंख्या के चक्रीय परिवर्तन सिद्धान्त प्रतिपादित किया तथा उसका आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक मनोदशाओं से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया। खाल्दून का विचार था कि कम जनसंख्या की अपेक्षा अधिक जनसंख्या होने से साधनों का अधिक प्रभावपूर्ण उपयोग संभव हो पाता है। इटली के विचारक बटेरो (Betero) की धारणा थी कि साधनों तथा जनसंख्या के मध्य सन्तुलन की स्थिति आ चकी है और अब बढती जनसंख्या जीवननिर्वाह के साधनों को और नहीं बढ़ा पायेगी तथा असन्तुलन पैदा कर देगी।

सत्रहवीं व अठारहवीं सदी के वणिकवादी अर्थशास्त्री जनसंख्या को आर्थिक विकास में सहायक; सुरक्षा करने में

समर्थ एवं किसी देश की प्रभुसत्ता को बनाये रखने के लिए आवश्यक साधन मानते थे। अतः उन्होंने जनसंख्या के बढ़ने को अनुचित नहीं माना। अधिक जनसंख्या-अधिक परिश्रम-अधिक उत्पादन से आर्थिक समृद्धि बढ़ेगी। दूसरी ओर मजदूरी घटेगी फलतः लागत घटन से निर्यात बढ़ेगे और सोने-चांदी की मात्रा अधिक प्राप्त होगी जो इनका लक्ष्य था।

प्रकृतिवादी अर्थशास्त्री यह मानते थे कि मानव संख्या कितनी हो यह प्रकृति द्वारा निर्धारित होता है अतः प्रकृति के विषय में हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए। जनसंख्या प्रवाह में बाधा डालना प्रकृति का विरोध माना गया।

प्रकृतिवादियों के उपरान्त प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री आते हैं जिनमें एडम स्मिथ ने जनसंख्या का सम्बन्ध मजदूरी से जोड़ा। **'प्रो0 जे0बी0 से** का बाजार नियम इस बात पर आधारित था कि मजदूरी व जनसंख्या एक-दूसरे से विपरीत रूप से सम्बन्धित हैं। एडम स्मिथ ने मजदूरी के लौह सिद्धान्त की रचना कर डाली। जनसंख्या सिद्धान्तों के इतिहास में सबसे प्रथम व सबसे महान विचारक माल्थस हैं जिन्हें निराशावादी अर्थशास्त्री की संज्ञा भी दी जाती हैं और जिन्हें जनांकिकी का जनक भी कहा जाता है। माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त ने विश्व के चिन्तन जगत को झकझोर दिया तथा वैचारिक जगत में हलचल मचा दी। माल्थस ऐसे प्रथम अर्थशास्त्री बने जिन्होंने पूरी दुनिया का ध्यान बढ़ती जनसंख्या की ओर खींचा। इसके बाद तो सिद्धान्तों की बाढ़ सी आ गय। माल्थस के बाद ईष्टतम जनसंख्या सिद्धान्त जनसंख्या का जैविकीय सिद्धान्त; जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त; विकसित हुए। इसके अतिरिक्त सैडलर, डबलडे, रेमन्ड पर्ल, स्पैन्सर, गिनी, मार्क्स, हैनरी जार्ज आदि अनेकों विचारकों ने इस क्षेत्र में अपने चिन्तन को प्रस्तुत किया।

2.4 थामस रार्बट माल्थस (1766-1834) एक परिचय (Thomas Robert Malthus: An Introduction)

थामस राबर्ट माल्थस का जन्म सन् 1766 ई0 में इंग्लैण्ड में हुआ था। ये अर्थशास्त्र के प्रतिस्थापक एडम स्मिथ के अनुयायी और परम्परावादी अर्थशास्त्र के लोक विश्रुत विद्वान अर्थशास्त्री थे। इनके पिता का नाम डिनाइल माल्थस था जो सम्पन्न घराने के थे। माल्थस की शिक्षा-दीक्षा केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में हुई। शिक्षा प्राप्ति के अनन्तर ये स्थानीय गिरजाघर में पादरी नियुक्त हुए। यहीं से उन्होंने विश्व को जनसंख्या वृद्धि के भयंकर परिणामों से अवगत कराने वाला लेख 1798 में लिखा- ***An essay on the Principle of Population, as it effects the future improvement of the society with remarks on the speculation of Mr. Godwin .....and other writers".*** जिसमें आधार स्पष्ट किया, खाद्यान्नो की तुलना में जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है जिसके परिणाम भयंकर होंगे। विचारों में निराशावादी इस्टिकोण के साथ माल्टस को आलोचना झेलनी पड़ी। अपने लेखा के समर्थन में उन्हें कई बार यूरोप के दोशों में आंकड़े एकत्र करने के लिए जाना पड़ा। जिसके आधार पर अपने निबन्ध का परिमार्जित संशोधित संस्करण 1803 ई० में प्रकाशित कराया। जनसंख्या सिद्धान्त से जुड़े उनके छ: निबन्ध प्रकाशित हुए। माल्थस 1807 ई0 में एक कालेज में इतिहास तथा राजनीतिशास्त्र के प्राध्यापक थे। सन् 1834 में उनकी मृत्यु हो गयी।

2.5 प्रेरक तत्व (Influencing Factors)

यदि माल्थस से सम्बन्धित ग्रन्थों एवं लेखों का अध्ययन करें तो आपको स्पष्ट हो जायेगा कि माल्थस के विचारों पर तत्कालीन आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों तथा उनके समकालीन एवं पूर्ववर्ती विचारकों के विचारों का प्रभाव पड़ा था। आइये, देखें कि माल्थस को अपने जनसंख्या सम्बन्धी विचारों को लिखने में जिन कारकों ने उन्हें प्रभावित कर प्रेरित किया है वे कौन-कौन हैं एवं उनका स्वरूप कैसा है?

2.5.1 इंग्लैंड की आर्थिक स्थिति (Economic condition of England)

जिस समय माल्थस के जनसंख्या सम्बन्धी विचार परिपक्व हो रहे थे, वह एक ऐसा समय था जिसमें इंग्लैण्ड की आर्थिक स्थिति दिन-प्रतिदिन खराब होती जा रही थी। इंग्लैण्ड एवं निकटवर्ती स्थानों में अकाल, बीमारियाँ, गरीबी, गन्दगी व बेरोजगारी जैसे भयावह संकट चतुर्दिक व्याप्त थे। इंग्लैण्ड की कृषि अर्थव्यवस्था जो 18वीं शती के पूर्वार्द्ध में उन्नत अवस्था में थे उसकी स्थिति उत्तरार्द्ध में दिनोदिन बिगड़ती जा रही थी। एक ओर संख्या के बढ़ने से समाज पर अतिरिक्त दबाव बढ़ रहा था वहीं कषि की बिगड़ती हुई दशा ने अनेक संकटों को जन्म देकर सामाजिक जीवन को परेशानियों से भर दिया था। आयरलैण्ड में भयानक अकाल पड़ा था। भमि पर जनसंख्या का दबाव बढ़ता जा रहा था। लगातार कई वर्षों से फसलों को क्षति पहुंच रही थी। युद्ध की विभीषिका के कारण आयात बन्द होने से अनाज के मूल्यों में वृद्धि अधिक हो गयी थी। भोजन की कमी के कारण इंग्लैण्ड ने अनाज नियम (corn laws) पारित किये थे। फिर भी शासन की अकर्मण्यता के कारण स्थिति संभालने में अपने को विवश पा रहा था। थॉमस ग्रीन ने इंग्लैण्ड की इस स्थिति से इस तरह वर्णित किया है। "कुशासन के अभिशाप के साथ-साथ दरिद्रता का अभिशाप भी जुड़ गया था और यह दरिद्रता देश की जनसंख्या की तीव्र वृद्धि के साथ बढ़ती गई, जिसके फलस्वरूप दुर्भिक्ष ने देशों को एक नरक कुण्ड में परिवर्तित कर दिया।' माल्थस ने अनेक देशों का भ्रमण किया तथा इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि जनसंख्या के लिए पर्याप्त मात्रा में खाद्य सामग्री का उत्पादन नहीं हो पा रहा है। इस बिगड़ती हुई स्थिति ने माल्थस को विवश किया वह बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण एवं निवारण पर चिन्तन करे।।

2.5.2 औद्योगिक क्रान्ति (Industrial Revolution)

माल्थस का युग औद्योगिक क्रान्ति का युग था। जिस समय माल्थस अपने ज्ञान-चक्षु को खोल रहा था उस समय औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात हो चुका था। कृषि क्षेत्र की बिगड़ती हुई दशा और उद्योगों में होने वाली वृद्धि ने आर्थिक असन्तुलन और अवस्था को और विषमपूर्ण स्थिति में कर दिया था। औद्योगिक क्रान्ति और पूंजीवादी व्यवस्था के समस्त दोष समाज में उभर कर सामने आ गये थे। पूंजीपति वर्ग श्रमिको का शोषण कर रहा था। औद्योगिक विकास ने पूंजीपतियों, धनिक वर्गों तथा समाज के शक्तिशाली व्यक्तियों के प्रभत्व को बढ़ा दिया लेकिन दसरी ओर निर्धन एवं श्रमिकों में बेरोजगारी, बीमारी, धन के असमान वितरण एवं निर्धनता की समस्या को घटाने के स्थान पर और बढ़ा दिया। इन स्थितियों का माल्थस पर गहरा प्रभाव पड़ा। माल्थस ने अनुभव किया कि देश की जनता जनसंख्या और खाद्य सामग्री के असंतुलन से पीड़ित है। औद्योगिक क्रान्ति उसका निराकरण करने के स्थान पर गरीबी एवं अमीरी की खाई को गहरी और चौड़ी करती जा रही है। उन सब समस्याओं का चिन्तन एवं निराकरण माल्थस ने अपने लेखों में किया।

2.5.3 वणिकवादी और प्रकृतिवादी अर्थशास्त्रियों के विचार

18वीं शताब्दी के अनेक वणिकवादी अर्थशास्त्रियों ने बढ़ती हुई जनसंख्या को आर्थिक, राजनीतिक व सैनिक दृष्टिकोण से लाभकारी मानते हुए उचित ठहराया था। केन्टिलन स्टुअर्ट तथा विलियम पेट्टी जैसे विद्वानों ने जनसंख्या वृद्धि को बिना उसने दुष्परिणामों पर विचार किये लाभकारी बताया था। इसी तरह प्रकतिवादी अर्थशास्त्रियों ने जनसंख्या की स्वाभाविक गति पर अंकुश लगाना अनुचित और आविष्कार माना। प्रो0 माल्थस का विचार इन आशावादी विचारकों के प्रतिक्रिया के फलस्वरूप थी।

2.5.4 विलियम गाडविन : प्रेरक माल्थस के विचारों को जिन विद्वानों ने सबसे अधिक प्रभावित किया है, उनमें विलियम गाडविन प्रमुख हैं। इस सत्य को स्वयं माल्थस ने स्वीकार किया है। गाडविन की पुस्तक **'Enquiry concerning political justice and its influence on morals and happiness'** सन् 1793 में प्रकाशित हुई। इस पुस्तक में गाडविन ने उस समय के मनुष्यों के समस्त कष्टों एवं दुःखों का मूल कारण शासन को माना। वह बढ़ती हुई जनसंख्या को कष्ट का कारण नही मानता था। क्योंकि उसका मत था कि समाज स्वयं ही

जनसंख्या को उस सीमा तक रखता है, जिस सीमा तक उसके पास साधन होते हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या मानव जाति की प्रगति का सूचक है। वह स्वयं स्वीकार करते हैं कि बढ़ती हुई जनसंख्या से लाभ की ही संभावना है हानि की नहीं। फ्रांस के विचारक काण्डरसेट (condercet) ने भी बढ़ती हुई जनसंख्या को किसी भी दशा में हानिकारक न मानते हुए गाडविन के विचारों का प्रबल समर्थन किया। वास्तव में गाडविन का उद्देश्य पूर्ण समानता और अराजकतात्मक साम्यवाद की स्थापना करना था। इसी कारण व्यक्तिगत सम्पत्ति का विरोध करता था। गाडविन के विचार वास्तव में काल्पनिक आदर्श लोक से सम्बन्धित है। माल्थस ने गाडविन के इन विभिन्न काल्पनिक एवं आशावादी विचारों का विरोध किया और अपने विचारों में बताया कि गाडविन के विचार काल्पनिक है। जनसंख्या और खाद्य सामग्री में संतुलन स्थगित करने का कार्य प्रकृति का है।

2.5.5 अन्य समकालीन विचारकों का प्रभाव

जिन समकालीन विचारकों का प्रभाव माल्थस पर पड़ा है उनमें सर मैथ्यू हैले, डेविड ह्यूम, जोसेफ टाउन साइण्ड, सरवाल्टर रेले तथा राबर्ट बेलास प्रमख हैं। इन विचारकों का मत था कि प्रायः जनसंख्या में वृद्धि; मृत्यु-दर से अधिक होती है। अतः जनसंख्या के इस अतिरेक को नियंत्रित न किया गया तो उसमें बढ़ती वृद्धि अनेकानेक कष्टों का जन्म देगी। माल्थस के जनसंख्या सम्बन्धी सिद्धान्त पर इन विचारकों का भी बहुत प्रभाव पड़ा है।

माल्थस के लिए उपर्युक्त, तात्कालिक परिस्थितियां और जनसंख्या सम्बन्धी आशावादी विचार चुनौतीपूर्ण प्रभावित हुए। इन्हीं चुनौतियों ने माल्थस को लेख लिखने की प्रेरणा दी। यद्यपि अनेक आशावादी विचारक माल्थस के जनसंख्या सम्बन्धी विचारों को 'व्यक्तिगत निरीक्षण' और निराशावादी कहकर उपेक्षित करते हैं परन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि माल्थस का 'निबन्ध' जनसंख्या विज्ञान का आरम्भिक तथा आधारभूत बिन्दु है। कुछ विद्वान माल्थस के निबंध को एडम स्मिथ का उत्तर भी कहा है वह इसलिए कि एडम स्मिथ ने अपनी पुस्तक का नाम **'An Enquiry into the nature and causes of wealth of nations"** रखा था। वस्तुतः माल्थस की पुस्तक एडम स्मिथ के विचारों की चुनौती थी।

2.6 माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त (Population Theory of Malthus)

थामस रार्बट माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त : जनसंख्या में वृद्धि तथा खाद्यान्न आपूर्ति में मध्य सम्बन्ध की व्याख्या करता है। माल्थस ने 1798 में जनसंख्या के सिद्धान्त पर एक लेख (An Essay on the Principle of Population, 1798) में अपने जनसंख्या सम्बन्धी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उन्होंने यह सिद्धान्त अनेक तात्कालिक परिस्थितियों, प्रचलित आशावादी विचारों, अपने यूरोपीय देशों के भ्रमण के दौरान विभिन्न देशों की जनसंख्या का विकास का गहन अध्ययन कर प्रतिपादित किया था। इस सिद्धान्त का कथन है कि "जनसंख्या में जीवन निर्वाह साधनों की अपेक्षा तीव्र गति से बढ़ने की प्रवृत्ति होती है।' (Population tends to out run susbsistence) | इस प्रकार यह सिद्धान्त स्पष्ट करता है कि खाद्यपूर्ति की अपेक्षा जनसंख्या में अधिक तेजी से वृद्धि होती है और यदि इस जनसंख्या वृद्धि पर रोक न लगाई गई तो परिणामस्वरूप दुराचार या विपत्ति (vice ormisery) उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार अपने निबन्ध में आशावादी विचारों को ध्वस्त कर दिया और एक कष्ट पूर्ण समाज की कल्पना की।

2.6.1 मान्यताएं (Assumptions)

माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त निम्नलिखित आधारतभूत मान्यताओं पर आधारित है -

1. स्त्री एवं पुरूष के बीच काम भावना स्वाभाविक है। इस प्रकार पुरूष की प्रजनन शक्ति (fecundity) तथा सन्तान उत्पत्ति की इच्छा यथा स्थिर रहती है। यह शिक्षा तथा सभ्यता की प्रगति से अप्रभावित है।
2. मनुष्य को जीवित रहने के लिए भोजन अनिवार्य है तथा कृषि में उत्पत्ति हास _ नियम लागू होता है।
3. आर्थिक सम्पन्नता में वृद्धि के साथ-साथ मनुष्य में सन्तानोत्पादन की इच्छा भी तीव्र रहती है तथा जीवन स्तर

में कमी होने पर वह घटती है। अध्ययन की सुविधा के दृष्टिकोण से हम माल्थस के सिद्धान्त को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत रखकर अध्ययन कर सकते हैं।

2.6.2 जनसंख्या ज्यामिती अनुपात से बढ़ती है

माल्थस का कथन है कि "अनियंत्रित जनसंख्या ज्यामितिक-दर (Geometrical ratio) से बढ़ती है।' इनका विचार है कि स्त्रियों और पुरूषों के मध्य सदा यौन आकर्षण रहा है और रहेगा। यौन इच्छा स्वाभाविक और अत्यन्त प्रबल है फलतः सन्तान उत्पत्ति भी स्वाभाविक परिणाम है। यदि जनसंख्या को नियंत्रित नहीं किया गया तो वह प्रत्येक 25 वर्ष में दुगुनी हो जायेगी। जैसा कि उन्होंने स्वयं लिखा है- "अगर जनसंख्या को रोका न गया (संयम द्वारा) तो जनसंख्या प्रत्येक 25 वर्ष में दुगुने हो जाने की प्रवृत्ति रखती है।" जनसंख्या के ज्यामितिक अनुपात को इस प्रकार दर्शाया जा सकता है- 2,4,8,16,32,64, 128, 256 आदि इसी क्रम से बढ़ती है।

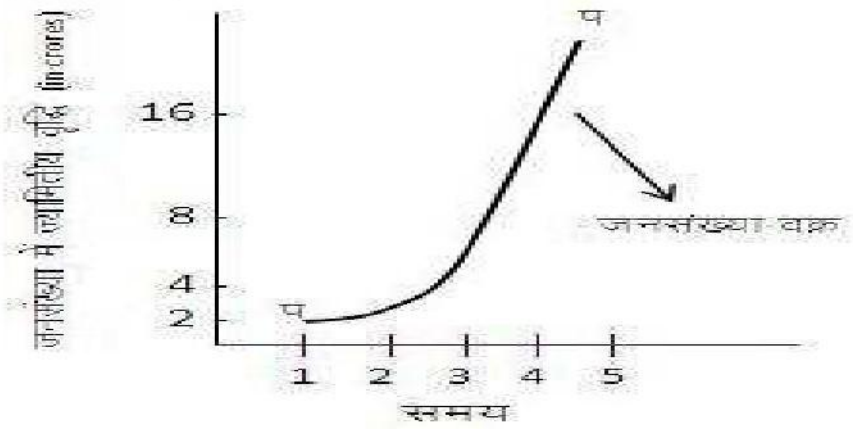

खाद्यान में अंगणितीय वृद्धि

जनसंख्या वृद्धि के इस अनुपात को गुणोत्तर वृद्धि भी कह सकते हैं। माल्थस ने अपना यह निष्कर्ष कई योरोपीय देशों के भ्रमण के दौरान जनसंख्या वृद्धि के अध्ययन के आधार पर दिया था। आपके अनुसार- **"जीविका प्रदान करने वाली भूमि की शक्ति की तुलना में जनसंख्या वृद्धि की शक्ति अनन्त है।'**

2.6.3 खाद्य सामग्री अंकगणितीय अनुपात से बढ़ती है

मानव के जीवन और अस्तित्व के लिए भोजन आवश्यक है लेकिन जिस दर से जनसंख्या में वृद्धि होती है उस दर से खाद्य सामग्री में वृद्धि नहीं होती है। खाद्यसामग्री में तो समानान्तर अर्थात् गणितीय अनुपात में ही वृद्धि होती है क्योंकि कृषि उपज में 'उत्पत्ति-हास नियम' लागू होता है अर्थात् जैसे-जैसे खेत में फसल उगाने का क्रम बढ़ता जाता है वैसे-वैसे क्रमानुसार कृषि उत्पादन घटता जाता है। खाद्य सामग्री के गणितीय अनुपात को इस प्रकार रखा जा सकता है- 1,2,3,4,5,6,7,8, 9 आदि क्रम से। माल्थस के शब्दों खाद्यान्न वक्र में, यदि अन्य बातें समान रहें, तो प्रकृति द्वारा मानवीय आहार धीरे-धीरे अंकगणितीय अनुपात में 1- 'ख बढ़ता है और मानव स्वयं तेजी से ज्योमितीय अनुपात में बढ़ता है। 1 2 3 4 5 रेखा चित्र में खाद्यान्न सामग्री में समय होने वाली अंगणितीय

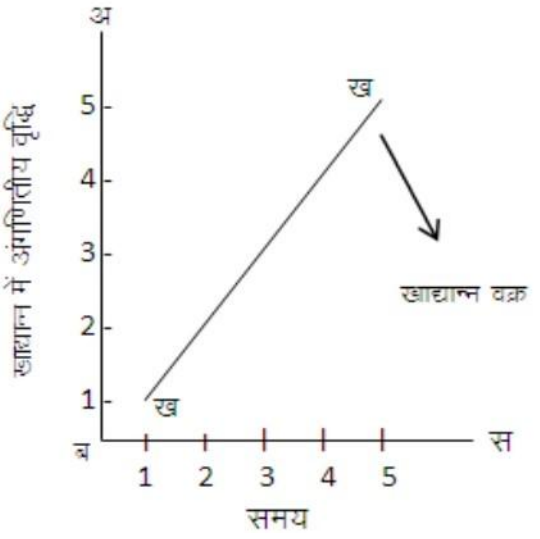

दर से वृद्धि प्रदर्शित है।

2.6.4 जनसंख्या एवं खाद्य सामग्री में असंतुलन

यद्यपि जनसंख्या और खाद्य सामग्री दोनों में वृद्धि होती है। पर वृद्धि दर में अन्तर होने के कारण दोनों के मध्य असन्तुलन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। चूंकि जनसंख्या में वृद्धि ज्यामितीय दर से होती है अतः इसकी तुलना में गणितीय दर से बढ़ने वाली खाद्य सामग्री पीछे रह जाती है। उदाहरण के लिए- जहाँ 5 वर्षों में खाद्य सामग्री में 1, 2, 3, 4, 5, अर्थात् 5 गुनी वृद्धि होती है, वहीं जनसंख्या में इतनी ही अवधि में ज्यामितिक अनुपात से 1, 2, 4, 8, 18 अर्थात् 16 गुनी वृद्धि हो जाती है। 5 और 16 (16-5=11) के मध्य का अन्तर खाद्य और जनसंख्या के असंतुलन को प्रदर्शित करता है। माल्थस का कथन था कि यह असंतुलन भयंकर कष्टदायी परिणामों को उत्पन्न करता है। खाद्य-सामग्री और जीवन-स्तर में वृद्धि के साथ जनसंख्या बढ़ती है। उसने स्वयं लिखा है, ***"Prosperity was not to depend on population but population was to depend on prosperity."***

2.6.5 जनसंख्या पर प्रतिबन्ध या अवरोध

थामस राबर्ट माल्थय ने जनसंख्या नियंत्रण के दो प्रकार से प्रतिबन्धों का उल्लेख किया है

अ.नैसर्गिक या प्राकृतिक अवरोध (Positive or Natural checks)

ब.प्रतिबन्धात्मक अवरोध (Preventive checks)

2.6.5.1 नैसर्गिक या प्राकृतिक अवरोध (Positive or Natural checks)

ये वे प्रतिबन्ध हैं जो प्रकृति की ओर से लगाए जाते हैं। इसके द्वारा मृत्यु दर बढ़ जाती है फलतः खाद्य सामग्री से अतिरिक्त जनसंख्या भार कम होकर उसके बराबर हो जाती है। इन अवरोधों में युद्ध, बीमारी, अकाल, भूकम्प, अतिवृष्टि, बाढ़ आदि अनेक प्राकृतिक प्रकोपों के साथ माल्थस ने खराब कार्य, बच्चों के असन्तोषजनक पालन-पोषण एवं नागरिक जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों आदि को भी सम्मिलित किया है। माल्थस के अनुसार- "प्रकृति की मेज सीमित अतिथियों के लिए ही लगी है, इसलिए जो बिना निमंत्रण के आयेगा उसे भूखों मरना पड़ेगा।" उसने प्राकृतिक अवरोध को अत्यन्त दुःखद और कष्टमय कहा है। यद्यपि इससे मृत्यु दर बढ़ने के कारण जनसंख्या घटकर खाद्यान्न पूर्ति के संतुलित अनुपात में आ जाती है। पर यह संतुलन स्थायी न होकर अल्पकालिक ही होता है। कुछ समय बाद फिर जनसंख्या बढ़ती है और संतुलन भंग होता है, पुनः प्रकृति द्वारा संतुलित जनसंख्या हो जाती है। यह स्थिति एक चक्र की भांति चलती रहती है जिसे कुछ विद्वानों ने 'माल्थूसियन चक्र कहकर सम्बोधित किया है। इस स्थिति को चित्र में प्रदर्शित किया गया है। **माल्थस** के अनुसर, **"आजीविका की कठिनाई के कारण जनसंख्या वृद्धि पर एक शक्ति एवं निरन्तर नियंत्रण बना रहता है।"**

चित्र – जनसंख्या में संतुलन

चित्र – जनसंख्या में संतुलन

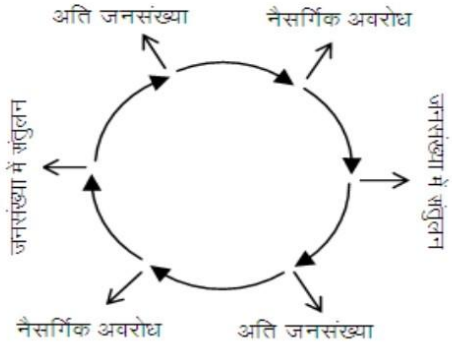

(i) यद्यपि ये प्राकृतिक शक्तियाँ जनसंख्या पर नियन्त्रण तो लगाती हैं पर ये अतिकष्ट कर (Miseries) हैं, इनसे बचना चाहिए।

(ii) माल्थस का मत था कि किसी देश में नैसर्गिक अवरोध क्रियाशील हो जाते हैं, तो यह इस बात का परिचायक है कि उस देश में खाद्य पूर्ति की तुलना में जनसंख्या अधिक है अर्थात् जनाधिक्य की स्थिति मौजूद है।

2.6.5.2 प्रतिबन्धात्मक अवरोध (Preventive checks) -

माल्थस ने जनसंख्या नियन्त्रण का दूसरा प्रतिबन्ध मानवीय प्रयत्न को माना है। चूंकि प्राकृतिक प्रतिबन्ध मानव के लिए अत्यन्त दुःखद एवं कष्टकर हैं अतः मनुष्य को प्रतिबन्धक अवरोधों से जनसंख्या पर नियन्त्रण बनाये रखना चाहिए। इन अवरोधों को भी दो भागों में बाँटा जा सकता है

(i) नैतिक प्रतिबन्ध- वास्तव में नैतिक प्रतिबन्ध को ही माल्थस ने प्रतिबन्धक अवरोध के रूप में मान्यता दी है। इनमें वे सब प्रतिबन्ध (उपाय) सम्मिलित हैं। जो मनुष्य अपने विवेक से जन्मदर को रोकने के लिए करता है- जैसे- संयम, ब्रह्मचर्य व विलम्ब-विवाह आदि ।माल्थस ने केवल नैतिक प्रतिबन्धों को ही उचित माना है तथा इन्हें ही अपनाकर जन पर नियंत्रण रखने की सलाह दी है। उसके अनुसार नैतिक प्रतिबन्ध (ब्रह्मचर्य) ही एक ऐसा तरीका है जिससे मानव जाति प्राकृतिक अवरोधों की मार (कष्ट) से बच सकती है। माल्थस ने पुरूषों को अधिक कामुक मानते हुए महिलाओं से अपील की थी कि उन्हें पुरूषों के बहकावे में नहीं आना चाहिए, बल्कि संयम के साथ 28 वर्ष तक क्वारी रहना चाहिए।'

(ii) कृत्रिम साधनों से अवरोध- इनके अन्तर्गत जन्म नियन्त्रण के उन समस्त मानव निर्मित साधनों को सम्मिलित किया जाता है, जिन्हें आज 'संतति निग्रह' के साधन कहा जाता है। पर माल्थस ने इन्हें अधर्म (Vices) पाप (Sins) माना है। वह इनके प्रयोग का घोर विरोधी था।

इस प्रकार एक पादरी होने के नाते माल्थस ने केवल नैतिक प्रतिबन्धों को अपनाकर जनसंख्या (जन्म दर) को कम करने का सुझाव दिया है। उसने सुझाव रखा था कि जनसंख्या बढ़ाने में लोगों को हतोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे विवेक से काम लें, भविष्य पर बिना गम्भीरता से विचार के विवाह के लिए आतुर न हों।

अब आप माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त से परिचित हो चुके हैं तो इनके सिद्धान्त को संक्षेप में निम्न प्रकार भी रखकर और परिचत हो सकते हैंमाल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त जनसंख्या में ज्यामितीय दर से वृद्धि

खाद्यान्न में अंकगणितीय दर में वृद्धि

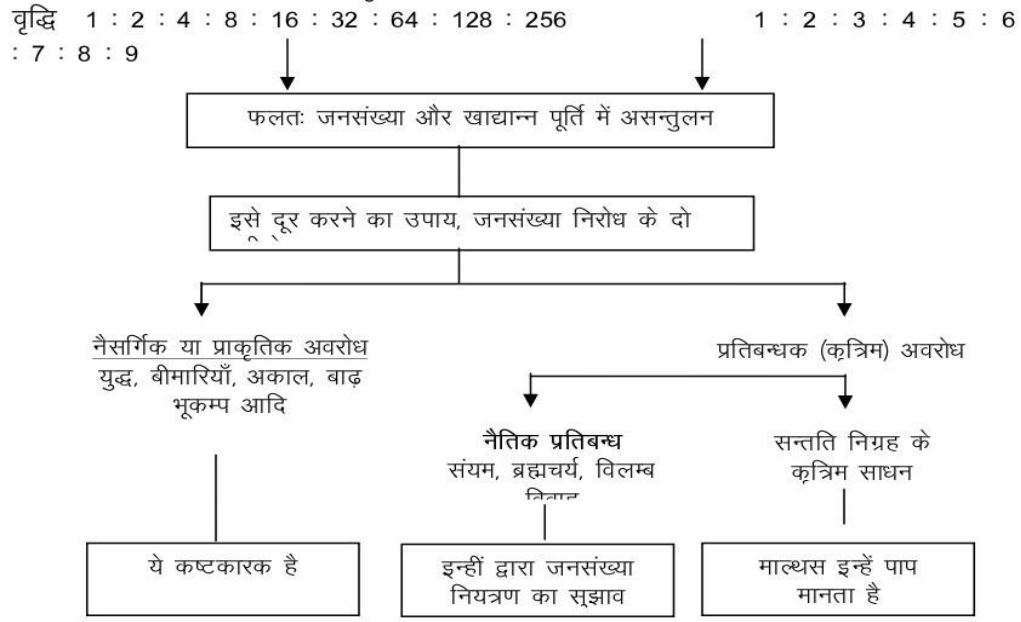

2.6.6 माल्थस के सिद्धान्त की मार्शल द्वारा व्याख्या

प्रो0 मार्शल की धारणा थी कि जनसंख्या सम्बन्धी विचारों की विधिवत व्याख्या तथा अध्ययन का प्रारम्भिक श्रेय माल्थस को ही है। उनके पश्चात् ही इस विषय का क्रमबद्ध अध्ययन प्रारंभ हुआ। **प्रो0 मार्शल** ने अपनी पुस्तक **'प्रिंसिपल्स ऑफ इकोनामिक्स' (Principles of Economics)** में माल्थस के जनसंख्या के सिद्धान्त की व्याख्या करते हुए लिखा है कि माल्थस का कथन है कि श्रम की माँग उपलब्ध खाद्यान्न की मात्रा द्वारा निर्धारित होती है। चूंकि कृषि में उत्पत्ति हास नियम क्रियाशील होता है फलतः 'श्रम की माँग' में होने वाली वृद्धि 'श्रम की पूर्ति' से कम रहती है। श्रम की माँग के विचार को स्पष्ट करते हुए मार्शल कहते हैं कि ***"प्रकृति मनुष्य को उसके कार्य की वृद्धि में उत्पादन प्रदान करती है जो कि जनसंख्या के लिए माँग है। जनसंख्या में तेजी से वृद्धि होने पर भी श्रम की माँग में आनुपातिक वृद्धि नहीं होगी।'*** इनका मानना है कि यदि जीवन निर्वाह के साधन सीमित न होते और महामारी, बीमारी, युद्ध, शिशुओं का बध और संयम द्वारा जनसंख्या को नियंत्रित न किया जाता, तो जनसंख्या में बहुत तेजी से वृद्धि होती क्योंकि मनुष्य अधिक उपजाऊ रहा है।

इस प्रकार प्रो0 मार्शल भी यह स्वीकार करते हैं कि जनसंख्या वृद्धि का भूतकालीन इतिहास भविष्य में भी अपने आपको दोहराता रहेगा और निर्धनता, भुखमरी तथा अन्य अत्यन्त कष्टदायक प्राकतिक अवरोधों द्वारा जनसंख्या नियंत्रित होगी यदि उसे संयम, विलम्ब–विवाह जैसे ऐच्छिक एवं नैतिक साधनों द्वारा नहीं रोका गया।

2.6.7 माल्थस के सिद्धान्त की आलोचना (Criticism of Malthusian theory)

अब तक के विश्लेषण से आप माल्थस के पूरे सिद्धान्त से परिचित हो गये होंगे। यहाँ माल्थस के सिद्धान्त की आलोचनात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत है जिसे आप और समझ सकते हैं।

माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त की आलोचनात्मक समीक्षा (Critical Analysis of Malthusian Theory of Population)- माल्थस का विश्वविख्यात निबन्ध प्रकाशित होते ही लोगों का ध्यान अपनी तरफ आकर्षित किया। एक तरफ जहां कोसा (Cossa), मार्शल (Marshall), ऐली (Ely), टॉसिंग (Taussig), कार्वर (Carvar), पैटन (Patten), प्राइस (Price), वुल्फ (Wolf), क्लार्क (Clark). तथा वाकर (Walker) आदि विद्वानों तथा विचारकों का उन्हें समर्थन प्राप्त हुआ वहीं दूसरी तरफ गाडविन (Godwin), मोम्बार्ट (Mombart), ओपेनहीम (Oppenheim), निकोल्सन (Nikolson), ग्रे (Gray) तथा कैनन (Cannon), आदि की कटु आलोचनाओं का शिकार होना पड़ा। **गाडविन** ने तो निबन्ध के प्रकाशित होने के तत्काल ही प्रत्युत्तर में कहा, ***"यह काला भयानक राक्षस मानव जाति की आशाओं का गला घोंटने के लिए सदैव तत्पर है।"*** इस प्रकार उनके सिद्धान्त को लेकर उग्र विवाद उठ खड़ा हुआ। लोगों ने उसे बहुत बुरा-भला कहा। **प्रो0 अलेक्जेण्डर ग्रे** ने तो यहां तक लिख डाला कि, ***"यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि अभी तक किसी भी सम्मानित नागरिक की इतनी बदनामी तथा आलोचना नही हुई जितनी कि माल्थस की। प्रथम श्रेणी के लेखकों में से किसी के विचारों का इतना अधिक खण्डन नहीं किया गया।'*** इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि माल्थस के विचार तत्कालीन परिस्थितियों में व्याप्त सामाजिक एवं धार्मिक मान्यताओं के प्रतिकूल थे। **निकोल्सन** ने लिखा कि, ***"जिस प्रकार डार्विन ने मानव जाति के उद्गम सम्बन्धी प्राचीन धार्मिक विश्वासों को तोड़ दिया था, उसी प्रकार माल्थस ने मानव जाति के भविष्य के स्वरूप सम्बन्धी विश्वासों को पूर्णतया बदल दिया है।"***

इसमें सन्देह नहीं कि तत्कालीन विचारधारा में माल्थस ने एक क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित किया फिर भी वे इतनी कटु आलोचना के भागी नहीं थे। जिस व्यक्ति ने जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न समस्याओं के प्रति इतना संवेदनशील होकर विश्व को सजग किया उसे मानव जाति का शत्रु कहना कहां तक न्यायोचित होगा। इस सन्दर्भ में जीड तथा रिस्ट ने लिखा है कि माल्थस ने ठीक उसी प्रकार की सलाह दी है जिस प्रकार एक हितैषी तथा

स्पष्टवादी चाचा अपने भतीजे भतीजियों को देता है। माल्थस ने मानव जाति को अधिक कष्ट तथा दुख से बचने के लिए काम वासना के दुष्परिणामों के प्रति सचेत किया। इसके सिद्धान्त के समर्थन में **क्लार्क** लिखते हैं कि **"माल्थस के सिद्धान्त का इतना अधिक खण्डन किया जाना उसकी वैधता की पष्टि ही है।'** इसी तरह अपना विचार व्यक्त करते हुए **प्रो0 हेने** कहते हैं ***वास्तव में माल्थस को समझने में कुछ त्रुटियां की गयी हैं, उनका अर्थ जनसंख्या वृद्धि की ओर संकेत करना था जबकि उनका अध्ययन ठोस निष्कर्ष मानकर किया जाता है।***

अर्थशास्त्रियों द्वारा माल्थस द्वारा व्यक्त किए गए जनसंख्या सिद्धान्त के विरूद्ध जो बातें कही जाती हैं उनमें से कुछ प्रमुख निम्नलिखित हैं :

(1) माल्थस की आधारभूत मान्यता अवास्तविक - आलोचकों का विचार है कि माल्थस की यह आधारभूत मान्यता कि मनुष्य का काम भावना यथा स्थिर रहती है तथा काम-वासना एवं सन्तानोत्पत्ति दोनों एक ही बात है, अवास्तविक है। वास्तव में, माल्थस कामेच्छा और प्रजनन की इच्छा के अन्तर को भली-भांति नहीं समझ पाया। काम-वासना की उत्पत्ति तो प्राकृतिक है और यह प्रत्येक मनुष्य में आवश्यक रूप से पाई जाती है जिसे रोक पाना सम्भवतः मनष्य के वश में लगभग नहीं है। सन्तानोत्पत्ति की इच्छा सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक कारणों से प्रभावित होती है और मनुष्य उसे कृत्रिम उपायों से रोक सकता है और इस प्रकार जनसंख्या वृद्धि में प्रतिबन्ध लगा सकता है। मनुष्य की काम-वासना को स्थिर मानना भी उचित नहीं है क्योंकि जीवनस्तर में वृद्धि के साथ-साथ मनोरंजन के साधन बढ़ जाते हैं। जिससे उसकी कामेच्छा घट जाती है। इस प्रकार आर्थिक सम्पन्नता और सन्तानोत्पत्ति के बीच सकारात्मक सम्बन्ध नहीं है। अतः यह बताता है कि सम्पन्न लोगों की अपेक्षा गरीबों के अधिक बच्चे होते हैं।

(2) कृषि में उत्पत्ति हास नियम की मान्यता दोषपूर्ण- माल्थस का सिद्धान्त इस बात पर आधारित है कि कषि में उत्पत्ति हास नियम लाग होने के कारण खाद्यान्न में कमी आ जाती है। वास्तव में, माल्थस औद्योगिक क्रान्ति के परिणामों को देखकर भी भविष्य को ठीक-ठीक नहीं आंक सके तथा कृषि सम्बन्धी वैज्ञानिक प्रगति का अनुमान नहीं लगा सके। उन्होंने यह नहीं सोचा कि वैज्ञानिक आविष्कारों की सहायता से यान्त्रिक प्रणाली रासायनिक खाद, उन्नत बीज, तथा कीटनाशकों, इत्यादि का प्रयोग कर उत्पत्ति हास नियम को स्थगित किया जा सकता है तथा वैज्ञानिक ढंग से खेती करके बढ़ती हुई जनसंख्या का भरण-पोषण किया जा सकता है। माल्थस ने वृद्धि प्रत्याय नियम की भी अवहेलना की अन्यथा इतना निराश होने की आवश्यकता न थी। यातायात एवं परिवहन के साधनों में हुई भारी प्रगति के कारण खाद्य सामग्रियों को एक देश से दूसरे देश को बहुत ही कम समय में तथा सुगमतापूर्वक ले जाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त मांस-मछलियां भी खाद्य सामग्री बनकर जनसंख्या के काफी भाग की भूख का निवारण कर सकती है। इस तथ्य पर तो माल्थस का ध्यान ही नहीं गया। माल्थस ने अपने सिद्धान्त में यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका का दृष्टान्त उपस्थित किया था जहां मनुष्य ने अपने पुनरूत्पादन की दर की अपेक्षा जीवन निर्वाह के साधनों का अधिक तीव्रता से विकास किया है।

(3) सिद्धान्त का गणितीय स्वरूप अवास्तविक- माल्थस के सिद्धान्त में प्रयुक्त गणितीय स्वरूप की भी आलोचना की जाती है। अनुभवजन्य साक्ष्यों के आधार पर यह सिद्ध नहीं हो सका कि जनसंख्या गुणोत्तर श्रेणी में बढ़ती है और हर 25 वर्ष बाद दुगनी हो जाती है तथा खाद्यान्न में वृद्धि समानान्तर श्रेणी में होती है। वास्तविकता तो यह है कि जनसंख्या या खाद्यान्न वृद्धि का कोई गणितात्मक रूप दिया जाना सम्भव ही नहीं लगता, परन्तु यह आलोचना के क्षेत्र के बाहर है क्योंकि माल्थस ने अपने निबन्ध के प्रथम संस्करण में अपना नियम अच्छी तरह स्पष्ट करने के लिए इस गणितीय स्वरूप का प्रयोग किया और उसके संशोधित संस्करण में उन्होंने उन शब्दों को हटा दिया था जिसका तात्पर्य यह है कि माल्थस ने गणितीय रूप का प्रयोग मात्र यह स्पष्ट करने के लिए किया था

कि जनसंख्या में खाद्यान्नों की अपेक्षा अधिक तीव्रता से बढ़ने की प्रवृत्ति होती है।

(4) अति जनसंख्या की स्थिति ही प्राकृतिक विपत्तियों का कारण नहीं होती- माल्थस के निराशावाद तथा धार्मिक शिक्षा ने उनको यह विश्वास दिला दिया था कि जब अति जनसंख्या की स्थिति उत्पन्न होती है तो नैसर्गिक प्रतिबन्ध कार्यशील हो जाते हैं और अकाल, बाढ़, सूखा, बीमारी, महामारी, दुर्भिक्ष तथा युद्ध, आदि की क्रियाशीलता से स्वतः बढ़ी हुई जनसंख्या घट कर सन्तुलित हो जाती है, परन्तु माल्थस की यह अवधारणा सत्य नहीं है। ये प्राकृतिक विपत्तियां वहां भी पाई जाती हैं जहां जनसंख्या न्यून है अथवा स्थिर

(5) मृत्यु दर में कमी के कारण भी जनसंख्या में वृद्धि होती है- माल्थस का सिद्धान्त एक पक्षीय है। वह जनसंख्या की वृद्धि को बढ़ती हुई जन्म-दर का परिणाम मानता है। वह यह भूल गया कि जनसंख्या में वृद्धि घटती हुई मृत्यु-दर के कारण भी होती है। माल्थस चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में हुई अभूतपूर्व प्रगति का अनुमान नहीं लगा सके जिसने जनसाधारण के साथ-साथ घातक रोगों पर भी काबू पा लिया है और मनुष्य की आयु को बढ़ा दिया है।

(6) माल्थस नए क्षेत्रों का पूर्वानुमान नहीं लगा सके- माल्थस का दृष्टिकोण संकुचित था। वह इंग्लैण्ड की स्थानीय परिस्थितियों से विशेष प्रभावित था। वह आस्ट्रेलिया, अमेरिका और अर्जेण्टाइना के नए खुलने वाले क्षेत्रों का पूर्वानुमान नहीं कर सके जहां अक्षत भूमियों vergia lands) की सघन कृषि से खाद्यान्न की मात्रा में पर्याप्त वृद्धि हुई है जिसके फलस्वरूप इंगलैण्ड, आदि देशों को प्रचुर मात्रा में खाद्य पदार्थ सस्ते दर पर उपलब्ध हो जाते हैं। यह तभी सम्भव हुआ जब परिवहन के साधनों में तेजी से सुधार हुआ। इस पक्ष को माल्थस नजरन्दाज कर गया। आज कोई देश यदि बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए पर्याप्त खाद्यान्न उत्पादन नहीं कर पाता तो भी उसे भुखमरी तथा विपत्ति से भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है।

(7) माल्थस ने जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न जनशक्ति के पक्ष की उपेक्षा की- माल्थस का सिद्धान्त इस बात से भी आलोचना का विषय रहा कि उसने जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न जनशक्ति के पक्ष की उपेक्षा की। वह निराशावादी तथा जनसंख्या में प्रत्येक वृद्धि से भयभीत था। **प्रो. कैनन (Cannon)** के अनुसार, ***"वह यह भूल गया कि शिशु दुनिया में केवल एक मुंह और एक पेट ही नहीं, बल्कि दो हाथ भी लेकर आता है।" (He forgot that "a baby comes to the world not only with a mouth and a stomach but also with a pair of hands.")*** इसका अर्थ यह है कि जनसंख्या में वृद्धि का अर्थ है जनशक्ति में वृद्धि जो न केवल औद्योगिक उत्पादन में बल्कि कृषि उत्पादन में भी वृद्धि कर सकती है और इस प्रकार आय तथ धन के न्यायोचित वितरण के द्वारा देश को धनी बना सकती है। इस प्रकार, जनसंख्या की समस्या केवल आकार की ही समस्या नहीं है बल्कि दक्ष उत्पादन तथा न्यायोचित वितरण की भी है।

(8) माल्थस के सिद्धान्त पर स्थैतिक होने का भी आरोप है- माल्थस के सिद्धान्त पर स्थैतिक होने का आरोप इस आधार पर लगाया जाता है कि यह उत्पत्ति हास नियम तथा प्राकृतिक साधनों (भूमि) की सीमितता पर आधारित है। साधनों की मात्रा एक निश्चित समय के लिए स्थिर हो सकती है, परन्तु सदैव के लिए नहीं। समय के साथ पश्चिमी देशों में ज्ञान तथा तकनीक में बहुत विकास हुआ है। प्राप्त भूमि तथा अन्य साधनों में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि कृषि योग्य भूमि की मात्रा में वृद्धि महत्वपूर्ण नहीं है वरन् अतिरिक्त भूमि का महत्व इस बात से मापा जाता है कि इससे किस मात्रा में अतिरिक्त उत्पादन प्राप्त किया जाता है। कुछ अर्थशास्त्री इस विचार से कि माल्थस का दृष्टिकोण स्थैतिक है, सहमत नहीं है। वे इसे इस आधार पर प्रावैगिक मानते हैं कि यह एक निश्चित समयावधि के भीतर जनसंख्या वृद्धि की प्रक्रिया का अध्ययन करता है।

(9) जनसंख्या वृद्धि तथा खाद्यपूर्ति कमजोर सम्बन्ध पर आधारित- माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त जनसंख्या वृद्धि तथा खाद्यपूर्ति के कमजोर सम्बन्धों के आधार पर टिका हुआ है। आधुनिक अर्थशास्त्रियों के अनुसार किसी देश की जनसंख्या की तुलना उस देश के कुल राष्ट्रीय आय से करनी चाहिए, केवल खाद्यान्नों से

ही नहीं। अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त (Optimum Theory of Population) का आधार यही है। तर्क यह प्रस्तुत किया जाता है कि यदि कोई देश अपनी जनसंख्या के लिए पर्याप्त खाद्य पदार्थों का उत्पादन नहीं कर पाता लेकिन वह यदि भौतिक रूप से धनी है तथा औद्योगिक दृष्टि से उन्नतशील है तो वह अपने यहां निर्मित वस्तुओं अथवा मुद्रा के बदले खाद्य सामग्री को दूसरे कृषि प्रधान देशों से आयात करके अपने लोगों का भली-भांति भरण-पोषण कर सकता है। इंगलैण्ड इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है जहां पर केवल 1/6 जनसंख्या के भरण-पोषण के लायक ही खाद्यान्न उत्पन्न किया जाता है फिर भी वहां माल्थस के द्वारा बताए गए प्रकृति के प्रकोपों को नहीं पाया गया है।

(10) जनसंख्या की प्रत्येक वृद्धि हानिकारक नहीं माल्थस जनसंख्या में प्रत्येक वृद्धि को हानिकारक समझते थे, परन्तु उनका यह दृष्टिकोण उचित नहीं है। यदि किसी देश की जनसंख्या उस देश के प्राकृतिक साधनों की अपेक्षा कम है तो जनसंख्या में वृद्धि लाभदायक होगी। प्राकृतिक साधनों का भली-भांति विदोहन करके राष्ट्रीय आय एवं प्रति व्यक्ति आय को बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार, यदि जनसंख्या अनकलतम बिन्द से नीचे है तो जनसंख्या में वृद्धि से प्रति व्यक्ति वार्षिक आय में वृद्धि होगी। अतः जनसंख्या में वृद्धि राष्ट्रहित में होगी।

(11) आगमन प्रणाली का दोष – माल्थस के सिद्धान्त में आगमन प्रणाली का दोष भी है। उन्होंने यूरोप के कुछ देशों का दौरा किया और सामान्य निरीक्षण के आधार पर अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। यह आवश्यक नहीं है कि जो बात कुछ स्थानों पर सत्य है वह सभी जगह सत्य हो। अतः माल्थस के सिद्धान्त में सार्वभौमिकता का अभाव है।

(12) जनसंख्या वृद्धि व प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि के बीच सकारात्मक सम्बन्ध नहीं- वास्तव में जनसंख्या वृद्धि प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होने पर अधिक बच्चा पैदा करने की इच्छा घट जाती है। जब लोग ऊँचे जीवनस्तर के आदी हो जाते हैं तो बड़े परिवार का पालन-पोषण मंहगा हो जाने के कारण परिवार सीमित ही रखना चाहते हैं क्योंकि इससे जीवनस्तर में गिरावट की सम्भावना रहती है और लोग अपना जीवनस्तर घटाना नहीं चाहते, परिणामस्वरूप जनसंख्या स्थिर होने लगती है। जापान, फ्रांस, इंगलैण्ड तथा अन्य पश्चिमी देश इसके उदाहरण हैं।

(13) जनसंख्या वृद्धि का उत्तरदायित्व निर्धनों पर ही थोपना उचित नहीं- कुछ आलोचकों का कथन है कि माल्थस का सिद्धान्त जनसंख्या वृद्धि का उत्तरदायित्व निर्धनों पर थोपता है। उनके अनुसार माल्थस ने निर्धनों को ही निर्धनता का कारण बताया है। माल्थस का विचार था कि एक कानून बनाकर निर्धनों को विवाह करने पर प्रतिबन्ध लगा देना चाहिए। यदि निर्धनों का विवाह होगा तो ज्यादा बच्चे पैदा करेंगे परिणामस्वरूप जनसंख्या और बेरोजगारी में वृद्धि होगी। यह बात तर्कसंगत है कि मनोरंजन के साधनों के अभाव, शिक्षा के अभाव तथा दूरदर्शिता के अभाव में यह सब सम्भव हो सकता है, परन्तु अधिक जनसंख्या का होना निर्धनता ही मुख्य कारण नहीं है बल्कि धन का असमान वितरण एवं सरकार की नीतियों का परिणाम है। यदि श्रमिकों को उचित पुरस्कार प्राप्त हो तथा उनके मनोरंजन, शिक्षा, आदि की उचित व्यवस्था हो तो इस प्रकार के परिणाम की सम्भावना नहीं रहेगी।

(14) माल्थस के सुझाव व्यावहारिक नहीं- माल्थस ने जनसंख्या नियंत्रण हेतु जिस आत्मसंयम, नैतिकता एवं संयमित जीवन व्यतीत करने का सुझाव दिया है वह व्यावहारिक नहीं है। साधारण व्यक्ति के लिए उनका पालन करना दुरूह कार्य है। अपने सैद्धान्तिक दृष्टिकोण में तो यह विचार पूर्ण आदर्श हैं, परन्तु उसकी व्यावहारिकता में उतना ही दोष है।

(15) माल्थस झूठा भविष्य वक्ता सिद्ध हुआ- वास्तव में, माल्थस एक झूठा भविष्यवक्ता सिद्ध हुआ। यह सिद्धान्त उन देशों पर भी नहीं लागू हुआ जिनके लिए यह बनाया गया था। इतिहास इस बात का साक्षी है। पश्चिम यूरोपीय देशों में माल्थस के भय तथा निराशावाद पर काबू पा लिया गया है। जन्म-दर में कमी, खाद्यपूर्ति में

पर्याप्तता, कृषि एवं औद्योगिक उत्पादन के द्वारा उसकी यह भविष्यवाणी गलत सिद्ध की जा चुकी है कि ये देश कृत्रिम अवरोधों के माध्यम से जनसंख्या वृद्धि को रोकने में असमर्थ रहेंगे। इन्हें विपत्ति धर दबोचेगी। उस प्रकार माल्थस की भविष्यवाणी असत्य सिद्ध हुई।

उपरोक्त वर्णित आलोचनाओं से यह विदित होता है कि माल्थस के जनसंख्या सम्बन्धी सिद्धान्त में कुछ त्रुटियां रह गयीं जिनके कारण इस सिद्धान्त को समझने में कुछ भ्रांतियां उत्पन्न हो जाती हैं। इसके बावजूद माल्थस के सिद्धान्त में पर्याप्त सच्चाई है। माल्थस के प्रति जनसंख्या सम्बन्धी दृष्टिकोण की भयावहता से ही यूरोप के देश समय पर सजग हो गए और जनसंख्या वृद्धि को रोकने के तरीके अपनाने शुरू कर दिए तथा अपने देश को अति जनसंख्या की समस्या का सामना करने से बचा सके।

2.7 सिद्धान्त का मूल्यांकन/व्यावहारिकता (Evaluation of Theory)

माल्थस के सिद्धान्त के प्रति की गई उपर्युक्त आलोचनाएँ यद्यपि सिद्धान्त की अनेक कमियों को स्पष्ट करती हैं। पर इसका यह तात्पर्य नहीं कि उसके सम्पूर्ण विचारपूर्ण काल्पनिक या निरर्थक हैं, बल्कि यदि हम गहराई से देखें तो उसके विचारों में आज भी इतनी यथार्थता है, कि उनके आधार पर उसकी त्रुटियाँ क्षम्य हैं। जैसा कि **प्रो0 हेने** ने लिखा है, ***"निःसन्देह माल्थस की कुछ कमियाँ क्षम्य हैं क्योंकि वे कथन को स्पष्ट और प्रभावपूर्ण बनाने के सन्दर्भ में हुई हैं।"*** माल्थस का सिद्धान्त इन तीव्र आलोचनाओं के बाद आज भी अपने अस्तित्व को बनाये हुए है जो कि सिद्धान्त की सार्थकता का प्रमाण है। **प्रो. वॉकर** ने लिखा है- ***"कटु वाद-विवाद के बीच भी माल्थस का सिद्धान्त अडिग खड़ा है।" इसी तरह माल्थस के सिद्धान्त का समर्थन करते हुए क्लार्क ने लिखा है-*** "माल्थस के सिद्धान्त की जितनी अधिक आलोचनाएँ की गई हैं उतनी ही अधिक दृढ़ता उसमें आई है।" संसार के विभिन्न भागों में आलोचकों द्वारा सिद्धान्त की इतनी अधिक आलोचनाओं के बावजूद भी यह सिद्धान्त आज भी विशेष रूप से अर्द्धविकसित देशों के सम्बन्ध में अजेय है और उतना ही स्वयंसिद्ध है जितना कि भूतकाल में था। यह असत्य सिद्ध नहीं हुआ है। कैनेथ स्मिथ के विचारों का उल्लेख करते हुए **Jan Bewen** ने लिखा है कि, ***"माल्थस के सिद्धान्त के विरूद्ध जो कुछ भी तर्क हो सकते हैं उन्हें सार्वजनिक रूप से, और हमेशा अत्यन्त तीखेपन से हेजलिट, बूथ, प्लेंस, ग्राह्य वैलैण्ड तथा अन्य व्यक्तियों ने व्यक्त किया है। लेकिन आज उनकी आलोचनाओं के स्थान पर हम माल्थस के सिद्धान्त दान्त को ही याद रखते हैं।"*** माल्थस के सिद्धान्त की सत्यता- संक्षेप में माल्थस के सिद्धान्त में पाई जाने वाली सत्यता को निम्न बिन्दुओं में स्पष्ट किया जा सकता है

(1) जनसंख्या वृद्धि की भविष्यवाणी आज भी अर्द्ध-विकसित देशों में सत्य प्रमाणित होती है। भारत की बढ़ती हुई जनसंख्या इस बात का स्पष्ट प्रमाण है। **बरट्रेन्ड रसेल** के अनुसार, ***"माल्थस का जनसंख्या का विचार उसके लिखते समय तक बहुत सही था पर यह आज भी जंगली–अर्द्धसभ्य और सभ्य जाति में निम्न श्रेणी के मनुष्यों के लिए सत्य है।"***

(2) यह सिद्धान्त प्रगतिशील और उन्नत देशों में भी अपनी यथार्थता को प्रमाणित करता है। फ्रांस, इंग्लैण्ड व अमेरिका जैसे उन्नत देशों द्वारा परिवार नियोजन व संतति-निग्रह का बढ़ता हुआ प्रयोग इन देशों में माल्थस के सिद्धान्त की प्रभावशीलता को स्पष्ट करता है।

(3) माल्थस का यह निष्कर्ष आज भी सत्य है कि यदि मानव द्वारा प्रतिबन्धों का प्रयोग न किया गया तो जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ेगी जो अनेक समस्याओं को जन्म देगी।

(4) यह कथन कि खाद्यान्न की तुलना में जनसंख्या यदि अधिक रही और असंतुलन को यदि प्रतिबंधक निरोधों द्वारा दूर न किया गया तो जन्मदर की वृद्धि के साथ ही प्राकृतिक अवरोधों की क्रियाशीलता से मृत्युदर भी बढ़ेगी, सत्य है। **प्रो. सेम्युल्सन** के अनुसार***"भारत, चीन तथा संसार के अन्य भागों में जहाँ खाद्य-सामग्री की पूर्ति***

और जनसंख्या के मध्य असंतुलन एक महत्वपूर्ण समस्या है, जनसंख्या का व्यवहार समझने के लिए माल्थस के सिद्धान्त में आज भी सत्य के तत्त्व महत्त्वपूर्ण हैं।"

(5) यदि हम सम्पूर्ण विश्व की खाद्य-सामग्री को दृष्टि में रखते हुए सोचें तो माल्थस का यह कथन बिल्कुल सत्य है कि खाद्य सामग्री का कुल उत्पादन निश्चित है। **एडवर्ड ईस्ट** ने लिखा है कि, ***"यदि जनसंख्या इसी प्रकार बढ़ती रही तो संसार का कृषि योग्य क्षेत्र बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्य सामग्री की पूर्ति में अपर्याप्त हो जायेगा।***

(6) कम विकसित देशों के सम्बन्ध में सिद्धान्त की यह बात आज भी सत्य है कि जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ती है और अप्रतिबन्धित रहने पर शीघ्र ही दुगुनी हो जाती है। भले ही जनसंख्या दुगुनी होने की अवधि 25 वर्ष न होकर 30 या 35 वर्ष हो।

उपर्युक्त तथ्यों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि माल्थस का सिद्धान्त अनेक कमियों के बावजूद आज भी सारगर्भित है। इस सन्दर्भ में **वाकर** का यह कथन उल्लेखनीय है ***कि "माल्थस के विरूद्ध उठाये गये सम्पूर्ण विवादों के मध्य माल्थसवाद अजेय तथा अविच्छिन्न रूप से स्थित है।"***

2.8 माल्थस का सिद्धान्त एवं भारत (Malthus theory and INDIA)

माल्थस के सिद्धान्त को यदि भारत देश के सन्दर्भ में देखा जाए तथा जनसंख्या सम्बन्धी आंकड़ों को भारत के सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन किया जाए तो इससे जिन तथ्यों की जानकारी मिलेगी वह स्पष्ट करती है कि भारत में माल्थस के सिद्धान्त महत्त्व रूप से प्रासंगिक है।

विभिन्न जनसंख्या सम्बन्धी इकाइयों का अध्ययन को आप जान चुके हैं कि भारत में जनसंख्या में वृद्धि अत्यधिक तीव्र गति से हुई है। पुनः जनसंख्या सम्बन्धी आंकड़ों को प्रस्तुत कर आप माल्थस के सिद्धान्त के सन्दर्भ में और परिचित हो जायेंगे।

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)
300 ई0 पू0	10.14
1600 ईस्वी	10.0
1800 ईस्वी	12.0
1850 ईस्वी	15.0
1861 ईस्वी	16.4
1867 ईस्वी	19.4
1871 ईस्वी	25.5
1901 ईस्वी	23.8
1911 ईस्वी	25.2
1921 ईस्वी	25.1
1931 ईस्वी	27.9
1941 ईस्वी	31.8
1951 ईस्वी	36.1
1961 ईस्वी	43.9
1971 ईस्वी	54.7

1981 ईस्वी	68.4
1991 ईस्वी	84.4
2001 ईस्वी	10287
2011 ईस्वी |	121.02

आंकड़ों से आप परिचित हो गये होंगे कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् अब तक भारत की जनसंख्या तीन गुनी से अधिक हो चुकी है। यदि जनसंख्या की वर्तमान वृद्धिदर 1.97% (1991-2001) एवं 1.64% (2001-11) ऐसी ही जारी रही तो अगले तीस वर्षों में ही जनसंख्या पुनः दुगनी हो जाएगी। इसके विपरीत खाद्य पदार्थों की पूर्ति में वृद्धि इस दर से नहीं हो पा रही है। यद्यपि विगत कुछ वर्षों से खाद्यान्न के मामले में भारत आत्मनिर्भर अवश्य हुआ है लेकिन अधिकांश जनसंख्या को अभी भी जीवन निर्वाह भोजन नहीं मिल पा रहा है। भारत में जन्म एवं मृत्यु दरें इसी तरह भारत में विवाह की आयु को निम्न तालिका में प्रदर्शित किया गया है:

दशक	**जन्म-दर (प्रति हज़ार)**	**मृत्यु-दर (प्रति हज़ार)**
1901-1911	49.2	42.6
1911-1921	48.1	47.2
1921-1931	46.5	36.3
1931-1941	45.2	31.2
1941-1951	39.9	27.4
1951-1961	41.7	22.8
1961-1971	36.6	16.9
1971-1981	36.0	14.8
1981-1991	29.5	09.8
1991-2001	24.28	8.74
2001-2011	20.97	7.48

चिकित्सकीय सुविधाओं के पर्याप्त सुविधाओं के अभाव के कारण बीमारियां महामारी का रूप ले लेती हैं। बाढ़-सूखा जैसी प्राकृतिक विपत्तियां तो आती ही रहती हैं। इस प्रकार देश में जनसंख्या रोकने के लिए नैसर्गिक प्रतिबन्ध अकाल, बीमारी, बाढ़-सूखा, इत्यादि क्रियाशील हैं। यहां की धार्मिक एवं सामाजिक दशाएं इस तरह हैं कि लोगों में बाल-विवाह तथा कम आयु में विवाह की प्रथा अभी व्याप्त है। ये दशाएं जन्मदर बढ़ाने में भी सहायक हैं। यहां जन्म-दर हीं नहीं मृत्यु-दर भी बहुत ऊंची है जो संलग्न तालिका में दर्शाए गए आंकडों से स्पष्ट है।

भारत में विवाह की औसत आयु (1891-1998)

वर्ष	**विवाह की औसत आयु (वर्षों में)**	
	(पुरुष)	**(स्त्री)**
1891	19.55	12.54
1931	18.32	12.69
1941	19.91	14.69
1951	19.89	15.59
1961	21.54	15.83

1971	22.40	17.20
1981	23.30	18.30
1991	23.8	17.7
1998	23.6	17.0

भारत में लोगों का जीवनस्तर विश्व के अन्य देशों की तुलना में बहुत नीचे है। विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार विभिन्न देशों के प्रति व्यक्ति आयु के आंकड़ों के आधार पर विश्व में भारत का स्थान नीचे से सोलहवां है। विश्व विकास रिपोर्ट 2007 के अनुसार भारत में प्रति व्यक्ति आय मात्र 620 डॉलर है। यहां की 37.4% जनसंख्या की प्रतिदिन की आय एक अमेरिकी डॉलर से भी कम हो जो कुछ अफ्रीकी देशों के मुकाबले में भी पीछे है। भारत में लगभग 26.1 प्रतिशत व्यक्ति अब भी निर्धनता रेखा से नीचे का जीवन बिता रहे हैं। भारत की औसत आयु भी विश्व के अन्य देशों की तुलना में काफी कम है। मानव विकास रपोर्ट 2006 के अनुसार भारत में औसत आयु लगभग 63.6 वर्ष है। जबकि एशिया की औसत आयु 68 वर्ष, यूरोप की 73 वर्ष तथा उत्तरी अमेरिका की औसत आयु 78 वर्ष है।

यद्यपि कृषि तकनीक में थोड़ा सुधार हुआ है, परन्तु अभी भी कृषि पुरानी पद्धतियों से की जाती है, अतः कृषि में उत्पत्ति हास नियम को नहीं रोका जा सका है। देश की अधिकांश जनता अर्थात् 35 प्रतिशत आबादी निरक्षर है। अतः जन्म-दर को रोकने के लिए निवारक प्रतिबन्धों अथवा कृत्रिम साधनों का प्रयोग बहुत कम मात्रा में किया जा रहा है। देश में उद्योग-धन्धों का विकास पर्याप्त रूप से नहीं हो पाया है और अधिकांश लोग ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं। कुछ लोगों का इसके विरीत मत भी है, उनके अनुसार भारत में माल्थस का नियम क्रियाशील नही है, उनका तर्क है कि विगत कुछ वर्षों से कृषि उत्पादन के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। एक तरफ कृषि में हरित क्रान्ति तथा परिवहन के साधनों का विकास हुआ है तो दूसरी तरफ शिक्षा के प्रसार ने लोगों में परिवार नियोजन का महत्व बढ़ा दिया है, परन्तु इन विचारकों का तर्क आधारहीन है। भारत की जनसंख्या बड़ी तेजी से बढ़ी है और तेजी से बढ़ी हुई यह जनसंख्या देश के आर्थिक विकास में अवरोध बनकर खड़ी हो गयी है। यदि जनसंख्या के बढ़ने की यह गति अवरूद्ध नहीं की जाती तो देश में आर्थिक विकास को सही रूप में नहीं देखा जा सकेगा। जनसंख्या वृद्धि के फलस्वरूप ही 1950-51 से 2005-06 के दौरान कुल राष्ट्रीय उत्पादन में 18 गुने से अधिक (1999-2000 के मूल्यों पर) वृद्धि के बावजूद देश की 26.1 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता की रेखा से भी नीचे रहने को विवश है। इसके स्पष्ट है कि जनंसख्या के तीव्रगति से बढ़ते रहने पर योजनाबद्ध विकास करना बहुत कुछ ऐसी भूमि पर मकान खड़ा करने के समान है जिसे बाढ़ का पानी बराबर बहा ले जा रहा हो।

2.9 नव माल्थसवाद (NEO-MALTHUSIANISM)

नव-माल्थसवाद, माल्थस के अनुयायियों द्वारा चलाया गया वह आन्दोलन है जो परिवार नियोजन तथा संतति-निग्रह के कृत्रिम उपाय अपनाकर जनसंख्या को सीमित रखने पर जोर देता है। नव-माल्थसवादी सहवास के आनन्द को नष्ट किए बिना गर्भ-निरोध के कृत्रिम उपायों (पिल्स, कण्डोम आदि का प्रयोग) तथा गर्भपात एवं आपरेशन आदि व समर्थक हैं। उनके अनुसार किसी भी शारीरिक, रासायनिक, यान्त्रिक तथा शल्य चिकित्सात्मक ढंग से किसी स्वस्थ स्त्री-पुरूष के समागम पर भी गर्भ रहने में बाधा पहुंचाना ही संतति निग्रह है। इस तरह माल्थस के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी कहे जाने वाले ये विचारक माल्थस द्वारा बतायी गयी जन्म-वृद्धि सम्बन्धी सम्भावनाओं में तो विश्वास करते थे, परन्तु वे माल्थस के विपरीत गर्भ निरोध के कृत्रिम साधनों के समर्थक हैं। इस तरह के मतावलम्बियों की धारणा थी कि कामेच्छा पर किसी प्रकार का अन्यथा प्रभाव पड़े बिना यदि

सन्तानोत्पादन कम हो सके तो संतति-निग्रह की कृत्रिम विधियों का खुलकर प्रयोग किया जाना चाहिए। वर्तमान समय में नवमाल्थसवादियों को डॉक्टरों, समाजशास्त्रियों, राजनीतिज्ञों, अर्थशास्त्रियों एवं जागरूक चिंतकों का भरपूर समर्थन प्राप्त है। भारत सहित कुछ देशों में इस आन्दोलन को परिवार निर्धन के रूप में सरकारी मान्यता भी प्राप्त है।

2.10 अभ्यास प्रश्न

लघु प्रश्न

1. जनसंख्या के ज्यामिती अनुपात से बढ़ने का क्या आशय है?
2. खाद्य सामग्री के अंकगणित अनुपात से बढ़ने का क्या अर्थ है?
3. राबर्ट माल्थस ने जनसंख्या नियंत्रण हेतु किन प्रतिबन्धों का उल्लेख किया है ?

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्र0 1. प्राकृतिक अवरोध के अन्तर्गत नहीं है

क. बीमारी

ख. अकाल

ग. डाक्टर

घ. बाढ़

प्र0 2. नैतिक प्रतिबन्ध के अन्तर्गत नहीं है

क. शीघ्र विवाह

ख. संयम

ग. विलम्ब विवाह

घ. ब्रह्मचर्य

प्र0 3. कृत्रिम साधनों से जनसंख्या नियंत्रण को माल्थस मानता था

क. धर्म

ख. पुण्य

ग. साधन

घ. अधर्म

2.10 सारांश

बढ़ती जनसंख्या सम्पूर्ण विश्व के लिए एक गंभीर एवं ज्वलन्त समस्या प्रारम्भ से ही बनी हुई है। इस समस्या पर विभिन्न सामाजिक चिन्तकों, समाजशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों एवं राजनीतिज्ञों के सम्मुख अपने गंभीर, सुनियोजित एवं व्यवस्थित विचारों को जब थामस राबर्ट माल्थस ने रखा तब पूरे विश्व में इस समस्या को नये दृष्टिकोण से देखा जाने लगा। वास्तव में माल्थस ही ऐसे प्रथम चिन्तक थे जिन्होंने जनसंख्या समस्या के विशद दर्शन को विश्व को दिखाया ऐसा प्रो0 मार्शल भी मानते है। भारत, यूनान, चीन, इंग्लैण्ड, यूरोपीय देशों सहित विश्व के विभिन्न विद्वानों के साहित्य में इस समस्या पर कुछ न कुछ अवश्य स्पष्ट निर्देश रेखांकित है लेकिन आशावादी विचारों को माल्थस ने नकार कर समस्या का विकराल स्वरूप माल्थस ने सबके सामने रखा अतुलनीय है।

थामस राबर्ट माल्थस ने 1798 में विश्व को जनसंख्या वृद्धि के भयंकरता से अज्ञात कराने वाला लेख लिखा था- ***"An essay on the inprovement of the society with remarks on the speculation of Mr.***

godwin.....and other writers" जिसमें स्पष्ट किया किया खाद्यानों को तुलना में जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है जिसके परिणाम भयंकर होगे। अपने लेख के समर्थन में यूरोप के विभिन्न देशों की यात्रा करके परिमार्जित संशोधित संस्करण 1803 में प्रकाशित कराया। जनसंख्या सिद्धान्त सम्बधित उनके छ: निबन्ध प्रकाशित हुए। लेख के प्रमुख प्रेरक तत्वों के- इंग्लैण्ड की बिगड़ती आर्थिक स्थिति, औद्योगिक कान्ति के सूत्रपात से पूंजीवादी व्यवस्था के उभरे समस्त दोष व असन्तुलन, वणिकवादी एवं प्रकृतिवादी अर्थशास्त्रियों के विचारों की प्रतिकिया स्वरूप एवं विलियम गाडविन सहित विभिन्न जनसंख्या के पक्ष में विभिन्न आशावादी विचारों के प्रतिक्रिया प्रमुख प्रेरक तत्व बने।

माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त जनसंख्या में वृद्धि तथा खाद्यान्न आपूर्ति में वृद्धि के मध्य सम्बन्ध की व्याख्या करता है। अपने लेख **An essay on the Principle of Popoulation, 1798** में जनसंख्या सम्बन्धी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस सिद्धान्त का कथन है कि "जनसंख्या में जीवन निर्वाह साधनों की अपेक्षा तीव्र गति से बढ़ने की प्रवृत्ति होती है।" खाद्यान्नो की तुलना में बढ़ती जनसंख्या पर रोक न लगाई गई तो परिणाम भयंकर होंगे।

माल्थ्स यह मानकर चलता है कि स्त्री एवं पुरूष के बीच काम भावना स्वाभाविक है। पुरूष की प्रजनन शक्ति तथा सन्तानोत्पत्ति की इच्छा यथा स्थिर रहती है। मनुष्य के लिए भोजन अनिवार्य है। कृषि में उत्पत्ति हास नियम लागू होता है।

माल्थस का कहना है कि जनसंख्या ज्योमिती अनुपात से बढ़ती है यथा 2, 4, 8, 16, 32, 64, 128, 256 आदि। नियमित न किया गया तो 25 वर्षों में यह जनसंख्या दुगनी हो जायेगी। माल्थस के अनुसार जीविका प्रदान करने वाली भूमि की शक्ति की तुलना में जनसंख्या वृद्धि की शक्ति अनन्त है।

मनुष्य के लिए भोजन अनिवार्य है। इस सन्दर्भ में माल्थस का मानना है कि खाद्य सामग्री अंकगणितीय अनुपात से बढ़ती है यथा- 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9 आदि। जिस दर से जनसंख्या बढ़ती है उस दर से खाद्यान्न की आपूर्ति नहीं होती है क्योंकि कृषि में उत्पत्ति हास नियम लाग होता है। फलतः जनसंख्या एवं खाद्य सामग्री में असन्तलन होना स्वाभाविक है।

उपर्युक्त परिस्थिति में माल्थस ने जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण रखने हेतु प्राकृतिक एवं प्रतिबन्धात्मक अवरोधों का उल्लेख किया। प्राकृतिक अवरोध वे अवरोध हैं जो प्रकृति के द्वारा जनसंख्या नियंत्रण हेतु लगाये जाते हैं यथा- युद्ध, बीमारी, अकाल, भूकम्प, अतिवृष्टि, बाढ़ इत्यादि प्राकृतिक प्रकोप। प्राकृतिक अवरोध को माल्थस ने अत्यन्त दुःखद और कष्टमय कहा है। प्रतिबन्धात्मक अवरोध के अन्तर्गत जनसंख्या नियंत्रण हेतु मानवीय प्रयत्न आता है। इसमें नैतिक प्रतिबन्ध महत्त्वपूर्ण है जिसके अन्तर्गत संयम ब्रह्मचर्य एवं विलम्ब विवाह का उल्लेख किया है।

माल्थस के जनसंख्या सम्बन्धी निबन्ध प्रकाशित होते ही लोगों का ध्यानाकर्षण हुआ। सिद्धान्त का समर्थक एवं विरोध दोनों पक्ष में विद्वानों का नाम आता है। विभिन्न मान्यताओं को लेकर आलोचना हुई, उन्हें झूठा भी कहा गया। उनके सिद्धान्त के प्रति की गयी आलोचनाएं कमियों को रेखांकित करती हैं लेकिन इसका यह आशय नहीं कि उनके सम्पूर्ण विचार काल्पनिक या निरर्थक है। उनके विचारों में आज भी इतनी यथार्थता है कि उसके आधार पर कमियां क्षम्य हैं। कटुवाद विवाद के बीच माल्थस का सिद्धान्त अडिग खड़ा है। जितनी अधिक आलोचनाएं की गई हैं कि उसमें और भी दृढ़ता आई है और अर्द्धविकसित देशों के सम्बन्ध में अजेय है और उतना ही स्वयंसिद्ध है जितना पहले था।

2.11 शब्दावली

- **प्रकृतिवादी अर्थशास्त्री** - प्राकृतिक ढंग से चलने वाली अर्थव्यवस्था में विश्वास रखने वाले अर्थशास्त्री।
- **वणिकवादी अर्थशास्त्री**- व्यापार एवं व्यावसायिक गतिविधियों से अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ता में विश्वास रखने वाले अर्थशास्त्री।
- **आशावादी विचारक**- ऐसे विचारक जो बढ़ती हुई जनसंख्या को प्रगति का सूचक स्वीकार करते हुए जनसंख्या से लाभ मानते हैं न कि हानि।
- **कृषि उत्पत्ति हास नियम-** जैसे-जैसे खेत में फसल उगाने का क्रम बढ़ता जाता है वैसे-वैसे क्रमानुसार कृषि में उत्पादन घटता जाता है।
- **जनसंख्या का ज्यामिती अनुपात से बढ़ना-** जनसंख्या के ज्योमिती अनुपात को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है – 2, 4, 8, 16, 32, 64, 128, 256 आदि क्रम। जनसंख्या में प्रत्येक 25 वर्ष में दुगुने हो जाने की प्रवृत्ति होती है।
- **खाद्य सामग्री का अंकगणित अनुपात से बढना-** खाद्य सामग्री के अंकगणितीय अनुपात को इस प्रकार व्यक्ति किया जा सकता है- 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9 आदि क्रम। यदि अन्य बातें समान रहें तो प्रकृति द्वारा मानवीय आहार धीरे-धीरे अंकगणितीय अनुपात में बढ़ता है।
- **नैसर्गिक या प्राकृतिक अवरोध (Positive or natural checks)**- ये वे प्रतिबन्ध या अवरोध हैं जो प्रकृति द्वारा लगाये जाते हैं। इसके कारण मृत्युदर बढ़ जाती है। यथा- युद्ध, बीमारी, अकाल, भूकम्प, अतिवृष्टि बाढ़, प्राकृतिक प्रकोप आदि ।
- **प्रतिबन्धात्मक अवरोध (Preventive checks)-** जनसंख्या नियंत्रण का मानवीय प्रयत्न।

2.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. (ग), 2. (क), 3. (घ)

2.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- Dr. Premi, M.K., Ramanamma, A., Bambawale, Usha,. An Introduction to social demography, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Appleman, Philip (ed.) Thomos Robert Malthus: An Essay on the Principle of Population, New York: W.W. Norton and Co., Inc., 1976.
- Carr- Saunders, A.M., World Population: Past Growth and Present Trends, Oxford: Clarendon Press, 1936.
- Coale, Ansley J. and Edgar M. Hoover, Populationi Growth and Economic development in low income countries, Princeton University Press, 1958.
- Thompson, Warren S. and David T. Lewis: Population Problems; New York: Mc Graw Hill Book Co. 1976.

2.15 सहायक व उपयोगी पाठ्य सामग्री

- डॉ0 मिश्रा, जे0पी0, जनांकिकी, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा।

- डॉ0 बघेल, डी०एस०, जनांकिकी, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
- डॉ0 पन्त, जीवन चन्द्र, जनांकिकी, गोयल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
- अशोक कुमार, जनसंख्या, एक समाज वैज्ञानिक अध्ययन, हिन्दी ग्रंथ अकादमी प्रयाग, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
- डॉ0 मलैया, के.सी., जनसंख्या शिक्षा, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

2.16 निबंधात्मक प्रश्न

1. माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।
2. वह कौन से कारण थे जिनसे प्रभावित होकर माल्थस ने अपने जनसंख्या सिद्धान्त का प्रतिपादन किया? उन्होंने अपने जनसंख्या सम्बन्धी विचारों को किस तरह प्रस्तुत किया?
3. माल्थस के जनसंख्या सम्बन्ध सिद्धान्त की विवेचना कीजिए और भारतीय सन्दर्भ में इसके औचित्य की विवेचना कीजिए।
4. "यह बात सरलता से कही जा सकती है कि अभी तक किसी भी आदमी को इतना बदनाम नहीं किया गया और न ही आलोचना की गई जितनी की माल्थस की"(प्रो0 अलेक्जेण्डर ग्रे) विवेचना कीजिए।

इकाई-3 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त
(Theory of Optimum Population)

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त
3.3.1 सिद्धान्त का उद्भव एवं विकास
3.3.2 मान्यताएं
3.3.3 अर्थ एवं परिभाषाएं
3.3.4 सिद्धान्त की व्याख्या
3.4 अनुकूलतम जनसंख्या के सम्बन्ध में डाल्टन एवं रॉबिन्स के विचार
3.4.1 डाल्टन एवं रॉबिन्स के दृष्टिकोण में अन्तर
3.4.2 कार साउन्डर्स के विचार
3.5 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त की महत्वपूर्ण विशेषताएं
3.6 सिद्धान्त की आलोचनाएं
3.7 सिद्धान्त का महत्व
3.8 माल्थस के सिद्धान्त से तुलना एवं श्रेष्ठता
3.9 अभ्यास प्रश्न
3.10 सारांश
3.11 शब्दावली
3.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची एवं
3.14 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.15 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

इकाई 02 के अध्ययन से आप समझ गये होंगे कि प्रो0 माल्थस को भी जनसंख्या सिद्धान्त के प्रतिपादन के बाद कटु आलोचनाओं का शिकार होना पड़ा। इन आलोचनाओं ने जनसंख्या समस्या पर सही दृष्टिकोण से विचार करने की प्रेरणा प्रदान की। आधुनिक अर्थशास्त्री भी इस बात पर सहमत नहीं थे कि जनसंख्या की प्रत्येक वृद्धि हानिकारक ही होती है। अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त में किसी देश की आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इस बात का अध्ययन किया जाता है कि उस देश की जनसंख्या लाभदायक है या हानिकारक प्रो0 सेलिगमैन मानते हैं कि जनसंख्या की समस्या केवल संख्या या आकार की समस्या नहीं है वरन् यह कुशल उत्पादन तथा न्याय पूर्ण वितरण की समस्या है। इस नवीन दृष्टिकोण के आधार पर अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया। यह सिद्धान्त जनसंख्या में वृद्धि के कारकों एवं वृद्धि दर पर प्रकाश नहीं डालता है वरन् यह जानने का प्रयास करता है कि उत्पत्ति के साधनों तथा जनसंख्या का अनुपात अनुकूलतम या सर्वोत्तम है अथवा नहीं। इस प्रकार माल्थस के सिद्धान्त सर्वमान्य सामान्य सिद्धान्त है तो अनुकूल जनसंख्या सिद्धान्त विशिष्ट सिद्धान्त है जो देश की तात्कालिक परिस्थितियों के अनुसार जनसंख्या सम्बन्धी समस्या का अध्ययन करता है। इस प्रकार आप यह समझ सकते हैं कि यह सिद्धान्त कितना महत्वपूर्ण है।

3.2 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई का उद्देश्य आपको निम्न विषय बिन्दुओं को समझने में मदद करना है यथा

- ✓ अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त का उद्भव एवं विकास ।
- ✓ सिद्धान्त का अर्थ परिभाषा एवं व्याख्या।
- ✓ सिद्धान्त के विषय में प्रो0 डॉल्टन, प्रो0 राविन्स एवं प्रो० कॉर साउन्डर्स के विचार ।
- ✓ अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त की महत्त्वपूर्ण विशेषताएं।
- ✓ सिद्धान्त का महत्त्व।
- ✓ सिद्धान्त की माल्थस के सिद्धान्त से श्रेष्ठता।

3.3 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त (Theory of optimum population)

जनसंख्या के इस सिद्धान्त को अनुकूलतम, आदर्श एवं सर्वोत्तम जनसंख्या सिद्धान्त के नाम से भी जाना जाता है। इस सिद्धान्त में राष्ट्र के खाद्यान्न सहित समस्त आर्थिक उत्पादनों अर्थात् आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इस बात के निर्धारण का प्रयत्न किया गया है कि किसी राष्ट्र की बढ़ती हुई जनसंख्या लाभदायक है या हानिकारक। सर्वोत्तम जनसंख्या से आशय किसी राष्ट्र की उस जनसंख्या से है जो न तो अधिक हो और न कम हो। जनसंख्या की जिस मात्रा से प्रतिव्यक्ति आय या राष्ट्रीय आय या कुल उत्पादन या राष्ट्र में उपलब्ध आर्थिक साधनों का उपयोग अधिकतम हो।

3.3.1 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्तः उद्भव एवं विकास

इस सम्बन्ध में जननांकिकीविदों ने उसी दिन से चिन्तन एवं मन्थन करना शुरू कर दिया था जिस दिन मात्थस ने पूरी दुनिया को चेतावनी स्वरूप बताया था कि बढ़ती जनसंख्या हानिकारक है। यद्यपि इस सिद्धान्त के प्रतिपादन की कोई निश्चित तिथि निर्धारित नहीं की जा सकती पर आर्थिक विचारों के इतिहास के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सर्व प्रथम **एडवर्ड वेस्ट (Edward west)** ने सन् 1815 ई0 में अपने **"Essay on the application of the capital to land"** नामक लेख में यह विचार प्रतिपादित किया कि जनसंख्या के बढ़ने

के साथ-साथ श्रम में विशिष्टता आ जाती है जिससे उत्पादन में वृद्धि होती है। इस विचार को इस सिद्धान्त का मात्र संकेत कहा जा सकता है। इसके बाद 19वीं शती के अन्त में **(Henry sidgwick) हेनरी सिजविक** ने अनुकूलतम जनसंख्या के विचार की नींव रखी। सिजविक ने अपनी **पुस्तक Principles of political economey** में इस प्रकार विचार व्यक्त किये है, ***"जिस प्रकार एक व्यक्तिगत फर्म में एक ऐसा बिन्दु आता है जो अधिकतम प्रतिफल प्रदान करता है, यह उस समय होता है जब फर्म के अन्दर एक उचित अनुपात में सब साधनों का लगाया जाये। यह बात सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था में लागू होती है ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार फर्म या व्यक्तिगत अर्थ व्यवस्था पर उन्होंने बताया कि एक अनुपात में यदि सब साधनों को लगाया जाय तो एक ऐसा बिन्दु आता है जबकि उत्पादन अधिकतम होता है।*** यद्यपि उन्होंने अनुकूलतम शब्द का प्रयोग नहीं किया लेकिन उनका संकेत उसी तरफ था। इस कथन का सहारा लेकर **एडविन कैनन (edwin Canon)** ने सन् 1924 में प्रकाशित अपनी पुस्तक '**Wealth**' में सर्व प्रथम अनुकूलतम शब्द का प्रयोगकर अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त की एक क्रमबद्ध व वैज्ञानिक व्याख्या करते हुए सिद्धान्त को प्रतिपादित किया। बाद में इस सिद्धान्त को व्यापक रूप प्रदान करने वाले विद्वानों में प्रो0 डाल्टन (Dalton), प्रो0 राबिन्स (Robbins) एवं प्रो0 कार-साडण्डर्स (Car-Saunders) की भूमिका उल्लेखनीय रही।

3.3.2 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त: मान्यताएं (Assumptions)

जनांविकीविदों ने अपने इस सिद्धान्त को निम्न प्रमुख मान्यताओं के साथ प्रस्तुत किया है1. किसी देश की जनसंख्या वृद्धि के बावजूद भी कार्यशील जनसंख्या का कुल जनसंख्या से पारस्परिक अनुपात अपरिवर्तित अर्थात् समान रहता है। 2. देश की कार्यशील जनसंख्या के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किया गया प्रति घण्टा उत्पादन तथा कार्य के घण्टे स्थिर ही रहते हैं। देश की जनसंख्या बढ़ने के बावजूद भी एक समय विशेष में उस देश के प्राकृतिक साधन, पूंजी की मात्रा एवं प्राविधिक अवस्था में कोई परिवर्तन नहीं होता।

3.3.3. अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त: अर्थ एवं परिभाषाएं (Meaning and Definitions)

अनुकूलतम जनसंख्या से अभिप्राय उस जनसंख्या से है जो किसी देश में एक निश्चित समय पर दिये हुए साधनों का अधिकतम उपयोग तथा उत्पादन के लिए आवश्यक है। जब देश की जनसंख्या का आकार आदर्श रहता है तो प्रति व्यक्ति आय अधिकतम होती है। इस प्रकार एक विशेष समय तथा परिस्थितियों में वही जनसंख्या सर्वोत्तम होती है जिसमें प्रति व्यक्ति आय अधिकतम होती है। सिद्धान्त की अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषों को समझना आवश्यक है। यथा

1. **डाल्टन (Dalton)**– ***"अनुकूलतम जनसंख्या वह होती है जो प्रति व्यक्ति अधिकतम आय प्रदान करती है।" (Optimum Population is that which gives the maximum income per head)***

2. बोल्डिंग (Boulding)- "वह जनसंख्या जिस पर जीवन स्तर अधिकतम होता है अनुकूलतम जनसंख्या कहलाती है।" (The population at which the standard of life is maximum is called the optimum population-Economic Analysis P-658)

3. **वोल्फ (Wolf)** - ***"वह जनसंख्या जो अधिकतम उत्पादन सम्भव बनाती है अनुकूलतम जनसंख्या अथवा सबसे अच्छी जनसंख्या है।"***

4. **राबिन्स (Robbins)** - ***"अनुकूलतम जनसंख्या वह है जिसमें अधिकतम उत्पादन संम्भव होता है।" (Optimum population is the Population which just makes the maximum returns possible)***

5. **कार साण्डर्स (Car Saunders)**- ***"अनुकूलतम जनसंख्या वह है जो अधिकतम आर्थिक कल्याण उत्पन्न करती है।" (Optimum population is that which produce maximum economic***

welfare.)

6. **जे0आर0 हिक्स (J.R. Hicks)** - ***"अनुकूलतम जनसंख्या, जनसंख्या का वह स्तर है जिस पर प्रति व्यक्ति उत्पादन अधिकतम होता है।' (Optimum population is that level of population which would make out put per head a maximum – social framework, p-271).***

7. **एरिक रोल (Eric Roll)** - ***"अनुकूलतम जनसंख्या किसी देश की वह जनंसख्या है जो अन्य साधनों की दी हुई मात्रा के सहयोग से अधिकतम उत्पादन कर सके।"***

8. **एडविन कैनन (Edwin Canon)** – ***"किसी दिये हुए समय पर किसी देश में उत्पादन का एक अधिकतम बिन्दु होता है जहां पहुंचने पर जनसंख्या तथा प्राकृतिक साधनों का पूर्ण समन्वय हो जाता है, इस स्थिति में श्रम की मात्रा ऐसी होती है कि उसमें वृद्धि तथा कमी दोनों ही उत्पत्ति में कमी लाती है।"***

अपने कथन को **प्रो0 कैनन** ने और स्पष्ट करते हुए लिखा है कि, ***"प्रत्येक उद्योग में अधिकतम उत्पादन का एक बिन्दु होता है, इसी प्रकार सभी उद्योगों को मिलाकर भी उत्पादन का एक अधिकतम बिन्दु होता है। यदि सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के उत्पादन को इस बिन्दु तक लाने के लिए जनसंख्या कम हो तो यह स्थिति जनाभाव की है, अतः जनसंख्या की वृद्धि करनी होगी। इसके विपरीत यदि जनसंख्या इतनी अधिक है कि वह उस बिन्दु से आगे बढ़ गई है तो इसका तात्पर्य यह है कि देश में जनाधिक्य की स्थिति है और जनसंख्या में कमी द्वारा इसे दूर किया जा सकता है।"***

यदि आप अनुकूलतम जनसंख्या के सम्बन्ध में व्यक्त किये गये विभिन्न विद्वानों के विचारों पर चिन्तन मनन करें तो निष्कर्षतः आप समझ गये होंगे कि डॉल्टन की परिभाषा अधिक सरल, वैज्ञानिक एवं यथार्थपरक है। राबिन्स का दृष्टिकोण अधिक विस्तृत है। उनके अनुसार अनुकूलतम जनसंख्या वह होगी जहां कुल उत्पादन अधिकतम होगा। इस प्रकार वे अर्थव्यवस्था की समस्त उत्पादक सेवा को लेकर चलते है। यद्यपि राविन्स, डाल्टन की भांति धन या कुल उत्पादन के वितरण पर बल नहीं देते परन्तु उन्होंने अनुकूलतम जनसंख्या के विचार में उपभोग को सम्मिलित करके उसे विस्तृत रूप प्रदान कर दिया। इस प्रकार रॉबिन्स का विचार जहां अधिक विस्तृत है वहीं डाल्टन का विचार सरल तथा व्यावहारिक है। डाल्टन की परिभाषा इस दृष्टिकोण से वैज्ञानिक है कि जनसंख्या के अनुकूलतम स्तर के लिए उत्पादन को अधिकतम बनाना ही पर्याप्त नहीं है वरन् इस बात की भी आवश्यकता है कि इसका न्यायोचित वितरण भी हो। कार साण्डर्स की भी परिभाषा सर्वस्वीकार नहीं है क्योंकि कल्याण के फलस्वरूप अन्य वितरण तथा निर्गत की संरचना के सम्बन्ध में मूल्य निर्णय लेने पड़ते हैं। इस प्रकार डाल्टन की परिभाषा सर्वग्राह्य है।

3.3.4 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त: व्याख्या (Explanation)

सिद्धान्त को जानने के पहले सिद्धान्त का आधार जानने का प्रयास करते हैं। अनुकूलतम या ईस्टतम (Optimum) का विचार सर्वत्र स्वीकार किया जाता है। एक कक्षा में कितने छात्र होना चाहिए, पहनने के लिए कितने कपड़े होने चाहिए, या कमरे में पढ़ने के लिए कितनी रोशनी होनी चाहिए, आदि प्रश्न ईष्टतम के विचार से ही सम्बन्धित है। ईष्टतम सर्वोत्तम तो है लेकिन अधिकतम नहीं है। उदाहरण के लिए एक श्रमिक अधिकतम मजदूरी अर्जित करने का यत्न तो कर सकता है लेकिन अधिकतम मजदूरी के लिए अन्य तत्वों को ध्यान में रखना होगा जैसे रोजगार की सुरक्षा, कार्य की दशायें, धन प्राप्ति के स्रोत की वैधानिकता आदि। अतः ऊँची मजदूरी मिलने पर भी वह ऐसे स्थान पर रोजगार स्वीकार हो करेगा जहा असुरक्षा हो। इस प्रकार वह एक अनुकूलतम या ईष्टतम मजदी की तलाश में रहता है न कि अधिकतम मजदरी की। इस प्रकार इष्टतम या अनुकूलतम स्थिति वह है जहाँ पर किसी लक्ष्य विशेष की पूर्ति सर्वोत्तम ढंग से की जा रही है। इसी परिप्रेक्ष्य में ईष्टतम या अनुकूलतम जनसंख्या की बात भी की जा

सकती है। **एलफ्रेड सौवे** ने इसीलिए लिखा है- ***"An optimum population is the one that achieves a given aim in the most satisfactory way."*** अब आपके सम्मुख प्रश्न उठता है कि कौन से लक्ष्य हैं जिन्हें हम अधिकतम करना चाहते हैं। व्यक्तिगत कल्याण, सम्पत्ति में वृद्धि, रोजगार, शक्ति, जनस्वस्थ एवं आय-प्रत्याशा जीवनस्तर, राष्ट्रीय उत्पादन, राष्ट्रीय आय, प्रति व्यक्ति आय, प्रति व्यक्ति उपभोग आदि। इन विभिन्न घटकों में आर्थिक आधार सर्वाधिक स्वीकार्य आधार हो सकता है। अतः जब भी अनुकूलतम का उल्लेख होता है हम आर्थिक ईष्टतम को लेते हैं। **सौवे** ने लिखा है, ***"The optimum population is only a convenient phrase. When we say that, a country is economically over populated, we mean that its populations is higher than its economic optimum at the present moment."*** यहाँ पर अनुकूलतम जनसंख्या के मापदण्डों का भी उल्लेख करना समीचीन प्रतीत होता है यथा

1. जनसंख्या की संरचना (Composition)
2. प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources)
3. प्रौद्योगिकी (Technology)
4 उत्पादन की विधियाँ (Production method)
5. मानवीय सुख (Human happiness)
6. व्यक्तिगत अवसर तथा सुरक्षा (Opportunity & Security)
7. प्रकृति के साथ सामंजस्य
8. पर्यावरण संरक्षण (Protection of Ecology)
9. आध्यात्मिक उपलब्धि

अब प्रश्न उठता है कि आर्थिक ईष्टतम या अनुकूलतम का आधार क्या हो? उत्पत्ति के नियमों से यह आप समझ गये होंगे कि साधनों का एक ऐसा संयोग होता है कि जिस पर लागतें न्यूनतम होती हैं। यदि उत्पत्ति के प्रत्येक साधन को आदर्श अनुपात में नहीं मिलाया जायेगा तब प्रत्येक साधन का पूरा-पूरा प्रयोग उत्पादन के क्षेत्र में नहीं किया जा सकेगा। सभी साधनों के आदर्श अनुपात में होते ही अधिकतम उत्पादन की सीमा आ जायेगी। अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त उत्पत्ति के नियमों (Law of Returns) पर आधारित है। जनसंख्या में वृद्धि तथा कार्यकारी जनसंख्या के मध्य फलनात्मक सम्बन्ध होता है। किसी देश के प्राकृतिक साधनों का समुचित ढंग से विदोहन करने के लिए यह आवश्यक होता है कि जनशक्ति का अन्य उत्पादन साधनों से एक निश्चित अनुपात बना रहे। यदि किसी देश की जनसंख्या कम है तो कार्यशील जनसंख्या भी कम होगी। अतः उत्पादन के साधनों का समुचित रूप से प्रयोग न हो पाने के कारण औसत उत्पादन एवं प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income) कम होगी। जब जनसंख्या बढ़ती है और कार्यशील जनसंख्या बढ़ती है तो श्रम विभाजन के लाभ के फलस्वरूप देश के साधनों का अच्छी तरह से प्रयोग के साथ प्रति व्यक्ति आय भी बढ़ने लगता है। इस तरह आप समझ गये होंगे कि प्रारम्भ में जनसंख्या वृद्धि के साथ श्रम की सीमान्त उत्पादकता तथा औसत उत्पादकता बढ़ेगी अर्थात् उत्पत्ति वृद्धि नियम (Laws of Increasing Returns) लागू होगा। उसके बाद एक ऐसा बिन्दु प्राप्त होगा जिस पर जनसंख्या का उत्पत्ति के अन्य साधनों के साथ इष्टतम सम्बन्ध स्थापित हो जायेगा। यहाँ औसत उत्पादन अधिकतम एवं अनुकूलतम होगी। यह अनुकूलतम जनसंख्या का बिन्दु होगा। यह उत्पत्ति समता नियम (Law of Constants Returns) की अवस्था है। यदि जनसंख्या में वृद्धि इसके बाद भी होती है तो यह अनुकूलतम संयोग भंग हो जायेगा। फलतः सीमान्त एवं औसत उत्पादन घटने से उत्पत्ति ह्रास नियम (Law of Decreasing Returns) क्रियाशील हो जायेगा, प्रति व्यक्ति आय घटने लगेगी।

अब आप समझ गये होंगे कि अनुकूलतम जनसंख्या का स्तर या बिन्दु वह है जहाँ प्रति व्यक्ति औसत आय

अधिकतम होगी। यदि जनसंख्या का आकार इस स्तर से कम है तो इसे न्यून जनसंख्या (Under Population) कहा जायेगा और जनसंख्या के आकार का इस बिन्दु से अधिक होने पर देश में अति जनसंख्या (Over Population) समझी जायेगी।

अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त को निम्न चित्र से भी आप समझ सकते हैं

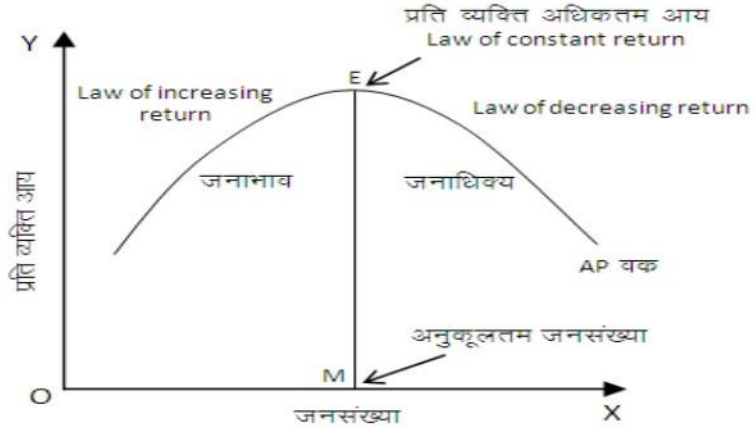

चित्र में AP प्रति व्यक्ति औसत आय अथवा औसत उत्पादन का वक्र है। प्रारम्भ में OM तक जनसंख्या में वृद्धि होने पर प्रति व्यक्ति वास्तविक आय तथा उत्पादकता बढ़ती है अर्थात् उत्पत्ति वृद्धि नियम (Law of Increasing Return) लागू होता है। OM जनसंख्या पर प्रति व्यक्ति आय ME होती है जो अधिकतम है। इसके उपरान्त प्रति व्यक्ति आय घटने लगती है यहां उत्पत्ति ह्रास नियम (Law of Decreasing Return) लागू हो जाता है। अतः OM अनुकलतम जनसंख्या है। चित्र से स्पष्ट है कि OM तक जनसंख्या वांछनीय है किन्तु M बिन्दु के बाद यह अवांछित है और इस पर रोक न लगने पर जनाधिक्य की समस्या उत्पन्न हो जायेगी।

प्रो0 माल्थस का मानना था कि यदि देश में नैसर्गिक प्रतिबन्ध लागू हो जाय तो यह स्थिति अतिजनसंख्या या जनाधिक्य (Over Population) की स्थिति का सूचक है परन्तु यह विचार वास्तविक नहीं है। अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त के अनुसार यदि किसी देश में अनुकूलतम से कम जनसंख्या है तो जनाभाव अन्यथा अनुकूतलम से अधिक है तो जनाधिक्य की स्थिति मानी जायेगी। डाल्टन का सूत्र- अनुकूलतम आकार से जनसंख्या की न्यूनता या आधिक्य मापने के लिए प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डाल्टन ने एक सूत्र की स्थापना की जो निम्नलिखित है

$$M = \frac{A - O}{O}$$

जहाँ, M= समायोजन अभाव की मात्रा (Degree of Maladjustment)

A = वास्तविक जनसंख्या (Actual Population)

O= अनुकूलतम जनसंख्या (Optimum Population) समायोजन अभाव से तात्पर्य है कि वास्तविक जनसंख्या अनुकूलतम जनसंख्या से कितनी कम या अधिक है। यदि M धनात्मक (Positive) है तो यह जनाधिक्य को, M ऋणात्मक है तो कम जनसंख्या अथवा जनाभाव का द्योतक है। यदि M शून्य है तो वास्तविक एवं अनुकूलतम जनसंख्या बराबर होगी।

3.4 अनुकूलतम जनसंख्या के सम्बन्ध में डाल्टन एवं राविन्स के विचार

अनुकूलतम जनसंख्या के सम्बन्ध में डाल्टन एवं राविन्स के ही विचार विशेष उल्लेखनीय है। डाल्टन ने

अनुकूलतम जनसंख्या के सिद्धान्त को प्रति व्यक्ति अधिकतम आय प्रदान करती है (Optimum population is that which gives maximum income per head)। इससे स्पष्ट होता है कि डाल्टन महोदय ने जनसंख्या का अध्ययन प्रतिव्यक्ति के दृष्टिकोण से किया है और अपने अध्ययन में व्यक्ति तथा आय दोनों को ही महत्व प्रदान किया है। डाल्टन के अनुसार जनसंख्या अनुकूलतम बिन्दु पर उसी समय पहुंची हुई समझी जायेगी जबकि वह देश में उपलब्ध प्राकृतिक साधनों, उत्पादन तकनीकि और पूंजी की सहायता से प्रति व्यक्ति अधिकतम आय अर्जित कर सके। यदि देश की जनसंख्या इस अनुकूलतम स्तर से कम होगी तो इसका अर्थ है साधनों का समुचित उपयोग नहीं हो पाया है। इसके विपरीत यदि जनसंख्या अनुकूलतम बिन्दु से अधिक होगी तब अन्य साधनों की प्रत्येक इकाई उत्पादन के क्षेत्र में कम काम करने के कारण औसत आय कम हो जायेगी। इस प्रकार आप समझ गये होंगे कि अधिकतम औसत आय तभी प्राप्त होगी जब उत्पादन के साधनों का संयोजन अनुकूलतम अनुपात में हो। इस बिन्दु से किसी भी दिशा में विचलन औसत आय में कभी ला देगा।

प्रो0 राविन्स के विचार डाल्टन से भिन्न है। उनके अनुसार, ***अनुकूलतम जनसंख्या वह है जिसमें अधिकतम उत्पादन सम्भव होता है (The population which just makes the maximum returns possible is the optimum or best population)*** इस तरह राविन्स ने अपने विश्लेषण में प्रति व्यक्ति आय के स्थान पर अधिकतम कुल उत्पादन को विशेष महत्व दिया है। राविन्स का दृष्टिकोण इसलिए थोड़ा महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि डाल्टन की तुलना में उन्होंने प्रति व्यक्ति औसत आय के स्थान पर सामाजिक उत्पादन को महत्व दिया है। रॉविन्स के अनुसार जनसंख्या में वृद्धि उस सीमा तक उचित है जिस सीमा तक कुल उत्पादन में वृद्धि पायी जाती हो। यह तभी हो सकता है जब प्रति व्यक्ति आय अधिकतम न हो। अनुकूलतम जनसंख्या तभी होगी। जब प्रत्येक व्यक्ति को जीवन निर्वाह के लिए पर्याप्त आय प्राप्त होती है।

3.4.1 डॉल्टन एवं रॉविन्स के दृष्टिकोण में अन्तर

प्रो0 डॉल्टन एवं प्रो0 रॉविन्स के दृष्टिकोणों में तुलनात्मक अध्ययन करने पर उनके दृष्टिकोण में जो अन्तर पाया जाता है निम्नवत् प्रस्तुत है

1. प्रो0 डाल्टन, आदर्श जनसंख्या के निर्धारण के प्रति व्यक्ति आय को आधार मानते हैं। आपके अनुसार आदर्श जनसंख्या वह जनसंख्या है जिसमें देश के प्राकृतिक साधनों, पूँजी, उत्पादन कला का उपयुक्त व पूर्ण विदोहन हो सके और प्रति व्यक्ति आय अधिकतम प्राप्त की जा सके। जबकि रॉबिन्स, आदर्श जनसंख्या का आधार अधिकतम कुल उत्पादन को मानते हैं। आपके अनुसार, ***"अनुकूलतम जनसंख्या वह जनसंख्या है जो उत्पादन को अधिकतम बनाती है।"***

2**. प्रो0 डाल्टन** के अनुसार जनसंख्या की वृद्धि उस मात्रा तक अच्छी है जब तक प्रति व्यक्ति आय अधिकतम बिन्दु में नहीं पहुँच जाती। जबकि रॉबिन्स के अनुसार यह वृद्धि तब तक अच्छी है जब तक अधिकतम उत्पत्ति का बिन्दु नहीं आ जाता।

3. इस दृष्टि से रॉबिन्स के अनुसार जनसंख्या का अनुकूलतम बिन्दु डाल्टन की अनुकूलतम जनसंख्या बिन्दु से कुछ आगे होगा। क्योंकि रॉबिन्स की दृष्टि से जनसंख्या का वही स्तर अनुकूलतम है जहाँ पर उत्पादन तथा उपभोग दोनों बराबर हों।

4. डाल्टन का मत है कि जनसंख्या यदि अनुकूलतम बिन्दु पर पहुंच चुकी है तो जन्म-दर की मात्रा इतनी उपयुक्त होगी कि उसे मृत्यु-दर को अर्थात् जनसंख्या के हास को प्रतिस्थापित किया जा सके। पर रॉबिन्स का कहना है कि यह कुछ अधिक भी हो सकती है।

5. दोनों विद्वानों के विचारों को यदि देखा जाये तो यह स्पष्ट होता है कि प्रो० डाल्टन ने इस सिद्धान्त में केवल देश की उत्पत्ति को ही ध्यान में नहीं रखा बल्कि देश में धन (उत्पादन) के उचित वितरण पर भी पर्याप्त बल दिया है।

जबकि रॉबिन्स ने केवल उत्पत्ति और उपभोग में ही अधिक ध्यान केन्द्रित किया है, उत्पत्ति और वितरण के सम्बन्ध पर नहीं।

6. रॉबिन्स का विश्लेषण सैद्धान्तिक तथा डाल्टन का विचार व्यावहारिक है। **रॉबिन्स** के अनुसार, ***"यदि देश में प्रति व्यक्ति लाभपूर्वण ढंग से रोजगार में लगा है, तब अति जनसंख्या का कोई भय नहीं है।" "(It every person in the country is gainfully employed, there is no fear of over population)".***

7. एक दृष्टि से रॉबिन्स का दृष्टिकोण अधिक उदार व विस्तृत प्रतीत होता है। पर जब हम न्यायोचित वितरण के आधार पर सोचते हैं तो डॉल्टन का विचार ही ज्यादा उदार और उनकी परिभाषा अधिक श्रेष्ठ व व्यावहारिक दिखती है। जबकि रॉबिन्स की परिभाषा संकीर्ण प्रतीत होने लगती है। यदि गहराई से विचार किया जाये तो यह कहा जा सकता है कि इन दोनों विद्वानों के विचारों में कोई वास्तविक अन्तर नहीं है, मात्र दृष्टिकोणों में ही भिन्नता है।

3.4.2 कार साउन्डर्स एवं अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त

कार साउन्डर्स का मानना है कि वह जनसंख्या जो प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि करे, आदर्श जनसंख्या कहलाती है। साउण्डर्स के अनुसार जब किसी देश की जनसंख्या में वृद्धि होती है, तो इससे श्रम विभाजन और विशिष्टीकरण को बल मिलता है, जिससे प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है। जनसंख्या में यह वृद्धि एक स्थिति को जन्म देती है, जिससे प्रति व्यक्ति आय अधिक हो जाती है, और जनसंख्या की इसी मात्रा को जो प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि करें, अनुकूलतम कहते हैं। इस बिन्दु को जो व्यक्ति की आय को अधिकतम करे, आदर्श या अनक्लतम जनसंख्या के नाम से जानी जाती है। इस प्रकार अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त की सहायता से हम किसी देश की जनसंख्या के उस आकार को जान जाते हैं, जो देश के लिए आर्थिक दृष्टि से उपयुक्त होती है। संक्षेप में जनसंख्या का वह आकार अनुकूलतम होगा, जो प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि करें।

जब किसी भी देश की जनसंख्या इस आदर्श बिन्दु से ऊपर बढ़ती है, तो इससे प्रति व्यक्ति आय कम हो जाती है। जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ती जाती है. प्रति वैसे-वैसे कम होती जाती है। इसके साथ ही जब किसी देश की जनसंख्या बढ़ती है, तो इससे भी प्रति व्यक्ति प्राकृतिक साधन और उपलब्ध पूँजी घटने लगती है, बेरोजगारी बढ़ जाती है और प्रति व्यक्ति आय कम हो आती है। साउण्डर्स ने इस स्थिति को जनाधिक्य (Over Population) की स्थिति कहा है।

3.5 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त:

महत्वपूर्ण विशेषताएं अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त की महत्वपूर्ण विशेषताएं निम्नलिखित है

1. उत्पत्ति हास नियम पर आधारित- यह सिद्धान्त परिवर्तनशील अनुपात या उत्पत्ति ह्रास नियम पर आधारित है।

2. अनुकूलतम जनसंख्या का बिन्दु गतिशील होता है- अनुकूलतम जनसंख्या का बिन्दु गतिशील होता है। जिन साधनों को दिया हुआ मान लिया गया है उसमें से किसी में भी परिवर्तन होने पर, यह अनुकूलतम बिन्दु या स्तर बदल जाता है। उदाहरणार्थ, देश में वैज्ञानिक प्रगति, तकनीकी विकास, प्राकृतिक साधनों की खोज, उत्पादन की नयी रीतियों के अनुसंधान से प्रति व्यक्ति उत्पादन में वृद्धि होगी और अनुकूलतम बिन्दु ऊपर को खिसक जाएगा। अनुकूलतम जनसंख्या के बिन्दु की गतिशील प्रकृति को चित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है

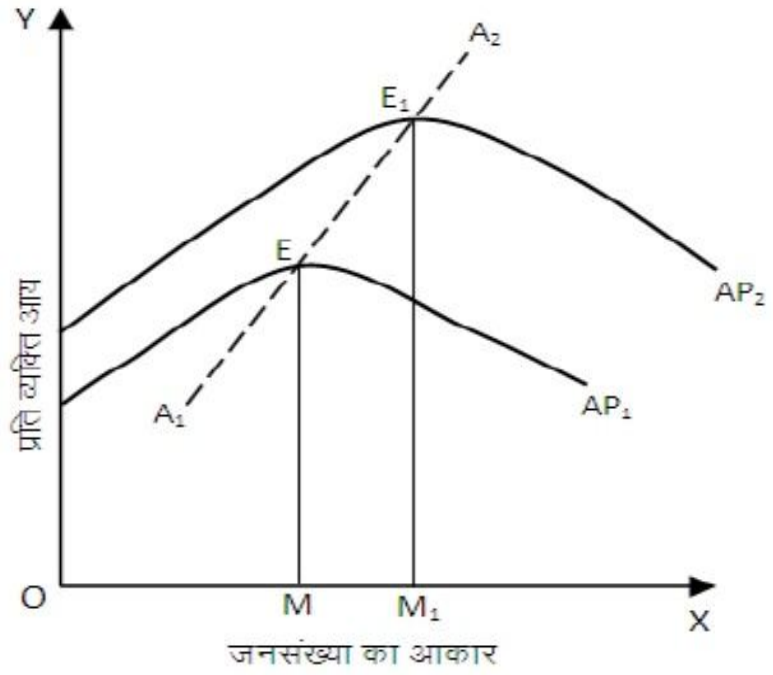

उत्पादन की तकनीक तथा वैज्ञानिक विकास की एक दी हुई स्थिति में AP1 औसत उत्पाद वक्र अथवा प्रति व्यक्ति आय वक्र है जिस पर अनकलतम जनसंख्या स्तर OM है। उत्पादन की विधियों में सुधार तथा अनुसंधान के फलस्वरूप उत्पादन में वृद्धि होती है और प्रति व्यक्ति आय EM से बढ़कर E1, M1 हो जाती है क्योंकि अब नयी औसत उत्पादन रेखा ऊपर उठकर AP, हो जाती है। फलस्वरूप, अनुकूलतम जनसंख्या का बिन्दु M से बढ़कर M1 हो जाता है। OM जनसंख्या जो पहले अनुकूलतम थी अब अल्प-जनसंख्या हो चुकी है। चित्र में AIA, रेखा जनसंख्या के प्रावैगिक स्वरूप (Dynamic Nature) को प्रकट करती है।

3. अनुकूलतम जनसंख्या परिमाणात्मक ही नहीं गुणात्मक विचार भी है- कुछ आधुनिक अर्थशास्त्रियों जिनमें प्रो0 बोल्डिंग, प्रो0 टी0आर0बाई, प्रो0 पेनरोज प्रमुख हैं, की धारणा है कि अनुकूलतम जनसंख्या एक परिमाणात्मक विचार ही नहीं बल्कि गुणात्मक विचार भी है। यही कारण है कि बोल्डिंग 'प्रति व्यक्ति आय' के स्थान पर 'जीवन स्तर' शब्द का प्रयोग करते हैं। प्रो0 बाई जनसंख्या के उस आकार को अनुकूलतम मानते हैं जो (प्रति व्यक्ति अधिकतम आय के अतिरिक्त) सामाजिक एवं आर्थिक जीवन को भी उच्चतम बना सके। स्वभावतः जब उत्पादन या आय बढ़ती है तो लोगों के आर्थिक कल्याण में भी वृद्धि होती है जिससे उनका जीवन स्तर ऊँचा उठने लगता है, परन्तु चरित्र, स्वास्थ्य, आदि गुणात्मक बातों को सम्मिलित करने से किसी समय पर एक देश के लिए सही रूप से अनुकूलतम जनसंख्या को ज्ञात करना अत्यन्त कठिन हो जाता है।

3.6 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त: आलोचनाएं (Criticism)

अनुकूलतम जनसंख्या का सिद्धान्त समाज के लिए अत्यधिक उपयोगी है लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं कि यह पूर्णतया दोषमुक्त है। अनेक विद्वानों ने निम्न आधारों पर इसकी आलोचनाएँ की हैं

1. इस सिद्धान्त की मान्यताएँ यथार्थ नहीं है-

(क) यह मान्यता कि जनसंख्या वृद्धि के बावजूद जनसंख्या में कार्यशील जनसंख्या का अनुपात अपरिवर्तित रहता है, सही नहीं है।

(ख) यह मान्यता भी त्रुटिपूर्ण है कि जनसंख्या में वृद्धि होने पर भी देश के प्राकृतिक साधन, पूँजी की मात्रा व

उत्पादन प्रविधियाँ अपरिवर्तित रहती है। आज के इस प्रावैगिक समाज में इनके अपरिवर्तित रहने की कल्पना यथार्थ से परे है।

(ग) यह कहना भी कि कार्यशील जनसंख्या के कार्य के घंटे तथा उनके द्वारा किया जाने वाला प्रति घंटा कार्य स्थिर रहता है, व्यावहारिक नहीं प्रतीत होता।

2. यह सिद्धान्त व्यावहारिक नहीं है- इसमें जिस अनुकूलतम या आदर्श जनसंख्या की बात की गई है उसकी माप करना यथार्थ जगत् में अत्यन्त ही कठिन है। जैसा कि **चटर्जी** ने लिखा है- ***"इस आकस्मिक और प्रतिक्षण परिवर्तित संसार में वस्तुतः अनुकूलतम जनसंख्या की खोज मृगतृष्णा की भाँति है।"***

(3) जनसंख्या का सिद्धान्त मानना ही अनुचित- आलोचकों का मत है कि अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त को जनसंख्या का सिद्धान्त मानना ही अनुचित है क्योंकि, यह सिद्धान्त 'कारण एवं परिणाम' के सम्बन्धों पर समुचित प्रकाश नहीं डालता। यह इस सन्दर्भ में मौन है कि जनसंख्या किस प्रकार और क्यों बढ़ती है अथवा उसके बढ़ने का नियम क्या है? इस सिद्धान्त के निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि कारण एवं परिणाम में सम्बन्ध हो। यह सिद्धान्त वस्तुतः जनसंख्या विवेचन में 'अनुकूलतम' के प्रत्यय का प्रयोग मात्र है। यही कारण है कि जहाँ (Benay K. Sarkar) ने 'इसे स्वभाव से अवैज्ञानिक कहा है।' वहीं सोरोकिन जैसे समाजशास्त्री यह कहने को मजबूर हुए हैं कि ***"यह कुतर्कों का दुष्चक्र है।"***

4. यह सिद्धान्त आधुनिक परिवर्तनशील जगत के लिए अत्यन्त स्थैतिक है- अनेक विद्वानों ने सिद्धान्त की स्थिर प्रकृति के कारण इसे आधुनिक प्रगतिशील जगत् के लिए अनुपयुक्त और स्थैतिक कहा है- Alva Myrdal के अनुसार- यह सिद्धान्त एक ***"पुराना स्थैतिक विश्लेषण है।"*** आज की दुनिया में तकनीकी, सामाजिक संस्थाएँ व आर्थिक संगठन एक-सी स्थिति में नहीं रहते हैं। इतना ही नहीं उत्पादन फलन में परिवर्तन होने के कारण उत्पत्ति के नियमों में परिवर्तन होता रहता है। अतः इन तथ्यों को स्थिर मान लेना अवैज्ञानिक होगा। यही कारण है कि Paul Mombert ने कहा है कि यह सिद्धान्त आधुनिक जगत् के लिए 'केवल सैद्धान्तिक महत्व का है। अपनी स्थिर प्रकृति के कारण यह सिद्धान्त अपनी उपयोगिता ही खो बैठता है। **Hauser and Duncan** के अनुसार, ***"It is static and also volatile".***

5. यह सिद्धान्त मात्र भौतिकवादी दृष्टिकोण पर आधारित है- "इस सिद्धान्त में आदर्श जनसंख्या का माप करने के लिए भौतिक आधारों का ही अवलम्बन लिया गया है। जनसंख्या के गुणात्मक व अन्य पक्षों पर ध्यान नहीं दिया गया है। इस प्रकार यह सिद्धान्त केवल प्रति व्यक्ति आय और उत्पादन पर ध्यान देता है जो कि अपने आप में संव दृष्टिकोण का परिचायक है। वास्तव में जनसंख्या केवल आर्थिक आधारों से ही प्रभावित नहीं होती, बल्कि देश की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक व सैनिक शक्तियों से भी प्रभावित होती है। अतः जनसंख्या के निर्धारण में इन तथ्यों पर ध्यान दिया जाना चाहिए था।

6. यह सिद्धान्त आय के वितरण पक्ष पर ध्यान नहीं देता- इस सिद्धान्त की इस बात पर भी आलोचना की जाती है कि यह राष्ट्रीय आय के वितरण पक्ष की उपेक्षा करता है। केवल उत्पादन पक्ष पर ही ध्यान देता है। 'प्रति व्यक्ति अधिकतम औसत आय' का तब तक कोई महत्व नहीं जब तक कि राष्ट्रीय आय का समान वितरण नहीं होता। यदि कुल राष्ट्रीय आय कुछ गिने-चुने धनी व्यक्तियों के हाथों में ही केन्द्रित हो जाय तो समाज के आर्थिक कल्याण में वृद्धि नहीं हो सकती। इस प्रकार, यह सिद्धान्त राष्ट्रीय आय के समान वितरण जैसे महत्वपूर्ण पक्ष की उपेक्षा करता है।

7. अनुकूलतम जनसंख्या ज्ञात करना कठिन- अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त की एक महत्वपूर्ण आलोचना यह है कि किसी निश्चित अवधि में अनुकूलतम जनसंख्या का पता लगाना ही कठिन है। किसी देश में अनुकूलतम जनसंख्या स्तर के बारे में कोई प्रमाण नहीं मिलता। उसकी माप करना इसलिए सम्भव नहीं है क्योंकि अनुकूलतम

जनसंख्या से तात्पर्य है देश के लिए परिमाणात्मक (Quantitative) तथा गुणात्मक (Qualitative) आदर्श जनसंख्या। गुणात्मक-आदर्श जनसंख्या में जनसंख्या का न केवल शारीरिक गठन, ज्ञान तथा प्रज्ञान बल्कि उसकी श्रेष्ठतम आयु-संरचना (Age-Composition) भी सम्मिलित रहती है। ये चर (Variable) परिवर्तित होते रहते हैं और वातावरण से सम्बद्ध हैं। इस प्रकार जनसंख्या के अनुकूलतम स्तर की अवधारणा अस्पष्ट रहती है।

8. यह सिद्धान्त आर्थिक नीति निर्धारण में सहायक नहीं- यह सिद्धान्त आर्थिक नीति (Economic Policy) के मार्ग प्रदर्शन की दृष्टि से बेकार साबित होता है। जब वित्तीय नीति का उद्देश्य देश में रोजगार, उत्पादन तथा आय के स्तर को बढ़ाना है या स्थिर करना है, तो जनसंख्या के अनकलतम स्तर की बात ही नहीं होती है। अतः इस सिद्धान्त का कोई व्यावहारिक उपयोग नहीं है और इसे बेकार समझा जाता है।

9. सिद्धान्त का दृष्टिकोण संकुचित है- यह सिद्धान्त जनसंख्या के प्रश्न पर संकुचित दृष्टि से विचार करता है। मात्र प्रति व्यक्ति आय ही प्रगति का सूचक नहीं है। नागरिकों का स्वास्थ्य, शिक्षा, सभ्यता, निर्माण कौशल तथा नैतिक दृष्टि से उन्नत होना भी आवश्यक है। इस प्रकार आदर्श जनसंख्या के आकार पर विचार करते समय केवल आर्थिक उन्नति पर ही ध्यान देना पर्याप्त नहीं है बल्कि सामाजिक, राजनीतिक, नैतिक तथा सैनिक परिस्थितियों पर भी ध्यान देना चाहिए।

10. प्रति व्यक्ति आय का ठीक-ठाक माप सम्भव नहीं- प्रति व्यक्ति आय की माप में कठिनाई होती है। इस सम्बन्ध में आंकड़े प्रायः गलत, भ्रमोत्पादक तथा अविश्वसनीय होते हैं जो अनुकूलतम जनसंख्या की धारणा के प्रति सन्देह उत्पन्न करते हैं। शायद इसीलिए **Brinley Thomas** ने भी कहा है, ***"यह धुंधला पकड़ में न आने वाला विचार है।"***

उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त का जनांकिकी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान है। इस सिद्धान्त के प्रतिपादन से लोगों में सामान्य 'माल्थूसियन भूत' (Malthusian Devil) का डर कम हो गया। इस सिद्धान्त ने यह स्पष्ट किया कि जनसंख्या की प्रत्येक वृद्धि हानिकारक नहीं होती। यदि जनसंख्या वृद्धि के साथ प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है तो उसका बढ़ना हितकर नहीं होता। अतः इस सिद्धान्त को ध्यान में रखकर जनसंख्या वृद्धि को प्रोत्साहित अथवा हतोत्साहित किया जा सकता है।

3.7 अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त: महत्व (Importance)

अनेक आधारों पर इस सिद्धान्त की आलोचनाएँ की गई हैं पर इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि इस सिद्धान्त की कोई उपयोगिता या महत्व ही नहीं है। संक्षेप में सिद्धान्त के महत्व को निम्न बिन्दुओं से स्पष्ट किया जा सकता है

1. आदर्श जनसंख्या के सिद्धान्त का महत्व इसलिए है क्योंकि इसने जनसंख्या का खाद्य सामग्री के बीच कोई सम्बन्ध स्थापित नहीं किया है। इसके विपरीत इस सिद्धान्त में जनसंख्या को पूंजी, उत्पादन प्रविधि और प्राकृतिक साधनों से सम्बन्धित करने का प्रयास किया है।
2. जनसंख्या के अन्य सिद्धान्तों की तुलना में आदर्श जनसंख्या का सिद्धान्त अधिक वैज्ञानिक, वास्तविक और न्यायसंगत प्रतीत होता है। इस प्रकार राष्ट्र के दृष्टिकोण से भी आदर्श जनसंख्या का सिद्धान्त सत्य के अधिक नजदीक प्रतीत होता है।
3. आदर्श जनसंख्या का सिद्धान्त समाज में श्रम विभाजन तथा विशिष्टीकरण को प्रोत्साहित करता है। उत्पादन वृद्धि को बढ़ाता है। आविष्कारों तथा वैज्ञानिक खोजों को मान्यता प्रदान करता है और इस प्रकार औद्योगीकरण का मार्ग प्रशस्त करता
4. आदर्श जनसंख्या का सिद्धान्त मानव समाज के नैराश्यों का मात्र दस्तावेज नहीं है। इस सिद्धान्त में जनसंख्या की वृद्धि को भावी सुख और समृद्धि के साथ जोड़ा गया है।
5. आदर्श जनसंख्या सिद्धान्त के समर्थकों का विचार है कि जनसंख्या कम करने की अपेक्षा यह अधिक सरल है

कि समाज को अति जनसंख्या की स्थिति में पहुँचने से रोका जाय।

6. यह सिद्धान्त जनसंख्या को नियन्त्रित कर कम करने पर बल देता है। इस प्रकार परिवार नियोजन की सफलता के लिए भी यह सिद्धान्त उपयोगी है।
7. यह सिद्धान्त प्रति व्यक्ति आय की वृद्धि पर भी बल देता है क्योंकि प्रति व्यक्ति आय वृद्धि से ही किसी देश के नागरिकों की समृद्धि और सुख सम्भव है।
8. यह सिद्धान्त अपने वातावरण में परिवर्तन पर भी बल देता है। समय और परिस्थिति के अनुसार अपने वातावरण में परिवर्तन करने से समाज और राष्ट्र का सन्तुलन बना रहता है।
9. अनुकूलतम जनसंख्या का सिद्धान्त जनसंख्या वृद्धि को आर्थिक वृद्धि के साथ सम्बन्धित करता है।
10. इस सिद्धान्त में जनसंख्या को उत्पादनकर्ता के रूप में देखा गया है और स्पष्ट किया गया है कि किसी देश के लिए न तो जनसंख्या की कमी ही अच्छी होती और न ही इसकी वृद्धि।
11. इस सिद्धान्त के समर्थकों ने प्रति व्यक्ति आय को ही जनसंख्या निर्धारण का आधार माना है जो अधिक उचित है।
12. यह सिद्धान्त इस बात का खंडन करता है कि मानव परिस्थितियों का दास नहीं ह परिस्थितियों को अपना दास बना सकता है।

3.8 माल्थस के सिद्धान्त से तुलना एवं श्रेष्ठता

अनेक आलोचनाओं के बावजूद अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त को माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त के श्रेष्ठतर समझा जाता है। इसका कारण अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त की अपनी कुछ विशेषताएं हैं जिन्हें निम्नवत् वर्णित किया जा सकता है

1. माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त मानव समाज को एक नैराश्य जीवन एवं नैराश्य __चिन्तन की ओर अग्रसर करता है। साथ ही दुःखद भविष्य की चेतावनी भी देता है। इसके विपरीत आदर्श जनसंख्या का सिद्धान्त सुखद भविष्य का संकेत देता है तथा मानव समाज में आशावादी चिन्तन को महत्व प्रदान करता है।

2. माल्थस के सिद्धान्त में जड़ता एवं स्थायित्व है। माल्थस का यह सिद्धान्त गतिशील चिन्तन से परे है। इसके विपरीत आदर्श जनसंख्या सिद्धान्त में गतिशीलता को महत्व प्रदान किया गया है।

3. माल्थस के जनसंख्या के सिद्धान्त में देश की भावी प्रगति की रूपरेखा नहीं है, जबकि आदर्श जनसंख्या का सिद्धान्त देश की भावी प्रगति पर आधारित है।

4. माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त में मानवीय संभावनाओं का गलत अनुमान लगाया गया है, जबकि आदर्श जनसंख्या का सिद्धान्त मानवीय संभावनाओं पर आधारित है।

5. माल्थस अपने सिद्धान्त में जनसंख्या को केवल खाद्य-पूर्ति से सम्बन्धित करता है जबकि अनुकूलतम जनसंख्या के सिद्धान्त में जनसंख्या को देश के समस्त साधनों, कुल उत्पादन तथा राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित किया गया है जो कि अधिक उपयुक्त है। माल्थस जनसंख्या की हर एक वृद्धि को सदैव हानिकारक मानता है। अनुकूलतम जनसख्या सिद्धान्त में हर वृद्धि को हानिकारक नहीं माना गया। केवल वही जनसख्या की वृद्धि व स्थिति हानिकारक है जो आदर्श जनसंख्या बिन्दु से अधिक हो।

7. माल्थस अपने सिद्धान्त में यह नहीं बतलाता है कि एक समय विशेष में किसी देश में वास्तव में कितनी जनसंख्या होनी चाहिए जबकि अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त आदर्श जनसंख्या की मात्रा को निश्चित करता है, जो अधिक उपयुक्त है।

8. माल्थस का सिद्धान्त अपने आप में निराशावाद को लिये हुए है जबकि अनुकूलतम सिद्धान्त जनसंख्या की

प्रत्येक वृद्धि को चिन्ताजनक न मानते हुए आशावादी है।

9. माल्थस ने किसी भी देश में प्राकृतिक प्रकोपों जैसे- अकाल, अनावृष्टि, अतिवृष्टि, भूकम्प, महामारी आदि जिन्हें उसने नैसर्गिक अवरोध कहा है, कि क्रियाशीलता को जनाधिक्य का प्रतीक माना है। जबकि अनुकूलतम सिद्धान्त इन्हें जनाधिक्य के प्रतीक के रूप में नहीं मानता यह तो प्रति व्यक्ति आय को ही वास्तविक कसौटी मानता है।

10. माल्थस का सिद्धान्त केवल पिछड़े तथा अति जनसंख्या वाले देशों में ही लागू होता है। जबकि अनुकूलतम सिद्धान्त हर स्थिति व जनसंख्या वाले देशों पर लागू होता है।

11. माल्थस का सिद्धान्त जनसंख्या का मात्र संख्यात्मक विश्लेषण ही करता है गुणात्मक नहीं। जबकि अनुकूलतम सिद्धान्त माल्थस की तरह जनसंख्या के गुणात्मक पहलू की पूर्णतया अवहेलना नहीं करता।

12. माल्थस ने जनसंख्या को प्रमुख रूप से उपभोक्ता के रूप में ही देखा है जबकि अनुकूलतम सिद्धान्त उसे उत्पादनकर्ता के रूप में भी देखता है।

13. माल्थस का सिद्धान्त जहाँ पूर्णतया स्थैतिक है वहाँ अनुकूलतम सिद्धान्त स्थैतिक ही नहीं प्रावैगिक भी है।

14. माल्थस का सिद्धान्त वैज्ञानिक नहीं है क्योंकि वह जनसंख्या की मात्रा को भी निश्चितनहीं करता, साथ ही इसमें अनेक नैतिक और धार्मिक बातों का उल्लेख करता है, पर अनकुलतम सिद्धान्त इन दोषों से मुक्त है।

15. माल्थस का सिद्धान्त सैद्धान्तिक अधिक और व्यावहारिक कम है। वह जनसंख्या में होने वाली प्रत्येक वृद्धि को बुरा मानते थे क्योंकि वे लोगों पर कठिन विपत्तियां लाती है। **माल्थस** लिखते हैं कि- ***"प्रकृति की मेज कुछ इने-गिने अतिथियों के लिए बिछाई गयी है और वे जो बिना बुलाए आते हैं, उन्हें भूखे रहना पड़ेगा।" (The table of nature is laid for a limited number of guests and those who come uninvited must starve)।*** दूसरी ओर अनुकूलतम सिद्धान्त यह मानता है कि देश के प्राकृतिक साधनों का अधिकतम विदोहन करने के लिए जनसंख्या में वृद्धि केवल वांछित ही नहीं आवश्यक भी है।

16. माल्थस का सिद्धान्त इस अवास्तविक अवधारणा पर आधारित है कि प्रकृति कृपण है क्योंकि कृषि में घटते प्रतिफल का नियम कार्यशील रहता है। परन्तु, इस दृष्टि से अनुकूलतम सिद्धान्त की अवधारणा वास्तविक है। क्योंकि, यह सिद्धान्त मानता है कि पहले अनुकूलतम बिन्दु तक बढ़ते प्रतिफल का नियम कार्य करता है और उसके उपरान्त घटते प्रतिफल का नियम। उपर्युक्त तथ्यों की विवेचना से यह निष्कर्ष निकलता है कि अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त माल्थस के सिद्धान्त से श्रेष्ठतर है।

3.9 अभ्यास प्रश्न

लघुप्रश्न

अनुकूलतम जनसंख्या से क्या आशय है?

डॉल्टन के अनुकूलतम जनसंख्या सम्बन्धी क्या विचार हैं?

अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त के विषय में राविन्स का दृष्टिकोण बतायें।

कार साउन्डर्स के अनुकूलतम जनसंख्या के विचार स्पष्ट करें।

अनुकूलतम जनसंख्या परिमाणात्मक ही नहीं गुणात्मक विचार भी है, स्पष्ट करें।

अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त क्या माल्थस के सिद्धान्त से श्रेष्ठ है?

अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त की विशेषताओं को लिखें।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. निम्न में से कौन अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त से सम्बन्धित नहीं थे

(अ) कैनन

(ब) मार्शल
(स) रॉविन्स
(ब) डाल्टन

2. उत्पत्ति वृद्धि नियम लागू होने का एक अर्थ यह भी है
(अ) समान जनसंख्या
(ब) जनाधिक्य
(स) जनाभाव
(द) अति जनसंख्या

3. डाल्टन का जनसंख्या सिद्धान्त का सूत्र है
(अ) $M = \frac{A-O}{O}$
(ब) $N=M_1-M$
(स) $\frac{O-B}{Q}$
(ब) $M = \frac{O-A}{O}$

3.10 सारांश

प्रस्तुत इकाई सं0-3 में अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त का विवेचन किया गया है। इस सिद्धान्त को आदर्श ईष्टतम एवं सर्वोत्तम जनसंख्या सिद्धान्त का भी नाम दिया गया है। इस सिद्धान्त में राष्ट्र के आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इस बात का निर्धारण किया गया है कि किसी राष्ट्र की बढ़ती जनसंख्या लाभदायक है या हानिकारक। सर्वोत्तम जनसंख्या से आशय उस जनसंख्या से है जो न कम हो और न अधिक। इस सिद्धान्त के विषय में तभी से विद्वानों में चिन्तन प्रारम्भ हो गया था निशदिन माल्थस ने बढ़ती जनसंख्या हानिकारक है बताकर चेतावनी दी थी। एडवर्ड वेस्ट, हेनरी सिजविक के बाद एडविन कैनन ने इसे क्रमबद्ध एवं वैज्ञानिक रूप दिया। बाद में प्रो0 डाल्टन, प्रो0 राविन्स एवं प्रो० काक साउन्डर्स ने विस्तृत वैज्ञानिक व्याख्या की। **डाल्टन** का मानना था कि ***Optimum population is that which gives the maximum income per head.*** ***जबकि राविन्स का कहना था कि Optimum population is the population which just makes the maximum returns possible.*** अनुकूलतम जनसंख्या का स्तर या बिन्दु वह है जहां प्रति व्यक्ति औसत आय अधिकतम होगी। यदि जनसख्या का आकार इस स्तर से कम है तो under population एवं अधिक होने पर Over population समझी जायेगी। डाल्टन एवं राविन्स की परिभाषाओं में डाल्टन की परिभाषा को श्रेष्ठ माना गया है। इस प्रकार यह सिद्धान्त उत्पत्ति हास नियम पर आधारित है। इसका बिन्दु गतिशील होता है तथा इसका विचार मात्र परिणामात्मक ही नहीं वरन् गुणात्मक विचार से युक्त माना गया है। इस सिद्धान्त की आलोचनाएं भी पर्याप्त हुई है फिर भी जनसंख्या के दृष्टिकोण से यह महत्वपूर्ण सिद्धान्त बन गया है।

3.11 शब्दावली

- **अनुकूलतम जनसंख्या-** अनुकूलतम जनसंख्या वह जनसंख्या है जो उत्पादन को अधिकतम बनाती है। उत्पत्ति
- **वृद्धि नियम**– एक या एक से अधिक उत्पत्ति के साधनों को स्थिर रखते हुए अन्य साधनों की मात्रा

बढ़ाने पर जब उत्पादन परिवर्तनशील साधनों की बढ़ायी गयी मात्रा से अधिक बढ़ता है तो इसे उत्पत्ति वृद्धि नियम कहा जाता है।

- **उत्पत्ति समता नियम**- जब सभी उत्पादन सेवाओं को एक दिये हुए अनुपात में बढ़ाया जाता है तो उत्पादन भी उसी अनुपात में बढ़ता है।
- **उत्पत्ति हास नियम**- उत्पादन के किसी भी एक साधन को स्थिर रखते हुए अन्य साधनों की मात्रा में वृद्धि किया जाय या एक साधन को परिवर्तनशील रखते हुए अन्य साधनों को स्थिर रखा जाये तो एक बिन्दु के पश्चात् सीमान्त और औसत उत्पादन घटता जायेगा।

3.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर- 1. (ब), 2. (स) 3. (अ)

3.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- Dr. Premi, M.K., Ramanamma, A., Bambawale, Usha,. An Introduction to social demography, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Appleman, Philip (ed.) Thomos Robert Malthus: An Essay on the Principle of Population, New York: W.W. Norton and Co., Inc., 1976.
- Carr- Saunders, A.M., World Population: Past Growth and Present Trends, Oxford: Clarendon Press, 1936.
- Coale, Ansley J. and Edgar M. Hoover, Populationi Growth and Economic development in low income countries, Princeton University Press, 1958.
- Thompson, Warren S. and David T. Lewis: Population Problems; New York: Mc Graw Hill Book Co. 1976.

3.14 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

- डॉ० मिश्रा, जे0पी0, जनांकिकी, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा।
- डॉ0 बघेल, डी0एस0, जनांकिकी, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
- डॉ0 पन्त, जीवन चन्द्र, जनांकिकी, गोयल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
- अशोक कुमार, जनसंख्या, एक समाज वैज्ञानिक अध्ययन, हिन्दी ग्रंथ अकादमी प्रयाग, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
- डॉ0 मलैया, के.सी., जनसंख्या शिक्षा, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

3.15 निबन्धात्मक प्रश्न

1. अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।
2. अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त को स्पष्ट करते हए सिद्ध कीजिए कि यह माल्थस के सिद्धान्त से श्रेष्ठ है।
3. "अनुकूलतम जनसंख्या वह है जिसमें अधिकतम उत्पादन संभव होता है।" (रॉविन्स) विवेचना कीजिए।
4. अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त की विशेषता एवं महत्व को समझाइये।

इकाई-4 जनांकिकी संक्रमण का सिद्धान्त
Theory of DemographicTransition)

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 जनांकिकी संक्रमण का सिद्धान्त: जनसंख्या की अवस्थाएं
4.4 जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाएं एवं जनांकिकीविदों के विचार
4.4.1 प्रो0 सी0 पी0 ब्लैकर (Prof.C.P. Blacker)
4.4.2 प्रो0 थाम्प्सन एवं प्रो0 नाटेस्टीन एवं प्रो0 बोग (Prof.Thompson and Prof. Notestein and Prof. Bogue)
4.4.3 प्रो0 कार्ल सैक्स (Prof. Karl Sax)
4.4.4 प्रो0 लौन्ड्री (Prof. Laundry)
4.4.5 पीटर आर0 काक्स (Prof. Peter R. Cox)
4.4.6 प्रो0 डोनाल्ड ओलेन काउगिल (Prof. Donald Olen Cowgilly
4.5 जनांकिकीय संक्रमण सिद्धान्त एवं विकासशील देशों हेतु प्रासंगिकता (Relevance of Demographic Transition Theory to developing Countries)
4.6 सिद्धान्त की आलोचना
4.7 सिद्धान्त का मूल्यांकन
4.8. अभ्यास प्रश्न
4.9 सारांश
4.10 शब्दावली
4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.14 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

इकाई 02 एवं इकाई 03 के अध्ययन करके आप जनसंख्या के माल्थस के सिद्धान्त एवं अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त से परिचित हो गये होंगे। माल्थस का प्रमुख योगदान जनसंख्या अध्ययन में यह माना जाता है कि इन्होंने पूरे विश्व का ध्यान इस ज्वलन्त समस्या पर अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन कर आकर्षित किया। इसके बाद तो इस दिशा में सिद्धान्तकारों की संख्या एवं सिद्धान्त दोनों में अभिवृद्धि हुई। विश्व के अधिकांश अर्थशास्त्रियों व जनांकिकीविदों का सबसे अधिक समर्थन जिस सिद्धान्त को मिला वह जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त (Demographic Transition Theory) है। यह जनसंख्या के विकास का आधुनिकतम सिद्धान्त माना गया है। यह सिद्धान्त यूरोपीय देशों के अनुभवजन्य आंकड़ों पर आधारित है।

वर्तमान जनांकिकीवेत्ताओं का मानना है कि प्रत्येक समाज की जनसंख्या को विभिन्न अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है। प्रत्येक अवस्था की अपनी विशेषताएं होती है। इस सिद्धान्त में समाज के सामाजिक, आर्थिक विकास एवं उससे सम्बन्धित जनांकिकी चरों की प्रस्थिति की अवस्थाओं का अध्ययन कर आधुनिकतम सिद्धान्त से आप पूर्णतया भिज्ञ हो जायेंगे।

4.2 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई का उद्देश्य आपको निम्न विषय बिन्दुओं को समझने में मदद करना है। यथा

- ✓ जनांकिकी संक्रमण का सिद्धान्त एवं जनसंख्या की विभिन्न अवस्थायें।
- ✓ जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाएं एवं प्रमुख जनांकिकीविदों के विचार।
- ✓ प्रो0 सी0 पी0 ब्लैकर, प्रो0 नोटेस्टीन, प्रो० थाम्प्सन, प्रो0 कार्ल सैक्स, प्रो0 लॉन्ड्री, प्रो0 पीटर आर काक्स एवं प्रो0 काउगिल की चिन्तन धारा।
- ✓ इस सिद्धान्त की विकासशील देशों हेतु प्रासंगिकता।
- ✓ सिद्धान्त की आलोचना एवं मूल्यांकन पक्ष।

4.3 जनांकिकीय संक्रमण का सिद्धान्त: जनसंख्या की अवस्थाएं

यह जनसंख्या के विकास का आधुनिकतम सिद्धान्त है जिसे विश्व के अधिकांश अर्थशास्त्रियों व जनसंख्या शास्त्रियों का समर्थन मिला है। यह सिद्धान्त यूरोप के अनेक देशों के आँकड़ों पर आधारित है। यह सरल है, तर्क संगत है तथा सभी सिद्धान्तों में सर्वाधिक वैज्ञानिक प्रतीत होता है। वर्तमान जनसंख्या शास्त्रियों का मत है कि प्रत्येक समाज की जनसंख्या को अनेक अवस्थाओं से गुजरना होता है। प्रत्येक अवस्था की अपनी विशेषतायें होती हैं। विश्व का कोई देश प्रथम अवस्था में है तो कोई द्वितीय, और कोई तृतीय अवस्था में। इन तीनों अवस्थाओं का संक्षिप्त विवरण निम्न है। प्रथम अवस्था यह अवस्था पिछड़े देशों में होती है। जहाँ जन्म-दर भी ऊँची है तथा मृत्यु-दर भी ऊँची है। कृषि, आय का प्रमुख स्त्रोत है-ग्रामीण अर्थव्यवस्था। द्वितीयक उद्योग या तो हैं ही नहीं, यदि हैं तो बहुत छोटे पैमाने पर। तृतीयक उद्योग (Tertiary Sector) जैसे-बीमा, बैंक आदि नहीं होते हैं। प्रति व्यक्ति आय कम है अतः बच्चे आय बढ़ाने के स्रोत होने के कारण दायित्व नहीं वरन् पूँजी हैं। कृषि में प्रत्येक उम्र के बच्चे के लिये काम निकल आता है। अतः छोटा बच्चा भी आय का स्त्रोत होता है। बच्चों के विकास, शिक्षा एवं स्वास्थ्य की कोई महत्वाकांक्षा ही नहीं होती, अतः उनमें व्यय नहीं होता है। संयुक्त परिवार–व्यवस्था होती है, अतः लालन-पालन की कोई समस्या नहीं होती है। इन्हीं सब कारणों से प्रथम अवस्था में जन्म-दर ऊँची होती है तथा मृत्यु-दर भी ऊँची होती है।

प्रथम चरण में बड़े परिवार के अनेक आर्थिक लाभ भी होते हैं। **ए0 जे0 कोल** एवं **इ0 एम0 हूवर** ने लिखा है - ***"Children contribute at an early age..... And are traditional source of security in the old age of parents. The prevalent high death rates especially in infancy imply that such security can be attained only when many children are born."***

द्वितीय अवस्था द्वितीय चरण में अर्थव्यवस्था आर्थिक विकास की ओर अग्रसर होती है। कृषि के साथ उद्योग भी बढ़ने लगते हैं। परिवहन व शहरीकरण होने से गतिशीलता बढ़ती है। शिक्षा का विस्तार, आय में वृद्धि, भोजन, वस्त्र, आवास, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा में सुधार होने से मृत्यु-दर घटती है। किन्तु धर्मान्धता, रीति-रिवाज व रूढ़िवादिता के बन्धन ढीले नहीं होते हैं। अतः जन्म-दर नहीं घटती है और जनसंख्या विस्फोट की स्थिति आ जाती है। तृतीय अवस्था में जीवन-स्तर सुधार, मानसिक विकास, नारी–शिक्षा, नारी रोजगार में वृद्धि तथा औरतों में जागृति आती है। परिणामस्वरूप औरतें कम बच्चे पसन्द करने लगती हैं, सारे जीवन भर बच्चे खिलाने की अपेक्षा वे अन्य क्षेत्रों में सहयोग करना चाहती हैं, बच्चों की शिक्षा-दीक्षा अच्छी तरह करने की होड़ होने लगती है। शहरीकरण से आर्थिक कशमकश बढ़ती है, साधन कम पड़ने लगते हैं। परिवार नियोजन की विधियाँ विकसित होती हैं। विवाह की आयु बढ़ने लगती है अतः प्रजनन आयु-वर्ग का विस्तार घटने लगता है अतः दिखावा-प्रभाव (Demonstration effect) अत्यन्त प्रभावशील होता है। अतः जन्म-दर घटने लगती है। **प्रो0 ए0 जे0 कोल** ने निम्न वाक्यों में स्पष्ट किया है कि आर्थिक विकास किस प्रकार छोटे परिवार के प्रति लोगों को प्रेरित करता है – **"With the development of economic roles for women outside the home, tends to increase the possibility of economic mobility that can better be achieved with small families, and tends to decrease the economic advantages of a large family. One of the features of economic development is typically increase urbanisadtion and children are usually more of a burden and less of an assetin an urban setting than in a rural."**

विश्व के सभी देश इन्हीं तीन प्रमुख अवस्थाओं से गुजर रहे हैं अथवा गुजर चुके हैं। अफ्रीका के कुछ देश प्रथमावस्था में हैं, तो एशिया से कुछ द्वितीय अवस्था में हैं, तथा यूरोपीय देश तृतीय अवस्था में हैं। निम्न चित्र में इन तीनों अवस्थाओं का निरूपण किया गया है -

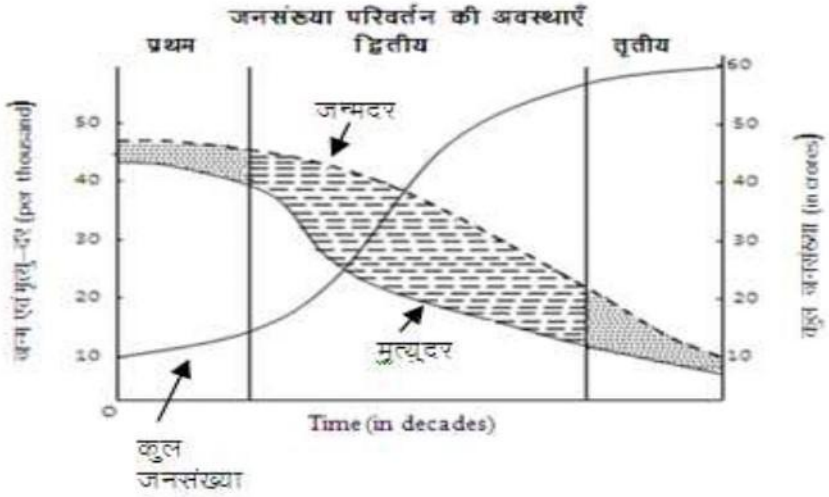

उपर्युक्त चित्र में ऐसी तीनों अवस्थाओं को प्रदर्शित किया गया है। प्रथम अवस्था में जन्म-दर करीब 46 या 48 प्रति हजार है। किन्तु मृत्यु-दर भी इसके करीब-करीब बराबर होती है, अतः जनसंख्या बहुत धीरे-धीरे बढ़ती है।

4.4 जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाएँ एवं जनांकिकीविदों के विचार

जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाओं के सम्बन्ध में जनांकिकीविदों ने अवस्थाओं का वर्गीकरण भिन्न-भिन्न किया है। यही कारण है कि प्रो0 सी0 पी0 ब्लैकर ने पांच अवस्थाएँ बतायी हैं तो प्रो0 थॉम्प्सन एवं नौटेस्ट्रीन एवं बोग ने सभी अवस्थाओं को केवल तीन में वर्गीकृत किया है। ओलेन काउगिल ने पांच अवस्थाएँ बतायी हैं तो कार्ल सैक्स ने मात्र चार अवस्थाएँ बतायी हैं। इनके अलावा प्रो0 लौन्ड्री, प्रो0 वोग एवं पीटर आर0 काक्स के भी विचार उल्लेखनीय हैं।

4.4.1 जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाएँ एवं प्रो0 सी0 पी0 ब्लैकर (Prof.C.P. Blacker) प्रो0 सी0 पी0 ब्लैकर ने जनांकिकी परिवर्तन की पांच अवस्थाएँ बतायी हैं।

(1) प्रथम अवस्था – उच्च स्थिर अवस्था (High Stationary Stage):- इस अवस्था में देश आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ तथा अर्द्धविकसित होता है। लोग अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं तथा उनका मुख्य व्यवसाय कृषि होता है और कृषि भी पिछड़ेपन की स्थिति में रहती है। उद्योग धन्धों का विकास नहीं हुआ होता है। कुछ थोड़े से उपभोक्ता वस्तु उद्योग ही रहते हैं। परिवहन, वाणिज्य, बैंकिंग एवं बीमा क्षेत्र बहुत पिछड़ी स्थिति में रहते हैं। इससे लोगों की आय का स्तर बहत नीचा रहता है तथा देश में गरीबी व्याप्त रहती है। संयुक्त परिवार प्रणाली, अशिक्षा, बाल-विवाह तथा अन्या सामाजिक कुरीतियों के कारण जन्म दर ऊँची रहती है। लोग अनपढ़, गंवार, बहमी और भाग्यवादी होते हैं उन्हें संतति निरोध के तरीकों से चिढ़ होती है। बच्चे भगवान की देन और किस्मत की बात समझे जाते हैं। बड़ा परिवार होना गर्व की बात समझी जाती है। सन्तानहीन मां-बाप को समाज में आदर की दृष्टि से नहीं देखा जाता है। देश में जन्म-दर में वृद्धि करने वाले सभी कारक मौजूद रहते हैं। ऊँची जन्म-दर के साथ ही साथ मृत्यु दर भी ऊँची रहती है क्योंकि लोगों को घटिया स्तर का अपौष्टिक भोजन प्राप्त होता है जिससे वे कुपोषण के शिकार रहते हैं, स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं का अभाव रहता है, तरह-तरह की बीमारियों, महामारी तथा प्राकृतिक प्रकोपों का शिकार जनसंख्या को बनना पड़ता है। लोग गन्दे, स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक, सीलनयुक्त तथा रोशनदानहीन घरों में रहते हैं। परिणामस्वरूप रोगग्रस्त हो जाते हैं और उचित चिकित्सा सुविधा के अभाव में मर जाते हैं। शिशु-मृत्यु दरें बहुत ऊँची रहती हैं। चूंकि इस अवस्था में जन्म-दर तथा मृत्यु-दर दोनों ही ऊँची रहती हैं अतः देश की जनसंख्या लगभग स्थिर रहती है। इस प्रकार की स्थिति, अफ्रीका व एशिया महाद्वीप के पिछड़े देशों में देखने को मिलती है।

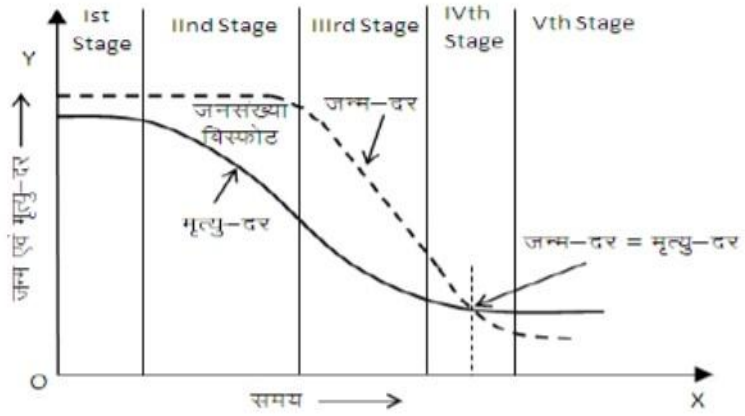

(2)द्वितीय अवस्था (Second Stage) :- दूसरी अवस्था में देश आर्थिक दृष्टि से कुछ विकास करने लगता है। कृषि की दशा में सुधार होने लगता है। कृषि में यन्त्रीकरण की शुरूआत हो जाने से उत्पादन बढ़ने लगता है। उद्योगों का विकास भी होना प्रारम्भ हो जाता है। पहले जो उपभोक्ता वस्तुएं विदेशों से आयात की जाती थीं वे अब देश में बनने लगती हैं। परिवहन के साधनों का विकास होने लगता है। श्रम की गतिशीलता बढ़ने लगती है। शिक्षा का

विस्तार होने लगता है। चिकित्सा तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाएं सुलभ होने लगती हैं। रहन-सहन का स्तर बढ़ने लगता है। इन सबका परिणाम यह होता है कि मृत्यु-दर घटने लगती है, परन्तु सामाजिक सोच में कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता। सामाजिक रीति-रिवाजों के कारण जन्मदर में कोई कमी नहीं आती। लोग परिवार के आकार पर विशेष नियन्त्रण करने के लिए प्रयत्न नहीं करते क्योंकि परिवार नि विषय में धार्मिक अन्धविश्वास तथा सामाजिक निषेध मौजूद रहते हैं। मृत्यु-दर में कमी होने और जन्म-दर में परिवर्तन न होने से जनसंख्या तेजी से बढ़ती है। परिणामस्वरूप जनसंख्या विस्फोट (population explosion) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है जिससे देश की अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जनसंख्या की ऊँची वृद्धि-दर जो हर वर्ष कुल आबादी में अच्छी वृद्धि कर देती है, के फलस्वरूप कुल राष्ट्रीय आय में वृद्धि के बावजद प्रति व्यक्ति आय का स्तर नीचा रहता है। इस प्रकार जन सामान्य के जीवन स्तर में कोई सुधार नहीं होता, लोग पिछड़े ही रहते हैं। सत्तर के दशक में भारत इस संक्रमण अवस्था से गुजर चुका है।

(3) तृतीय अवस्था (Third Stage):- तृतीय अवस्था में औद्योगीकरण पर विशेष ध्यान दिया जाता है। उन्नत एवं आधुनिक प्रकार की कृषि होने लगती है। उद्योग धन्धों की उन्नति के कारण नगरीकरण तेजी से होने लगता है। प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होने लगती है लोगों का जीवन स्तर बढ़ता है। रोजगार हेतु ग्रामीण क्षेत्रों से नगरों की ओर पलायन होने लगता है। सामाजिक परिवर्तन तेजी से होता है। समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार होता है। वे पुरूषों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर कार्य में बराबर का हिस्सा निभाने लगती हैं। शिक्षा में पर्याप्त सुधार होता है। लोगों का छोटे परिवार के प्रति झुकाव होने लगता है। रूढ़िवादी, परम्परावादी, अन्धविश्वासी एवं पुराने रीति-रिवाजों का लोग परित्याग करने लगते हैं। विभिन्न तरीकों से जनसंख्या को नियन्त्रित करने का प्रयास किया जाने लगता है। पहले से कम मृत्यु दर और घट जाती है। जन्म-दर में भी गिरावट आती है। इससे जन्म-दर एवं मृत्यु-दर के बीच अन्तर कम हो जाता है। इससे जनसंख्या की वृद्धि दर कम हो जाती है। इस अवस्था में भी जनसंख्या विस्फोट की स्थिति कुछ हद तक विद्यमान रहती है। इस समय भारत इसी अवस्था से गुजर रहा है।

(4)चतुर्थ अवस्था (Fourth Stage):- इस अवस्था में देश उच्च विकसित अवस्था में होता है। लोगों के रहन-सहन का स्तर काफी ऊँचा रहता है। पुरूष तथा स्त्री देर से शादी करना पसन्द करते हैं। लोग स्वतः खुशी से परिवार नियोजन की विधियां अपनाते हैं। इस अवस्था में जन्म क्रम एवं मृत्यु क्रम दोनों ही नियन्त्रित एवं नीचे रहते हैं जिससे सन्तुलन बना रहता है और जनसंख्या के आकार में कोई अन्तर नहीं आता। जनसंख्या में स्थिरता की स्थिति के बाद भविष्य में जनसंख्या घटने का ही डर रहता है। अतः जनसंख्या में वृद्धि हेतु उपाय खोजे जाने लगते हैं। आज यूरोप के विकसित देशों में यह स्थिति देखने को मिलती है।

(5) पंचम अवस्था (Fifth Stage) :- पांचवीं अवस्था आर्थिक विकास की अन्तिम अवस्था है। इस अवस्था में मृत्यु की अपेक्षा उत्पत्ति कम होती है। फलस्वरूप जनसंख्या का आकार घटता जाता है। देश में पूर्ण रोजगार की स्थिति रहती है। यह अवस्था फ़ांस आदि अति विकसित देशों में देखने को मिलती है।

इन अवस्थाओं को चित्र में प्रदर्शित किया गया है। सीधी रेखा द्वारा मृत्यु-दर तथा बिन्दु रेखा द्वारा जन्म-दर को प्रदर्शित किया गया है। प्रथम अवस्था में जन्म-दर तथा मृत्यु-दर दोनों ही ऊँची रहने के कारण जनसंख्या में लगभग स्थिरता की दशा में रहती है। जनसंख्या में कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता। दूसरी अवस्था में मृत्यु-दर बहुत तेजी से गिरती है परन्तु जन्म-दर लगभग स्थिर रहती है जिससे दोनों के मध्य तेजी से अन्तर बढ़ता है और जनसंख्या विस्फोट की स्थिति आ जाती है। तीसरी अवस्था में मृत्यु-दर के साथ जन्म–दर में भी कमी आने लगती है। परन्तु दोनों में पर्याप्त अन्तर रहने के कारण जनसंख्या विस्फोट की स्थिति बनी रहती है। चौथी अवस्था में जन्म एवं मृत्यु दर दोनों गिरती हैं एक स्थान पर दोनों समान हो जाती हैं। पांचवीं अवस्था में पहुंचने पर स्थिति पलट जाती है। जन्म-दर की अपेक्षा मृत्यु-दर अधिक हो जाती है परिणामस्वरूप कुल जनसंख्या के कार्यशील जनसंख्या घटने

लगती है। समाज में वृद्धों की संख्या में वृद्धि होने लगती है। श्रम पूर्ति की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

4.4.2 जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाएँ एवं प्रो0 थॉम्प्सन, प्रो0 बोग, व प्रो0 नोटेस्टीन (Prof. W.S. Thompson, Prof. Bogue, and Prof. F.W. Notestein) जनसंख्या में परिवर्तन की ब्लैकर ने जो 5 अवस्थाएँ बताई हैं, उसके स्थान पर इन विद्वानों ने परिवर्तन की तीन ही प्रमुख अवस्थाओं का उल्लेख किया है, जो इस प्रकार हैं -

(1) जनसंख्या की 'परिवर्तन से पूर्व' की अवस्था (Pre-transitional):- यह जनसंख्या में परिवर्तन की प्रथम अवस्था है जिसमें जन्म-दर और मृत्यु-दर पर कोई भी नियन्त्रण नहीं होता। अतः ऐसी स्थिति में जनसंख्या में तेजी से बढ़ने की सम्भावनाएँ अधिक रहती हैं। वास्तव में यह ब्लैकर द्वारा बताई गई 'ऊँची स्थिरता की प्रथम अवस्था से मिलती-जुलती अवस्था ही है।

(2) जनसंख्या की 'परिवर्तन' की अवस्था (Transitional) :- यह जनसंख्या में परिवर्तन की दूसरी अवस्था है जिसे ब्लैकर द्वारा बताई गई दूसरी, तीसरी और चौथी अवस्था से मिलती-जुलती अवस्था कहा जा सकता है। इसमें यद्यपि जन्म–दर और मृत्यु दर दोनों ही तेजी से घटती हैं। जन्म-दर जहाँ पहले धीरे-धीरे घटती है वहीं कुछ समय बाद इसकी गिरावट में वृद्धि होती है। वह स्थिति तीसरी अवस्था को प्राप्त करने तक बनी रहती है। बोग ने इस अवस्था को तीन उप–अवस्थाओं में बाँटा है - प्रथम (पहले), द्वितीय (मध्य), तृतीय (बाद) की अवस्था। वास्तव में यह विभाजन ब्लैकर द्वारा बताई गई 'शीघ्र बढ़ने वाली', 'धीरे-धीरे बढ़ने वाली' एवं 'नीची स्थिरता' की अवस्था का ही स्वरूप है।

(3) जनसंख्या की 'परिवर्तन के बाद' की अवस्था (Post Transitional) :- यह जनसंख्या में परिवर्तन की तीसरी एवं अन्तिम अवस्था है, जिसमें जन्म-दर और मृत्यु-दर दोनों ही कम होती है। अतः जनसंख्या वृद्धि की दर या तो शून्य अर्थात् न के बराबर होती है या इसी के आस-पास बहुत ही कम होती है। ऐसा इसलिए सम्भव होता है कि इस स्थिति में गर्भ निरोधक साधनों और तरीकों का प्रायः सभी को ज्ञान होता है और इनके अधिकाधिक प्रयोग द्वारा जनसंख्या में सन्तुलन स्थापित किया जाता है। यह अवस्था ब्लैकर द्वारा बताई 5वीं अवस्था (घटने वालों) के ही समान है।

4.4.3 जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाएँ एवं प्रो0 कार्ल सैक्स (Prof. Karl Sax)

कार्ल सैक्स ने जनसंख्या विकास की अवस्थाओं को चार भागों में विभाजित किया है जो इस प्रकार हैं -

(1) प्रथम अवस्था (First Stage):- इस अवस्था में जन्म एवं मृत्यु दोनों ही दरें ऊँची रहती हैं तथा जनसंख्या में लगभग स्थिरता की दशा विद्यमान रहती है। यह अवस्था सामान्यतया आर्थिक रूप से पिछड़े देशों में पाई जाती है।

(2) द्वितीय अवस्था (Second Stage) :- इस अवस्था में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सुविधाओं में वृद्धि के फलस्वरूप मृत्यु-दर में गिरावट आने लगती है। परन्तु सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विचारधारा में परिवर्तन नहीं आने से जन्म-दर लगभग समान बनी रहती है जिसके परिणामस्वरूप जनसंख्या में बहत तेजी से वद्धि होती है। यह अवस्था विकासशील देशों में पायी जाती है।

(3) तृतीय अवस्था (Third Stage):- इस अवस्था में मृत्यु-दर घटकर अपने निम्नतम स्तर पर स्थिर होने लगती है और जन्म-दर घटने के क्रम में रहती है, जिसके फलस्वरूप जनसंख्या वृद्धि की गति द्वितीय अवस्था की अपेक्षा कम रहती है। यह अवस्था उन देशों में पायी जाती है जहां विकास पर्याप्त मात्रा में हो चुका होता है।

(4) चतुर्थ अवस्था (Fourth Stage):- यह जनांकिकीय परिवर्तन की वह अवस्था होती है जहां जन्म एवं मृत्यु दर अपने निम्नतम स्तर पर होती है और लगभग समान रहती है। जहां जनसंख्या लगभग स्थिर रहती है उसमें कोई विशेष वृद्धि दृष्टिगोचर नहीं होती। यह अवस्था विकसित देशों में पाई जाती है।

कार्ल सैक्स की इन अवस्थाओं को निम्न चित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है :

सैक्स का विचार था कि मध्य की दोनों अवस्थाएँ जनसंख्या विस्फोट की अवस्थाएँ हैं। प्रथम तथा चतुर्थ अवस्थाएँ साम्य की अवस्थाएँ हैं। जनसंख्या एक अवस्था से दूसरी अवस्था में समान समय में पहुँचना आवश्यक है। एक अवस्था से दूसरी अवस्था में पहुंचने में कितना समय लगेगा इसके विषय में प्रो0 सैक्स अनुत्तरित हैं।

प्रथम अवस्था द्वितीय अवस्था तृतीय अवस्था चतुर्थ अवस्था

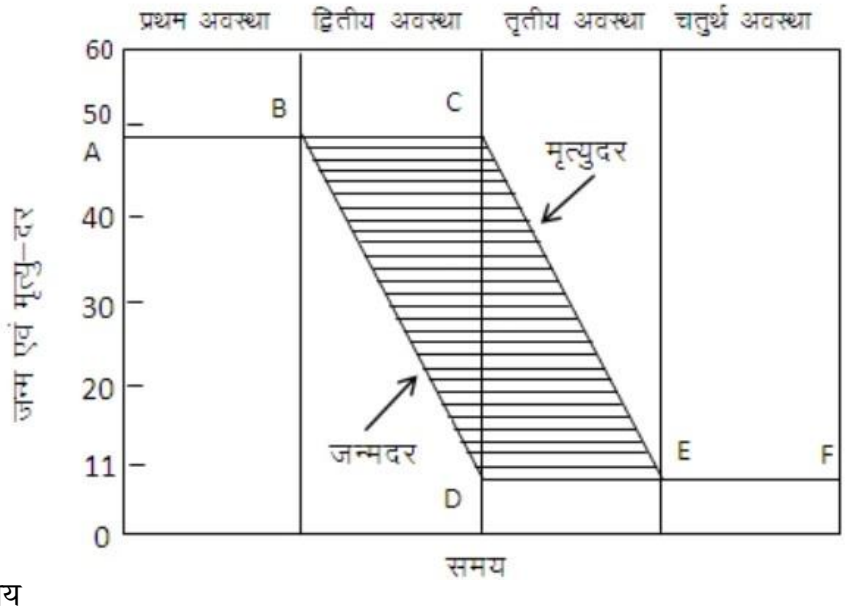

समय

4.4.4 जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाएँ एवं प्रो0 लाण्ड्री (Prof. Lanudry) प्रो0 लाण्ड्री ने खाद्यान्न आपूर्ति एवं आर्थिक विकास के आधार पर जनांकिकी परिवर्तन को तीन अवस्थाओं में विभाजित किया है। उनके द्वारा बताई गई ये अवस्थाएँ इस प्रकार हैं -

(1) प्राथमिक अवस्था (Primitive Stage) :- यह जनसंख्या परिवर्तन की वह अवस्था है जिसमें जनसंख्या की मात्रा खाद्यान्नों की आपूर्ति द्वारा निर्धारित होती है। लाण्ड्री का मत था कि यदि उपलब्ध खाद्यान्नों की मात्रा पर्याप्त है तो मृत्यु दर में कमी रहेगी और यदि उपलब्ध खाद्यान्नों की मात्रा, पर्याप्त नहीं है तो मृत्यु-दर अधिक होगी। इस तरह, खाद्यान्न बढ़ने से जनसंख्या बढ़ती है और खाद्यान्न घटने से जनसंख्या घट जाती है।

(2) माध्यमिक अवस्था (Intermediate Stage) :- इस अवस्था के अन्तर्गत खाद्यान्न के स्थान पर आर्थिक विकास जनसंख्या की मात्रा को निर्धारित करने लगता है। इस अवस्था में लोग उच्च जीवन-स्तर के प्रति सजग होने लगते हैं। लोग संतति निरोधक उपायों को अपनाते हैं, देर से विवाह करते हैं। इससे जन्म-दर में गिरावट आने के साथ-साथ मृत्यु दर में भी गिरावट आती है।

(3) आधुनिक युग (Modern Epoch) :- यह जनसंख्या परिवर्तन की वह अवस्था है जिसमें जनसंख्या न तो खाद्यान्न पूर्ति से प्रभावित होती है और न ही विकास की दर से प्रभावित होती है। इस समय देश आर्थिक विकास की उत्कर्ष अवस्था में रहता है। इस अवस्था में जन्म-दर गिरने के कारण जनसंख्या वृद्धि में हास प्रारम्भ हो जाता है।

4.4.5 जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाएँ एवं प्रो० काक्स (Prof.Peter R. Cox) प्रो0 पीटर आर0 काक्स ने जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाओं को पांच अवस्थाओं में वर्गीकृत किया है -

1. माल्थसीय चक्र (Maltusian Cycle)
2. आधुनिक चक्र (Modern Cycle)
3. शिशु प्रभार (Baby Boom)

4. अन्तरिम चक्र (Provisional Cycle)

5. दीर्घकालीन जनसंख्या चक्र (Population Cycle in the Long Run)

4.4.6 जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाएँ एवं प्रो0 काउगिल (Prof. Cowgill) प्रो0 डोनाल्ड ओलेन काउगिल के अनुसार जनसंख्या का विकास चक्रीय ढ़ग से होता है। उन्होंने विकास की अवस्थाओं को विकास चक्र (Growth Cycles) का नाम दिया। उन्होंने बताया कि जनसंख्या विकास की अवस्थाएँ एक के बाद एक क्रमशः चक्रीय क्रम में आती रहती हैं। ये अवस्थाएँ इस प्रकार हैं -

(1)प्राथमिक या माल्थूसियन चक्र (Primitive or Malthusian Cycle):- यह अवस्था वह होती है जिसमें जनसंख्या का विकास माल्थस द्वारा बताए गए नियमों के अनुसार होता है। इसमें जन्म–दर तो ऊँची और लगभग स्थिर रहती है, परन्तु मृत्यु दर में उतार-चढ़ाव देखा जाता है। ऐसा प्राकृतिक विपत्तियों के कारण होता है। इस तरह मृत्यु-दर में उतार-चढ़ाव से जनसंख्या में उच्चावचन होते रहते हैं। जब फसल अच्छी रहती है तो मृत्यु-दर घट जाती है। फसल नष्ट होने से अकाल के प्रभाव में मृत्यु-दर पुनः बढ़ जाती है। इस तरह कृषि में चक्रीय उतार-चढ़ाव आने से जनसंख्या में भी उतार-चढ़ाव आता है। इस अवस्था का चित्र में दर्शाया गया है।

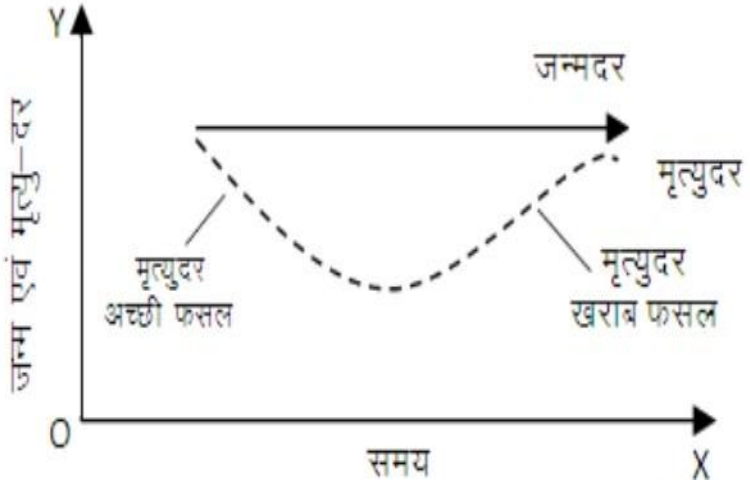

(2) आधुनिक चक्र (Modern Cycle):- इस चक्र में जन्म एवं मृत्यु दोनों ही दरें गिरती हैं परन्तु मृत्यु दर अपेक्षाकृत अधिक तेजी से गिरती है जिसके परिणामस्वरूप जनसंख्या में तेजी से वृद्धि होती है। जब दोनों दरों में समान रूप से गिरावट आती है तब जनसंख्या स्थिर हो जाती है। यह अवस्था जनसंख्या वृद्धि का संक्रमण काल है। इस अवस्था को चित्र में दर्शाया गया है।

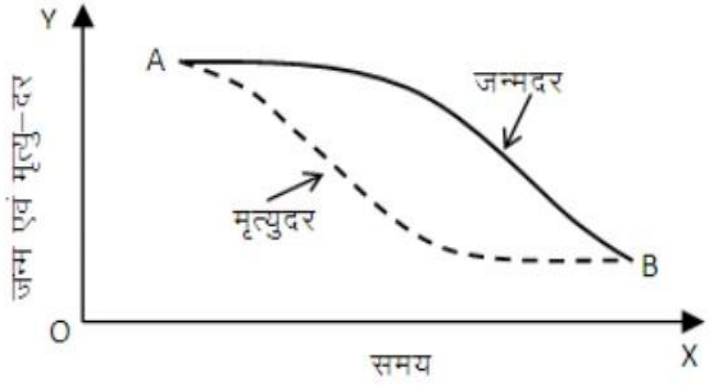

चित्र में बिन्दु 'A' को 'उच्च स्थिरांक' (High Stationary) तथा 'B' को 'निम्न स्थिरांक' (Low Stationary) बिन्दु कहा जाता है जहां जन्म एवं मृत्यु दरें बराबर होने के कारण जनसंख्या स्थिर है। 'A' बिन्दु पर दोनों दरें ऊँची और बराबर हैं तथा 'B' बिन्दु पर दोनों घटते-घटते निम्न बिन्दु पर स्थिर हो गयी हैं।

(3)भावी-चक्र (Future Cycle) :- इस चक्र में मृत्यु-दर के निम्नतम स्तर पर स्थिर हो जाने तथा जन्म दर में उतार-चढ़ाव के कारण देश में बच्चों की संख्या अधिक होने लगती है। जिसे काउगिल ने बच्चों की बाढ़ (Baby boom) आना कहा है। परन्तु जब जन्म-दर कम हो जाती है तब पुनः स्थिति सामान्य हो जाती है। इस अवस्था को चित्र में प्रदर्शित किया गया है।

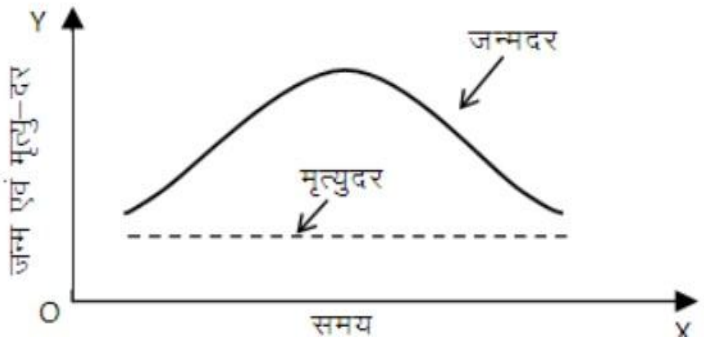

(4) संभावित-चक्र (Probable Cycle) :- काउगिल ने एक ऐसे संभावित चक्र की कल्पना की है जिसमें जन्म–दर में वृद्धि मृत्यु-दर की अपेक्षा अधिक होती है। ऐसी स्थिति में

t B. Vance) के अनुसार काउगिल की यह अवस्था 'जनांकिकीय इतिहास' में कभी भी देखने में नहीं आयी। इस अवस्था को चित्र में दर्शाया गया है।

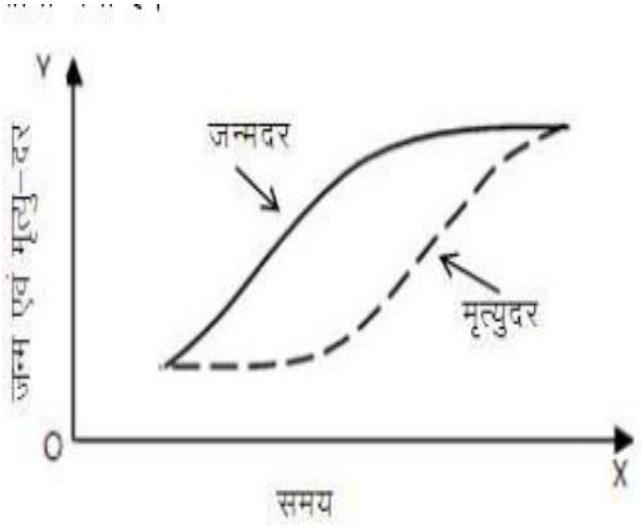

(5) दीर्घकालिक जनसंख्या चक्र (Population Cycle in the Long Run) :- काउगिल के अनुसार दीर्घकालिक जनसंख्या चक्र की अवस्था के अन्तर्गत जनसंख्या में वृद्धि साधारणतया मृत्यु दर के कम होने पर अथवा जन्म-दर में वृद्धि होने के कारण होती है। इसके विपरीत स्थिति में जनसंख्या में कमी आती है। दीर्घकालीन जनसंख्या चक्र का स्वरूप 'S' वक्र के आकार की तरह होता है। इसे चित्र में प्रदर्शित किया गया है।

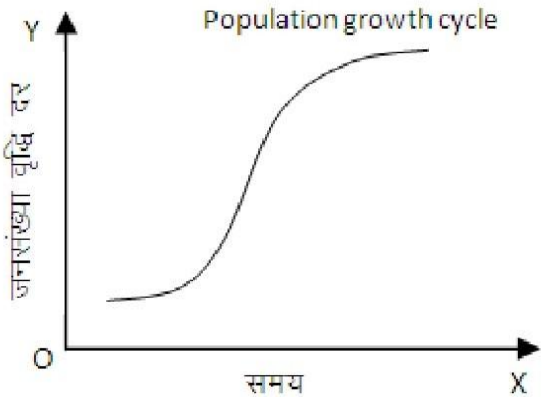

4.5 जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त एवं विकासशील देशों हेतु प्रासंगिकता (Relevance of Demographic Transition Theory to Developing Countries)

जनांकिकी संक्रमण के इन अवस्थाओं से परिचित होकर आपके मन में जिज्ञासा अवश्य उत्पन्न होगी कि क्या इन अवस्थाओं से सभी विकासशील राष्ट्र गुजरेंगे? विद्वानों की यह धारणा है कि ऐसा होना अनिवार्य नहीं है। उनका अभिमत है कि विकासशील देश अनेक ऐसी समस्याओं का समाना कर रहे हैं जिनसे विकसित देश अनभिज्ञ थे। जनांकिकीविद् प्रो0 आशीष बोस ने अपने शोधों में अनेक समस्याओं का उल्लेख किया है:

(1) विकसित देशों में मृत्यु-दर में कमी धीरे-धीरे व दीर्घकाल में आई जबकि आधुनिक विकासशील देशों में मृत्यु दर में कमी बड़ी शीघ्रता से आई है।

(2) विकसित देशों में द्रुत विकास के कारण मृत्यु-दर में कमी आई है। किन्तु विकासशील देशों में मृत्यु-दर की कमी का आर्थिक विकास से कोई सम्बन्ध नहीं है।

(3) विकसित देशों ने कभी भी 40 से अधिक जन्म-दर को नहीं झेला था जबकि आधुनिक विकासशील देश 40-60 जन्म-दर को झेल रहे हैं।

(4) विकसित देशों में जहाँ मृत्यु-दर में कमी आई, उसके कुछ ही समय बाद जन्म-दर में कमी आ गयी। किन्तु विकासशील देशों में जन्म-दर में कमी होने के बहुत वर्षों के बाद भी मृत्यु-दर में कमी नहीं आ पाई है। (5) विकासशील देशों में जनसंख्या का जितना अधिक घनत्व है। विकसित देशों में अपने विकास काल में उतना जन-घनत्व नहीं था।

(6) विकसित देश अपने विकास के प्रारम्भिक चरण में इतने निर्धन नहीं थे जितने की आज के विकासशील देश हैं।

(7) अट्ठारहवीं एवं उन्नीसवीं सदी में अन्तर्राष्ट्रीय प्रवास के जितने अवसर विद्यमान थे बीसवीं सदी में नहीं हैं। इसके विपरीत आजकल कोई देश अपनी जनसंख्या की समस्या के समाधान के लिए दूसरे की भूमि का सहारा नहीं ले सकता है। वे न तो उपनिवेशवाद की सहायता ले सकते हैं और न लोगों को दूसरे देशों में भेज सकते हैं। उपरोक्त विशेषताओं का कारण यह कहा जा सकता है कि वर्तमान विकासशील देशों द्वारा उसी जनांकिकी-चक्र के अनुशीलन की बहुत कम सम्भावनायें हैं। **गुन्नार मिर्डल** के ***शब्दों "The population cycle which would restore near balance between births and deaths, is not in sight in any of the South Asian countries."***

विकासशील देश नीची आय एवं तीव्रदर से बढ़ती जनसंख्या के जाल में फंसे हैं। जिससे आर्थिक विकास का मार्ग अवरुद्ध हो गया है तथा जनांकिकी चक्र पूरा नहीं हो पा रहा है। अत: जन्म-नियन्त्रण आर्थिक विकास की एक पूर्व शर्त हो गयी है, प्रो0 ए0 जे0 कोल ने भारत के समंक एकत्र कर यह सिद्ध कर दिया है कि जन्म नियन्त्रणों से प्रति

उपभोक्ता की आय में बिना जन्म-नियन्त्रणों की तुलना में 30 वर्ष में 40% एवं 60 वर्षों में 100% की वृद्धि की सम्भावना है।

4.6 सिद्धान्त की आलोचनाएं (Criticism of Theory)

जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त की आलोचना से सम्बन्धित बिन्दुओं का अध्ययन कर इसके महत्वपूर्ण पक्ष से आप परिचित हो जायेंगे। यथा -

1. यह सिद्धान्त जनसंख्या परिवर्तन के विभिन्न चरणों में कितना समय लगता है - इस बात पर कोई प्रकाश नहीं डालता है।
2. प्रथम अवस्था में जन्म-दर तो ऊँचे स्तर पर स्थिर होती है किन्तु मृत्यु दर में प्राकृतिक प्रकोपों के कारण उच्चावचन होते रहते हैं अतः जनसंख्या वृद्धि प्रथम अवस्था में भी परिवर्तनशील रहती है।
3. यह सिद्धान्त आर्थिक विकास के विभिन्न चरणों एवं जनांकिकी संक्रमण के चरणों के बीच किसी सम्बन्ध की चर्चा नहीं करता है। जबकि प्रो0 लाइबेन्स्टिन की धारणा है आर्थिक विकास के चरण एवं जनांकिकी संक्रमण की अवस्था साथ-साथ चलती है।
4. यह सिद्धान्त प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय चरण की व्याख्या तो करता है किन्तु चतुर्थ चरण के विषय में विद्वानों में मतभेद है, कुछ विद्वानों की धारणा है कि जनसंख्या चतुर्थ चरण में बढती है तथा कछ की धारणा है कि यह स्थिर रहती है। किन्त कारण स्पष्ट गया है।
5. आर्थिक विकास एवं जनांकिकी संक्रमण दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। केवल विकास के कारण संक्रमण नहीं होता है वरन् संक्रमण के कारण भी विकास होता है।
6. इस सिद्धान्त की पुष्टि आँकड़ों के आधार पर नहीं की जा सकती है। अतः यह सांख्यिकी विश्लेषण के लिये अयोग्य है।

4.7 संक्रमण सिद्धान्त का मूल्यांकन (Evaluation of Transition Theory)

जनसंख्या के संक्रमण सिद्धान्त की विवेचना एवं विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि यह सिद्धान्त जनसंख्या वृद्धि का एक सर्वमान्य, व्यावहारिक, यथार्थवादी एवं वैज्ञानिक सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त उन सब साधनों यथा सामाजिक, आर्थिक, संस्थागत एवं जैविकीय पर विचार करता है जो जनसंख्या वृद्धि दर को प्रभावित करते हैं। यह सिद्धान्त माल्थस के सिद्धान्त से श्रेष्ठ है क्योंकि यह खाद्यपूर्ति पर जोर नहीं देता और न ही निराशावादी दृष्टिकोण अपनाता है। यह अनुकूलतम सिद्धान्त से भी श्रेष्ठ है जो जनसंख्या वृद्धि के लिए एक मात्र प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि पर बल देता है तथा जनसंख्या को प्रभावित करने वाले अन्य साधनों की उपेक्षा कर जाता है। जैविकीय सिद्धान्त भी एकांगी है। जनसंख्या सिद्धान्तों में जनांकिकीय संक्रमण सिद्धान्त इसलिए सर्वश्रेष्ठ है क्योंकि यह यरोप के विकसित देशों की जनसंख्या वृद्धि की वास्तविक प्रवृत्तियों पर आधारित है। यह सिद्धान्त देशों के साथ-साथ विकासशील देशों पर समान रूप से लागू होता है। अफ्रीका महाद्वीप के कुछ बहुत पिछड़े देश अभी भी प्रथम अवस्था में हैं तथा विश्व के अन्न विकासशील देश दूसरी अवस्था में हैं। यूरोप के लगभग सभी देश प्रथम दो अवस्थाओं से गजर कर तीसरी अवस्था एवं चौथी अवस्था में पहँच चके हैं। इस तरह यह सिद्धान्त व्यावहारिक रूप से पूरी दुनिया में लागू होता है। इसी सिद्धान्त के आधार पर अर्थशास्त्रियों ने आर्थिक जनांकिकीय माडलों (Economic Demographic Models) का विकास किया है जिससे विकासशील देश अन्तिम अवस्था में पहुंचे तथा आत्मनिर्भर बन सकें। इसी तरह का एक माडल कोल-हूवर माडल (Coole-Hoover Model) भारत के लिए बनाया गया है, जो दूसरे विकासशील देशों पर भी लागू किया जा रहा है।

जनांकिकीय संक्रमण सिद्धान्त की विकासशील देशों के लिए सार्थकता पर कुछ विद्वानों ने प्रश्न चिह्न भी लगाए हैं और यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि जिन सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों से विकसित देश गुजर चुके हैं वे आज के विकासशील देशों की परिस्थितियों से भिन्न हैं।

फिर भी यह कहा जा सकता है कि जनसंख्या विकास के इस सिद्धान्त को अर्थशास्त्रियों एवं जनसंख्याशास्त्रियों का व्यापक समर्थन प्राप्त है। यह सरल, तर्कसंगत एवं जनसंख्या सिद्धान्तों में सर्वाधिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाला है।

4.8 अभ्यास प्रश्न

लघु प्रश्न

1. प्रो0 सी0 पी0 ब्लैकर के जनांकिकी परिवर्तन की अवस्थाओं की व्याख्या करें।
2. जनसंख्या की परिवर्तन, परिवर्तन से पूर्व एवं पश्चात् की अवस्थाओं की व्याख्या किसने किया है और उनके क्या विचार हैं?
3. कार्ल सैक्स के जनसंख्या विकास की चार अवस्थाओं पर प्रकाश डालें। पीटर आर0 काक्स के जनसंख्या परिवर्तन की अवस्थाओं की सचित्र व्याख्या करें।
5. विकासशील देशों में जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त की प्रासंगिकता पर अपना पक्ष प्रस्तुत करें।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1 जन्म-दर एवं मृत्यु-दर दोनों ऊँची होना जनसंख्या परिवर्तन की कौन सी अवस्था है?

(अ) प्रथम
(ब) द्वितीय
(स) तृतीय
(द) चतुर्थ प्रश्न -

2 किस जनांकिकीविद् ने **'माल्थूसियन चक्र'** का उल्लेख अपने जनसंख्या परिवर्तन की अवस्था में किया है?

(अ) ब्लैकर
(ब) पीटर आर0 काक्स
(स) काउगिल
(द) थाम्प्सन

3 जनसंख्या विस्फोट निम्न किस स्थिति को व्यक्त करता है?

(अ) उच्च जन्म-दर
(ब) निम्न मृत्यु-दर
(स) उच्च जन्म-दर एवं निम्न मृत्यु-दर का अंतर
(द) उच्च प्रजनन दर

4.9 सारांश

प्रस्तुत इकाई संख्या 04 में जनांकिकी संक्रमण के सिद्धान्त का विवेचन किया गया है। जनसंख्या के विभिन्न सिद्धान्तों में यह आधुनिकतम सिद्धान्त माना गया है। यह सिद्धान्त यूरोपीय देशों के अनुभव जन्य आँकड़ों पर आधारित है। जनांकिकीविदों के अनुसार प्रत्येक देश या समाज की जनसंख्या को विभिन्न अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है। प्रत्येक अवस्था की अपनी विशेषताएँ होती हैं। विश्व का कोई देश प्रथम अवस्था में है तो कोई द्वितीय या कोई तृतीय अवस्था में। प्रथम अवस्था अधिकांशतया पिछड़े देशों में होती है। जहाँ जन्म-दर एवं मृत्यु-दर दोनों ऊँची होती है। आय का प्रमुख स्त्रोत कृषि होता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था पायी जाती है। द्वितीयक उद्योग का

विकास नहीं होता है और तृतीयक उद्योग सेवा क्षेत्र का जन्म ठीक से नहीं होता है। संयुक्त परिवार प्रणाली समाज में विद्यमान होता है। द्वितीय अवस्था में यह देखा जाता है कि अर्थव्यवस्था आर्थिक विकास की ओर अग्रसर होती है। कृषि के साथ उद्योग भी बढ़ने लगते हैं। परिवहन व शहरीकरण होने से गतिशीलता बढ़ती है। शिक्षा का विस्तार, आय वृद्धि, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सुविधाओं में वृद्धि के साथ मृत्यु-दर घटती है लेकिन समाज की रूढ़ियों, रीति-रिवाज के साथ जन्म-दर नहीं घटती है फलतः जनसंख्या विस्फोट की स्थिति पायी जाती है। तृतीय अवस्था उन्नत अवस्था होती है। सर्वाधिक आर्थिक विकास का असर प्रभावशाली होने के कारण परिवार का आकार सीमित होने लगता है। आर्थिक प्रतियोगिताओं एवं बेहतर जीवन शैली की कामना के साथ जन्म-दर घटने लगती है। जनसंख्या परिवर्तन की इन अवस्थाओं को विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से व्याख्या की है और इनके चरणों या अवस्थाओं में भी भिन्नता पायी जाती है। प्रो0 ब्लैकर, प्रो0 थाम्प्सन, प्रो0 बोग, प्रो0 नौटेस्टीन, प्रो0 कार्ल सैक्स, प्रो0 लॉण्ड्री, प्रो0 काउगिल एवं प्रो० पीटर काक्स के विचार इन अवस्थाओं को लेकर व्याख्यायित हैं। यह सिद्धान्त यूरोपीय देशों के आँकड़ों पर आधारित होने के कारण तो महत्वपूर्ण हैं ही महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि विकासशील देशों के सन्दर्भ में भी प्रासंगिक सिद्धान्त हैं। प्रत्येक सिद्धान्त का अपना आलोचना पक्ष भी होता है। इस सिद्धान्त के साथ भी यही बात है। यह सिद्धान्त जनसंख्या वृद्धि का एक सर्वमान्य, व्यावहारिक, यथार्थवादी एवं वैज्ञानिक सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त माल्थस के सिद्धान्त से श्रेष्ठ है क्योंकि यह निराशावादी नहीं है। यह अनुकूलतम सिद्धान्त से भी श्रेष्ठ है क्योंकि प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि पर बल नहीं देता है।

4.10 शब्दावली

- **जनांकिकी संक्रमण** - जनसंख्या का विभिन्न अवस्थाओं से गुजरना।
- **जनांकिकी की प्रथम अवस्था** – जहाँ जन्म-दर एवं मृत्यु-दर दोनों ऊँची हो एवं आय का प्रमुख स्त्रोत कृषि हो। उद्योग क्षेत्र अविकसित हो व सेवा क्षेत्र का जन्म न हो।
- **जनांकिकी की द्वितीय अवस्था** – अर्थव्यवस्था में आर्थिक विकास प्रारंभ हो, उद्योग क्षेत्र का विकास हो सामाजिक क्षेत्र का विकास हो। मृत्यु-दर घटती हो लेकिन जन्म-दर नहीं घटती हो।
- **जनांकिकी की तृतीय अवस्था** - जीवन शैली में सुधार हो, रोजगार अवसरों में वृद्धि हो महिलाओं एवं बच्चों की स्थिति बेहतर हो प्रतियोगिता व जागरूकता हो, विवाह आयु में वृद्धि हो, परिवार आकार छोटा हो फलतः जन्म-दर घटती हो।
- **जनांकिकी की चतुर्थ अवस्था-** यह जनांकिकी परिवर्तन की वह अवस्था होती है जहाँ जन्म-दर एवं मृत्यु-दर दोनों अपने निम्नतम स्तर पर होती है और लगभग समान रहती है। यह अवस्था विकसित देशों में पायी जाती है।

4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर - 1 (अ), 2 (ब), 3 (स)

4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- Dr. Premi, M.K., Ramanamma, A., Bambawale, Usha,. An Introduction to social demography, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Appleman, Philip (ed.) Thomos Robert Malthus : An Essay on the Principle of Population, New York : W.W. Norton and Co., Inc., 1976.

- Carr- Saunders, A.M., World Population : Past Growth and Present Trends, Oxford : Clarendon Press, 1936.
- Coale, Ansley J. and Edgar M. Hoover, Populationi Growth and Economic development in low income countries, Princeton University Press, 1958.
- Thompson, Warren S. and David T. Lewis : Population Problems; New York: Mc Graw Hill Book Co. 1976.

4.13 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

- डॉ0 मिश्रा, जे0पी0, जनांकिकी, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा।
- डॉ0 बघेल, डी0एस0, जनांकिकी, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
- डॉ0 पन्त, जीवन चन्द्र, जनांकिकी, गोयल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
- अशोक कुमार, जनसंख्या, एक समाज वैज्ञानिक अध्ययन, हिन्दी ग्रंथ अकादमी प्रयाग, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
- डॉ0 मलैया, के.सी., जनसंख्या शिक्षा, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

4.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।
2. जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त जनसंख्या के विकास की सर्वाधिक वैज्ञानिक व्याख्या है। इस कथन के परिप्रेक्ष्य में जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।
3. जनसंख्या के विभिन्न विकास अवस्थाओं के आधार पर जनांकिकी संक्रमण सिद्धान्त की विवेचना कीजिए।

इकाई-5 जनसंख्या वृद्धि के घटक एवं उनकी अन्तर्निर्भरता
(Factors of Population Growth and Their Interdependence)

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 जनसंख्या वृद्धि का प्रत्यय एवं विशेषताएँ (Concept and Characteristics)
5.4 जनसंख्या वृद्धि के घटक एवं उनकी अन्तर्निर्भरता
5.4.1 उच्च जन्म दर/ उच्च प्रजनन-दर के निर्धारक तत्व
5.4.2 मृत्युक्रम: अर्थ एवं निर्धारक तत्व
5.4.3 प्रवास: अर्थ व परिभाषा
5.5 अभ्यास प्रश्न
5.6 सारांश
5.7 शब्दावली
5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.10 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री
5.11 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

जिस प्रकार घर में भूखे बच्चों से घिरा हुआ पिता कोई गहरा ठोस कार्य करने में असमर्थ रहता है ठीक उसी तरह आज निर्धन एवं अविकसित देश जनाधिक्य के जाल में उलझ कर किसी भी प्रकार की उन्नति नहीं कर पा रहे हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या ने मानव जाति के प्रगति पर पूर्ण विराम लगा दिया है। जनसंख्या में वृद्धि रात्रि के चोर के समान है जो हमारे आर्थिक विकास में प्राप्त सफलता को हमसे छीन ले जाता है। जनसंख्या में तीव्र गति से बढ़ते रहने से अविकसित देशों में आयोजित विकास करना बहुत कुछ ऐसी भूमि पर मकान खड़ा करने के समान है जिसे बाढ़ का पानी बराबर बहा ले जा रहा है। विश्व की इस ज्वलंत समस्या से सभी राष्ट्र आतंकित हैं चाहे वह विकसित राष्ट्र ही क्यों न हो। अट्ठारवीं व उन्नीसवीं शती में जनसंख्या की गतिशीलता विशेष अर्थ नहीं रखती थी लेकिन आज विश्व का हर देश बढ़ती जनसंख्या के प्रति सशंकित है और सचेत है कि बाहरी जनसंख्या उसके यहां प्रवास के द्वारा समस्या न पैदा कर दे।

जनसंख्या सम्बन्धी विभिन्न सिद्धान्तों को इकाई 02, 03, एवं 04 के द्वारा अध्ययन कर आप समझ गये हैं कि विश्व के विभिन्न समाजशास्त्रियों, विद्वानों, वैज्ञानिकों एवं जनांकिकीविदों ने इस गंभीर विषय पर सभी का ध्यानाकर्षण कर चुके हैं। इस पांचवी इकाई के अध्ययन में आप जनसंख्या वद्धि के घटकों एवं उनकी अन्तर्निर्भरता का अध्ययन कर आप सुविज्ञ हो जायेंगे कि कौन-कौन से महत्वपूर्ण घटक हैं जो किसी देश की जनसंख्या में वृद्धि करते हैं। उच्च जन्म-दर या उच्च प्रजनन-दर मत्य-दर एवं प्रवास में तीन महत्वपर्ण घटक हैं जो किसी देश की जनसंख्या को बढ़ाने-घटाने में महत्वपूर्ण निर्धारक का काम करते हैं।

5.2 उद्देश्य (Objective)

इस इकाई का उद्देश्य अपने निम्न विषय बिन्दुओं को समझने में मदद करना है। यथा

- ✓ जनसंख्या वृद्धि के घटक एवं उनकी अन्तर्निर्भरता।
- ✓ उच्च जन्म-दर या उच्च प्रजनन-दर के निर्धारक तत्व।
- ✓ मृत्युक्रम एवं निर्धारक तत्व।
- ✓ सुविधाओं की कमी, सामाजिक एवं आर्थिक कारण, शिशु मृत्यु-दर, एवं मातृ मृत्यु।
- ✓ प्रवास एवं वर्गीकरण ।
- ✓ प्रवास को प्रभावित करने वाले घटक ।
- ✓ प्रवास के प्रभाव – परिणाम ।

5.3 जनसंख्या वृद्धि का प्रत्यय एवं विशेषताएँ (Concept and Characteristics)

आज विश्व के लगभग प्रत्येक देश में जनसंख्या बढ़ रही है। विश्व के विकासशील देशों (Developing Countries) में जनसंख्या वृद्धि की दर इतनी ज्यादा है कि वहां इसे एक समस्या के रूप में विश्लेषित कर अध्ययन करना अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गया है। इस विषय में उल्लेखनीय है कि जनसंख्या वृद्धि तीन महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं प्रजननता, मृत्यु-दर और प्रवास का सम्मिश्रित परिणाम है। जनसंख्या वृद्धि को हम इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं कि - "जनसंख्या के आकार में परिवर्तन को जनसंख्या वृद्धि के नाम से जाना जाता है।" यह सकारात्मक या नकारात्मक दोनों हो सकती है। विशेषताएँ :- जनसंख्या वृद्धि की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं -

1.जनसंख्या वृद्धि में जनसंख्या में होने वाले परिवर्तन तीन प्रकार की हो सकती हैं। सकारात्मक (Positive), नकारात्मक (Negetive), या स्थिर (Stable) जनवृद्धि। आधुनिक युग में सम्पूर्ण विश्व में जनसंख्या की वृद्धि को

सकारात्मक प्रवृत्ति पाई जाती है। किसी भी देश में जनसंख्या में कमी या स्थिरता एक असामान्य बात बन गई है। विश्व जनसंख्या में वृद्धि का कारण है मृत्यु से जन्म का आधिक्य। लगभग प्रत्येक देश में मृत्यु-दर की तुलना में जन्म-दर बहुत अधिक है। जन्म-दर की तुलना में मृत्यु-दर का अत्यधिक गिरना भी एक कारण होता है। विश्व जनसंख्या में वृद्धि की प्रवृत्ति एक क्षणिक स्थिति (Transitory Phase) है। जनसंख्या में वृद्धि हमेशा के लिए नहीं हो सकती है। क्योंकि विश्व में स्थान (Space) सीमित है। एक देश विशेष की जनसंख्या की वृद्धि में प्रवास (Migration) महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है। जनसंख्या वृद्धि चक्रवृद्धि ब्याज का रूप धारण करती है अर्थात् बढ़ी हुई जनसंख्या के द्वारा जनसंख्या में और अधिक वृद्धि होती जाती है। जनसंख्या में वृद्धि तीन घटकों के क्रियाओं का परिणाम है। ये घटक हैं – जन्म, मृत्यु एवं प्रवास। इनमें से मात्र किसी एक घटक से जनसंख्या वृद्धि निर्धारित नहीं
होती है।

5.4 जनसंख्या वृद्धि के घटक एवं उनकी अन्तर्निर्भरता

जनसंख्या वृद्धि के तीन महत्वपूर्ण घटक हैं जो किसी भी समाज एवं देश की जनसंख्या में परिवर्तन ला सकते हैं। ये हैं - उच्च जन्म-दर/ प्रजनन-दर . मृत्यु-दर प्रवास उच्च जन्म-दर का कारण है उच्च प्रजनन-दर। यदि प्रजनन ही अधिक होगा तो जनसंख्या में वृद्धि होना स्वाभाविक है। प्रजनन-दर के निर्धारक तत्व एक दूसरे पर अन्तर्निर्भर करते हैं। निर्धारक तत्वों की व्याख्या में इन अन्तर्निर्भर तत्वों का विभिन्न बिन्दुओं की व्याख्या में यथोचित उल्लेख आपको समझने में मदद करेगा। दूसरा घटक मृत्युक्रम या मृत्यु-दर (Mortality Rate) है। मृत्यु एक शाश्वत सत्य है। मृत्यु जीवन स्तर को ही समाप्त कर देता है और अवश्यसंभावी है। मनुष्य अपने स्वास्थ्य को ठीक रखकर जीवन स्तर में वृद्धि कर सकता है। विभिन्न प्रकार की वाह्य बाधक तत्वों यथा - कुपोषण, बीमारियाँ, दुर्घटनाएँ एवं अस्वस्थता मृत्यु-दर को बढ़ाती हैं और अनुकूल तत्व होने पर घटाती हैं। जनांकिकी में यह घटना जनसंख्या के आकार, गठन एवं वितरण में कमी लाती है। प्रवास या देशान्तरण एक ऐसा निर्धारक तत्व है जो किसी भी स्थान, समाज या देश की जनसंख्या में शीघ्रता से परिवर्तन ला देता है। ये प्रवास अन्तः प्रवास (In-migration) एवं वाह्य प्रवास (Out-migration) किसी भी रूप में हो सकते हैं। वाह्य प्रवास का एक विशुद्ध रूप अन्तर्राष्ट्रीय (Internatioinal Migration) प्रवास भी कहलाता है। प्रवास को शैक्षिक, आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक अन्तर्निर्भर करने वाले तत्व प्रभावित करते हैं।

5.4.1उच्च जन्म-दर/उच्च प्रजनन-दर के निर्धारक तत्व

जन्म कभी शून्य नहीं हो सकता। यह सृष्टि का कार्य है। शून्य का अर्थ है सृष्टि का रूकना। हाँ जन्म-दर उच्च है तो जनसंख्या बढ़नी स्वाभाविक है। जन्म-दर से आशय है प्रति हजार जनसंख्या पर जीवित जन्मों की संख्या। यहाँ पर दो शब्द जन्म-दर और प्रजनन-दर में अन्तर करना आवश्यक है। जन्म (Birth) व्यक्ति विशेष से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण जीवन घटना है, जबकि प्रजननता (Fertility) व्यक्तियों के समूह (Group) से सम्बद्ध एक जीवन प्रक्रिया है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि इसमें व्यक्ति से सम्बन्धित जन्म को जीवन घटनाओं का सामूहिक अध्ययन किया जाता है। जार्ज बर्ले के अनुसार – "प्रजननता जीवित जन्म की संख्या पर आधारित जनसंख्या की यथार्थ स्तर की क्रिया विधि है (Fertility is an actual level of performance in a population based on the number of live births)" - G.W. Barclay प्रजनन क्रिया मूल रूप से तीन बातों से प्रभावित होती है - 1. प्रजनन की शक्ति (Capacity to Reproduce) प्रजनन के अवसर (Opportunity to Reproduce) प्रजनन सम्बन्धी निर्णय (Decision to Reproduce) प्रजननशीलता के निर्धारक सभी तत्व इन तीन प्राथमिक कारणों को प्रभावित करके ही प्रजनन'-दर में वृद्धि या हास ला सकते हैं। जो भी कारक प्रजननशीलता पर प्रभाव डालते हैं वे या तो प्रजनन के अवसर प्रदान करते हैं जैसे – विवाह की आयु (Age of Marriage) तथा सबका

विवाह होना अथवा प्रजनन सम्बन्धी निर्णय लेने में मदद करते हैं जैसे - शैक्षिक स्तर, सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था सन्तोषजनक न होना, धार्मिक रीति-रिवाज या समाज में लड़कों का महत्व (Male Child Preference) आदि।
प्रजननता को निर्धारित करने वाले प्रमुख तत्वों में उल्लेखनीय तत्व हैं - शैक्षिक स्तर, वैवाहिक स्तर, नगरीकरण, आर्थिक स्तर, व्यवसाय, धर्म एवं सामाजिक रीति-रिवाज, सामाजिक गतिशीलता, मृत्यु-दर, भौगोलिक कारण, जैविकीय तत्व, प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सामाजिक तत्व। इन तत्वों का विश्लेषण एवं उनकी अन्तर्निर्भरता क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत है।

5.4.1.1 शैक्षिक स्तर (Educational Status) प्राथमिक कारकों को अच्छी तरह समझ लेने के बाद अब आप प्रजनन के निर्धारक तत्वों को जानने में सक्षम हो जायेंगे। प्रजननशीलता के निर्धारक तत्वों में शिक्षा का स्तर प्रमुख एवं सबसे महत्वपूर्ण कारक है। यह प्रजननशीलता को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षा मानव को बुद्धिमान एवं विवेकवान बनाकर समझ के योग्य बनाती है कि परिवार में बच्चों का क्या महत्व है, कितने बच्चे होने चाहिए, कब जन्म होना चाहिए, दो बच्चों के बीच समय अन्तराल कितना होना चाहिए, छोटे परिवार या बड़े परिवार के क्या लाभ हैं। शिक्षित व्यक्ति अपने परिवार के वर्तमान एवं भविष्य के प्रति अति महात्वाकांक्षी होता है। वह यह निर्णय लेने में सक्षम होता है कि उसके परिवार में बच्चों की संख्या कितनी होनी चाहिए। अपनी आर्थिक संसाधनों के आधार पर कितने बच्चों की परवरिश में उसे असुविधा नहीं होगी। इस तरह शिक्षित व्यक्ति प्रजनन-दर को कम करने के सम्बन्ध में दृढ़ता एवं उत्साह अधिक दिखाता है। उसका स्वप्न 'छोटा परिवार सुखी परिवार में पूर्ण होता है। परिवार नियोजन का अर्थ वह अपने अन्तःकरण से स्वीकार कर हृदयंगम कर लेता है। इसके विपरीत अशिक्षित व्यक्ति या समाज में बुद्धि विवेकहीनता के कारण व्यक्ति प्रजनन सम्बन्धी सही निर्णय लेने में समर्थ नहीं होता है। अशिक्षा, अज्ञानता, रूढ़ियाँ, कुरीतियाँ, अन्धविश्वास की बेड़ियाँ 'परिवार नियोजन, परिवार कल्याण या 'बच्चे बस दो ही अच्छे' की अवधारणा को समझने में बाधक का काम करते हैं।
विभिन्न सर्वेक्षणों अनुसंधानों से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि शैक्षिक स्तर में वृद्धि होने पर जन्म-दर घटती है। यहीं पर अन्तर्निर्भरता की बात आती है। शि वृद्धि के साथ-साथ शारीरिक, मानसिक, समाजिक, आर्थिक तथा ऐसे जनांकिकीय परिवर्तन हो जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप जन्म-दर अवश्यसंभावी घट जाती है। शिक्षा एवं उसके स्तर बनाये व उठाये रखने में लगने वाले अधिक समय के कारण विवाह की आयु में वृद्धि हो जाती है। प्रजनन के अवसर में कमी हो जाती है। यह बात महिला एवं पुरूष दोनों पर समान रूप से लागू होती है। इस सम्बन्ध में चन्द्रशेखरन, ई0एम0ड्राइवर (Differentiate Fertility in Central India), कुमुदनी डांडेकर के सर्वेक्षण उल्लेखनीय हैं जो स्पष्ट करते हैं कि शिक्षा के स्तर तथा प्रजननशीलता के मध्य नकारात्मक सह–सम्बन्ध (Negative Corelation) पाया जाता है।

5.4.1.2 वैवाहिक स्तर (Marital Status) प्रजननता निर्धारक तत्वों में वैवाहिक स्तर एक प्रमुख निर्धारक कारक है। प्रजनन दर में विभिन्नता इस बात पर निर्भर करती है कि पुनरूत्पादन काल के कितने वर्ष ऐसे थे जबकि सन्तानोत्पादन की पूर्ण सम्भावना थी अर्थात वैवाहिक जीवन का काल कितना था। यह बात सीधे विवाह की आयु की ओर संकेत करते हैं। जहाँ विवाह की आयु अधिक होती है अथवा ऐसी सामाजिक एवं आर्थिक दशाएँ विद्यमान हैं कि बिना विवाह के या विलम्बित विवाह के रहा जा सकता है वहाँ प्रजनन दर कम होती है। इसके विपरीत जहाँ विवाह की आयु कम होती है वहाँ प्रजनन अवसर अधिक मिलने के कारण प्रजनन-दर अधिक होती है। बच्चे अधिक होते हैं फलतः परिवार का आकार भी बड़ा रहता है।
विवाह प्रजननता की पूर्ण शर्त है। यूरोप में लगभग 90% पुरूष एवं 83% स्त्रियाँ विवाह करती हैं, अमेरिका में 90% पुरूष एवं 92% स्त्रियाँ विवाह करती हैं। लेकिन भारत में विवाह लगभग सबका (99% पुरूष व स्त्री) सभी

का होता है। विवाह की न्यूनतम आयु चीन एवं भारत के कृषि समाज में है तो उच्चतम आयु यूरोपीय देशों में है। विवाह की आयु के अलावा तलाक, पुनर्विवाह, विधवा-विवाह, बहुपति व बहुपत्नी प्रथा भी प्रजनन-दर पर प्रभाव डालते हैं। उच्च जातियों में प्रजनन-दर अपेक्षाकृत विभिन्न जातियों के निम्न होने का एक कारण यह भी है कि समाज में विधवा विवाह, पुनर्विवाह और बहु विवाह इत्यादि को हेय दृष्टि से देखा जाता है। ई0एम0ड्राइवर ने अपने शोध में यह पाया कि 18 वर्ष के ऊपर विवाह होने पर औसत बच्चे 3.5, एवं कम उम्र यथा – 13-17 में 4.1 व 13 से कम आयु विवाह की होने पर बच्चों की औसत जन्म-दर 5.3 पायी गई।

5.4.1.3 नगरीकरण (Urbanization) न

गरीकरण या शहरीकरण का भी प्रजनन-दर पर प्रभाव पड़ता है। आर्थिक नियोजन, विकास एवं औद्योगीकरण के कारण ग्रामीण जनसंख्या शहरों में बसने लगती है। शहरी या नगरी आबादी में वृद्धि होने लगती है। इस कारण भी प्रजनन-दर प्रभावित होता है। नगरी जनसंख्या की प्रजनन-दर कम एवं गाँवों की प्रजनन-दर विभिन्न सर्वेक्षणों में अधिक पायी गयी है। नगरीय परिवारों के छोटे होने के कई कारण हो सकते हैं यथा – (1) नगरों में निवास करने वाले परिवारों के सदस्य भिन्न-भिन्न संस्थाओं व कार्यालयों में कार्यरत रहते हैं जिससे उनका सम्बन्ध परिवार के सदस्यों के अलावा बाहरी लोगों से भी होता है जो उनके विचारों में परिवर्तिन कर देते हैं। (2) ग्रामीण परिवेश में बच्चों को दायित्व न समझ कर बालश्रम के रूप में सम्पत्ति माना जाता है जबकि नगरों में जागरूकता के कारण बालश्रम के स्थान पर बढ़ते बच्चों की संख्या दायित्व बोध करातेहैं। (3) नगरी सभ्यता एवं संस्कृति में विकास के प्रति महत्वाकांक्षा अधिक होती है। बड़े एवं संयुक्त परिवार प्रणाली जो गाँवों में अधिकांशतः निवास करती है उनके महत्वाकांक्षा को पूरा होने में बाधक होती हैं। (4) गाँवों में बच्चे बुढ़ापे की लाठी एवं भगवान की देन माने जाते हैं। नगरीकरण एवं शिक्षा का स्तर लोगों को परिवार में बच्चे 'क्यों और कब' के औचित्य को समझने में मदद करती है। फलतः पुनरोत्पादन सम्बन्धी निर्णय महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। प्रजनन नियंत्रण के उपाय को लागू करना, जानकारी की कमी, प्रजनन को मनोरंजन का साधन मानना ऐसे तत्व हैं जो ग्रामीण प्रजनन-दर को बढ़ा देते हैं जबकि नगरी जनसंख्या में जागरूकता के कारण कमी ला देते हैं। अधिक शिशु मृत्यु-दर गाँवों में जबकि शहरी चिकित्सा सुविधाओं के कारण नगरों में शिशु मृत्यु-दर की संभावना कम होने का तत्व भी प्रजनन को प्रभावित करता है।

5.4.1.4 आर्थिक स्तर (Economic Status) आर्थिक स्तर भी प्रजननता को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जनांकिकी अध्ययनों से यह निष्कर्ष सामने आता है कि धनी व्यक्तियों की तुलना में गरीबों के यहाँ अधिक बच्चे होते हैं। प्रजनन दरों में इस अन्तर के विभिन्न कारण हो सकते हैं। धन मनुष्य का वह साधन है जिससे अपनी बलवती इच्छाओं, मनोरंजन के साधनों की पूर्ति, संसार के सख सविधाओं व साधनों की पर्ति कर सकता है। अपना साध्य धनी व्यक्ति निर्धनों की तुलना में भिन्न बनाता है फलतः प्रजनन-दर उच्च नहीं हो पाती जबकि निर्धनों में उपर्युक्त प्रवृत्तियों के अभाव के कारण प्रजनन-दर निम्न नहीं हो पाती। रहन-सहन का स्तर निम्न होने के कारण गरीब व्यक्ति इस बात से प्रभावित नहीं होता है कि एक और बच्चा होने से मेरा रहन-सहन का स्तर और गिर जायेगा उसको वह बहुत सहज भाव से लेता है जबकि धनी व्यक्ति इसको गंभीरता से लेता है कि दो बच्चों से अधिक होने पर उनका रहन-सहन का स्तर गिर जायेगा।

5.4.1.5 व्यवसाय (Occupation) व्यवसाय का प्रजनन दर से गहरा सम्बन्ध होता है। व्यावसायिक ढाँचे का परिवार के आकार तथा जन्म-दर के स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ता है। विभिन्न प्रकार के व्यवसायों में कार्यरत लोगों की प्रजनन दर भिन्न-भिन्न होती है। जो लोग शारीरिक श्रम करते हैं उनकी प्रजनन-दर अपेक्षाकृत मानसिक श्रमिकों के अधिक होती है। कृषि एवं कृषिगत कार्यों में लगे श्रमिकों एवं भू-स्वामियों के प्रजनन-दर में भिन्नता पायी जाती है। प्रायः मजदूर अशिक्षित एवं गाँवों में निवास करता है। आर्थिक दृष्टि से कमजोर होता है, विवाह की आयु निम्न

होती है, परिवार नियोजन एवं उसके विधियों के प्रयोग व जानकारी निम्न होने के कारण प्रजनन–दर निम्न नहीं रख पाता है। शहरों में कार्यरत या निवास करने वाली महिलाएं अपने रहन-सहन के स्तर एवं शारीरिक सौष्ठव को असंतुलित नहीं होना देना चाहती इसके लिए बहुत सजग रहती हैं फलतः प्रजनन-दर निम्न रहता है।

5.4.1.6 धर्म एवं सामाजिक रीति-रिवाज (Religion and Social Customs) प्रजनन-दर निर्धारण करने वाले तत्वों में धर्म एवं सामाजिक रीति-रिवाज की भी भूमिका महत्वपूर्ण होती है। बच्चों की आवश्यकता, परिवार आकार, जन्म अन्तराल, पुत्र कामना, धर्म के अनुयायियों की संख्या बढ़ाना, पारिवारिक व सामाजिक प्रथायें प्रत्येक दृष्टिकोण से प्रजननता को प्रभावित करते हैं। संसार के विभिन्न देशों में पाया गया है कि कैथोलिक ईसाइयों में उच्च प्रजनन दर एवं यहदियों में निम्न प्रजनन दर पाई जाती है। भारत में मुसलमान धार्मिक परम्पराओं एवं रूढ़ियों में जकड़े जाने के कारण परिवार का आकार बड़ा कर लेते हैं। संतति निग्रह या परिवार नियोजन, परिवार कल्याण में बाधक मानते हैं।

समाज में शीघ्र विवाह करने की प्रथा या धर्म शास्त्रों के निर्देश के अनुपालन न करना पाप का भागी माना जाता है। यथा -

"अष्टवर्षा भवेद्गौरी न वर्षा च रोहणी।

दश वर्षा भवेत्कन्या तत् अहर्व रजस्वला ।' अर्थात् रजस्वला होने के पूर्व लड़कियों की शादी हो जानी चाहिए। समाज में 'पु' नामक नरक से मात्र पुत्र ही मुक्ति दिलाता है पुत्रियाँ नहीं इस आस्था के कारण पुत्र का मोह अधिक पुत्रियों को जन्म दे देता है। पुत्र की कामना (Male Child Preference) प्रजनन-दर को सीधे प्रभावित करता है। उस पर एक नहीं वरन् दो से अधिक पुत्र, क्योंकि शिशु मृत्यु-दर ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक होती है यह भावना प्रजनन-दर को बढ़ा देता है। विभिन्न देशों ने लड़के एवं लड़कियों की विवाह की आयु वैधानिक ढंग से निर्धारित कर रखी है लेकिन अभी भी कम उम्र में बच्चों की शादी का प्रचलन समाप्त नहीं हो पा रहा है। बाल-विवाह भारत में एक लोकप्रिय प्रथा अभी भी बनी है।

5.4.1.7 सामाजिक गतिशीलता (Social Mobility) सामाजिक गतिविधियों में अत्यधिक सक्रिय एवं गतिशील तभी रहा जा सकता है जब परिवार में बच्चों की संख्या अधिक न हो। व्यक्ति अपने विकास के लिए सदैव प्रयत्नशील रहता है। अपनी आर्थिक संवृद्धि, यश-कीर्ति, प्रतिष्ठा-गौरव के लिए समाज के विभिन्न क्षेत्रों में बढ़ चढ़कर भाग लेना चाहता है। यह तभी संभव हो पाता है जब प्रजनन-दर निम्न हो । अधिक प्रजनन-दर होने पर सामाजिक गतिशीलता कम होती है।

5.4.1.8 मृत्यु क्रम (Mortality Rate) प्रजनन-दर, मृत्यु-दर से भी प्रभावित होता है। जहाँ बाल एवं शिशु मृत्यु-दर ऊँची होती है वहाँ प्रजनन-दर उच्च होता है। क्योंकि व्यक्ति यह सोचता है कि एक-दो ही बच्चे रहने एवं आकस्मिक मृत्यु होने पर परिवार समाप्त हो जायेगा। कौन वंश चलायेगा? की भावना प्रजनन-दर को बढ़ा देती है। जहाँ शिशु जीवित रहने की प्रत्याशा अधिक होती है वहाँ प्रजनन-दर निम्न रहता है।

5.4.1.9 भौगोलिक कारण (Geogrphical Factors) देश की भौगोलिक संरचना, जलवायु, भू-संरचना तथा देश में उपलब्ध खाद्य सामग्री भी प्रजनन-दर को निर्धारित करती है। गरम जलवायु वाले देशों के साथ यह विशेषता होती है कि लड़कियों का शारीरिक विकास अपेक्षाकृत शीत प्रधान देशों के शीघ्र एवं अधिक होता है। फलतः वे शीघ्र प्रजनन के योग्य हो जाती हैं। उनका मातृत्व काल अधिक बढ़ जाता है और प्रजनन-दर भी बढ़ जाता है। इन प्रदेशों के रहन-सहन का स्तर एवं खान-पान में इस प्राकर की प्रवृत्तियाँ अधिक होती हैं जिससे Sex desire बढ़ती है। शीत कटिबन्धीय प्रदेशों में लड़कियों में परिपक्वता आयु देर से आती है। मातृत्व काल देर से आता है। काम भावना अपेक्षाकृत अधिक न होने पर प्रजनन-दर अपेक्षाकृत कम ही रहता है।

5.4.1.10 जैविकीय तत्व (Biological Factors) प्रो० डी० एस० नाग ने प्रजनन को प्रभावित करने वाले

तीन प्रमख तत्वों में जैविकीय तत्व कोप्रधानता दी है। प्रजननशीलता व्यक्ति के स्वास्थ्य एवं उपलब्ध सुविधाओं से प्रभावित होती है। स्वास्थ्य सुविधाओं में विस्तार होने से प्रजनन शक्ति (Capacity to Reproduce) में वृद्धि होती है। प्रजननशीलता पर गुप्त रोगों, बीमारियों यथा - एड्स, कैंसर, बांझपन इत्यादि का भी असर होता है। इधर कई दशकों से स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं एवं चिकित्सकीय सुविधाओं में वृद्धि होने के कारण विश्व के सभी देशों में प्रजनन शक्ति एवं प्रजननशीलता में वृद्धि हुई है फलतः जनसंख्या में वृद्धि हुई है।

5.4.1.11 प्रत्यक्ष सामाजिक तत्व (Direct Social Factors)

इसके अन्तर्गत उन तत्वों को सम्मिलित किया जाता है जो जनसंख्या वृद्धि को सीधे बढ़ाते या घटाते हैं। इन तत्वों में जनसंख्या पर नियंत्रण करने वाले कारकों यथा – आत्म संयम, संतति निग्रह, परिवार नियोजन विधियों, गर्भ समापन, भ्रूण हत्या, शिशु या बाल हत्या आदि को सम्मिलित किया जाता है।

5.4.1.12 अप्रत्यक्ष सामाजिक तत्व (Indirect Social Factors) अप्रत्यक्ष सामाजिक तत्वों के अन्तर्गत वो कारक सम्मिलित किये जाते हैं जो सीधे प्रजननशीलता को प्रभावित करते हैं। यथा - विवाह की आयु, तलाक, अलगाव, विलगाव (पति से दूरी), वैधव्य, बहुपत्नी प्रथा, पति-पत्नी के मध्य सामाजिक, धार्मिक रीति-रिवाजों के कारण दूरी या अलगाव, गर्भधारण एवं प्रसवोपरान्त अलगाव, विवाहोपरान्त आत्म संयम इत्यादि।

उपर्युक्त तत्वों का अध्ययन कर आप विज्ञ हो गये हैं कि कौन-कौन से तत्व प्रजननता से सम्बन्धित हैं जो जनसंख्या वृद्धि के कारक हैं और उनकी आपसी अन्तनिर्भरता की क्या स्थिति है।

5.4.2 मृत्युक्रम:

अर्थ एवं निर्धारक तत्व जैविकीय दृष्टि से मृत्यु का आशय इस शरीर की नश्वरता से है जिसका सजीव जन्म हुआ था। इसमें व्यक्ति विशेष में निहित जीवशास्त्रीय शक्ति का अन्त हो जाता है। इस तरह मृत्यु जैविकीय शक्ति की समाप्ति का सूचक है। इसमें जन्म के समय से काम कर रहे सभी अवयवों में स्पन्दन बन्द हो जाता है। मृत्यु शाश्वत सत्य है। स्वास्थ्य सेवाएँ, जीवन स्तर, औषधि विज्ञान, वैज्ञानिक प्रगति, चिकित्सा विज्ञान चाहे कितनी भी उन्नति क्यों न कर लें मत्य को सविधाओं के आधार पर समय में परिवर्तन तो ला सकते हैं लेकिन मत्य को रोक नहीं सकते। इस आधार पर कहा जा सकता है कि मृत्यु शून्य नहीं हो सकती क्योंकि जिसका जन्म हुआ है उसकी मृत्यु ध्रुव सत्य है। इस तरह मृत्युक्रम का प्रमुख कार्य जनसंख्या आकार को घटाना तथा प्रजननशीलता का प्रमुख कार्य इस कमी की क्षतिपूर्ति करना है। यह सृष्टि का सृजन, पालन एवं संहार का नियमित कार्य है इसमें कोई रूकावट संभव नहीं है। मृत्यु सामाजिक परिवर्तन का वाहक होती है। जैसे ही अगली पीढ़ी के हाथ में व्यवस्था आती है वह सामाजिक ताने-बाने में अपने अनुसार आमूल-चूल परिवर्तन लाने का भरसक प्रयत्न करता है। इस तरह विकास एवं विनाश की प्रक्रिया सतत् चलती रहती है।

मृत्युक्रम की कुछ सामान्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं -

सामान्य रूप से मृत्युक्रम और मृत्यु का प्रयोग समानार्थक रूप में किया जाता है। 2. जनांकिकी के अन्तर्गत इसे जीवन का रहस्य या ईश्वर का नियंत्रण, प्रकोप न मानकर जनांकिकी घटना मानते हैं। मृत्यु सत्य और अवश्यसंभावी है। यद्यपि समय की अनिश्चितता बनी रहती है। मृत्यु एक अनैच्छिक घटना है। इस पर मानव का नियंत्रण नहीं रहता है। ऊँची मृत्यु-दर अर्थ व्यवस्था के अविकसित अवस्था का प्रतीक होता है। __ जनसंख्या वृद्धि में मृत्युक्रम महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है। किसी देश में जनसंख्या वृद्धि का कारण जन्म-दर में वृद्धि न होकर, मृत्यु-दर में कमी होना भी

हो सकता है। मृत्यु समंकों का जनांकिकी में महत्व होता है इसलिए इसके अध्ययन का भी महत्व है। मृत्युक्रम न केवल जनसंख्या के परिमाण को निर्धारित करता है वरन् इसके गठन, स्वरूप, उसके रीति-रिवाजों को भी प्रभावित करता है। ऐसी स्थिति में उन कारकों को जानना और भी आवश्यक एवं महत्वपूर्ण हो जाता है जिनसे मृत्युक्रम या

मृत्यु-दर निर्धारित होती है। मृत्यु के विभिन्न कारणों को निम्न भागों में बाँटकर अध्ययन कर सकते हैं -

1. कुपोषण (Malnutrition)
2. बीमारियाँ (Diseases)
3. पर्यावरण सम्बन्धी दशाएँ (Environmental Conditions)
4. चिकित्सकीय सुविधाओं का अभाव
5. सामाजिक एवं आर्थिक कारक
6. दुर्घटनाएँ (Accidents)

उपर्युक्त निर्धारक तत्वों का क्रमानुसार व्याख्या आप जानना चाहेंगे।

5.4.2.1 कुपोषण (Malnutrition) विश्व में मृत्यु एवं अस्वस्थता का सबसे प्रमुख कारण कुपोषण है। गरीब एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़े देशों में कुपोषण की समस्या व्यापक स्तर से विद्यमान है। Food and Agricultural Organisation की रिपोर्ट्स के अनुसार विश्व में लगभग 400 मिलियन लोग कुपोषण के शिकार हैं जिनमें 300 मिलियन लोग दक्षिणी एशिया में ही निवास करते हैं। भारत में इनकी संख्या लगभग 220 मिलियन है। अनुमान है कि 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों की होने वाली मृत्यु में लगभग 50% मृत्यु प्रोटीन की कमी से होती है। कुपोषण प्रायः गरीबी, भोजन सम्बन्धी आदतों, सामाजिक एवं धार्मिक रूढ़ियों, अज्ञानता, दुर्व्यसन तथा प्रदूषण व मिलावटों के फलस्वरूप मनुष्यकृत रोग है।

5.4.2.2 बीमारियाँ (Diseases) कुपोषण से मनुष्य की रोग प्रतिरोधक शक्ति कमजोर हो जाती है फलतः जैसे ही बीमारियों के घेरे में आता है शरीर में तत्काल क्षरण तदुपरान्त मृत्यु की ओर मनुष्य जाने लगता है। सामाजिक, आर्थिक, पर्यावरण एवं जलवायु तथा संक्रामकता बीमारियों के बढ़ने के प्रमुख कारण है। सयुक्त राष्ट्र संघ की सस्था विश्व स्वास्थ्य संगठन ने लगभग एक हजार प्रकार की बीमारियों को पांच समूहों में वर्णित किया है जिसे निम्न रूपों में आप जान सकते हैं। इन्हीं के आधार पर विश्व में आंकड़े भी इकट्ठे किये जाते हैं -

समूह - 1 - संक्रमण, पराश्रयी तथा श्वास सम्बन्धी बीमारियाँ
समूह – 2 – कैंसर
समूह - 3 - परिवहन तंत्रीय बीमारियाँ
समूह - 4 – हिंसा से मृत्यु
समूह – 5 – अन्य उदर सम्बन्धी अथवा आन्तरिक बीमारियाँ जैसे – वायु विकार, मधुमेह इत्यादि।

5.4.2.3 पर्यावरण सम्बन्धी दशाएँ (Environmental Conditions) पर्यावरण सम्बन्धी दशाओं के अन्तर्गत आवासीय व्यवस्था, पेय जल, वायु, मल विसर्जन, साफ-सफाई, सीवर लाइन, कूड़ा सफाई, मिलावट, प्रदूषण आदि को सम्मिलित किया जाता है। वर्तमान समय में जल, वायु, एवं ध्वनि प्रदूषण पूरे विश्व के पर्यावरण को असंतुलित कर रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार भारत में मात्र 85% शहरी तथा केवल ग्रामीणों को ही सुरक्षित पेयजल उपलब्ध है। शहरीकरण, औद्योगीकरण, टेनरियों की संख्या में बढ़ोत्तरी, कल-कारखानों के द्वारा कचरों का जल में बहाव नदियों के जल को गंभीर रूप से प्रदूषित करता जा रहा है। शहरों का पानी बढ़ते ऑरसैनिक जहर के कारण पेयजल योग्य नहीं रह गया है। संक्रामक रोगों का और विस्तार हुआ है। आवासीय कालोनियों में गन्दी दशाओं के कारण ही टी0बी0, डिप्थीरिया, काली खांसी, एवं मलेरिया रोगियों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है।

5.4.2.4 दुर्घटनाएँ (Accidents) बढती दुर्घटनाओं के कारण मृत्यु की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। ये दुर्घटनाएँ मानव जनित या प्रकृति जनित दोनों हो सकती है। ट्रेनों का लड़ना, हवाई जहाजों का क्रैश होना, पहाड़ों पर बादल फटना, फोर लेन पर गाड़ियों की टक्कर, आंतकवादी घटनाएँ, भीड़ भाड़ के इलाके में बम विस्फोट, युद्ध या

लड़ाईयाँ, घात लगाकर सैनिकों-सिपाहियों को हत करना, सूखा, बाढ़, अकाल, आपदा, आगजनी एवं सूनामी प्रकृति जन्य एवं मानव जन्य दुर्घटनाओं के मिश्रित उदाहरण हैं।

5.4.2.5 चिकित्सीय सुविधाओं की कमी विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं चिकित्सा जगत् में क्रान्ति के बावजूद आज भी निर्धन एवं अविकसित देशों में चिकित्सकीय सुविधाओं की कमी है। जो कुछ भी सुविधाएँ हैं वह समाज के उच्च वर्ग को सुलभ है। गरीबों को यह सुविधा सहज सुलभ नहीं है। जहाँ अधिक जनसंख्या निवास करती है अभी भी गाँवों में बीमारियों, कुपोषण, स्वास्थ्य सुविधाओं का दबाव है।

5.4.2.6 सामाजिक एवं आर्थिक कारक (Socio-Economic Factors) किसी भी देश व समाज में व्याप्त सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था मृत्यु की सीधे प्रभावित करते है। यथा – गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, ऋणग्रस्तता, पर्दा प्रथा, विवाह पद्धति, ऑनर किलिंग, प्रसव पद्धति, शिशु पालन, धार्मिक तथा सामाजिक रीति-रिवाज प्रमुख कारक हैं जिनके कारण मृत्यु-दर प्रभावित होती है व जनसंख्या वृद्धि-दर प्रभावित होती है।

5.4.2.7 शिशु मृत्यु-दर भारत में शिशु मृत्यु-दर ऊँचा होने के प्रमुख कारण निम्न हैं

1. बाल विवाह।
2. गर्भावस्था में माँ के लिए पौष्टिक आहार का अभाव ।
3. अकुशल दाइयों द्वारा प्रसव।
4. आधुनिक प्रसूति सुविधाओं की कमी एवं अप्रचलन ।
5. मातृत्व अज्ञानता।
6. रूढ़िवादिता एवं अन्ध विश्वास ।
7. अतिशय दरिद्रता।
8. जन्म अन्तराल कम होना व बार-बार प्रसव से स्वास्थ्य में गिरावट ।
9. पालन-पोषण का दोषपूर्ण ढंग।

5.4.2.8 मातृ-मृत्यु निर्धन एवं अविकसित देशों में न केवल शिशु मृत्यु-दर ऊँची है वरन् मातृ मृत्यु-दर भी ऊँची है। इसके अन्तर्गत प्रसव अथवा प्रजनन से सम्बन्धित कारकों से होने वाली मृत्यु को सम्मिलित किया जाता है। विश्व में अधिकांश विकसित देशों में प्रति हजार जीवित प्रसवों पर 0-5 मातृ मृत्यु दर है। भारत में आजादी के पहले दर बहत ऊँची थी। 1933 में 24.5, 1946 में 20 थी। 1970 में पर्याप्त गिरावट हुई।

मातृ मृत्यु-दर ऊँची होने के कारण निम्नवत् आप मान सकते हैं। यथा -

1. बाल विवाह (Early Marriage)|
2. शारीरिक थकावट का दबाव ।
3. प्रसव व्यवस्था असुविधाजनक एवं दोषपूर्ण होना।
4. चिकित्सा एवं सुविधाओं का अभाव ।
5. सामाजिक कुरीतियाँ।
6. निरक्षरता।
7. कुपोषण।
8. निर्धनता।

इस प्रकार मृत्युक्रम के विभिन्न निर्धारक तत्वों का अध्ययन कर अब आप जान चुके हैं कि कुपोषण, बीमारियाँ, पर्यावरण सम्बन्धी दशाएँ, दुर्घटनाएँ, चिकित्सा सुविधाओं की कमी, मृत्यु-दर का निर्धारण कितना करते हैं और आपस में ये कारण कितना अन्तर्निर्भर करते हैं।

5.4.3 प्रवास: अर्थ एवं परिभाषा (Migration: Meaning and Definition)

प्रवास जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करने वाली तीसरी महत्वपूर्ण प्रक्रिया (Vital Process) है। जनसंख्या वृद्धि के तीनों महत्वपूर्ण घटकों प्रजननता (Fertility), मृत्युक्रम (Mortility) एवं प्रवास (Migration) में प्रवास की तुलना में प्रजननता एवं मृत्युक्रम की प्रतिक्रिया मन्द होती है। प्रवास से जनसंख्या में परिवर्तन बहुत कम समय में भी सम्भव है। जनसंख्या के आकार, गठन और वितरण में शीघ्र परिवर्तन करने वाले प्रवास के आँकड़े अपेक्षाकृत अधिक शद्ध पाये जाते हैं। यद्यपि यह शुद्धता अन्तर्राष्ट्रीय प्रवास (International Migration) के स्तर पर अधिक रहती है फिर भी आन्तरिक प्रवास व वाह्य-प्रवास (Internal and External Migration) के आँकड़े सरकारी स्तर पर भी रखे जाते हैं, भले ही उतने विश्वसनीय न हों।

साधारण रूप में प्रवास का अर्थ आवागमन या देशान्तरण से लगाया जाता है। मनुष्य एक स्थान से दूसरे स्थान को आता-जाता रहता है जिसके परिणामस्वरूप उसका सामान्य निवास बदल जाता है। जनसंख्या के निवास स्थान के परिवर्तन (Displacement of Population) की इस घटना को देशान्तरण या प्रवास कहते हैं।

'देशान्तरण का अर्थ है अपने स्वाभाविक निवास को परिवर्तित कर देना" –

Daved M. Heer ***"देशान्तरण निवास स्थान को परिवर्तित करते हुए एक भौगोलिक इकाई से अन्य भौगोलिक इकाई में विचरण का एक स्वरूप है।"*** - U.N.O. र्यक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है प्रवास के अन्तर्गत निवास स्थान में परिवर्तन हो जाता है तथा यह परिवर्तन अल्पकालीन न होकर दीर्घकालीन एवं स्थायी होता है। इसके साथ ही देशान्तरण में भौगोलिक इकाई को पार करना भी आवश्यक होता है।

इसके अन्तर्गत अपने ही देश में प्रवास दो रूपों में हो सकता है आन्तरिक प्रवास (In-Migration) एवं वाह्य प्रवास (Out-Migration) लेकिन जब देश में परिवर्तन होता है तो दूसरे देश में जाने को उत्प्रवास (Emigration) व दूसरे देश से अपने देश में आने पर अप्रवास (Immigratiion) कहा जाता है।

5.4.3.1 प्रवास का वर्गीकरण (Classificatiion of Migration)

प्रवास या देशान्तरण का वर्गीकरण सामान्य रूप में निम्न रूप में किया जाता है :1. आन्तरिक प्रवास (Internal Migration) 2. अन्तर्राष्ट्रीय प्रवास (International Migration) 1.आन्तरिक प्रवास - जब किसी देश के निवासी अपनी देश की सीमाओं के अन्तर्गत एक स्थान से दूसरे स्थान पर चले जाते हैं तो उनका यह प्रवास आन्तरिक प्रवास कहलाता है। उदाहरण – इलाहाबाद का कोई व्यक्ति मुम्बई में बस जाता है तो यह आन्तरिक देशान्तरण या प्रवास कहलायेगा। प्रो० डोनाल्ड जे0 बोग का मानना है कि आन्तरिक प्रवास के लिए In-Migration एवं बर्हिगमन के लिए Out-Migration शब्द का प्रयोग किया जाना चाहिए। लेकिन इंग्लैण्ड का व्यक्ति यदि दिल्ली में बस जाता है तो आव्रजन (Immigration) एवं कलकत्ता के व्यक्ति को अमेरिका में बसने को प्रवजन कहा (Emigration) जायेगा।

आन्तरिक प्रवास का अध्ययन निम्न रूपों में आप कर सकते हैं - वैवाहिक प्रवास (Marital Migration) अन्तन्तिीय प्रवास (Inter-State Migration) अन्तर्जनपदीय प्रवास (Inter-District Migration) ग्राम-शहर प्रवास (Rural-Urban Migration)

सम्बद्धता जन्म प्रवास या सह प्रवास (Accompanied Migration) 2. अन्तर्राष्ट्रीय प्रवास - अन्तर्राष्ट्रीय प्रवास का तात्पर्य अपने देश से दूसरे देश या दूसरे देश से अपने देश के बीच होने वाले गमनागमन से लगाया जाता है। वस्तुतः आन्तरिक या अन्तर्राष्ट्रीय प्रवास में कोई मौलिक अन्तर नहीं है मात्र राष्ट्रों की भौगोलिक सीमाओं को ही अन्तर का आधार कहा जा सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रवास की अपेक्षा आन्तरिक प्रवास का प्रभाव अधिक व्यापक है।

5.4.3.2 प्रवास को प्रभावित करने वाले घटक प्रवास या देशान्तरण विभिन्न कारकों के कारण होता है।

जनांकिकीविद् इस सन्दर्भ में आकर्षक कारक (Pull Factors) एवं विकर्षण कारक (Push Factors) का मुख्य उल्लेख करते हैं।

1.आकर्षक कारक (Pull Factors) - आकर्षक कारक वो करक हैं जिनसे प्रभावित होकर व्यक्ति अपना निवास स्थान छोड़कर अन्यत्र आकर्षित करने वाले स्थान में बसता है। कुछ प्रमुख आकर्षक कारक निम्नवत् हैं:

1. रोजगार एवं व्यवसाय के श्रेष्ठ अवसर (Better Employment) |
2. (Better Education) |
3. आवास की अच्छी
4. मनोरंजन के अच्छे साधनों की उपलब्धता।
5. स्वास्थ्यप्रद जलवायु ।
6. उन्नत नागरिक जीवन ।

2. विकर्षण कारक (Push Factors) - विकर्षण कारक वो कारक हैं जिनसे प्रभावित होकर व्यक्ति अपना निवास छोड़ने को विवश होता है। वो ही कारक प्रवास हेतु उपरोक्त वाह्य करते हैं। कुछ प्रमुख विकर्षण तत्व निम्नवत् हैं:

1. निवास स्थल पर रोजगार के अवसरों का अभाव ।
2. शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, प्रशिक्षण सुविधा का अभाव ।
3. मनोरंजन सुविधा का अभाव ।
4. उन्नति के अवसरों का न होना।
5. सामाजिक बहिष्कार।
6. सामाजिक माहौल प्रतिकूल होना।
7. आतंकवाद।
8. राजनीतिक, सामाजिक, जातिगत एवं धार्मिक भेदभाव ।

आकर्षण एवं विकर्षण कारकों को जानने के बाद अब आप अध्ययन के दृष्टिकोण से प्रवास को प्रभावित करने वाले तत्वों को निम्न रूपों में रखकर और जान सकते हैं।

1. प्राकृतिक कारक (Natural Factors) - प्राकृतिक अथवा भौगोलिक कारकों से प्रायः लोग प्रवास करते हैं। इसके अन्तर्गत जलवायु सम्बन्धी परिवर्तन, प्राकृतिक प्रकोप, सूखा, बाढ़, दुर्भिक्ष, महामारियाँ, सुनामी, भूकम्प, ज्वालामुखी, बादल फटने से आयी अचानक बाढ़ की तबाही आदि घटनाएँ आती हैं जो देशान्तरण या प्रवास को प्रभावित करती हैं।

2. आर्थिक कारक (Economic Factors) - प्रवास को प्रभावित करने वाले कारकों में आर्थिक कारक सबसे महत्वपूर्ण होते हैं। लोग बेहतर जीवन की लालसा में अपना मूल निवास छोड़कर अन्यत्र देश में जा सकते हैं। कुछ प्रमुख आर्थिक कारक इस प्रकार हैं -

(क) कृषि योग्य भूमि का अभाव।
(ख) औद्योगीकरण।
(ग) नगरीकरण।
(घ) यातायात की सुविधाएँ।
(च) सामान्य जीवन हेतुं आर्थिक स्थिति ठीक करना।

3. राजनीतिक कारक (Political Factors) - राजनीतिक कारक भी प्रवास को प्रभावित करते हैं। ग्रामीण

क्षेत्रों में उद्यागों की स्थापना एक राजनीतिक निर्णय के आधार पर होता है जिससे ग्रामीण से शहरी प्रवास पर नियंत्रण होता है। नोएडा, गीडा, सीडा, इत्यादि औद्योगिक क्षेत्र भारत में इसी उद्देश्य से बनाए गये हैं। देशों का राजनैतिक बंटवारा या शरणार्थियों का गमनागमन इसका प्रमुख उदाहरण हैं जो भारत में विभाजन एवं बंगलादेश के परिप्रेक्ष्य में कहा जा सकता है।

4. सामाजिक कारक (Social Factors)- प्रवास के लिए सामाजिक रीति-रिवाज भी पी कारक होते हैं। इसके अन्तर्गत वैवाहिक प्रवास (यथा - विवाह के बाद लडकियों का अपने पति के घर को प्रवास) एवं सह प्रवास (पिता के स्थानांतरण या प्रवास के कारण पूरे परिवार का साथ जाना) प्रमुख कारक हैं। महत्वाकांक्षायें एवं शीघ्र विकास की कामनायें गाँवों से नगरों की ओर प्रवास को प्रोत्साहित करते हैं।

5. जनांकिकी कारक (Demographic Factors) - जिन स्थानों पर जनसंख्या का दबाव अधिक होता है उस स्थान से कम या विरल जनसंख्या की ओर प्रवास होता है। प्रवास पर जन्म-दर तथा मृत्यु-दर का भी प्रभाव पड़ता है। जहाँ पुरूष विशिष्ट जन्म-दर (Male Specific Birth rate) कम है तो सन्तुलन बनाये रखने के लिए प्रवासी बनकर युवाओं को दूसरे क्षेत्र से आना होगा। युद्ध के कारण कई बार यह देखा गया है कि पुरूषों की संख्या घटने के कारण जनसंख्या असंतुलित हो गयी फलतः विश्व के अन्य देशों के युवाओं को बसने के लिए आकर्षित करना पड़ा।

6. धार्मिक एवं सांस्कृतिक कारक – धर्म प्रचार तथा प्रसार के उद्देश्य से विभिन्न धर्मों के अनुयायी विश्व के विभिन्न भू–भागों में प्रवास करते हैं। सांस्कृतिक सम्पर्क भी प्रवास को प्रोत्साहित करता है। प्रो० थाम्पसन एवं लेविस का मानना है कि प्रवास के लिए उत्तरदायी कारक आर्थिक तथा गैर आर्थिक कारक दोनों ही हो सकते हैं परन्तु इन दोनों प्रकार के कारकों में आर्थिक कारक ही अधिक महत्वपूर्ण है।

देशान्तरण या प्रवास में बाधक तत्व भी जानने योग्य हैं जो निम्न हैं -

1. दूरी।
2. भाषा संस्कृति एवं रीति-रिवाज।
3. वर्तमान व्यवसाय व स्थान से लगाव ।
4. मार्ग व्यय।
5. प्रवास क्षमता।
6. प्रवासी का स्वास्थ्य, आयु एवं इच्छाशक्ति । 7.
7. प्रवास के नियम।

5.4.3.3 प्रवास के प्रभाव - परिणाम

प्रवास के प्रभाव या परिणाम सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों हो सकते हैं। सकारात्मक प्रभाव के अन्तर्गत भूमि पर जनसंख्या का दबाव कम होना, श्रमिकों की मांग एवं पूर्ति में सामंजस्य, एकता की भावना का विकास, नगरीकरण के विभिन्न लाभ इत्यादि आते हैं। जनांकिकी दृष्टिकोण से भी लाभ होता है। जीवन स्तर ऊँचा उठता है। देशान्तरण के नकारात्मक प्रभाव भी होते हैं यथा - मानसिक असन्तोष बढ़ना, अन्तर वैयक्तिक सम्बन्धों का हास, वर्ग भेद, सांमजस्य की समस्या एवं जनसंद्धि व जनघनत्व में वृद्धि की समस्या आदि। आन्तरिक प्रवास के प्रभावों में इस रूप में परिणामों का अध्ययन कर सकते हैं कि जो प्रवासी हैं उस पर क्या प्रभाव पड़ रहे हैं, जहाँ से प्रवास हो रहा है एवं जिस स्थान को प्रवासी प्रवास कर रहा है वहाँ पर पड़ने वाले प्रभावों – परिणामों का अध्ययन महत्वपूर्ण है। नगरीकरण होने से उसके लाभ एवं हानि दोनों पक्ष जानने योग्य होते हैं।

5.5 अभ्यास प्रश्न

लघु प्रश्न

1. जनसंख्या वृद्धि के प्रमुख घटक कौन-कौन हैं?
2. प्रजननता को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों का उल्लेख करें।
3. मृत्यु दर को प्रभावित करने वाले निर्धारक कौन-कौन हैं?
4. प्रवास या देशान्तरण का क्या अर्थ है एवं स्पष्ट करें कि किस कारण से लोग प्रवास करते हैं?
5. विवाह की आयु पर अपना विचार प्रस्तुत करें।
6. नगरीकरण से क्या आशय है?
7. शिशु मृत्यु-दर पर अपना पक्ष प्रस्तुत करें।

बहुविकल्पीय प्रश्न

1.निम्न में से कौन जनसंख्या वृद्धि का घटक नहीं है?

(अ) प्रजननता

(ब) समाचार-पत्र

(स) मृत्युक्रम

(द) प्रवास प्रश्न -

2 प्रजननता के निर्धारक तत्व नहीं है -

(अ) विवाह की आयु

(ब) आर्थिक स्तर

(स) शैक्षिक स्तर

(द) आरक्षण प्रश्न -

3 मृत्युक्रम के निर्धारक तत्व नहीं हैं -

(अ) अच्छी दवाएँ

(ब) बीमारियाँ

(स) कुपोषण

(द) दुर्घटनाएँ

4 प्रवास के निर्धारक तत्व नहीं हैं -

(अ) प्राकृतिक प्रक्षेप

(ब) दूरी

(स) औद्योगीकरण

(द) पुस्तक

5.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई संख्या 05 में जनसंख्या वृद्धि के घटक एवं उनकी अन्तर्निर्भरता का विवेचन किया गया है। विश्व के प्रत्येक देश चाहे वह विकसित हो या अविकसित देश सभी जनसंख्या समस्या के ज्वलंत समस्या से प्रभावित एवं भयभीत हैं। इस इकाई में जनसंख्या वृद्धि के महत्वपूर्ण तीन घटकों प्रजननता, मृत्युक्रम एवं प्रवास एवं उनकी

अन्तर्निर्भरता की व्याख्या प्रस्तुत किया गया है। प्रजननता के निर्धारक तत्व हैं - वैवाहिक स्तर, नगरीकरण, आर्थिक स्तर, व्यवसाय, धर्म एवं सामाजिक रीति-रिवाज, सामाजिक गतिशीलता, भौगोलिक कारक, जैविकीय तत्व. प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सामाजिक तत्व। मत्यक्रम को निर्धारित करने वाले तत्व हैं – कुपोषण, बीमारियाँ, पर्यावरण सम्बन्धी दशाएँ, दुर्घटनाएँ, चिकित्सकीय सुविधाओं की कमी, सामाजिक एवं आर्थिक कारक, शिशु एवं मातृ मृत्यु दर। प्रवास को प्रभावित करने वाले कारक हैं - आकर्षण एवं विकर्षण तत्व जिसकी व्याख्या आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक जनांकिकी एवं अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में की गई है। इस तरह जनसंख्या वृद्धि के तीनों घटकों एवं तीनों घटकों को प्रभावित करने वाले कारकों एवं कारकों को प्रभावित करने वाले विभिन्न तत्व अर्थात् आपसी अन्तर्निर्भरता का निरूपण इस इकाई संख्या 05 में विशद् व्याख्या से आप जान गये हैं।

5.7 शब्दावली

- **जनसंख्या वृद्धि** - जनसंख्या के आकार में परिवर्तन को जनसंख्या वृद्धि के नाम से जाना जा सकता है।
- **जनसंख्या वृद्धि के घटक** - तीन महत्वपूर्ण घटक हैं – प्रजननता, मृत्युक्रम एवं प्रवास ।
- **जन्म-दर** - प्रति हजार जनसंख्या पर जीवित जन्मों की संख्या।
- **प्रजननता** -प्रजननता जीवित जन्मों की संख्या पर आधारित जनसंख्या की यथार्थ स्तर की क्रियाविधि है – बर्कले।
- **प्रजनन के तीन मौलिक निर्धारक तत्व** – 1. प्रजनन शक्ति, 2. प्रजनन के अवसर,3. प्रजनन सम्बन्धी निर्णय
- **प्रत्यक्ष सामाजिक तत्व** –ऐसे तत्व जो जनसंख्या वृद्धि को सीधे बढ़ाते-घटाते हैं। यथा – आत्मसंयम, संतति निग्रह, परिवार नियोजन विधियाँ, गर्भ समापन, भ्रूण हत्या, शिशु हत्या आदि।
- **अप्रत्यक्ष सामाजिक तत्व** - ऐसे तत्व जो सीधे प्रजननशीलता को प्रभावित करते हैं। यथा – विवाह की आयु, तलाक, अलगाव-विलगाव, वैधव्य इत्यादि ।

5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर – (1) – ब, (2) – द, (3) - अ, (4) – द

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- Dr. Premi, M.K., Ramanamma, A., Bambawale, Usha,. An Introduction to social demography, Vikas Publishing House, New Delhi.
- Appleman, Philip (ed.) Thomos Robert Malthus : An Essay on the Principle of Population, New York : W.W. Norton and Co., Inc., 1976.
- Carr- Saunders, A.M., World Population : Past Growth and Present Trends, Oxford : Clarendon Press, 1936.
- Coale, Ansley J. and Edgar M. Hoover, Populationi Growth and Economic development in low income countries, Princeton University Press, 1958.
- Thompson, Warren S. and David T. Lewis : Population Problems; New York: Mc Graw Hill Book Co. 1976.

5.10 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

- डॉ0 मिश्रा, जे0पी0, जनांकिकी, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा।
- डॉ0 बघेल, डी0एस0, जनांकिकी, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
- डॉ0 पन्त, जीवन चन्द्र, जनांकिकी, गोयल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
- अशोक कुमार, जनसंख्या, एक समाज वैज्ञानिक अध्ययन, हिन्दी ग्रंथ अकादमी प्रयाग, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
- डॉ0 मलैया, के.सी., जनसंख्या शिक्षा, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

5.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. जनसंख्या वृद्धि के घटकों में प्रजननता के निर्धारक तत्वों की व्याख्या करें।
2. मृत्युक्रम को निर्धारित करने वाले कारकों का विश्लेषण करें।
3. प्रवास या देशान्तरण (Migration) से आप क्या समझते हैं? इसके आकर्षण एवं विकर्षण तत्वों (Pull and Push Factor) पर प्रकाश डालें।

इकाई-6 जनसंख्या की गुणवत्ता की अवधारणा
(Concept of Population Quality)

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 जनसंख्या की गुणवत्ता: एक परिचय
6.4 जनसंख्या की गुणवत्ता की अवधारणा
6.5 जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता मापने के सूचकांक
6.5.1 जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक
6.5.1.1 जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक का निर्माण
6.5.1.2 जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक के निर्माण हेतु उदाहरण
6.5.2 मानव विकास सूचकांक
6.5.2.1 मानव विकास सूचकांक का निर्माण
6.5.2.2 मानव विकास सूचकांक के निर्माण हेतु उदाहरण
6.5.2.3 संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा मानव विकास सूचकांक पर आधारित विभिन्न स्तर
6.5.2.4 मानव विकास सूचकांक की सीमाएं
6.5.2.5 मानव विकास रिपोर्ट: 2013

6.6 अभ्यास प्रश्न
6.7 सारांश
6.8 शब्दावली
6.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
6.11 सहायक या उपयोगी सामग्री
6.12 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

जननांकिकी से सम्बन्धित यह छठवीं इकाई है। इससे पूर्व की इकाई के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि जनसंख्या वृद्धि के विभिन्न घटक क्या हैं ? और इनकी आपसी निर्भरता किस प्रकार की है ?

जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता का अर्थ व्यक्तियों एवं समाजों के गुणवत्तापूर्ण जीवन यापन से लिया जाता है। यह एक व्यापक अवधारणा है। इसके मानक संकेतकों में केवल धन और रोजगार ही नहीं बल्कि पर्यावरण, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, सुरक्षा, शिक्षा, मनोरंजन, खुशी, अवकाश का समय और सामाजिक सम्बन्धों के साथ गरीबी रहित जीवन शामिल हैं। प्रस्तुत इकाई में जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता की अवधारणा, जीवन की गुणवत्ता मापन के विभिन्न सूचकांक आदि से सम्बन्धित बिन्दुओं का विस्तार से विश्लेषण प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता, इसके मापन के सूचकांकों- जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक तथा मानव विकास सूचकांक का निर्माण, जीवन की गुणवत्ता को देश के विकास से सम्बन्ध आदि को समझ सकेंगें तथा इसका विश्लेषण कर सकेंगे।

6.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- ✓ बता सकेंगे कि जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता से क्या आशय है।
- ✓ समझा सकेंगे कि जीवन की गुणवत्ता का विकास में क्या महत्व है।
- ✓ बता सकेंगे कि जीवन की गुणवत्ता मापने के लिए सूचकांकों का निर्माण किस प्रकार किया जाता है।

6.3 जनसंख्या की गुणवत्ता: एक परिचय

विश्व का प्रत्येक देश तीव्र आर्थिक विकास का आकांक्षी है। इस आकांक्षा की पूर्ति हेतु देश में दो तत्वों का होना आवश्यक है : प्रथम, प्राकृतिक संसाधन एवं द्वितीय, मानवीय संसाधन । वास्तविक रूप में, आर्थिक विकास में सबसे अधिक योगदान मानवीय संसाधन अर्थात् उस देश में उपलब्ध जनसंख्या का ही होता है। जनसंख्या के सक्रिय सहयोग के बिना आर्थिक उन्नति और विकास के लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। प्राकृतिक साधन एवं पूंजी आदि को उत्पादन कार्य में लगाने के लिए मानवीय प्रयत्नों की ही आवश्यकता होती है। मनुष्य अपनी बौद्धिक एवं शारीरिक शक्ति से भौतिक साधनों का शोषण करता है, नवप्रवर्तनों द्वारा उत्पादन प्रक्रिया को विकसित करता है और इस प्रकार आर्थिक विकास के मार्ग को प्रशस्त करता है। स्पष्टतः जनसंख्या आर्थिक विकास का साधन ही नहीं वरन् साध्य भी है और यह विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है परन्तु वर्तमान समय में तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या एवं इसकी निम्न गुणवत्ता एक प्रमुख समस्या के रूप में उभरकर सामने आई है जिसे आर्थिक विकास की बाधा के रूप देखा जा रहा है। ऐसी स्थिति में जनसंख्या आर्थिक विकास में बाधा न होकर सहयोगी की भमिका निभाये. इसके लिए आवश्यक है कि देश की जनसंख्या के परिमाण को नियन्त्रित किये जाने के साथ ही इसकी गुणवत्ता को बढ़ाया जाये।

6.4 जनसंख्या की गुणवत्ता की अवधारणा

रिचर्ड टी. गिल का कथन है कि आर्थिक विकास एक यान्त्रिक प्रक्रिया ही नहीं है बल्कि एक मानवीय उद्यम भी है। इसका प्रतिफल अन्तिम रूप से मानवीय गुणों, उसकी कार्यकुशलता तथा उसके दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। यह कथन स्पष्ट करता है कि किसी देश का विकास मानवीय प्रयासों का फल होता है। गणवान जनसंख्या प्रगति के मार्ग पर अग्रसर कर सकती है। वास्तव में, जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता का आशय व्यक्तियों एवं समाजों के

गुणवत्तापूर्ण जीवन यापन से लिया जाता है। व्यापक अर्थों में, यह अन्तर्राष्ट्रीय विकास, स्वास्थ्य एवं राजनीति के क्षेत्रों आदि से सम्बन्धित है। स्वभाविक रूप से लोग जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता को जीवन स्तर की अवधारणा से जोडते हैं जबकि यह दोनों अलग-अलग अवधारणाएं हैं। जहां जीवन स्तर एक संकचित अवधारणा है जो प्राथमिक रूप से आय पर आधारित है, वहीं जीवन की गुणवत्ता एक व्यापक अवधारणा है। जीवन की गुणवत्ता के मानक संकेतकों में केवल धन और रोजगार ही नहीं बल्कि निर्मित पर्यावरण, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, सुरक्षा, शिक्षा, मनोरंजन, खुशी, अवकाश का समय और सामाजिक सम्बन्धों के साथ गरीबी रहित जीवन शामिल है। विश्व में लोगों को गुणवत्तापूर्ण जीवन प्रदान करने के लिए विभिन्न देशों की सरकारों के साथ ही गैर सरकारी संस्थाएं एवं वैश्विक संगठन अपना योगदान दे रहे हैं। विश्व बैंक ने भी दुनियां को गरीबीमुक्त करने का लक्ष्य रखा है जिससे लोगों को भोजन, वस्त्र, आवास, स्वतन्त्रता, शिक्षा तक पहुंच, स्वास्थ्य देखभाल और रोजगार की सुविधाएं उपलब्ध हों और उनकी जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो।

6.5 जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता मापने के सूचकांक

किसी भी देश की जनसंख्या उसकी वास्तविक सम्पत्ति होती है। विकास का मूल उद्देश्य लोगों के लिए एक ऐसा वातारण तैयार करना है जिसमें वे दीर्घ, स्वस्थ एवं सृजनात्मक जीवन का आनन्द ले सकें। मनुष्यों के विकास को मापने के लिए समंकों की आवश्यकता होती है। इस सन्दर्भ में एक देश की जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता को मापने हेतु सूचकांकों का उपयोग किया जाता है, जिनमें से दो प्रमुखतः प्रचलित सूचकांक हैं : प्रथम, जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक तथा द्वितीय, मानव विकास सूचकांक।

6.5.1 जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक

मानव विकास के सूचक के रूप में जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक (Physical Quality of Life Index – PQLI) का प्रतिपादन प्रसिद्ध समाजशास्त्री मौरिस डेविड मौरिस ने सन् 1970 में किया था। इस सूचकांक के अन्तर्गत एक देश के तीन महत्वपूर्ण बिन्दुओं की उपलब्धि के आधार पर जीवन का एक संयुक्त भौतिक गुणवत्ता सूचकांक निकाला जाता है

1. जीवन प्रत्याशा: जीवन प्रत्याशा से आशय लागों के जीवित रहने की औसत आयु से है। यह एक देश के नागरिकों के स्वास्थ्य तथा सभ्यता एवं आर्थिक विकास का सूचक है।

2. शिशु मृत्यु दर: शिशु मृत्यु दर का तात्पर्य एक वर्ष की आयु से पूर्व प्रति हजार सजीव जन्मित बच्चों पर मृत बच्चों की संख्या से है।

3. साक्षरता: इससे आशय तात्पर्य प्रति 100 व्यक्यिों पर साक्षर लोगों की संख्या से है।

सामान्यीकरण की प्रक्रिया : इस सूचकांक का निर्माण करने के लिए सूचकांक के तीनों संकेतकों (जीवन प्रत्याशा, शिशु मृत्यु दर तथा साक्षरता) की माप करके इनका सामान्यीकरण किया जाता है। चूंकि यह तीनों संकेतक एक प्रकृति के नहीं हैं, अतः इनको अलग-अलग मापा जाता है, जैसे- जीवन प्रत्याशा को वर्षों के रूप में, शिशु मृत्यु दर को प्रति हजार जीवित जन्म के रूप में तथा साक्षरता को प्रतिशत के रूप में मापा जाता है। सामान्यीकरण हेतु मौरिस ने प्रत्येक संकेतक को अधिकतम एवं न्यूनतम मूल्य प्रदान किया है। इसे तालिका से स्पष्ट किया जा सकता है :

तालिका 1 : संघटक संकेतकों के उच्चतम तथा न्यूनतम मूल्य

संघटक संकेतक	उच्चतम मूल्य	न्यूनतम मूल्य	विस्तार
जीवन प्रत्याशा (एक वर्ष पर) (LEI)	77	38	39
मौलिक साक्षरता दर (BLR)	100	0	100

शिशु मृत्यु दर (IMR)	229	9	220

तलिका 1 से स्पष्ट है कि जीवन के भौतिक गुणवत्ता सूचकांक (PQLI) के द्वारा एक देश की उपलब्धि को 1 से 100 के पैमाने के बीच मापा जाता है अर्थात् PQLI का न्यूनतम मूल्य 1 तथा अधिकतम मूल्य 100 होगा। जीवन प्रत्याशा के 100 की ऊपरी सीमा 77 वर्ष मानी गयी है जबकि 1 की निचली सीमा 38 वर्ष मानी गयी है। इन दोनों सीमाओं के बी प्रत्येक देश की जीवन प्रत्याशा को 1 से 100 के बीच माना गया है। इसी प्रकार, शिशु मृत्यु दर के लिए उच्चतम सीमा 9 प्रति हजार तथा निम्नतम सीमा 229 प्रति हजार निर्धारित की गयी है। साक्षरता दरों को 1 से 100 के प्रतिशत के रूप में मापा गया है। स्पष्ट है कि इस पैमाने के अनुसार 1 को किसी देश की सबसे 'खराब उपलब्धि' तथा 100 को सबसे अच्छी उपलब्धि' माना जाता है।

6.5.1.1 जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक का निर्माण

इस सूचकांक के निर्माण हेतु निम्नलिखित दो चरण पूर्ण किये जाते हैं :

I चरण: संघटक सूचकांकों का निर्माण सूचकांक निर्माण के प्रथम चरण में तीन संघटक सूचकांकों का निर्माण किया जाता है। इसमें धनात्मक तथा ऋणात्मक संकेतकों के उपलब्धि स्तर को ज्ञात करने हेतु अलग-अलग सूत्रों का उपयोग किया जाता है। धनात्मक संकेतक अर्थात् जीवन प्रत्याशा तथा मौलिक साक्षरता दर की उपलब्धि स्तर को जानने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है:

$$\text{उपलब्धि स्तर} = \frac{\text{वास्तविक मूल्य} \ - \ \text{न्यूनतम मूल्य उपलब्धि}}{\text{उच्चतम मूल्य} \ - \ \text{न्यूनतम मूल्य}}$$

इसी तरह ऋणात्मक संकेतक अर्थात् शिशु मृत्यु दर के उपलब्धि स्तर को ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

$$\text{उपलब्धि स्तर} = \frac{\text{उच्चतम मूल्य} - \text{वास्तविक मूल्य उपलब्धि}}{\text{उच्चतम मूल्य} \ - \ \text{न्यूनतम मूल्य}}$$

II चरण: औसत निकालना

PQLI निर्माण के द्वितीय चरण में उपर्युक्त तीनों संघटकों के व्यक्तिगत सूचकांक बनाने के बाद इनका औसत निकाल लिया जाता है।

PQLI =(LEI + BLI + IMI PQLI)/3

6.5.1.2 जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक (PQLI) के निर्माण हेतु उदाहरण

मान लीजिए कि भारत में जीवन प्रत्याशा 70 वर्ष, शिशु मृत्यु दर 50 प्रति हजार तथा मौलिक साक्षरता दर 75 प्रतिशत है। इससे PQLI निर्माण का निर्माण इस प्रकार होगा : प्रथम चरण :

वास्तविक मूल्य - न्यूनतम मूल्य

1. जीवन प्रत्याशा सूचकांक $(\mathbf{LEI}) = \frac{\text{वास्तविक मूल्य}-\text{न्यूनतम मूल्य}}{\text{उच्चतम मूल्य} -\text{न्यूनतम}}$

$$= \frac{70-38}{77-38}$$

$$= \frac{32}{39}$$

$$= .82$$

2. मौलिक साक्षरता सूचकांक $(\mathbf{BLI}) = \frac{\text{वास्तविक मूल्य}-\text{न्यूनतम मूल्य}}{\text{उच्चतम मूल्य} -\text{न्यूनतम}}$

$$= \frac{70 - 0}{100 - 0}$$

$$= \frac{75}{100}$$

$$= .75$$

3. शिशु मृत्यु सूचकांक $(\mathbf{IMI}) = \frac{\text{वास्तविक मूल्य} - \text{न्यूनतम मूल्य}}{\text{उच्चतम मूल्य} - \text{न्यूनतम}}$

$$= \frac{229 - 50}{229 - 9}$$

$$= \frac{179}{220}$$

$$= .81$$

द्वितीय चरण :

$$\boldsymbol{PQLI} = \frac{\text{LEI} + \text{BLI} + \text{IMI}}{\mathbf{3}}$$

$$= \frac{.82 + .75 + .81}{\mathbf{3}}$$

$$= \frac{\text{LEI} + \text{BLI} + \text{IMI}}{\mathbf{3}}$$

$$= .79$$

एक देश में जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक ऊंचा होने की स्थिति में उस देश के लोगों (जनसंख्या) की जीवन की गुणवत्ता भी ऊंची मानी जाती है। यह सूचकांक मौरिस द्वारा किया गया एक महत्वपूर्ण प्रयास है जो सकल राष्ट्रीय उत्पाद तथा अन्य सम्भावित संकेतकों को अनदेखा कर तीन महत्वपूर्ण क्षेत्रों-जीवन प्रत्याशा, साक्षरता दर एवं शिशु मत्यदर पर केन्द्रित है। यह जीवन की गणवत्ता की अन्य मापों की तलना में एक सरल माप है। वर्तमान में इसका स्थान मानव विकास सूचकांक ने ले लिया है।

6.5.2 मानव विकास सूचकांक

अन्तर्राष्ट्रीय विकास की माप में सामान्यतया उपयोग किये जाने वाले मानव विकास सूचकांक (Human Development Index - HDI) का प्रतिपादन सन् 1990 में संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) से जुड़े प्रसिद्ध पाकिस्तानी अर्थशास्त्री महबूब-उल-हक तथा भारतीय अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन आदि ने किया था। इस सूचकांक के निर्माण का उद्देश्य विकास के अर्थशास्त्र को राष्ट्रीय आय लेखांकन से जनकेन्द्रित नीतियों की ओर केन्द्रित करना था। यह सूचकांक संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत बनाये और प्रकाशित किये जाते हैं। सन् 1990 से प्रतिवर्ष UNDP द्वारा एक मानव विकास रिपोर्ट जारी की जाती है जिसमें विभिन्न देशों का श्रेणीकरण उनके मानव विकास सूचकांक के आधार पर किया जाता है। इस सचकांक का उपयोग विकसित. विकासशील एवं अल्पविकसित देशों

का अन्तर जानने एवं आर्थिक नीतियों का जीवन की गुणवत्ता पर प्रभाव की माप करने के लिए भी किया जाता है।

मानव विकास प्रतिवेदन 1990 के अनुसार, विकास केवल लोगों की आय तथा पूंजी का ही विस्तार नहीं बल्कि यह मानव की कार्यप्रणाली- कार्य करने के तरीके तथा क्षमताओं में उन्नयन की प्रक्रिया है। विकास की इसी विचारधारा को 'मानव विकास' का नाम दिया गया है। मानव विकास सूचकांक तीन सामाजिक अभिसूचकों - दीर्घायु, शैक्षणिक उपलब्धि एवं जीवन निर्वाह स्तर पर आधारित है। इन अभिसूचकों को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है :

1. दीर्घायु अथवा जन्म के समय जीवन प्रत्याशा (Longevity or Life Expectancy at Birth) : दीर्घायु अथवा जन्म के समय जीवन प्रत्याशा को वर्तमान समय में अर्थशास्त्रियों द्वारा न्यूनतम 25 वर्ष तथा अधिकतम 85 वर्ष माना जाता है।

2. शैक्षणिक उपलब्धि (Educational Attainment): शैक्षणिक उपलब्धि की माप निम्नलिखित दो चरों द्वारा की जाती है:

(i) प्रौढ़ साक्षरता दर (Adult Literacy Ratio - ALR): 15 वर्ष या इससे अधिक आयु के 100 व्यक्तियों में से जितने व्यक्ति साधारण कथन को पढ़ तथा लिख सकते हैं, उसे प्रौढ़ साक्षरता दर कहा जाता है।

(ii) सकल नामांकन दर (Gross Enrolment Ratio - GER): सकल नामांकन दर देश की कुल जनसंख्या एवं समस्त नामांकित छात्रों का अनुपात होता है। दूसरे शब्दों में, सकल नामांकन दर कुल जनसंख्या का वह भाग जिसका नामांकन किसी प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक स्कूल अथवा किसी विश्वविद्यालय स्तर पर हुआ है। किसी देश में सकल नामांकन दर के अधिक होने की स्थिति में उसकी जनसंख्या की जीवन की गुणवत्ता भी अधिक होगी। इस दर को ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है:

शिक्षा के लिए नामांकित छात्रों की संख्या सकल नामांकन दर (GER) = कुल जनसंख्या

शैक्षणिक उपलब्धि निर्देशांक (EAI) को ज्ञात करने हेतु प्रौढ़ साक्षरता दर को 2/3 भार दिया जाता है जबकि सकल नामांकन दर को 1/3 भार दिया जाता है। इस प्रकार,

$$\text{E. A. I} = \frac{2}{3}\text{ALR} + \frac{1}{3}\text{GER}$$

3 जीवन निर्वाह स्तर अथवा प्रति व्यक्ति वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद या आय (Subsistence Level or Per Capita Real Gross Domestic Product or Income) : इसके माध्यम से लागों की वस्तुओं तथा सेवाओं के खरीदने की क्षमता अर्थात् क्रयशक्ति अथवा लोगों के जीवन निर्वाह स्तर को ज्ञात किया जाता है। इसके लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

$$\text{प्रति व्यक्ति वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद} = \frac{\text{स्थिर कीमतों पर सकल घरेलू उत्पाद}}{\text{कुल जनसंख्या}}$$

6.5.2.1 मानव विकास सूचकांक (HDI) का निर्माण

मानव विकास सूचकांक के निर्माण हेतु निम्नलिखित दो चरण पूर्ण किये जाते हैं :

I चरण: व्यक्तिगत या विमीय सूचकांकों का निर्माण मानव विकास सूचकांक के निर्माण हेतु सर्वप्रथम तीनों अभिसूचकों (दीर्घायु, शैक्षणिक उपलब्धि एवं जीवन निर्वाह स्तर अथवा प्रति व्यक्ति वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद या आय) के अलग-अलग विमीय सूचकांक ज्ञात किये जाते हैं। प्रत्येक विमा का अधिकतम मूल्य एक (1) तथा न्यूनतम मूल्य शून्य (0) होता है।

व्यक्तिगत सूचकांक बनाते समय ध्यान देने योग्य बातें : व्यक्तिगत सूचकांक को ज्ञात करते समय दो बातों का

आवश्यक रूप से ध्यान रखना होता है - प्रथम, अभिसूचकों का सामान्यीकरण तथा द्वितीय, वास्तविक सकल घरेलू प्रति व्यक्ति आय की गणना।।

1. अभिसूचकों का सामान्यीकरण : मानव विकास सूचकांक के सही निर्माण हेतु आवश्यक है कि इसके निर्धारक तीनों ही अभिसूचकों के माप की इकाइयां समरूप हों। परन्तु, इसके तीनों अभिसूचकों को अलग-अलग इकाइयों में मापा जाता है, जैसे- जीवन प्रत्याशा को वर्षों में मापते हैं, साक्षरता को प्रतिशत के रूप में तथा प्रति व्यक्ति वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद या आय को डॉलर में मापते हैं। इस समस्या के निराकरण हेतु तीनों अभिसूचकों को माप की एक सामान्य इकाई में परिवर्तित किया जाता है। इसी को अभिसूचकों का सामान्यीकरण कहा जाता है। अभिसूचकों के सामान्यीकरण हेतु निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

$$\text{सामान्य सूचक का मूल्य} = \frac{\text{वास्तविक मूल्य} \ - \ \text{न्यूनतम मूल्य}}{\text{उच्चतम मूल्य} \ - \ \text{न्यूनतम मूल्य}}$$

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानव विकास सूचकांक के निर्माण के लिए निर्धारित मूल्य निम्न तालिका के अनुसार हैं -

तालिका 2 : मानव विकास सूचकांक के संकेतकों के न्यूनतम तथा उच्चतम मूल्य

संकेतक	**न्यूनतम मूल्य**	**उच्चतम मूल्य**
1. जीवन प्रत्याशा	25	85
2. शैक्षणिक उपलब्धि		
(i) प्रौढ़ साक्षरता दर	0%	100%
(ii) सकल नामांकन दर	0%	100 %
3. क्रय शक्ति समता पर आधारित वास्तविक प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद	$ 100	$ 40,000 |

2. वास्तविक सकल घरेलू प्रति व्यक्ति आय की गणना : पूर्व में बताया जा चुका है कि इस सूचकांक के निर्माण हेतु जीवन स्तर को वास्तविक सकल घरेलू प्रति व्यक्ति आय के द्वारा मापा जाता है, परन्तु इसमें दो संशोधन करने पड़ते हैं -

प्रथम संशोधन : अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर तुलना करने एवं इस तुलना का तर्कपूर्ण तथा सुविधाजनक बनाने के लिए प्रति व्यक्ति आय को यू.एस. डॉलर में परिवर्तित किया जाता है। प्रति व्यक्ति आय के इस परिवर्तन के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा बाजार में प्रचलित विनिमय दर के स्थान पर क्रय शक्ति समता का उपयोग किया जाता है।

क्रय शक्ति समता दर वह दर है जो कोई दो देशों की मुद्राओं के बीच उनकी मुद्रा की एक इकाई की क्रय शक्ति के आधार पर निर्धारित की जाती है। उदाहरण के लिए, अमेरिका में वस्तुओं का एक समूह 1 डॉलर में मिलता है जबकि भारत में वही समह 10 रूपये में उपलब्ध है तो क्रय शक्ति समता आधारित विनिमय दर 1 डॉलर = 10 रूपये होगी।

द्वितीय संशोधन : अर्थशास्त्र का एक प्रसिद्ध नियम बताता है कि किसी वस्तु की स्टॉक या बचत मात्रा बढ़ने से उस वस्तु से प्राप्त होने वाली उपयोगिता घटती जाती है। यही नियम मुद्रा (डॉलर) पर भी लागू होता है। अर्थात् जैसे-जैसे व्यक्ति की आय में वृद्धि होती जाती है, वैसे-वैसे मुद्रा की अगली प्रत्येक इकाई से मिलने वाली उपयोगिता अथवा सन्तुष्टि कम होती जाती है। धीरे-धीरे एक सीमा के बाद यह शून्य हो जाता है। स्पष्ट है कि व्यक्ति के सुख या जीवन स्तर को व्यक्ति के पास मुद्रा की मात्रा के विविध मानक द्वारा नहीं मापा जा सकता है, इसलिए संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम विभिन्न देशों में जीवन स्तर के सूचकों हेतु प्रति व्यक्ति आय को क्रय शक्ति समता के

लिए समन्वित करने वाली विधि नहीं मानता है। इसके लिए वह केन्द्रीय स्तर के लघु गुणांक रूपान्तरण को ध्यान में रखता है, जैसे

जीवन स्तर = लॉग या लघु गुणक (PPP$ में प्रति व्यक्ति आय)

II चरण: तीनों सूचकांकों का सरल औसत निकालना

जीवन प्रत्याशा, शैक्षणिक उपलब्धि तथा वास्तविक प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद सूचकांक अलग-अलग निर्मित करने के पश्चात् तीनों सूचकों का सरल औसत निकाल कर मानव विकास सूचकांक का निर्माण किया जाता है। इसके निर्माण हेतु निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है : जीवन प्रत्याशा सूचकांक + शैक्षणिक उपलब्धि सूचकांक +

वास्तविक प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद सूचकांक मानव विकास सूचकांक =

$$\boldsymbol{HDI} = \frac{\text{LSI} + \text{EAI} + \text{SLI}}{\mathbf{3}}$$

6.5.2.2 मानव विकास सूचकांक (HDI) के निर्माण हेतु उदाहरण

निम्नलिखित आंकड़ों से मानव विकास सूचकांक का निर्माण कीजिए -

1. जन्म के समय जीवन प्रत्याशा 70 वर्ष
2. शैक्षणिक उपलब्धि

(i) प्रौढ़ साक्षरता दर 75 प्रतिशत

(ii) सकल नामांकन दर 65 प्रतिशत

3. प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद (क्रयशक्ति समता पर आधारित) 284 डॉलर

गणना :

वास्तविक जीवन प्रत्याशा – न्यूनतम जीवन प्रत्याशा

1. जीवन प्रत्याशा सूचकांक $(\mathbf{LEI}) = \frac{\text{वास्तविक जीवन प्रत्याशा} - \text{न्यूनतम जीवन प्रत्याशा}}{\text{अधिकतम जीवन प्रत्याशा} - \text{न्यूनतम जीवन प्रत्याशा}}$

$$= \frac{70 - 25}{85 - 25}$$

$$= \frac{45}{60}$$

$$= .75$$

2. शैक्षणिक उपलब्धि सूचकांक

$$(\mathbf{i})\text{प्रौढ़ साक्षरता सूचकांक} = \frac{\text{वास्तविक प्रौढ़ साक्षरता दर} - \text{न्यूनतम साक्षरता दरप्रत्याशा}}{\text{अधिकतम साक्षरता दर} - \text{न्यूनतम साक्षरता दर}}$$

$$= \frac{70 - 0}{100 - 0}$$

$$= .75$$

(ii) सकल नामांकन सूचकांक =

$$= \frac{65}{100}$$
$$= .65$$

$$\text{शैक्षणिक उपलब्धि सूचकांक } = \frac{2}{3}\text{प्रौ. साक्ष. सूचकांक} + \frac{1}{3}\text{स0 नामां0}$$
$$= \frac{2}{3} * .75 + \frac{1}{3} * .65$$

$$\text{3. प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद } = \frac{\text{Log}\,(284) - \text{Log}\,(100)}{\text{Log}\,(40{,}000) - \text{Log}\,(100)}$$
$$= .56$$

$$\text{मानव विकास सूचकांक} = \frac{\text{जीवन प्रत्याशा सूचकांक } + \text{ शैक्षणिक उपलब्धि सूचकांक } + \text{वास्तविक प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद सूचकांक}}{3}$$

$$= \frac{0.75 \ + \ 0.717 \ + \ 0.56}{3}$$
$$= \frac{2.027}{3}$$
$$= .676$$

6.5.2.3 संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा मानव विकास सूचकांक पर आधारित विभिन्न स्तर

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) मानव विकास सूचकांक (HDI) के मूल्य के आधार पर विश्व के विभिन्न देशों को निम्नलिखित तीन स्तरों पर रखता है |

HDI मूल्य	**मानव विकास क्रम**
0.8 से ऊपर	उच्च मानव विकास (विकसित देश)
0.5 से 0.79	मध्यम मानव विकास (विकासशील देश)
0.5 से कम	निम्न मानव विकास (अल्पविकसित देश)

प्रत्येक देश के मानव विकास सूचकांक का मूल्य बताता है कि उस देश में परिभाषित लक्ष्यों (85 वर्ष की औसत जीवन अवधि, 100 प्रतिशत अर्थात् सभी के लिए शिक्षा और उच्च जीवन स्तर) की प्राप्ति हेतु कितने प्रयास किये गये हैं तथा अभी और कितने प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। यह सचकांक मल्य के आधार पर विश्व के विभिन्न देशों का आपसी क्रम निर्धारित करता है। सूचकांक का न्यूनतम मूल्य शून्य (o) तथा अधिकतम मूल्य एक (1) होता है।

6.5.2.4 मानव विकास सूचकांक की सीमाएं मानव विकास सूचकांक (HDI) की सीमाएं निम्नलिखित हैं:

1. सूचकांक के संकेतक जीवन प्रत्याशा, साक्षरता दर (शैक्षणिक उपलब्धि) एवं जीवन निर्वाह स्तर तीनों ही मूल रूप से आय से सम्बन्धित हैं। एक देश में प्रति व्यक्ति आय के अधिक होने की स्थिति में वहां जीवन प्रत्याशा, साक्षरता दर एवं जीवन निर्वाह स्तर तीनों ही उच्च स्तर के होते हैं। इसी कारण से उच्च मानव विकास सूचकांक

वाले देश अधिकतर धनी देश ही होते हैं।

2. मानव विकास सूचकांक के माध्यम से एक देश में व्याप्त विषमताओं के स्तर का ज्ञान नहीं होता है। यह उस देश में पायी जाने वाली विषमताओं को दूर करने में कोई सहायता नहीं करता है।

3. मानव विकास सचकांक में मात्र तीन सचकों जीवन प्रत्याशा, साक्षरता दर (शैक्षणिक उपलब्धि) एवं जीवन निर्वाह स्तर को ही शामिल किया जाता है, जबकि मानव विकास के अन्य महत्वपूर्ण सामाजिक सूचक- मातृत्व मृत्युदर, शिशु मृत्युदर, पोषण आदि को छोड़ दिया जाता है।

6.5.2.5 मानव विकास रिपोर्ट: 2013

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा 14 मार्च, 2013 को नवीन मानव विकास रिपोर्ट जारी की गई है जो वर्ष 2012 के आंकड़ों पर आधारित है। इस रिपोर्ट में संयुक्त राष्ट्र के 193 सदस्य देशों में से 185 को शामिल किया गया है जबकि 8 देशों को आंकड़ों के अभाव में शामिल नहीं किया गया है। रिपोर्ट के अनुसार, सूचकांक में विश्व में प्रथम स्थान पर नॉर्वे (HDI 0.955), द्वितीय स्थान पर ऑस्ट्रेलिया (HDI 0.938) तथा तृतीय स्थान पर यू.एस.ए. (HDI 0.937) जबकि भारत (HDI 0.554) दो स्थान की गिरावट के साथ 136 वें स्थान पर है। भारत के पड़ोसी देश श्रीलंका 92, चीन 101, भूटान 140, बांग्लादेश एवं पाकिस्तान 146 तथा नेपाल 157 वें स्थान पर है।

6.6 अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 01 : जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता से क्या आशय है ?

उत्तर : जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता का आशय व्यक्तियों एवं समाजों के गुणवत्तापूर्ण जीवन यापन से लिया जाता है। जीवन की गुणवत्ता एक व्यापक अवधारणा है जिसके मानक संकेतकों में केवल धन और रोजगार ही नहीं बल्कि निर्मित पर्यावरण, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, सुरक्षा, शिक्षा, मनोरंजन, खुशी, अवकाश का समय और सामाजिक सम्बन्धों के साथ गरीबी रहित जीवन शामिल हैं।

प्रश्न 02 : जीवन की गुणवत्ता मापने के प्रमुख सूचकांक कौन-से हैं ?

उत्तर : जीवन की गुणवत्ता को मापने हेतु उपयोग किये जाने वाले प्रमुख प्रचलित सूचकांक हैं : जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक तथा मानव विकास सूचकांक।

बहुविकल्पीय प्रश्न।

1. जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक किस उपलब्धि के आधार निकाला जाता है:

(अ) जीवन प्रत्याशा,

(ब) शिशु मृत्युदर,

(स) साक्षरता दर,

(द) तीनों की।

2. मानव विकास रिपोर्ट 2013 के अनुसार भारत का स्थान है : :

(अ) 136 वां,

(ब) 134 वां,

(स) 127 वां,

(द) 126 वां।

उत्तर: 1. (द), 2. (अ)।

प्रष्न 04 : **निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताईये**।

(क) जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक का प्रतिपादन प्रसिद्ध समाजशास्त्री मौरिस डेविड मौरिस ने सन् 1970 में किया था।

(ख) जीवन की गणवत्ता एवं देश के आर्थिक विकास में सीधा सम्बन्ध होता है।

(ग) संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम मानव विकास सूचकांक मूल्य के आधार पर विश्व के विभिन्न देशों को चार स्तरों पर रखता है।

उत्तर : (क) सत्य, (ख) सत्य, (ग) असत्य ।

6.6 सारांश

देश की आर्थिक उन्नति में उपलब्ध जनसंख्या का महत्वपूर्ण योगदान होता है। वास्तव में किसी देश का विकास मानवीय प्रयासों का ही फल होता है। इस सन्दर्भ में आवश्यक है कि जनसंख्या की गुणवत्ता को बढ़ाया जाये क्योंकि गुणवान जनसंख्या एक देश को प्रगति के मार्ग पर अग्रसर कर सकती है। जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता का आशय व्यक्तियों एवं समाजों के गुणवत्तापूर्ण जीवन यापन से लिया जाता है। स्वभाविक रूप से लोग जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता को जीवन स्तर की अवधारणा से जोड़ते हैं जबकि यह दोनों अलग-अलग अवधारणाएं हैं। जहां जीवन-स्तर एक संकुचित अवधारणा है जो प्राथमिक रूप से आय पर आधारित है, वहीं जीवन की गुणवत्ता एक व्यापक अवधारणा है। जीवन की गुणवत्ता के मानक संकेतकों में केवल धन और रोजगार ही नहीं बल्कि निर्मित पर्यावरण, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, सुरक्षा, शिक्षा, मनोरंजन, खुशी, अवकाश का समय और सामाजिक सम्बन्धों के साथ गरीबी रहित जीवन शामिल हैं। विश्व में लोगों को गुणवत्तापूर्ण जीवन प्रदान करने के लिए विभिन्न देशों की सरकारों के साथ ही गैर सरकारी संस्थाएं एवं वैश्विक संगठन निरन्तर प्रयासरत हैं। जीवन की गुणवत्ता को मापने हेतु जीवन का भौतिक गुणवत्ता सूचकांक, मानव विकास सूचकांक आदि का उपयोग किया जाता है। जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक का प्रतिपादन प्रसिद्ध समाजशास्त्री मौरिस डेविड मौरिस ने सन् 1970 में किया था। यह जीवन प्रत्याशा, साक्षरता दर एवं शिशु मृत्युदर पर केन्द्रित है। यह जीवन की गुणवत्ता की अन्य मापों की तुलना में एक सरल माप है। वर्तमान में इसका स्थान मानव विकास सचकांक ने ले लिया है। अन्तर्राष्ट्रीय विकास की माप में सामान्यतया उपयोग किये जाने वाले मानव विकास सूचकांक का प्रतिपादन सन् 1990 में संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) से जुड़े प्रसिद्ध पाकिस्तानी अर्थशास्त्री महबूब-उल-हक तथा भारतीय अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन आदि ने किया था। मानव विकास सूचकांक जीवन प्रत्याशा, शैक्षणिक उपलब्धि एवं जीवन निर्वाह स्तर पर आधारित है। मानव विकास सूचकांक का मूल्य बताता है कि एक देश में परिभाषित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अभी और कितने प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। यह सूचकांक मूल्य के आधार पर विश्व के विभिन्न देशों का आपसी क्रम निर्धारित करता है। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा जारी नवीन मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार, सूचकांक में विश्व में प्रथम तीन स्थानों पर क्रमशः नॉर्वे, ऑस्ट्रेलिया तथा यू.एस.ए. है जबकि भारत 136 वें स्थान पर है। भारत के पड़ोसी देश श्रीलंका 92, चीन 101, भूटान 140, बांग्लादेश एवं पाकिस्तान 146 तथा नेपाल 157 वें स्थान पर है।

6.7 शब्दावली

- **मानव विकास** : लोगों की आय तथा पूंजी के विस्तार के साथ ही मानव की कार्यप्रणालीकार्य करने के तरीके तथा क्षमताओं में उन्नयन की प्रक्रिया को 'मानव विकास' का नाम दिया गया है।
- **जीवन-प्रत्याशा** : जीवन-प्रत्याशा से आशय जीवित रहने की आयु से है। जब देश में एक शिशु जन्म लेता है तो उसके कितने वर्ष तक जीवित रहने की आशा की जाती है, इस जीवित रहने की आशा को ही जीवन–प्रत्याशा अथवा प्रत्याशित आयु अथवा औसत आयु कहा जाता है।

6.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 01 : जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता का आशय व्यक्तियों एवं समाजों के गुणवत्तापूर्ण जीवन यापन से लिया जाता है। जीवन की गुणवत्ता एक व्यापक अवधारणा है जिसके मानक संकेतकों में केवल धन और रोजगार ही नहीं बल्कि निर्मित पर्यावरण, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, सुरक्षा, शिक्षा, मनोरंजन, खुशी, अवकाश का समय और सामाजिक सम्बन्धों के साथ गरीबी रहित जीवन शामिल हैं।

उत्तर 02 : जीवन की गुणवत्ता को मापने हेतु उपयोग किये जाने वाले प्रमुख प्रचलित सूचकांक हैं : जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक तथा मानव विकास सूचकांक।

बहुविकल्पीय प्रश्न।

उत्तर: 1. (द), 2. (अ)।

सत्य/असत्य

उत्तर : (क) सत्य, (ख) सत्य, (ग) असत्य।

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- Human Development Reports, United Nations Development Programme
- http://en.wikipedia.org/wiki/List_of_countries_by_Human_Development_Index

6.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

- कुमार, वी. (2007): जनांकिकी, साहित्य भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लि., आगरा।
- पन्त, जे.सी. (2006): जनांकिकी, विशाल पब्लिशिंग कं., जालन्धर।
- सिन्हा एवं सिन्हा (2005) : जनसंख्या के सिद्धान्त, मयूर पेपरबैक्स, नोएडा।
- गुप्त, एस. एन (2009) : जनांकिकी के मूल तत्व, वृंदा पब्लिकेशन्स प्रा. लि., दिल्ली।

6.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. जीवन की गुणवत्ता से आप क्या समझते हैं ? इसके मापन हेतु उपयोग किये जाने वाले सूचकांकों को विस्तार से बताइये।
2. जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक को स्पष्ट करते हुए इसके निर्माण की विधि का वर्णन कीजिए।
3. मानव विकास सूचकांक के निर्माण के विभिन्न चरण बताइये। इस सूचकांक की क्या सीमाएं हैं ?
4. 'आर्थिक विकास का प्रतिफल अन्तिम रूप से मानवीय गुणों, उसकी कार्यकुशलता तथा उसके दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। विवेचना कीजिए।
5. भारत को मानव विकास के क्षेत्र में विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है। समीक्षा कीजिए।

इकाई-7 जनसंख्या की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारक
(Effective Factors of Population Quality)

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 जनसंख्या की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारक
7.3.1 आर्थिक कारक
7.3.2 सामाजिक कारक
7.3.3 मनोवैज्ञानिक कारक
7.3.4 अन्य कारक
7.4 यूनाईटेड नेशन्स यूनीवर्सल डिक्लेरेशन ऑफ हूमन राइट्स 1948 द्वारा जीवन की गुणवत्ता के मूल्यांकन हेतु बताये गये विभिन्न कारक
7.5 जनसंख्या की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारक एवं भारत
7.6 जनसंख्या की गुणवत्ता एवं जीवन स्तर में अन्तर
7.7 अभ्यास प्रश्न
7.8 सारांश
7.9 शब्दावली
7.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
7.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
7.12 सहायक उपयोगी सामग्री
7.13 निबन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

जनांकिकी से सम्बन्धित यह सातवीं इकाई है, इससे पूर्व की इकाई के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि जनसंख्या की गुणवत्ता की अवधारणा से क्या तात्पर्य है ?, इससे सम्बन्धित सूचकांकों की गणना कैसे की जाती है एवं, जीवन की गुणवत्ता का देश के विकास में क्या महत्व है ?

जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता व्यक्तियों एवं समाजों के गुणवत्तापूर्ण जीवन यापन से सम्बन्धित है। यह एक व्यापक अवधारणा है। इसके प्रभावकारी कारकों में केवल धन और रोजगार ही नहीं बल्कि पर्यावरण, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, सुरक्षा, शिक्षा, मनोरंजन, खुशी, अवकाश का समय और सामाजिक सम्बन्धों के साथ गरीबी रहित जीवन शामिल हैं। इसके अन्तर्गत परिमाणात्मक के साथ ऐसे तत्व भी सम्मिलित किये जाते हैं जो विशिष्टतः गुणात्मक हैं और उनकी माप करना कठिन है। प्रस्तुत इकाई में जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारकों का विस्तार से विश्लेषण प्रस्तुत है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारकों, भारत में इनकी स्थिति, जीवन की गुणवत्ता एवं जीवन स्तर में अन्तर आदि को समझ सकेंगें तथा इसका विश्लेषण कर सकेंगे।

7.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप

- ✓ बता सकेंगे कि जीवन की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारक क्या हैं।
- ✓ बता सकेंगे कि यह कारक किस प्रकार जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं।
- ✓ बता सकेंगे कि भारत के सन्दर्भ में इन कारकों की क्या स्थिति है।
- ✓ समझा सकेंगे कि जीवन की गुणवत्ता एवं जीवन स्तर में क्या अन्तर है।

7.3 जनसंख्या की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारक

जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता व्यक्तियों एवं समाजों के गुणवत्तापूर्ण जीवन यापन से सम्बन्धित है। यह एक व्यापक अवधारणा है। इसके मानक संकेतकों में केवल धन और रोजगार ही नहीं बल्कि पर्यावरण, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, सुरक्षा, शिक्षा, मनोरंजन, खुशी, अवकाश का समय और सामाजिक सम्बन्धों के साथ गरीबी रहित जीवन आदि शामिल हैं। जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारकों को अध्ययन की दृष्टि से विभिन्न भागों में विभाजित किया जा सकता है, जैसे- आर्थिक कारक (आय, सम्पत्ति, रोजगार, जीवन तथा गरीबी का स्तर, आधारभूत संरचना आदि), सामाजिक कारक (जीवन प्रत्याशा, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, शिक्षा एवं प्रशिक्षण, आवास, जन्म एवं मृत्यु दर, सामाजिक सम्बन्ध, अवकाश, लैंगिक समानता तथा अपराध आदि), मनोवैज्ञानिक कारक (खुशी एवं सन्तुष्टि का स्तर) तथा अन्य कारक (मानव अधिकार, राजनीतिक स्थिरता, पर्यावरण, सुरक्षा, बाल विकास एवं कल्याण आदि)।

7.3.1 आर्थिक कारक

जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता के प्रभावकारी आर्थिक कारकों से तात्पर्य ऐसे कारकों से है जो धन से सम्बन्धित हैं। यह निम्नलिखित हैं :

7.3.1.1 आय स्तर

आय स्तर जीवन की गणवत्ता का एक महत्वपूर्ण कारक है। सामान्यतया उस समाज, वर्ग एवं व्यक्ति की जीवन की गुणवत्ता का ऊँचा माना जाता है जिनका आय स्तर उच्च होता है। निम्न आय की स्थिति में एक व्यक्ति की क्रय

करने की क्षमता कम होती है और वह अपने जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ होता है जिससे उसके गुणवत्तापूर्ण जीवन जीने के मार्ग में बाधा उत्पन्न होती है।

7.3.1.2 सम्पत्ति का स्तर

आय स्तर के साथ ही सम्पत्ति का स्तर भी जीवन की गुणवत्ता का एक अन्य महत्वपूर्ण कारक है। सम्पत्ति का स्तर अधिक होने की स्थिति में व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता का ऊँचा होना सम्भव है क्योंकि इसके माध्यम से व्यक्ति अपने जीवन को सुखमय बनाने हेतु अधिक सुविधाओं का उपभोग कर पाने में सक्षम होता है।

7.3.1.3 रोजगार का स्तर

एक व्यक्ति के जीवन में रोजगार का महत्वपूर्ण स्थान होता है। रोजगार के माध्यम से व्यक्ति अपने एवं अपने परिवार के जीवन निर्वाह हेतु साधन प्राप्त करने में सफल हो सकता है और अपने जीवन में गुणात्मक सुधार कर सकता है। रोजगार की उपलब्धता न होने की स्थिति में व्यक्ति अपने जीवन को बेहतर बनाने के लिए पर्याप्त साधनों की प्राप्ति हेतु संघर्षरत रहता है।

7.3.1.4 जीवन स्तर

एक व्यक्ति के जीवन स्तर पर भी निर्भर करता है कि उसके जीवन की गुणवत्ता किस प्रकार की है। उच्च जीवन स्तर का अर्थ है गुणवत्तापूर्ण जीवन। जीवन स्तर एक व्यक्ति की आय, रोजगार एवं सम्पत्ति के स्तर तथा उसकी जीवन जीने के तरीके पर निर्भर करता है।

7.3.1.5 गरीबी का स्तर

जिस समाज में गरीबी का स्तर अधिक होता है वहां लोगों के जीवन की गुणवत्ता निम्न स्तर की होती है। गरीबी की स्थिति में लोग अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं – भोजन, वस्त्र एवं आवास – तक को परा करने में असमर्थ रहते हैं। ऐसी स्थिति में गुणवत्तापूर्ण जीवन हेतु आवश्यक सुविधाओं को प्राप्त कर पाना सम्भव नहीं होता है। 7.3.1.6 आधारभूत संरचना आधारभूत संचरना की पर्याप्त उपलब्धता से मनुष्यों का जीवन समृद्ध होता है। इसकी उपलब्धता अर्थव्यवस्था की उपरि-संरचना अर्थात् कृषि एवं उद्योगों की सफलता में सहायता करती है साथ ही यह जल, स्वच्छता, स्वास्थ्य एवं शिक्षा सेवाएं, ऊर्जा, आवास, परिवहन, संचार प्रौद्योगिकी आदि के माध्यम से जीवन में गुणात्मक सुधार करती है।

7.3.2 सामाजिक कारक

जीवन की गुणवत्ता के प्रभावकारी विभिन्न सामाजिक कारक निम्नलिखित हैं :

7.3.2.1 जीवन प्रत्याशा

जीवन प्रत्याशा से आशय लागों के जीवित रहने की औसत आयु से है। यह एक देश के नागरिकों के स्वास्थ्य तथा सभ्यता एवं आर्थिक विकास का सूचक है। जब देश में एक शिशु जन्म लेता है तो उसके कितने वर्ष तक जीवित रहने की आशा की जाती है, इस जीवित रहने की आशा को ही जीवन-प्रत्याशा अथवा प्रत्याशित आयु अथवा औसत आयु कहा जाता है। जीवन प्रत्याशा जीवन की गुणवत्ता का एक प्रमुख कारक है। जिस देश अथवा समाज में जीवन प्रत्याशा अधिक होती है वहां लोगों की जीवन की गुणवत्ता ऊँची होती है।

7.3.2.2 शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य

गुणवत्तापूर्ण जीवन के लिए देश के लोगों का शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ होना आवश्यक है। स्वस्थ जनशक्ति एक देश के लिए एक बहुत बड़ा धन होती है जिसके द्वारा अधिक मात्रा में प्रतिव्यक्ति उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। निम्न स्तर का स्वास्थ्य और पोषण जनशक्ति की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। जनसंख्या की गुणवत्ता में सधार करने के लिए आवश्यक है कि लोगों को पर्याप्त तथा पौष्टिक भोजन दिया जाये। इन मदों पर किये जाने वाले व्यय को मानवीय विनियोग की तरह माना जाये क्योंकि यह विनियोग लोगों की कुशलता तथा

उत्पादकता में वृद्धि करने की प्रवृत्ति रखता है।

7.3.2.3 शिक्षा एवं प्रशिक्षण

देश में ऊँची साक्षरता दर एवं प्रशिक्षण की स्थिति लोगों के जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने में सहायक है। वास्तव में, शिक्षा को विकास की सीढ़ी, परिवर्तन का माध्यम एवं आशा का अग्रदूत माना जाता है। गरीबी एवं असमानताओं को कम करने एवं आर्थिक विकास का आधार तैयार करने में शिक्षा को सबसे शक्तिशाली उपकरणों में से एक माना जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी माना है कि सबसे अधिक प्रगति उन देशों में होगी जहां शिक्षा विस्तृत होती है और जहां वह लोगों में प्रयोगात्मक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करती है। विकसित देशों के विकास के सन्दर्भ में किये गये अध्ययन इस तथ्य को स्पष्ट करते हैं कि इन देशों के विकास का एक बड़ा भाग शिक्षा के विकास. अनसंधान तथा प्रशिक्षण का ही परिणाम है। अर्थव्यवस्था के विकास की दृष्टि से शिक्षा पर किया गया व्यय वास्तव में एक विनियोग है क्योंकि वह उत्पत्ति के साधन के रूप में लोगों की कुशलता को बढ़ाती है। स्पष्ट है कि देश में उच्च साक्षरता एवं प्रशिक्षण की स्थिति लोगों की गुणवत्ता को बढ़ाती है।

7.3.2.4 आवास सुविधा

आवास से आशय ऐसे आश्रय से है जो व्यक्तियों के लिए आरामदायक और आवश्यकतानुरूप हों, जहां उनके परिवार के सदस्य सुखमय जीवन व्यतीत कर सकें। आवास मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है। उचित आवासों की उपलब्धता लोगों के जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाता है। इसके अभाव में व्यक्ति अपने जीवन को सुखमय नहीं बना सकता है। आवासों का विकास मानवीय साधनों के विकास का एक महत्वपूर्ण भाग भी है क्योंकि सुविधापूर्ण जीवन लोगों को उत्पत्ति का अच्छा साधन बनाता है। इससे लोगों की कार्यकुशलता में वृद्धि होती है।

7.3.2.5 जन्म एवं मृत्यु दरें

एक देश में जन्म एवं मृत्यु दरें बहुत हद तक जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करती हैं। जन्म एवं मृत्यु दरों के निम्न होने की स्थिति में माना जाता है कि देश में नागरिकों को पर्याप्त मात्रा में सुविधाओं की उपलब्धता है, अतः यहां जीवन अधिक गुणवत्तापूर्ण है। जन्म एवं मृत्यु दरों के उच्च होने का अर्थ है कि देश में विभिन्न सुविधाओं की उपलब्धता निम्न स्थिति में है। ऐसे में देश के लोगों को गुणवत्तापूर्ण जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है।

7.3.2.6 सामाजिक सम्बन्ध

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज का एक अंग है और उसी से समाज का निर्माण भी होता ता है। इस सन्दर्भ में सामाजिक सम्बन्धों का विशेष महत्व होता है। जीवन की गणवत्ता को बढ़ाने के लिए मजबत सामाजिक सम्बन्धों का होना आवश्यक है।

7.3.2.7 अवकाश का समय

बिना अवकाश के निरन्तर कार्य करने से व्यक्ति की उत्पादकता कम होती है। यदि व्यक्ति को निश्चित मात्रा में अवकाश की उपलब्धता हो तो इससे उनकी कार्यकुशलता बढ़ती है और जो व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता बढ़ाती है। यह व्यक्ति के सामाजिक सम्बन्धों को सुदृढ़ बनाने की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।

7.3.2.8 लैंगिक समानता

समाज में लैंगिक समानता की स्थिति लोगों के गुणवत्तापूर्ण जीवन का संकेत होता है।

न स्थानों पर महिला एवं पुरूषों में लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाता है तथा उन्हें बिना भेदभाव अवसर की समानता होती है, वहां के लोगों का जीवन बेहतर स्थिति में होता है। लैंगिक समानता की अवधारणा संयुक्त राष्ट्र के सार्वभौमिक मानव अधिकार घोषणा पर आधारित है।

7.3.2.9 अपराध

किसी समाज में अधिक मात्रा में अपराध घटित होने पर वहां के लोग अपने जीवन एवं सम्पत्ति की सुरक्षा के प्रति

निश्चिंत नहीं होंगे और ऐसी स्थिति में लोगों के गुणवत्तापूर्ण जीवन जीने की कल्पना नहीं की जा सकती है। अति अपराध एवं अराजकता की स्थिति में लोग स्वतंत्रता पूर्ण ढंग से अपने कार्यों को नहीं कर पाते हैं। अपराधमुक्त समाज की स्थिति लोगों के जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाती है।

7.3.3 मनोवैज्ञानिक कारक

जीवन की गुणवत्ता के प्रभावकारी विभिन्न मनोवैज्ञानिक कारक वे हैं जो व्यक्ति के आन्तरिक तत्वों पर निर्भर करते हैं और इन्हें आसानी से मापा नहीं जा सकता है। यह कारक निम्नलिखित हैं :

7.3.3.1 खुशी

जीवन की गुणवत्ता के प्रभावकारी मनोवैज्ञानिक कारकों में खुशी एक महत्वपूर्ण कारक है। यह व्यक्तिपरक कारक है तथा इसकी माप करना कठिन होता है। व्यक्ति के जीवन में इसका बहुत महत्व है। इसके अभाव में व्यक्ति अपने कार्यों को पूरे मनोयोग से सम्पन्न नहीं कर सकता है। व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता तभी बढ़ेगी जब उसके आसपास का वातावरण इस प्रकार का हो कि वह आनन्द (खुशी) का अनुभव कर सके। यहां उल्लेखनीय है कि यह आवश्यक नहीं है कि आय में वृद्धि के साथ व्यक्ति की खुशी के स्तर में भी वृद्धि
हो।

7.3.3.2 सन्तुष्टि का स्तर

व्यक्ति के सन्तुष्टि का स्तर भी जीवन की गुणवत्ता का एक प्रभावकारी कारक है। यदि व्यक्ति अथवा समाज का सन्तुष्टि स्तर ऊँचा है तो उनका जीवन गुणवत्तापूर्ण होगा और सन्तुष्टि का स्तर निम्न होने पर विपरीत स्थिति होगी। सन्तुष्टि का स्तर एक आन्तरिक कारक है जो अलग-अलग व्यक्तियों में अलग-अलग हो सकता है।

7.3.4 अन्य कारक

जीवन की गुणवत्ता के अन्य प्रभावकारी कारकों में निम्नलिखित को सम्मिलित किया जा सकता है :

7.3.4.1 मानव अधिकार

गुणात्मक जीवन के लिए आवश्यक है कि व्यक्तियों को विभिन्न मानव अधिकार प्राप्त हों। मानव अधिकारों से तात्पर्य मौलिक अधिकारों एवं स्वतंत्रता से है जिसके सभी मनुष्य हकदार हैं। इनमें जीवन जीने का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार, कानून की समानता का अधिकार के साथ ही भोजन, काम करने एवं शिक्षा का अधिकार आदि शामिल हैं। मानव अधिकार मनुष्य के मूलभूत सार्वभौमिक अधिकार हैं जिनसे मनुष्य को लिंग, जाति, नस्ल, धर्म, राष्ट्रीयता जैसे किसी भी आधार पर वंचित नहीं किया जा सकता है। जिन देशों में लोगों को मानव अधिकार प्राप्त होते हैं, वहां के लोगों की जीवन की गुणवत्ता अधिक होती है।

7.3.4.2 राजनीतिक स्थिरता

राजनीतिक स्थिरता जीवन की गुणवत्ता का एक प्रभावी कारक है। ऐसे देश, जहां पर राजनीतिक स्थिरता की स्थिति होती है, वहां जनता का विश्वास सरकार पर बना रहता है। यहां नागरिकों के विकास की योजनाएं सुचारू रूप से संचालित होती हैं। ऐसे में लोगों के जीवन की गुणवत्ता बढ़ती है। राजनीतिक अस्थिरता की स्थिति में जीवन की गुणवत्ता में कमी आती है।

7.3.4.3 पर्यावरण

शुद्ध पर्यावरण की उपलब्धता जीवन को उन्नत बनाने में सहायक है। प्राकृतिक और मानव निर्मित पर्यावरणीय संसाधनों जैसे- ताजा पानी, स्वच्छ वायु, वन आदि मानव की आजीविका एवं सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए एक आधार प्रदान करते हैं। शुद्ध पर्यावरण के साथ व्यक्ति शारीरिक एवं मानसिक रूप से अधिक स्वस्थ रहकर अधिक उत्पादक हो सकते हैं।

7.3.4.4 सुरक्षा

सुरक्षित जीवन उच्च गुणवत्ता एवं विकास का आधार है। बिना सुरक्षा के देश, समाज एवं व्यक्ति विकास की ओर अग्रसर नहीं हो सकते हैं। जीवन, सम्पत्ति एवं विभिन्न प्रकार की सुरक्षा के साथ ही जीवन की गुणवत्ता में सुधार आ सकता है।

7.3.4.5 बाल विकास एवं कल्याण

बच्चे किसी भी देश का भविष्य होते हैं। वही राष्ट्र की उन्नति के वास्तविक आधारस्तम्भ भी हैं। प्रत्येक बच्चे का जन्म कुछ उम्मीदों, आकांक्षाओं और दायित्वों के निर्वाह के लिए होता है, परन्तु यदि इन बच्चों को विकास की आवश्यक सुविधाओं से वंचित कर दिया जाये तो इनके साथ ही देश की भी भावी बेहतरी की सम्भावनाएं कम हो जाती हैं। जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि हेतु आवश्यक है कि देश में बच्चों के कल्याण और विकास को समुचित दिशा प्रदान की जाये।

7.4 यूनाईटेड नेशन्स यूनीवर्सल डिक्लेरेशन ऑफ हूमन राइट्स 1948 द्वारा जीवन की गुणवत्ता के मूल्यांकन हेतु बताये गये विभिन्न कारक

यूनाईटेड नेशन्स यूनीवर्सल डिक्लेरेशन ऑफ हूमन राइट्स 1948 में जीवन की गुणवत्ता के मूल्यांकन हेतु विभिन्न कारकों को बताया गया। यह कारक जीवन की गुणवत्ता के मापन में उपयोग किये जा सकते हैं। यह कारक निम्नलिखित हैं :

- गुलामी एवं उत्पीड़न से मुक्ति
- कानून का समान संरक्षण
- भेदभाव से मुक्ति
- आवागमन का अधिकार
- अपने देश में निवास करने का अधिकार
- विवाह का अधिकार
- परिवार का अधिकार
- लिंग, नस्ल, भाषा, धर्म, राजनीतिक विश्वास, नागरिकता, सामाजिक-आर्थिक स्थिति आदि के आधार पर व्यवहार न कर समान व्यवहार का अधिकार
- निजता का अधिकार
- विचारों की स्वतंत्रता
- धार्मिक स्वतंत्रता
- रोजगार का मुक्त चयन
- उचित भुगतान का अधिकार
- समान कार्य के लिए समान भुगतान
- मतदान का अधिकार
- आराम का अधिकार
- शिक्षा का अधिकार
- मानवीय आत्मसम्मान का अधिकार।

7.5 जनसंख्या की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारक एवं भारत

भारत में जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता के प्रमुख प्रभावकारी कारकों की स्थिति का मूल्यांकन निम्न प्रकार किया जा सकता है :

1. आय स्तर जीवन की गुणवत्ता का एक महत्वपूर्ण कारक है। भारत में लोगों का आय स्तर निम्न है। वर्ष 2011 में भारत में प्रति व्यक्ति आय 1,509 यू. एस. डॉलर थी, जबकि यू. के. में 38,974, नीदरलैण्ड में 50,085, यू.एस.ए. में 48,112, जापान में 45,903 तथा चीन में 5,445 यू.एस.डॉलर थी। ऐसी सम्भावना व्यक्त की गयी है कि भारत में 2011-20 की अवधि में प्रति व्यक्ति आय 13 प्रतिशत की औसत वृद्धि दर प्राप्त करेगी और 2020 तक यह 4,200 डॉलर तक पहुंच जायेगी।

2. एक व्यक्ति के जीवन में रोजगार का महत्वपूर्ण स्थान होता है। भारत में कुल श्रम शक्ति का एक बड़ा भाग रोजगारविहीन है। विगत वर्षों में इसमें सुधार अवश्य हुआ है। भारत में वर्ष 1983 से 2011 के बीच बेरोजगारी की औसत दर 7.6 प्रतिशत रही है। यह दिसम्बर 2009 में अपने उच्च स्तर 9.4 प्रतिशत पर पहुंच गयी जो दिसम्बर 2011 में रिकॉर्ड कमी के साथ 3.8 प्रतिशत पर आ गयी है। यह दर यू.एस.ए., स्पेन, दक्षिण अफ्रीका जैसे देशों से भी कम है। भारत में दमन और द्वीव (0.6 प्रतिशत) एवं गुजरात (1 प्रतिशत) सबसे कम बेरोजगारी दर वाले राज्य हैं। इस स्थिति में देश के नागरिकों के जीवन में गुणात्मक सुधार की सम्भावना प्रबल हुई है।
3. भारत में स्वतन्त्रता के कई दशक पश्चात् भी एक बड़ा भाग गरीबी की रेखा के नीचे निवास करता है। आंकड़े दर्शाते हैं कि वर्तमान में विश्व के गरीबों का एक तिहाई भारत में निवासित है। विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2010 में भारत की 32.7 प्रतिशत जनसंख्या 'अन्तर्राष्ट्रीय गरीबी रेखा' (प्रतिदिन 1.25 अमेरिकी डॉलर) के नीचे थी जबकि 68. 7 प्रतिशत जनसंख्या 2 अमेरिकी डॉलर प्रतिदिन से नीचे रह रही थी। संयक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू.एन.डी.पी.) के 2010 के आंकड़े बताते हैं कि 29.8 प्रतिशत लोग देश की 'राष्ट्रीय गरीबी रेखा से नीचे निवास करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में यह आंकड़ा 33.8 प्रतिशत है जबकि शहरी क्षेत्रों में 20.9 प्रतिशत है। साथ ही, ऑक्सफोर्ड गरीबी और मानव विकास पहल (Oxford Poverty and Human Development Initiative-OPHI) के आंकड़े भारत के राज्यों में गरीबी की चिन्ताजनक स्थिति को प्रदर्शित करते हैं। इसके अनुसार 8 भारतीय राज्यों (बिहार, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, उ राजस्थान) में गरीबों की संख्या 42 करोड़ है जो 26 अफ्रीकी देशों के गरीबों से भी एक करोड़ अधिक है। यूनीसेफ (UNICEF) के नवीनतम आंकड़े भी भारत में गरीबी की भयावह तस्वीर प्रस्तुत करते हैं, जिनके अनुसार विश्व के हर 3 कुपोषित बच्चों में एक भारत में है। यहां पांच वर्ष के कुल बच्चों में 42 प्रतिशत कम वजन के हैं। ग्लोबल हंगर इंडेक्स (Global Hunger Index-GHI) के मामले में भारत सन् 1996 से 2012 के बीच 22.6 से 22.9 पर चला गया है, जबकि पाकिस्तान, नेपाल, बांग्लादेश, वियतनाम, केन्या, नाइजीरिया, म्यांमार, युगांडा, जिम्बाब्वे और मलावी जैसे देश 'भूख की स्थिति में सुधार लाने में सफल रहे हैं।
4. बच्चे देश का भविष्य होते हैं। जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि हेतु आवश्यक है कि देश में बाल विकास एवं कल्याण को समुचित दिशा प्रदान की जाये। वर्तमान में, भारत में इसके लिए आवश्यक संसाधनों की व्यवस्था हेतु 13 केन्द्रीय मन्त्रालय अपना योगदान करते हैं। इनके द्वारा विभिन्न नीतियों एवं कार्ययोजनाओं जैसे राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति-2002, राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986, राष्ट्रीय बालश्रम नीति-1987, राष्ट्रीय बालनीति-1974, बाल विकास हेतु संप्रेषण रणनीति-1996, पोषण पर राष्ट्रीय कार्ययोजना-1995, राष्ट्रीय पोषण नीति-1993, राष्ट्रीय बाल चार्टर-2003, राष्ट्रीय बाल कार्ययोजना-2005 आदि को तैयार कर उन्हें क्रियान्वित करने के प्रयास किए जाते रहे हैं। इसके साथ ही 30 हजार गैर-सरकारी संस्थाएं भी बच्चों से सम्बन्धित समस्याओं का निराकरण खोजने एवं उनको क्रियान्वित कराने हेत निरन्तर प्रयत्नशील हैं।
5. जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए भारत सरकार विभिन्न योजनाओं का संचालन करती है साथ ही इस कार्य में विभिन्न गैर-सरकारी संगठनों का भी सहयोग लेती है। सरकार ने लोगों को भोजन, वस्त्र, आवास, स्वतन्त्रता, शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार के सविधाएं उपलब्ध कराने हेत अनेक कार्यक्रम चलाये हैं। देश में लोगों की क्रयशक्ति में वद्धि कर उनको सुविधा सम्पन्न बनाने हेतु वर्ष 2006 से प्रारम्भ की गयी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना (नरेगा) प्रमुख है जिसका नाम बदलकर अब महत्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण

रोजगार गारण्टी योजना (मनरेगा) कर दिया गया है। यह योजनाएं एवं कार्यक्रम गरीबी को कम करने तथा लोगों को बेहतर गुणवत्तापूर्ण जीवन जीने में सहायता प्रदान कर रहे हैं।

6. जीवन प्रत्याशा जीवन की गुणवत्ता का एक प्रमुख कारक है। भारत में जीवित रहने की आयु में निरन्तर वृद्धि हुई है परन्तु यह गति बहुत धीमी रही है। देश में लोगों की जीवन–प्रत्याशा 1911 में 22.9 वर्ष थी जो 1951 में 32.1 वर्ष तथा 1991 में बढ़कर 59.9 वर्ष हो गयी। वर्ष 2009 में यह 69.89 वर्ष आंकलित की गई है। इसी वर्ष पुरूषों की जीवन-प्रत्याशा 67.46 वर्ष तथा महिलाओं की 72.61 वर्ष रही। विकसित देशों की तुलना में भी भारत में जीवन-प्रत्याशा कम है। उदाहरण के लिए, जापान में जीवन–प्रत्याशा 81 वर्ष, कनाडा में 79 वर्ष, आस्ट्रेलिया में 78 वर्ष तथा अमेरिका एवं इंग्लैण्ड में 77 वर्ष है तथा अरब देशों में 71 वर्ष, यूरो क्षेत्र में 81 वर्ष, लैटिन अमेरिका एवं कैरिबियन देशों में 74 वर्ष तथा विश्व में यह 70 वर्ष है।
7. गुणवत्तापूर्ण जीवन के लिए देश के लोगों का शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ होना आवश्यक है। इसके लिए पर्याप्त पोषण की आवश्यकता होती है परन्तु भारत में लोगों को भोजन से औसतन 1900 से 2000 कैलोरी ही मिल पाती है जबकि उन्हें कम से कम 3000 कैलोरी प्रतिदिन मिलना आवश्यक है। पर्याप्त चिकित्सकीय सुविधाओं की अनुपलब्धता के कारण यहां बीमारियों का प्रकोप अधिक होता है जो लोगों के गुणवत्तापूर्ण जीवन में बाधा है।
8. देश में ऊँची साक्षरता दर एवं प्रशिक्षण की स्थिति लोगों के जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने में सहायक है। भारत में साक्षरता की दर वर्ष 1951 में मात्र 18.3 प्रतिशत थी जो वर्ष 2001 में बढ़कर 64.83 प्रतिशत हो गई। जनगणना 2011 के आंकड़ों के अनुसार भारत की साक्षरता दर 74.04 प्रतिशत है। देश में पुरूष साक्षरता दर वर्ष 2001 में 75.26 प्रतिशत की तलना में 2011 में बढ़कर 82.14 प्रतिशत हो गई है। इसी प्रकार महिलाओं की साक्षरता दर वर्ष 2001 में 53.67 प्रतिशत की तुलना में 2011 में बढ़कर 65.46 प्रतिशत हो गई है। देश में शिक्षा सुविधाओं का विकास होने के साथ ही पुरूष-महिला की साक्षरता दर का अन्तर भी कम हुआ है। भारत में केरल 93.91 प्रतिशत के साथ सर्वाधिक साक्षरता दर वाला राज्य है जबकि सबसे कम साक्षरता दर बिहार में है जहां यह दर मात्र 63.82 प्रतिशत है।
9. एक देश में जन्म एवं मृत्यु दरें बहुत हद तक जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करती हैं। भारत में 70 के दशक तक जन्म दर में वृद्धि दर्ज की गई थी परन्तु अब इसमें लगातार कमी आ रही है। भारत में 1901-10 में यह 49.2 प्रति हजार थी जो 1951-60 में 41.7 प्रति हजार हो गयी। इसके पश्चात् जनसंख्या के नियोजन पर ध्यान देने के कारण यह वर्ष 1991 में कम होकर 29.5 प्रति हजार हो गयी। वर्तमान में यह 22.22 प्रति हजार है। भारत में विकास प्रक्रिया के कारण जन्म दर के साथ ही मृत्यु दर में कमी आ रही है। 1941-50 की अवधि में यह 27.4 थी जो वर्तमान में घटकर 6.4 प्रति हजार हो गयी। विभिन्न मृत्यु दरों में शिशु एवं मातृ मृत्यु दरें अति महत्वपूर्ण हैं। भारत म शिशु मृत्यु-दर वर्ष 1960 में अपने उच्चतम स्तर 159.3 प्रति हजार जीवित जन्म थी जो वर्ष 2010 में अब तक के अपने न्यूनतम् स्तर 48.2 प्रति हजार जीवित जन्म पर आ गई है। विकास के साथ इसके भविष्य में और भी कम होने की सम्भावना है। विकसित देशों में यह दर काफी कम है। उदाहरण के लिए, वर्ष 2010 में संयुक्त राज्य अमेरिका में यह दर 6.15 प्रति हजार जीवित जन्म थी। इसी प्रकार, भारत में वर्ष 2010 में मातृत्व मृत्यु-दर 2 प्रति हजार जीवित जन्म थी। यह दर शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक है।
10. मानव अधिकार मनुष्य के मूलभूत सार्वभौमिक अधिकार हैं। भारत में इस सम्बन्ध में स्वतंत्रता पूर्व एवं पश्चात् विभिन्न प्रयास किये जाते रहे हैं। जैसे- राजा राम मोहन राय द्वारा ब्रिटिश राज के दौरान चलाये गये सुधार आन्दोलन के बाद सती प्रथा को समाप्त कर दिया गया, 1950 में भारतीय संविधान के लागू होने पर

नागरिकों को विभिन्न अधिकारों की प्राप्ति हुई, 1992 में संविधान संशोधन के द्वारा पंचायती राज की स्थापना की गयी जिसमें महिलाओं एवं अनुसूचित जाति/जनजाति को प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया, 1993 में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की स्थापना की गयी, 2005 में सार्वजनिक अधिकारियों के अधिकार क्षेत्र में संघटित सूचना तक नागरिकों की पहुंच सुनिश्चित करने के लिए सूचना का अधिकार कानून पास हुआ, 2005 में रोजगार की समस्या को हल करने हेतु राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी एक्ट पारित हुआ आदि। जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारकों का भारत के सन्दर्भ में विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि भारत में जीवन की गुणवत्ता अभी निम्न स्थिति में है। देश में नागरिकों के जीवन को बेहतर बनाने के लिए विभिन्न स्तर पर सरकारी प्रयास किये जा रहे हैं और उन प्रयासों के सकारात्मक परिणाम भी आ रहे हैं परन्तु अभी इस दिशा में और अधिक एवं प्रभावशाली प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। विश्व स्तर पर भी जीवन की गुणवत्ता में सुधार हेतु विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संगठन प्रयासरत हैं। जैसे- प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय संगठन 'विश्व बैंक ने 'विश्व को गरीबी मुक्त करने का लक्ष्य घोषित किया है जिससे लोगों को भोजन, वस्त्र, आवास, स्वतन्त्रता, शिक्षा तक पहुंच, स्वास्थ्य देखभाल और रोजगार की सुविधाएं उपलब्ध हों और उनकी जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो । विश्व बैंक नवउदारवादी साधनों द्वारा गरीबी में कमी लाने एवं लोगों को बेहतर गुणवत्तापूर्ण जीवन जीने में सहायता प्रदान करने के लिए प्रयत्नशील है। इसके अतिरिक्त विभिन्न गैर सरकारी संगठन भी व्यक्तियों एवं समुदायों के जीवन में गुणात्मक सुधार की ओर अपने कार्यों को केन्द्रित किये हुए हैं। भारत भी इन प्रयासों से लाभान्वित हो रहा है।

7.6 जनसंख्या की गुणवत्ता एवं जीवन स्तर में अन्तर

जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता एवं जीवन-स्तर की अवधारणा को प्रायः एक देश एवं उसके निवासियों की आर्थिक और सामाजिक समृद्धि के रूप में एक ही प्रकार से देखा जाता है जबकि यह दोनों अलग-अलग अवधारणाएं हैं और इन दोनों में पर्याप्त अन्तर है। एक ओर, जीवन स्तर सामान्यतया एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में लोगों को धन, आराम, भौतिक वस्तुएं और आवश्यकताओं की उपलब्धता से सम्बन्धित है। इसके अन्तर्गत वे तत्व सम्मिलित होते हैं जिनकी माप आसानी से की जा सकती है और जिन्हें संख्या में व्यक्त किया जा सकता है, जैसे- सकल घरेलू उत्पाद, गरीबी की दर, जीवन प्रत्याशा, मुद्रा स्फीति की दर, श्रमिकों को प्रतिवर्ष दिये जाने वाले अवकाशों की औसत संख्या आदि । जीवन स्तर प्रायः भौगोलिक क्षेत्रों की तुलना करने के लिए उपयोग किया जाता है। जैसेदो देशों अथवा दो शहरों में जीवन स्तर का अन्तर। दूसरी ओर, जीवन की गुणवत्ता जीवन स्तर की तुलना में अधिक व्यक्तिपरक है। इसमें धन और रोजगार के साथ ही निर्मित पर्यावरण, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, सुरक्षा, शिक्षा, मनोरंजन, खुशी, अवकाश का समय और सामाजिक सम्बन्ध एवं गरीबी रहित जीवन शामिल है। इसके अन्तर्गत ऐसे तत्व भी शामिल होते हैं जो विशिष्टतः गुणात्मक हैं और उनकी माप करना कठिन है, जैसे- कानून का समान संरक्षण, भेदभाव से मुक्ति, धार्मिक स्वतंत्रता आदि। इस प्रकार, जीवन-स्तर एक वस्तुपरक एवं संकुचित अवधारणा है जबकि जीवन की गुणवत्ता एक व्यक्तिपरक एवं व्यापक अवधारणा है। परन्तु, दोनों ही एक विशेष समय में एक विशेष क्षेत्र में जीवन की एक सामान्य तस्वीर प्रस्तुत करने में सहायता करते हैं, जिससे नीति–निर्माताओं को नीतियों के निर्माण एवं इनमें परिवर्तन करने में मद्द मिलती है।

7.7 अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 01 : जनसंख्या की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारक कौन से हैं ?
प्रश्न 02 : जीवन स्तर एवं जीवन की गुणवत्ता में क्या अन्तर है ?
प्रश्न 03 : निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताईये।।
(क) जीवन प्रत्याशा और जीवन की गुणवत्ता में सीधा सम्बन्ध होता है।
(ख) भारत में दमन और द्वीव एवं गुजरात सबसे कम बेरोजगारी दर वाले राज्य हैं।
(ग) भारत में जन्म दर निरन्तर बढ़ रही है।

7.8 सारांश

जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता व्यक्तियों एवं समाजों के गुणवत्तापूर्ण जीवन यापन से सम्बन्धित है। यह एक व्यापक अवधारणा है। इसके प्रभावकारी कारकों में परिमाणात्मक के साथ ऐसे कारक भी सम्मिलित किये जाते हैं जो विशिष्टतः गुणात्मक हैं और जिनकी माप करना कठिन है। इनको अध्ययन की दृष्टि से विभिन्न भागों में विभाजित किया जा सकता है, जैसे- आर्थिक कारक (आय, सम्पत्ति, रोजगार, जीवन तथा गरीबी का स्तर, आधारभूत संरचना आदि), सामाजिक कारक (जीवन प्रत्याशा, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, शिक्षा एवं प्रशिक्षण, आवास, जन्म एवं मृत्यु दर, सामाजिक सम्बन्ध, अवकाश, लैंगिक समानता तथा अपराध आदि), मनोवैज्ञानिक कारक (खुशी एवं सन्तुष्टि का स्तर) तथा अन्य कारक (मानव अधिकार, राजनीतिक स्थिरता, पर्यावरण, सरक्षा, बाल विकास एवं कल्याण आदि)। युनाईटेड नेशन्स यूनीवर्सल डिक्लेरेशन ऑफ हूमन राइट्स 1948 में जीवन की गुणवत्ता के मूल्यांकन हेतु विभिन्न कारकों जैसे- गुलामी एवं उत्पीड़न से मुक्ति, कानून का समान संरक्षण, भेदभाव से मुक्ति, समान व्यवहार का अधिकार, निजता का अधिकार, विचारों की स्वतंत्रता, धार्मिक स्वतंत्रता, रोजगार का मुक्त चयन, शिक्षा का अधिकार, मानवीय आत्मसम्मान का अधिकार आदि को बताया गया है। भारत में जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता के प्रमुख प्रभावकारी कारकों की स्थिति का मूल्यांकन करने पर ज्ञात होता है कि भारत में जीवन की गुणवत्ता अभी निम्न स्थिति में है। देश में नागरिकों के जीवन को बेहतर बनाने के लिए विभिन्न स्तर पर सरकारी प्रयास किये जा रहे हैं और उन प्रयासों के सकारात्मक परिणाम भी आ रहे हैं परन्तु अभी इस दिशा में और अधिक एवं प्रभावशाली प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। विश्व स्तर पर भी इसके लिए विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संगठन प्रयासरत हैं। भारत भी इन प्रयासों से लाभान्वित हो रहा है। जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता एवं जीवन-स्तर की अवधारणाओं को प्रायः एक ही प्रकार से देखा जाता है, परन्तु इन दोनों में पर्याप्त अन्तर है। जीवन स्तर एक संकुचित अवधारणा है जिसके अन्तर्गत ऐसे तत्व सम्मिलित होते हैं जिनकी माप आसानी से की जा सकती है और जिन्हें संख्या में व्यक्त किया जा सकता है, जबकि जीवन की गुणवत्ता एक व्यापक अवधारणा है जिसमें परिमाणात्मक के साथ गुणात्मक कारक भी आते हैं जिनकी माप करना कठिन है। परन्तु, दोनों ही एक विशेष समय में एक विशेष क्षेत्र में जीवन की एक सामान्य तस्वीर प्रस्तुत करने में सहायता करते हैं, जिससे नीति-निर्माताओं को नीतियों के निर्माण में मदद मिलती है।

7.9 शब्दावली

- **बेरोजगारी की दर** : बेरोजगारी की दर के अन्तर्गत देश की कुल शक्ति एवं जीविकोपार्जन हेतु रोजगार न मिलने वाले लोगों के सम्बन्ध को देखा जाता है। ऐसे लोग जो रोजगार की तलाश कर रहे हैं, उनकी संख्या को देश की कुल श्रम शक्ति से भाग देकर इस दर को प्राप्त किया जाता है। इस दर में परिवर्तन मुख्यतः वर्तमान में कार्य की तलाश कर रहे, कार्य से अलग हुए एवं कार्य की तलाश में शामिल हुए नये लोगों पर

निर्भर करता है।

- **गरीबी रेखा** : यू.एन.डी.पी. के अनुसार वे परिवार गरीब हैं जिन्हें प्रतिदिन एक डॉलर से कम पर गुजारा करना पड़ता है। भारत में गरीबी की परिभाषा के अन्तर्गत वे परिवार, जिन्हें ग्रामीण क्षेत्रों में 2400 कैलोरी और शहरी क्षेत्रों में 2100 कैलोरी का भोजन या खाद्य पदार्थ मिल जाते हैं, गरीब नहीं हैं।

7.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर01 : जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारकों में आय, रोजगार, जीवन स्तर, आधारभूत संरचना, जीवन प्रत्याशा, स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, सामाजिक सम्बन्ध, लैंगिक समानता, खुशी, मानव अधिकार, राजनीतिक स्थिरता, पर्यावरण, सुरक्षा आदि प्रमुख हैं।

उत्तर02 : जीवन स्तर एक संकचित अवधारणा है जिसके अन्तर्गत ऐसे तत्व सम्मिलित होते हैं जिनकी माप आसानी से की जा सकती है और जिन्हें संख्या में व्यक्त किया जा सकता है, जबकि जीवन की गुणवत्ता एक व्यापक अवधारणा है जिसमें परिमाणात्मक के साथ गुणात्मक कारक भी आते हैं जिनकी माप करना कठिन है।

सत्य/असत्य

उत्तर : (क) सत्य, (ख) सत्य, (ग) असत्य ।

7.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- *Morris, Morris David (January 1980): The Physical Quality of Life Index (PQLI), Development Digest.*
- Nussbaum, Martha and Sen, Amartya (ed.) (1993): The Quality of Life, Oxford:
- Clarendon Press.

7.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

- कुमार, वी. (2007): जनांकिकी, साहित्य भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.)
- लि., आगरा। • सिन्हा एवं सिन्हा (2005) : जनसंख्या के सिद्धान्त, मयूर पेपरबैक्स, नोएडा।
- गुप्त, एस. एन (2009) : जनांकिकी के मूल तत्व, वृंदा पब्लिकेशन्स प्रा. लि.,दिल्ली।

7.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता के प्रभावकारी कारकों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
2. भारत में जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता पर एक निबन्ध लिखिए।
3. जनसंख्या की गुणवत्ता एवं जीवन स्तर में क्या अन्तर है। स्पष्ट कीजिए।

इकाई-8 मापन 1. कुल जन्म-दर, प्रजनन दर, कुल प्रजनन दर, पुर्न उत्पादकीय दर, सकल पुनःउत्पादकीय दर, शुद्ध पुनःउत्पादकीय दर एवं अन्तर्सम्बन्ध

(Measurement-1 Total Birth Rate, Fertility Rate, Total Fertility Rate, Reproductive Rate, Gross Reproductive Rate, Net Reproductive Rate and interconnection)

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 मुख्य भाग
8.3.1 प्रजननता का अर्थ एवं परिभाषा
8.3.2 प्रजननता एवं संतानोत्पादकता में अन्तर
8.3.3 उर्वरता अथवा प्रजननता को प्रभावित करने वाले तत्व या घटक
8.3.3.1 प्रो. नाग का वर्गीकरण
8.3.3.2 प्रो. डोनाल्ड जे. बोग का वर्गीकरण
8.3.3.3. प्रो. किंग्सले डेविस का वर्गीकरण
8.3.4 प्रजननता को प्रभावित करने वाले प्रत्यक्ष सामाजिक तत्व
8.3.5 प्रजननता को प्रभावित करने वाले अन्य सामाजिक तत्व
8.4 जन्म दर व प्रजननता दर में अंतर
8.5 उर्वरता या प्रजननता दरें
8.5.1. जन्म दरें
8.5.2. प्रजनन या पुनरूत्पादन दरें
8.5.3. यथार्थ पुनरोत्पादन इतिहास
8.6 वार्षिक घातांक वृद्धि दर
8.7 अभ्यास प्रश्न
8.8 सारांश
8.9 शब्दावली
8.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
8.11 संदर्भ ग्रंथ सूचि
8.12 उपयोगी / सहायक ग्रंथ
8.13 ग्रंथ निबन्धात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

किसी स्त्री का मॉ बनना उसके जीवन की सबसे महत्वपूर्ण जनांकिकीय घटना समझी जाती है। इस घटना से व्यक्ति तथा परिवार के ढॉचें मे महत्वपूर्ण परिवर्तन हो जाता है। जैसे ही किसी परिवार में शिशु का जन्म होता है। परिवार के सभी सदस्यों की भूमिका में बदलाव आ जाता है, अधिकार तथा कर्तव्यों की दिशा में नया मोड़ आ जाता है। यद्यपि यह उथल-पुथल सम्पूर्ण समाज में उस तरह नही होती जैसे कि एक परिवार में होती है। इसका कारण यह है कि नये व्यक्तियों के आगमन के साथ ही कुछ व्यक्तियों का समाज से वहिर्गमन भी निरन्तर होता रहता है। फिर भी समाज इससे प्रभावित हुए बिना नही रह सकता। प्राचीन काल से ही प्रजननशीलता या जनांकिकी उर्वरता की दर के बारे में जानने की जिज्ञासा लोगों में रही है, परन्तु यह जिज्ञासा निरपेक्ष रूप में ही रही उदाहरण स्वरूप किसी स्त्री को कितने बच्चे पैदा हुए। आज प्रत्येक देश में तीव्रगति से अधिकाधिक वृद्धि के लिए प्रत्यन्तशील है। इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु प्रत्येक देश अपने देश की जनांकिकी गतिविधियों की जानकारी चाहता है जिससे उसमें समय पर वाछित परिवर्तन लाया जा सकें।

8.2 उद्देश्य

किसी एक समाज की विभिन्न वर्गों की प्रजननता दरों में अंतर पाया जाता है। विकसिक एवं विकासशील देशों की उर्वरता दरों में निश्चित प्रकार की उर्वरता भिन्नताएं देखी गयी हैं। इसी प्रकार सामाजिक, आर्थिक, जाति संबंधी, धार्मिक तथा सांस्कृतिक समुदायों में उर्वरता दरों की परस्पर भिन्नताएं, राष्ट्रीय औसत जन्म दरों मे कम या अधिक होने की प्रवृत्ति, जनांकिकीय अनुसंधानों से सामने आयी हैं। प्रस्तुत अध्याय में जन्म एंव उससे सम्बन्धित घटनाओं, जन्म दर की माप, जन्म दर को प्रभावित करने वाले तत्वों तथा सन्तानोत्पादन क्षमता आदि का अध्ययन किया जायेगा।

8.3 मुख्य भाग

8.3.1 प्रजननता का अर्थ एवं परिभाषा:

साधारणतः प्रजननता का अभिप्राय किसी स्त्री या उनके समूह के द्वारा किसी समयावधि में कुल सजीव जन्मे बच्चों की वास्तविक संख्या से है। प्रजननता की माप बच्चों की संख्या से होती है, अथवा एक दी हुई अवधि पर सजीव जन्मे बच्चों की बारंबारता ही उर्वरता का माप है। इस शब्द की परिभाषा विभिन्न जनांकिकीवेत्ताओं ने भिन्न – भिन्न ढंग से दी है। प्रमुख परिभाषाओं का आलोचनात्मक विश्लेषण निम्नवत् है: **बर्नार्ड बेंजामिन** ने कहा है कि ***" प्रजननता उस दर का माप है जिसमें कोई जनसंख्या जन्म द्वारा जनसंख्या में वृद्धि करती है और सामान्यतया, जनसंख्या के किसी वर्ग के विवाहित दंपत्तियों की संख्या शिश जनन क्षमता वाली, आय वर्ग की स्त्रियों की संख्या अर्थात् प्रजननता की क्षमता उपयुक्त मापदण्ड हो सकता है।"*** **जार्ज बार्ले** के अनुसार, ***" प्रजननता जीवित जन्म की संख्या पर आधारित जनसंख्या की यथार्थ स्तर की क्रियाविधि है।"*** **थाम्पसन और लेविस** के शब्दों में, ***"साधारणतया, प्रजननता का अभिप्राय किसी स्त्री या इनके समूह द्वारा किसी समयावधि में कुल सजीव उत्पन्न बच्चों की संख्या से लगाया जाता है।"*** उपर्युक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से आप जान पायेंगें कि उर्वरता की निम्नलिखित विशेषताएं हैं :

1. प्रजननता का संबंध जन्म की जीवन घटना से होता है।
2. प्रजननता का संबंध जनसंख्या के मात्र एक वर्ग से है। यह वर्ग उस स्त्री जनसंख्या से संबद्ध हैं, जो प्रजनन योग्य आयु (अर्थात् 15 से 49 वर्ष के मध्य) के अंतर्गत है।
3. इसमें उत्पन्न बच्चों का सामूहिक अध्ययन किया जाता है।

4. प्रजननता के मापों में सजीव बच्चों को ध्यान में रखा जाता है। इसे यथार्थ सफलता का स्तर या जीवित प्रसवों की संख्या की संज्ञा भी दी जा सकती है।

8.3.2 प्रजननता एवं संतानोत्पादकता में अन्तर

संतानोत्पादकता से आशय औरतों की बच्चों को जन्म देने की शक्ति से है, चाहे उसने बच्चों को जन्म दिया हो या न दिया हो, किंतु उर्वरता से आशय वास्तव में बच्चों को जन्म देने से है। अर्थात् समस्त औरतों को दो भागों में बांटा जा सकता है। वे औरतें जिनमें संतानोत्पादन शक्ति है, उन्हे संतानोत्पादक कहा जाता है तथा वे औरतें जिनमें संतानोत्पादन की शक्ति ही न हो, उन्हें गैर-संतानोत्पादक कहा जाएगा। संतानोत्पादन शक्ति से युक्त औरतें मे ही उर्वरता हो सकती है। संतानोत्पादक औरतों में से जो औरतें विवाह करती है तथा जिनके विवाह के उपरांत बच्चे हो जाते है, उन्ही में उर्वरता होती है। अतः वे सब औरतें जिनमें उर्वरता होती है, उनमें संतानोत्पादकता भी होती है, किन्तु सभी संतानोत्पादक औरतों मे उर्वरता होना अनिवार्य नहीं है। उर्वरता के लिए उनका विवाह होना आवश्यक है।

8.3.3 उर्वरता अथवा प्रजननता को प्रभावित करने वाले तत्व या घटक

प्रजननता को प्रभावित करने वाले अनेक तत्व हैं। लुई हैनरी ने उर्वरता को प्रभावित करने वाले तत्वों का अध्ययन करने के उद्देश्य से उर्वरता को दो भागों में विभाजित किया है : (i) स्वाभाविक प्रजननता, (ii) नियंत्रित प्रजननता

(i)स्वाभाविक प्रजननता : यह एक ऐसी उर्वरता है, जिसमें व्यक्ति अपने परिवार का आकार नियंत्रण करने के लिए सजग नहीं है। वे बच्चों की संख्या के प्रति बिल्कुल चिंतित नही है। बच्चों की संख्या सहवास की बारंबारता एवं शारीरिक क्षमता पर निर्भर करती है। अतः ऐसे समाज में उर्वरता को प्रभावित करने वाले घटक मात्र जैविकीय या शारीरिक (Physiological) होते हैं।

(ii) नियंत्रित प्रजननता: यह इस प्रकार की प्रजननता है जिसके अंतर्गत लोग परिवार नियोजन के आदर्श को स्वीकार करते हैं। इस प्रकार का समाज परिवार नियोजन के विभिन्न उपायों का प्रभावपूर्ण ढंग से प्रयोग करता है। ऐसे समाज में शारीरिक तत्वों के अतिरिक्त व्यावहारिक तत्वों का भी समावेश किया जाता है। उर्वरता एक सामाजिक विषय भी है व विशुद्ध वैयक्तिक विषय भी। अतः उर्वरता को प्रभावित करने वाले घटकों का वर्गीकरण अलग-अलग किया है। कुछ प्रमुख वर्गीकरण निम्नलिखित

1. प्रो. नाग का वर्गीकारण
2. प्रो. डोनाल्ड जे. बोग का वर्गीकारण
3. प्रो. किंग्सले डेविस एवं ज्यूडिथ ब्लैक का वर्गीकरण

8.3.3.1 प्रो. नाग का वर्गीकरण :- प्रो. नाग ने उर्वरता को प्रभावित करने वाले घटकों को तीन भागों में बांटा है:

जैविकीय तत्व :- इन तत्वों के अंतर्गत स्वास्थय संबंधी परिस्थितियां, विभिन्न बीमारियां गुप्तरोग अथवा बांझपन, भोजन संबंधी आदतें, प्रजननता आदि का समावेश किया जाता है। ये विभिन्न तत्व स्वास्थ्य संबंधी है तथा देश में उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाओं पर आधारित रहते है। स्वास्थ्य संबंधी सुविधाओं में विस्तार संतानोत्पादन शक्ति में वृद्धि करता है तथा मृत्यु दर में कमी। विगत वर्षों में विश्व जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि का प्रमुख कारण स्वास्थ्य सविधाओं में विस्तार होना है।

परोक्ष सामाजिक घटक :- ये घटक सामाजिक रीति-रिवाजों से प्रभावित होकर उर्वरता को प्रभावित करते है। सामान्यतः इनको सामाजिक तत्व कहा जाता है। ये विभिन्न तत्व प्रजननता को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते है। इन तत्वों में प्रमुख तत्व ये है:

(i) विवाह की आयु,

(ii) तलाक एवं अलगाव,

(iii) वैधव्य,
(vi) बहु पत्नी प्रथा,
(v) पति-पत्नी के बीच सामाजिक अथवा धार्मिक कारणों से अलगाव,
(vi) प्रसवोपरान्त अलगाव की समयावधि,
(vii) विवाहोपरान्त अस्थायी आत्म-संयम आदि।

प्रत्यक्ष सामाजिक तत्व :- इसके अंतर्गत उन तत्वों का समावेश किया जाता है जो जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित करते है। इन तत्वों के अंतर्गत जनसंख्या नियंत्रण के विभिन्न उपायों का समावेश किया जाता है। ये तत्व प्रजननता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं, इन तत्वों में से प्रमुख तत्व ये है: आत्मसंयम, संतति नियमन संबंधी उपाय, गर्भ समापन शिशु हत्या इत्यादि।

8.3.3.2 प्रो. डोनाल्ड जे. बोग का वर्गीकरण :-

वैवाहिक स्तर : विवाह की आयु, विवाहित, अविवाहित, विधवा, विधुर, अलगाव, तलाक आदि की मात्रा, उर्वरता को प्रभावित करती है।

शिक्षा का स्तर : शिक्षा का स्तर बढ़ने के साथ उर्वरता हास हो जाती हैं – **"Throughout the world there appears to be a strong inverse correlation between the amound of educational attainment and the level of fertility."** सर्वाधिक उर्वरता उन औरतों मे होती है, जो निरक्षर हैं तथा सबसे कम उनमें होती है, जिनकी शिक्षा अधिकतम है।

शहरी तथा ग्रामीण निवास : नगरीकरण और उर्वरता के मध्य ऋणात्मक संबंध होता है। नगर एवं गांव की उर्वरता के आंकड़ों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट रूप से पता चलता है कि प्रत्येक आयु वर्ग की स्त्रियों की उर्वरता गांव में शहर की अपेक्षा अधिक है।

निवास का क्षेत्र : प्रजननता पर निवास स्थान की जलवाय का भी प्रभाव पड़ता है। प्रायः गर्म क्षेत्रों में ठंडे क्षेत्र की अपेक्षा उर्वरता अधिक होती है। यही करण है कि विश्व में उन देशों की जनसंख्या अपेक्षाकृत अधिक हैं, जहां की जलवायु गर्म है।

पति का व्यवसाय : पति के व्यवसाय और प्रजननता मे गहरा संबंध होता है। यदि पति का सामाजिक स्तर ऊंचा होता है, तो प्रजननता प्रायः कम होती है, जबकि नीचे स्तर पर ऊंची उर्वरता होने की संभावना रहती है। फिर भी यह संबंध सरल व स्पष्ट नहीं है। प्रायः निम्न वर्ग के व्यक्तियों की उर्वरता न्यूनतम होती है, जबकि उच्च मध्य वर्ग में उर्वरता निम्न मध्य वर्ग से अधिक पाई जाती है।

पति का आय : प्रो. बोग का विचार है कि आय स्तर एवं उर्वरता के बीच यू (U) आकृति के वक्र कस संबंध है। जब आय स्तर बहुत नीची होती है, तो उर्वरता ऊंची होती है। जब आय स्तर मध्यम वर्ग की होती है, वो उर्वरता न्यूनतम होती है; किंतु उच्च आय स्तर में पुनः बढ़ने की प्रवृति पायी जाती है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों का विचार था कि गरीबी और प्रजननता में प्रत्यक्ष सह-संबंध होता है; अर्थात् परिवार जितना निर्धन होगा, बच्चे उतने ही अधिक होंगे तथा परिवार जितना धनी होगा, बच्चे उतने ही कम होंगे। किन्तु 1945 के उपरांत विचारधारा में परिवर्तन आ गया है।

कार्यरत स्त्रियों का व्यवसाय : सामान्यतया घरेलु स्त्रियों की तुलना में कार्यरत स्त्रियों की प्रजननता कम होती है। कार्यरत स्त्रियों में भी सामाजिक विज्ञानवेत्ता, लेखपाल एवं ऑडीटर, डिजाइनर, ड्राफ्टमैन, कॉलेज के प्रोफेसर एवं वकील स्त्रियों में उर्वरता विशेष रूप से कम होती है। प्रो. बोग का बिचार है कि मानसिक कार्य करने वाली स्त्रियों में उर्वरता सामान्य से कम होती है।

निरोधक उपायों का उपयोग : निरोधक उपायों का उर्वरता के स्तर पर प्रत्यक्ष व प्रभावकारी प्रभाव पड़ता है।

जैसे-जैसे निरोधक उपायों का उपयोग बढ़ता जाता है, उर्वरता का स्तर घटता जाता है। परिवार के आकार के प्रति दृष्टिकोण : परिवार के संबंध में सन् 1860 मे हैल्पटन ने अमरीका का अध्ययन किया तथा कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले हैं, जो इस प्रकार हैं:

सारणी : परिवार के आकार के प्रति निकाले गये दृष्टिकोण या निष्कर्ष

बच्चों की संख्या	श्वेत जाति के व्यक्तियों का प्रतिशत	अश्वेत जाति के व्यक्तियों का प्रतिशत
0	0	0
1	0	1
2	18	22
3	28	19
4	43	39
5	5	7
6 or more	6	13
Average	**3.5**	**3.8**

उपर्युक्त आंकड़ों से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रत्येक व्यक्ति संतान चहता है और अधिकांश व्यक्ति दो, तीन या चार बच्चे चाहते हैं। किंतु उससे अधिक बच्चे चाहने वालों का प्रतिशत बहुत कम है।

8.3.3.3. प्रो. किंग्सले डेविस का वर्गीकरण

प्रो. किंग्सले डेविस ने प्रजननता को प्रभावित करने वाले समस्त घटकों को तीन श्रेणियों में रखा है। उनका मत था कि एक शिशु तभी उत्पन्न हो सकता है जबकि:

(1) सहवास हो,

(2) सहवास के परिणामस्वरूप गर्भाधान हो, व इसके बाद

(3) गर्भ सफलतापूर्वक अपनी अवधि पूरी करे।

अतः ये तीनों अवस्थाएं उर्वरता के समस्त घटकों को शामिल कर लेती हैं। इन तीनों अवस्थाओं को **डेविस एवं ज्यूडिथ** ने **'Intermediate Variables'** माना है, जिनके अंतर्गत 11 घटक शामिल किए जा सकते हैं:

1. वे घटक जिनके परिणामस्वरूप सहवास होता है:

(अ) पुनरूत्पादन अवधि में संयोग एवं वियोग को प्रभावित करने वाले तत्व।

(i) लैंगिक संबंध प्रारंभ करने के समय आयु ।

(ii) स्थायी पवित्रता -उन स्त्रियों का अनुपात जो कभी भी लैंगिक संबंध स्थापित नहीं कर पाती।

(iii) पुनरूत्पादन आयु वर्ग का वह काल जिसमें संबंध विद्यमान थे।

(क) संबंध विच्छेद, तलाक, अलगाव अथवा छोड़ने के कारण कब हुआ।

(ख) पति की मृत्यु के कारण संबंध विच्छेद कब हुआ।

(ब) संयोग के अंतर्गत सहवास को प्रभावित करने वाले तत्वः

(iv) स्वेच्छानुसार संयम ।

(v) बलात, संयम (बीमारी, अपरिहार्य, अल्पकालीन, अलगाव अथवा सहवास के अयोग्य)।

(vi) सहवास की बारंबारता।

2. वे घटक जिनके परिणामस्वरूप गर्भाधान होता है:

(vii) संतानोत्पादक में अक्षमता अथवा असमर्थता में अनैच्छिक कारणों का प्रभाव ।

(viii) गर्भ निरोधक उपायों का उपयोग अथवा उपयोग न करना।

(क) रासायनिक अथवा औषधि संबंधी अथवा मशीनी उपाय ।

(ख) अन्य उपाय

(ix) सतानोत्पादन असमर्थता में स्वैच्छिक घटकों का प्रभाव (नसबंदी अथवाअन्य चिकित्सा कार्य)।

3. वे घटक जो गर्भाविधि को पूरा करने में प्रभाव डालते है:

(x) भ्रूण मृत्यु – अनैच्छिक कारणों से।

(xi) भ्रूण मृत्यु – ऐच्छिक कारणों से।

यद्यपि विभिन्न विद्वानों ने उर्वरता को प्रभावित करने वाले घटकों को अलग – अलग ढंग से वर्गीकृत किया है, परंतु उर्वरता को प्रभावित करने वाले घटकों को मोटे तौर पर हम तीन शीर्षको के अंतर्गत अध्ययन कर सकते हैं, जैसे कि चार्ट में दिखाया गया है:

प्रजननता को प्रभावित करने वाले तत्व

प्रत्यक्ष सामाजिक तत्व

(i) निरोधक उपाय

(ii) मृत्युक्रम या मरणांक

(iii) गर्भपात

परोक्ष सामाजिक घटक अन्य सामाजिक तत्व

(i) विवाह की आयु

(i) सामाजिक-आर्थिक परिस्थिति

(ii) तलाक एवं अलगाव

(ii) औरतों का सामाजिक स्तर

(iii) वैधव्य

(iii) बच्चों के प्रति दृष्टिकोण

(iv) प्रसवोपरान्त के प्रतिबंध

(iv) सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्य

(v) मासिक धर्म एवं अन्य कारणों से अलगाव

(vi) संयम

(vii) सहवास की बारंबारता

(viii) बहुपत्नी प्रथा

(iv) बन्ध्याकरण

(v) भ्रूण हत्या

8.3.4 प्रजननता को प्रभावित करने वाले प्रत्यक्ष सामाजिक तत्व

प्रजननता को प्रभावित करने वाले प्रत्यक्ष सामाजिक तत्वों में सन्तति नियमन संबंधी उपायों का समावेश किया जाता है। इसके अन्तर्गत मुख्यतः निम्नलिखित उपायों को सम्मिलित किया जाता है: निरोधक उपाय : प्राचीन काल में संयम एवं अविवाहित जीवन की उर्वरता पर नियंत्रण

रने के लिए एक प्रभावकारी साधन के रूप में ग्रहण किया गया था. लेकिन सभ्यता के विकास के साथ-साथ उनका स्थान गर्भाधान निरोध एवं बंध्याकरण से संबंधित साधन एवं विधियां लेती जा रही है। इनके पीछे यह तर्क दिया जाता है कि ये संयम एवं अविवाहित जीवन कष्टकारी होते हैं और दीर्घकाल में इसका प्रभाव स्वास्थ्य पर अच्छा

नही पड़ता है। अतः गर्भाधान निरोधक द्वारा व्यक्ति बिना यौन सुख से वंचित हुए अपने परिवार को नियोजित कर सकता है। परिवार को नियोजित करने के साधन, विधियां एवं इनके प्रति जन-जागरूकता आवश्यक रूप से उच्च उर्वरता को नियंत्रित करेगी। मृत्युक्रम या मरणांक : अर्द्धविकसित देशों मे उर्वरता को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण घटक मरणांक या मृत्युक्रम स्वयं ही है। यह प्रजनन-क्रिया के तीन चरणों को प्रभावित करता है। उच्च मरणांक भ्रूण और जन्म के पश्चात् उत्तरजीविता की संभावना को घटा देती है और इस प्रकार बच्चे आर्थिक रूप से उत्पादक स्तर तक नहीं पहुंच पाते हैं। इस कारण से अपने बुढ़ापे में सुरक्षा के लिए विवाहित जीवन के बाद के वर्षों में भी अधिक जनन क्रिया आवश्यक हो जाती है, जिससे कि मृत्यु के खिलाफ बीमा हो सके। उच्च उर्वरता दर यह प्रदर्शित नहीं करती कि जनन शक्ति भी उच्च है, बल्कि यह बताती है कि जनन कार्य अर्द्धविकसित राष्ट्रों में और कार्यो की तरह अकुशल है। वस्तुतः तीन परस्पर गहरे संबंधित चर, संबंधित चर, स्वास्थय एवं गैरपौष्टिक आहार, अत्यधिक मृत्यु दर और वृद्धावस्था में कुछ न्यूनतम संख्या में बच्चे जीवित रहें, इसके लिए अधिक बच्चों की आवश्यकता-ये सब मिलकर अन्ततः प्रजनन शक्ति और प्रजनन दर को कम कर सकते है। प्रारंभ में बच्चे होने की इच्छा पर उत्तरजीविता का ऋणात्मक प्रभाव होना आवश्यक नहीं है। किन्तु अंततः उत्तरजीवित अनुपात प्रजनन दर को नीचा करेगा ही। मूलतः माता-पिता कितने बच्चों की इच्छा रखते हैं और इन बच्चों की संख्या को प्राप्त करने की क्या अवधि है. इन बातों पर प्रजनन दर निर्भर करती है। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रजनन दर को कम करने की एक आवश्यक शर्त यह है कि मृत्यु दर भी गिरे। हां, मृत्यु दर के गिरने और प्रजनन दर के गिरने में एक समय अंतराल अवश्य होगा। गर्भपात : गर्भपात प्रायः सभ्य समाजों मे परिवार नियोजन की प्रभावकारी स्वीकृति विधि है। गर्भपात विश्व के सभी प्रगतिशील देशों में वैध माना गया है। भारतवर्ष में भी गर्भपात को वैध कर दिया गया है। प्रो. चन्द्रशेखर का मत है कि "गर्भपात का उद्देश्य किसी जीव की हत्या नहीं, बल्कि इसका उद्देश्य उन शिशुओं को मौत से बचाना है, जो सुरक्षा, सेवा, भोजन आदि के अभाव में मौत की ओर अग्रसर हो रहे है।" गर्भपात की घटनाएं निश्चित रूप से उस भावी जनसंख्या जनसंख्या को कम कर देती है, जो नवजातों के रूप में जनसंख्या में वृद्धि करने वाली थीं। बन्धाकरण : बन्धाकरण संतति नियमन का एक स्थायी उपाय है। पुरूषों मे बन्ध्याकरण को वैसेक्टोमी तथा स्त्रियों में बन्ध्याकरण को ट्यूबैक्टोमी कहा जाता है। वर्तमान समय में भारतवर्ष में स्त्री तथा पुरूष दोनों के बंध्याकरण को संतति नियमन के स्थायी उपाय के रूप में विशेष महत्व प्रदान किया गया है। इस प्रकार बंध्याकरण के कारण उर्वरता दर में कमी आती है। भ्रूण हत्या : अति प्राचीन काल में भी यूनानी विचारकों ने स्वस्थ जनसंख्या के लिए भ्रूण हत्या का अनुमोदन किया था। आदिम समाजों में भी प्राय भ्रण हत्या का प्रचलन पाया जाता था। भारत में भी इसका प्रचलन था। अनेक समाजों में ऐसे बच्चों की हत्या कर दी जाती थी, जिनका प्रसव आसाधारण होता था; जैसे वे बच्चे जिनके जन्म से दांत होते थे, जिनका जन्म किसी कुसमय पर होता था, जिनके जन्म होते ही घर में कोई मर जाता था आदि। परंतु अब यह प्रथा घट गयी है और इस प्रकार की हत्याओं का उर्वरता को प्रभावित करने में कोई विशेष महत्व नहीं है।

8.3.5 प्रजननता को प्रभावित करने वाले अन्य सामाजिक तत्व

सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति : उर्वरता पर व्यक्तियों की सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति का भी प्रभाव पड़ता है। प्रायः यह देखा गया है कि उच्च प्रस्थिति वालों की अपेक्षा निम्न प्रस्थिति वालों में उर्वरता दर ऊंची होती है। यदि हम किसी समाज की जनसंख्या का विश्लेषण प्रस्थिति के सोपान क्रम में करें, तो हमें यह पिरामिड के आकार में प्राप्त होगी, जिसमें निम्नतम प्रस्थिति वाले व्यक्तियों समूहों की जनसंख्या सबसे अधिक और उच्चतम प्रस्थिति वाले समूह की जनसंख्या सबसे कम होगी। निम्न प्रस्थिति वाले व्यक्तियों में उर्वरता अधिक होने के कारण इस प्रकार है।

(अ) दूरदर्शिता की कमी,

(ब) संतानों को सम्पत्ति के रूप में स्वीकार करना,
(स) संतान को बुढ़ापे का सहारा मानना, और
(द) संभोग को मनोरंजन के साधन के रूप में स्वीकार करना, आदि।
इसके अतिरिक्त, गरीब के सामने अपने जीवन-यापन की समस्या रहती है, और वे बच्चों को भार-स्वरूप नहीं देखते, क्योंकि उनके पालन-पोषण का व्यय बहुत कम होता है।

औरतों का सामाजिक स्तर : उर्वरता पर औरतों के सामाजिक स्तर का भी बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। जिन समाजों में स्त्रियों को मात्र संतानोत्पादन एवं लालन-पालन का साधन माना जाता है, उन्हें गृहकार्य तक सीमित रखा जाता है, उनमें प्रायः उर्वरता अधिक होती है। परंतु जहां स्त्रियां पुरूषों के साथ कदम से कदम मिलाकर राष्ट्रीय कार्यों में सक्रिय भूमिका निभाती हैं, वहां स्त्रियां अपने को घर तक ही सीमित नहीं रखना चाहतीं। अतः वे अपने परिवार को सीमित करना चाहती हैं। यही कारण है कि शिक्षित एवं रोजगार प्राप्त स्त्रियों की उर्वरता अशिक्षित एवं गृहकार्यरत स्त्रियों से कम है।

विकसित एवं अर्द्धविकसित देशों में मूल्यों एवं दृष्टिकोणों में अंतर

आधारभूत प्रश्न	परंपरागत उछ प्रजनन प्रतिरूप (Pattern)	आधुनिक निम्न प्रजनन प्रतिरूप
व्यक्ति और प्रकर्ति के बीच कैसा संबंध है ?	मनुष्य प्रकर्ति और भगवन का दस है |	मनुष्य प्रकर्ति का नियमन कर सकता है| इश्वर मनुष्य के माध्यम से कार्य कर सकता है आशावादिता
मनुष्य और समय का क्या समबन्ध है ?	वर्त्तमान-उन्मुख (वर्तमान मै जीते है)अधिक आयोजन नहीं	भविष्य उन्मुख आयोजन
लैंगिक संबंधों की प्रकर्ति	मूलरूप से पापमुलक	मूलरूप से अच्छा लैंगिक सम्बन्धी परस्पर तुष्टि के लिए परिभाषित |लैंगिक संबंध वंश को चलाने और मनोरंजन के लिए
मानवीय गतिविधियों और कार्य की प्रकर्ति क्या है?मानवीय संबंधों की प्रकर्ति क्या है ?	जिन्दा हैं जीवन यापन के लिए उन्मुख परिवार-उन्मुख भाई भतीजा आधारित सामाजिक संगठनो में हिस्सा न लेना	कार्य करना कार्य उन्मुख व्यक्तिवादी| भाई भतीजा के अतिरिक्त दूसरे आधार गैर पारिवारिक सामाजिक संगठनो में हिस्सा लेना

बच्चों के प्रति दृष्टिकोण : बच्चों की संख्या एक व्यक्तिगत विषय है। समाज में परिवार की प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए अधिकांश समाज संतान को अनिवार्य मानते हैं। कुछ समाजों मं उस परिवार को अधिक समृद्धि माना जाता है, जहां संतानें अधिक होती हैं। अब भी लड़कियों की अपेक्षा लड़कों को अधिक महत्व दिया जाता है। अतः जब तक पुत्र की प्राप्ति नही हो जाती, परिवार का आकार बढ़ता जाता है। आज भी पुत्रवती औरतें ही समाज में प्रतिष्ठा का पात्र बनती हैं। अतः जब तक सामाजिक मूल्य संतान एवं पुत्र को विशेष महत्व देंगे, उर्वरता कम नहीं होगी।

सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्य : सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों का उर्वरता दरों पर प्रत्यक्ष अथवा कारकों के माध्यम से प्रभाव पड़ सकता है। अर्द्धविकसित देशों में उर्वरता की दर उन देशों के पारंपरिक मूल्य ढांचे

के कारण ऊंची है। अद्धविकसित और विकसित देशों में मूल्यों और दृष्टिकोणों का अंतर निम्नलिखित सारणी से स्पष्ट है। उपर्युक्त सारणी के विवेचन से स्पष्ट है कि इन देशों में सामाजिक व्यवस्था और सांस्कृतिक मूल्य आर्थिक विकास के अनुकूल नहीं हैं, इसलिए उर्वरता दर को कम करने में सहायक नहीं है। इन देशों में गैर-आर्थिक कारक मूलतः आर्थिक कारकों के प्रभाव को निरस्त कर देते हैं और ये गैर–आर्थिक कारक उर्वरता दर को ऊंचा बनाए रखते हैं।

शिक्षा : शिक्षा से विचारों में नयापन आता है तथा परिवार और व्यक्ति को प्रभावित करने वाले घटकों के महत्व का ज्ञान होता है, इसलिए अन्य बातें समान रहने पर शिक्षा और विशेषकर स्त्री शिक्षा का उर्वरता दर से ऋणात्मक सह-संबंध पाया जाता है। शिक्षा के द्वारा उर्वरता दर घटने के अनेक कारण उत्तरदायी हैं, जैसे:

(i) शिक्षित स्त्रियों की विवाह की आयु अधिक होती है, जिससे उनका पुररूत्पादन
काल घट जाता है,

(ii) शिक्षित सित्रयों की गतिविधियां केवल घर-आंगन तक ही सीमित नही रहती है, बल्कि वे घर से बाहर निकलकर नौकरी भी करती है,

(iii) इन पर अनावश्यक मातृत्व का बोझ लादा नहीं जा सकता है,

(iv) शिक्षित व्यक्ति सामान्यतः अपने जीवन स्तर के प्रति अधिक सजग रहते हैं तथा वे अपने परिवार के आकार में अनावश्यक वृद्धि कर जीवन स्तर को गिराना नहीं चाहते हैं, तथा

(v) वे संतति नियमन की विभिन्न विधियों का प्रयोग सफलतापूर्वक करते हैं।

कोलिन क्लार्क ने कई अर्द्धविकसित राष्ट्रों में आंकड़े संग्रह करके यह निष्कर्ष निकाला है कि नगरीय और ग्रामिण क्षेत्रों में शिक्षा का प्रजनन दर पर प्रभाव निश्चित रूप से पड़ता है। भारतवर्ष में पूना ओर मैसूर के अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ कि सांक्षर औरतों के लिए 45 साल की आयु की औरातों में बच्चों की औसत संख्या 503, सातवीं कक्षा तक पढ़ी औरतों में बच्चों की संख्या 5.5 और 10वीं कक्षा से अधिक पढ़ी हुई औरतों में यह संख्या 3.4 थी।

1960-61 में भारतीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के निष्कर्षो को निम्न सारणी के द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है:

सारणी 3

महिला का शैक्षणिक स्तर,	**बच्चों की औसत संख्या**
1. निरक्षर	6.6
2.7-11 वर्ष की स्कूल शिक्षा	5 से 4.6
3. विश्वविद्यालयीन शिक्षा	2.0

दण्डेकर के **'Mysore Population Study'** के अनुसार शिक्षा तथा प्रजनन दर में 0.67 का सह-संबंध है। दण्डेकर का अध्ययन भी इस अवधारणा का समर्थन करता है कि शिक्षा से प्रजनन दर से कम हो जाती है।

परिवार का प्रकार एवं संरचना : सामान्यतः यह परिकल्पना की जाती है कि संयुक्त परिवार प्रजनन की दर को ऊंचा करते है। "वह समस्त सांस्कृतिक ढांचा, जो बड़े परिवार को समर्थन प्रदान करता है, प्रजनन दर को ऊंचा करने की ओर कार्य करता है।" प्रागनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उपर्युक्त कथन सत्य है। संयुक्त परिवार का उच्च प्रजनन से संबंध होना स्वाभाविक लगता है, क्योंकि इसमें विवाह की आयु नीची होती है; विवाह और बच्चे के प्रति किसी का व्यक्तिगत दायित्व नहीं होता। किंतु संयुक्त परिवार में उर्वरता की दर को कम करने के भी कई कारण हो सकते है-जैसे कि "इसमें समागम की संभावनाएं कम हो जाती हैं, परंपराओं का नियंत्रण अधिक होता है, मैथुन बारंबारता उपर्युक्त कारणों से कम होने की संभावना होती है, परिवार मे बच्चों और बूढ़ों की भीड़-भाड़ होने के कारण समागम को एक शर्मनाक कार्य समझा जाता है। इन सब कारणों से प्रजनन, विशेषकर

ऊंची आयु वर्गों में, कम होने का प्रभाव होता है। यही कारण है कि इन उच्च आयु वर्गों में प्रजनन की दर अर्द्धविकसित राष्ट्रों में विकसित राष्ट्रों की अपेक्षा नीची है।"

रोजगार और व्यवसाय : सामान्यतया शारीरिक श्रम से संबंधित व्यवसाय में संलग्न व्यक्तियों की उर्वरता दर मानसिक श्रम करने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा होती है। व्यापार आदि करने वाले व्यक्तियों की उर्वरता दर कम ही होती है। इसका कारण यह है कि उन्हें समय का अभाव रहता है और जीवन में इतने व्यस्त रहते हैं कि इस दिशा में सोचने का अवसर ही नहीं मिलता है। थॉम्पसन के अनुसार हाथ से काम करने वालों में श्वेत कालर कर्मचारियों की अपेक्षा और किसानों में श्रमिकों की अपेक्षा प्रजनन दर ऊंची होती है।

जाफी और अजूमी ने यह बतलाया है कि "इन उपलब्ध आंकड़ों की सीमाओं के बावजूद वह रोजगार, जो कि स्त्री के निवास के आस-पास गैरकृषि कार्य में किया जाता है, प्रजनन दर को काफी ऊंचा उठाने में सहायक होता है- अर्थात् यह प्रजनन दर उन औरतों की अपेक्षा ऊंची होगी, जो कि अपने घर से दूर कार्य करने जाती हैं। इनके अध्ययन के दोनों क्षेत्र, अर्थात् जापान और प्यूरेटोरिका में उन औरतों में जो कि श्रम सेना में शामिल नहीं होती हैं और जो कि गांव में ही कुटीर उद्योग धंधों में लगी रहती हैं, प्रजनन दर समान पायी गयी है। जिन औरतों ने कार्य के लिए अपना घर छोड़ा है, उनमें बच्चों की संख्या उक्तलिखित दोनों वर्गों की अपेक्षा आधी है। इस प्रकार कुटीर उद्योग अमिश्रित वरदान नहीं है, जैसा कि भारतवर्ष में समझा जाता है ।स्त्री जनसंख्या के संदर्भ में भी रोजगार में संलग्न स्त्रियों की प्रजनन दर नीची पाई जाती है। इसका कारण यह है कि कार्य की दशाएं एवं शर्ते प्रजनन व्यवहार पर भी प्रभाव डालती है तथा बच्चों की उपस्थिति कार्य में बाधक सिद्ध होती है। आय : सामान्यतया यह देखने में आता है कि आय और उर्वरता दर में विपरीत संबंध होता है। इसका एक कारण तो यह है कि उच्च आय का स्तर शिक्षा, अनुकूल व्यावसायिक स्तर, संतुलित उपभोग रचना आदि से सहसंबंधित होता है, जिससे मृत्यु दर गिर जाती है। यह भी परिकल्पना की जाती है कि जितना ही प्रति व्यक्ति प्रोटीन का उपभोग अधिक होगा, उतनी ही उर्वरता दर कम होगी। प्रोटीन के उपभोग की दर और प्रति व्यक्ति आय की दर में धनात्मक सह-संबंध होता है। लेबेन्स्टीन ने आय में वृद्धि का प्रजनन-दर पर प्रभाव का अध्ययन एक अतिरिक्त बच्चे की उपयोगिता और लागत की तुलना के आधार पर किया था। उनका मत है कि अर्द्धविकसित देशों में बच्चा उत्पन्न होने से प्राप्त होने वाली उपयोगिता उसकी लागत से भी अधिक रहती है, क्योंकि इन देशों में बच्चे पालने का खर्च केवल जीवन निर्वाह के बराबर देना पड़ता है, जबकि अमीर के बच्चों को उच्च शिक्षा व रहन-सहन के कारण अधिक खर्च करना पड़ता है।

8.4 जन्म दर व प्रजननता दर में अंतर

प्रायः लोग जन्म दर व उर्वरता दर को एक समान अर्थ मं उपयोग करते हैं परन्तु दोनों में महत्वपूर्ण अंतर है। जन्म दर व उर्वरता दर में अंतर को सारणी द्वारा स्पष्ट किया गया है।

सारणी : जन्म दर व उर्वरता दर में अन्तर

अंतर का आधार |	उर्वरता दर	जन्म दर
गणना का आधार	उर्वरता दर प्रजननकाल (15-49) वर्ष की स्त्रियों द्वारा पैदा होने वाले शिशुओं की संख्या के आधार पर ज्ञात की जाती है	जन्म दर केवल एक ही स्थान पर जन्म लेने तथा कुल शिशुओं की संख्या के आधार पर ज्ञात की जाती है।

प्रकार	उर्वरता दरें तीन प्रकार सामान्य, विशिष्ट तथा कुल की होती है।	जन्म दर दो प्रकार प्रमापित तथा अप्रमापित की होती है।
दर का आधार	उर्वरता दर प्रति एक हजार प्रजनन योग्य अवधि वाली स्त्रियों के आधार पर ज्ञात की जाती है।	जन्म दर प्रति एक हजार व्यक्तियों के आधार पर ज्ञात की जाती है।
गणना की गयी दर	साधारणतया उर्वरता दर जन्म दर से अपेक्षाकृत अधिक होती है।	साधारणतया जन्म दर उर्वरता दर से अपेक्षाकृत कम होती है।
उपयोगिता	उर्वरता दरें लिंगानुपात की असमानता के प्रभाव को दूर करने तथा स्त्रियों की उर्वरता का अध्ययन करने के लिए ज्ञात की जाती है।	जन्म दर किसी स्थान पर जन्म लेने वाले कुल बच्चों की संख्या एवं जनसंख्या वृद्धि के अध्ययन के लिए ज्ञात की जाती है।
समय	उर्वरता दर की एक माप कुल उर्वरता दर स्त्रियों की संपूर्ण प्रजनन अवधि 15-49 वर्ष से संबंधित होती है।	जन्म दर साधारणतया एक निश्चित समय, जो होता है, से संबंधित होती है।

8.5 उर्वरता या प्रजननता दरें

किसी जनसंख्या की उर्वरता की माप प्रारंभ से ही जनांकिकी अध्ययन का मुख्य केंद्र रही है। उर्वरता मापन में निम्नलिखित तथ्य महत्वपूर्ण है:

(i) जन्म संबंधी घटनाओं को तत्कालीन समग्र जनसंख्या के अनुपात में देखा जाता है।

(ii) जन्म संबंधी घटनाओं कुछ विशिष्ट आयु समूहों से ही संबंधित होती है। सामान्य रूप से 14-15 अथवा 49 वर्ष की आयु अवधि को प्रजनन योग्य आयु माना जाता है।

(iii) जन्म संबंधी घटनाओं को प्रजनन योग्य आयु की संपूर्ण स्त्री जनसंख्या के अनुपात में देखा जाता है।

(iv)उर्वरता प्रवृत्तियों को मापने की आधुनिकतम प्रवृत्ति में पुन: एक परिमार्जन के अनुरूप संपूर्ण जनसंख्या संबंधी घटनाओं में से केवल कन्या संतानों एवं प्रजनन योग्यता से संबंधित स्त्री जनसंख्या के परस्पर अनुपात को ज्ञात करने की है, अर्थात् एक माता अपने संपूर्ण प्रजनन काल को बिता लेने के बाद अपने पीछे कितनी भविष्यकलीन माताओं को छोड़ जाती है। उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए विभिन्न दरों की स्थापना की गयी है। उर्वरता मापन के लिए सामान्य रूप से दो प्रकार की दरें निकाली जाती है, जैसा कि नीचे चार्ट में दर्शाया गया है:

8.5.1 उर्वरता दरें

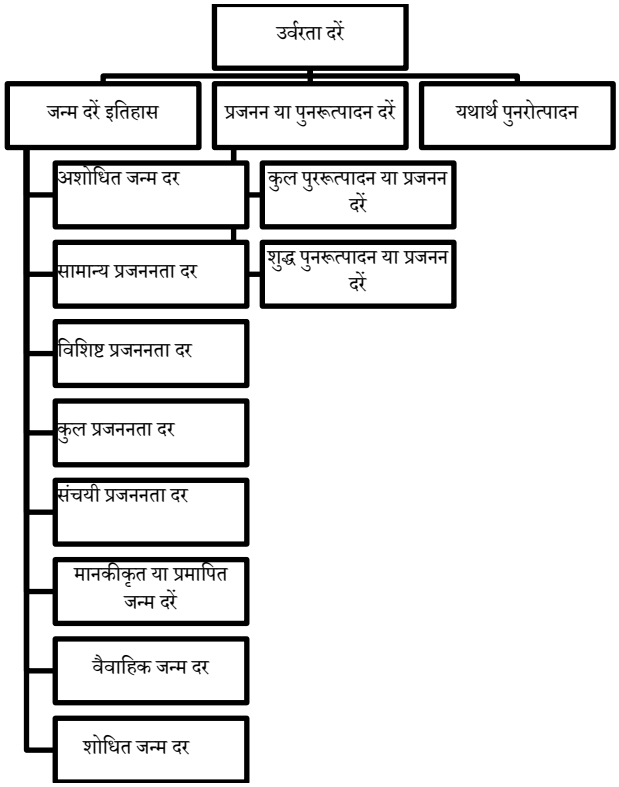

8.5.1.1 अशोधित जन्म दर

यह प्रजनन शीलता को मापने की सबसे सरल विधि है। किसी विशेष वर्ष में जन्में कुल बच्चों की संख्या तथा उस वर्ष की कल जनसंख्या के मध्य अनपात को व्यक्त कर प्रायः इसे प्रति हजार में व्यक्त किया जाता है। इसका सूत्र निम्नलिखित है:

$$CBR = \frac{\sum B}{\sum P} \times 1000$$

$$\text{अशोधित जन्म दर} = \frac{\text{किसी वर्ष विशेष में किसी दिये गये क्षेत्र में कुल जन्मे शिशुओं की संख्या}}{\text{उसी वर्ष विशेष में क्षेत्र विशेष की कुल संख्या}} \times 1000$$

जहां CBR = अशोधित जन्म दर

$\sum B$= किसी वर्ष विशेष में किसी दिये गये क्षेत्र में जीवित शिशुओं की कुल संख्या

$\sum B$= उस क्षेत्र की उसी वर्ष की कुल जनसंख्या (वर्ष के मध्य में)

उदाहरण के लिए, यदि किसी शहर की जनसंख्या 20,000 है और जन्म संख्या 500 है तो,

$$\text{अशोधित जन्म दर} = \frac{500(\sum B)}{20{,}000(\sum P)} \times 1000 = 25$$

इसको अशोधित जन्मदर इसलिए कहा जाता है, क्योंकि इसकी गणना करते समय किसी भी समुदाय की जनसंख्या के गठन अर्थात् आयु और लिंग के अन्तरों को ध्यान में नही रखा जाता है। अतः गणना की दृष्टि से सरल होते हुए भी इसे प्रजनन शीलता का उचित माप नहीं समझा जाता। उर्वरता मापने की दृष्टि से इसमें अनेक दोष है:

(i) लिंग भेद का अभाव: जन्म दर की गणना करते समय कुल नवजात शिशुओं की संख्या का अनुपात कुल जनसंख्या पर निकाला जाता है, जिसमें पुरूष तथा स्त्रियों दोनों सम्मिलित होती है, जबकि प्रजनन-क्रिया केवल

स्त्रियों द्वारा की जाती है, अतः समस्त जनसंख्या के स्थान पर केवल उन्हीं स्त्रियों की संख्या को आधार माना जाना चाहिए, जो पुनरूत्पादन आयु वर्ग में आती हैं।

(ii) प्रजनन काल (15-49 वर्ष) को महत्व न देना: कुल जनसंख्या के आधार पर उर्वरता ज्ञात करना उचित नहीं है, क्योंकि समस्त जनसंख्या में प्रजननता नहीं होती है। बच्चों व वृद्धि व्यक्तियों में प्रजननता नहीं होती है। अत: उर्वरता दर के माप में केवल 15 से 49 वर्ष की स्त्रियों को ही सम्मिलित करना चाहिए।

(iii) अल्पकालीन: अशोधित जन्म दर की विशेष उपयोगिता केवल एक ही जनसंख्या अथवा समाज की अल्पकालीन दरें निकालने के लिए है। एक जनसंख्या की समय-समय पर क्या दरें है, इसे निकालने से जनसंख्या के गठन में अंतर नही आएगा, क्योंकि इस जनसंख्या में आयु संरचना, स्त्री-पुरूष अनुपात, विवाहित स्तर इत्यादि में कोई अंतर नहीं होता। किंतु उसी जनसंख्या में भी ये समस्त बातें दीर्घकाल में बदल जाती है। अतः यह केवल अल्पकालीन अध्ययन के लिए उपयुक्त है। दीर्धकाल में यह अधिक उपयोगी सिद्ध नहीं होता।

(iv) स्थिर अनुपात: अशोधित दर तभी सत्य हो सकती हैं, जबकि प्रजनन आयु वर्ग की जनंसख्या का कुल जनसंख्या से अनुपात स्थिर रहे।

उधारण:

Age group Births to Mothers	Female Population	No. of Live
15-19	34000	680
20-24	36000	3960
25-29	40000	5800
30-34	30000	3000
35-39	24000	1680
40-44	20000	800
45-49	16000	80
Total	**200000**	**16000**

The total population of the city in 2,000 was 8, 00,000. With the help of the above information, determine the crude birth rate.

हल:

Crude Birth Rate or C.B.R.

$$\frac{\sum B}{\sum P} \times 1000$$

$$\frac{16000}{800000} \times 1000$$

=20 per thousand

8.5.1.2 सामान्य प्रजननता

सामान्य प्रजननता दर का अभिप्राय प्रजनन योग्य आयु अथवा गर्भधारण काल की प्रति हजार स्त्रियों द्वारा जन्मित कुल जीवित शिशुओं की संख्या से है। यह दर कुल ऐसी स्त्रियों की किसी एक वर्ष या अवधि में सामान्य उर्वरता के स्वरूप का दिग्दर्शन कराती है। उर्वरता दर सदा 1,000 में व्यक्त की जाती है। सूत्र के रूप में:

$$GFR = \frac{\sum B}{\sum Pf} \times 1000$$

$$\text{सामान्य प्रजननता दर} = \frac{\text{क्षेत्र विशेष में वर्ष भर में सजीव जन्म बच्चों की संख्या}}{15-49 \text{ आयु वर्ग अर्थात् प्रजनन योग्य आयु के बीच में स्त्रियों की कुल संख्या}} \times 1000$$

$$\sum B = \text{वर्ष मै जनमित जीवित शिशुओ की कुल संख्या}$$

$$\sum Pf = 15-49 \text{ आयु वर्ग अर्थात् प्रजनन योग्य आयु के बीच में स्त्रियों की कुल संख्या}$$

सामान्य प्रजनन दर की गणना करते समय इस बात की जानकारी करना महत्वपूर्ण है कि स्त्रियों क प्रजनन काल क्या माना जाय। सन्तानोत्पादन योग्य स्त्रियों का प्रजनन काल स्थान – स्थान पर अलग – अलग होता है। यह विधि प्रजनन दर ज्ञात करने के लिए उन स्त्रियों को भी शामिल कर लेती है जो इस आयु का भाग में अविवाहित, विधवा या बांझ रहती है तथा इस आयु वर्ग में होने के बाद भी प्रजननशीलता के प्रभावित नहीं कर पाती है। उदाहरण:

From the following data given below calculate G.F.R.

Age group Births to Mothers	**Female Population**	**No. of Live**
15-19	21000	420
20-24	24000	2400
25-29	27000	4050
30-34	30000	3000
35-39	24000	1680
40-44	18000	900
45-49	6000	60
Total	**150000**	**12510**

हल:

Calculation of GFR:

$$GFR = \frac{\sum B}{\sum P\,f} \times 1000$$

$$GFR = \frac{12510}{150000} \times 1000 = 83.4\ per\ thousand$$

8.5.1.3 आयु विशिष्ट प्रजननता दर

सामान्य उर्वरता दर का संबंध स्त्रियों के पूरे प्रजनन काल से होता है, जबकि प्रजनन शक्ति आयु वर्गो के अनुसार कम या अधिक होती है। उदाहरण के लिए, 15-19 आयु वर्ग में स्त्रियों की उर्वरता भारत में कम होती है, परंतु 20-24 आयु वर्ग में वह एकदम बढ़ जाती है। इसलिए सामान्य उर्वरता दर समुचित मापदंड प्रदान नहीं करती। विशिष्ट उर्वरता दर किसी आयु विशेष या आयु वर्ग विशेष की उर्वरता दर है। यह दर प्रजनन काल की स्त्रियों को भिन्न भिन्न आयु वर्गों में बांटकर निकाली जाती है। जैसे- 15-19, 20-24, 25-29, 30-34, 40-44, 45-49, आयु वर्ग

5-5 के वर्गान्तर पर बनाए जा सकते है और किसी वर्ग विशेष की उर्वरता दर ज्ञात की जा सकती है। यदि हमें 20-24 आयु के बीच उर्वरता दर ज्ञात करनी है, तो इस प्रकार निकालेंगे।

$$\text{आयु विशिष्ट उर्वरता दर} = \frac{(20-24) \text{ आय के बीच में स्त्रियों द्वारा जन्मित जीवित शिशुओं की कुल संख्या}}{(20-24) \text{ आयु वर्ग के बीच स्त्रियों की कुल संख्या}} \times 1000$$

सूत्र के रूप में $SFR = \frac{Bx}{Pfx} \times 1000$

Bx = विशिष्ट आयु वर्ग की स्त्रियों द्वारा जन्मित जीवित शिशुओं की संख्या

Pfx = विशिष्ट आयु वर्ग की स्त्रियों की संख्या

उदाहरण: On the basis of figures in Illustration 2, calculate Age-specific Fertility Rates.

हल:

Age group Births to Mothers	Female Population	No. of Live	Age Specific Fertility Rate
15-19	21000	420	(420/21000)*1000=20
20-24	24000	2400	(2420/24000)*1000=100
25-29	27000	4050	(4050/27000)*1000=150
30-34	30000	3000	(3000/3000)*1000=100
35-39	24000	1680	(1680/24000)*1000=70
40-44	18000	900	(900/18000)*1000=50
45-49	6000	60	(60/6000)*1000=10
Total	**150000**	**12510**	$\sum$ **SFR = 500**

$$SFR = \frac{Bx}{Pfx} \times 1000$$

$$= \frac{420}{21000} \times 1000 = 20 \; per \; thousand$$

इसी प्रकार सभी आयु वर्ग की विशिष्ट उर्वरता दर निकाली गयी है।

8.5.1.4 कुल प्रजननता दर

भिन्न भिन्न आयु वर्गों की विशेष उर्वरता दरों के कुल जोड़ को कुल उर्वरता दर कहते है। यह दर यह बतलाती है कि यदि प्रजनन योग्य आयु में किसी स्त्री की मृत्यु हो जाती है, तो इस काल में 1,000 स्त्रियों द्वारा जन्मित शिशुओ की कुल प्रत्याशित संख्या क्या होगी। यह दर निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित है: ।

1. प्रजनन योग्य आयु में किसी स्त्री की मृत्यु नही होती है, तथा

2. प्रजनन काल के विभिन्न आयु वर्गो में उर्वरता दर समान रहती है।

सूत्र के रूप में:

$$TFR = \sum \text{Specific Fertility Rate (SFR)} \times \text{i}$$

जहां i= आयु वर्ग का विस्तार (Interval of the Age Groups)

यदि आयु विशिष्ट उर्वरता दरें 5 वर्षों के वर्गातर से ज्ञात की गयी हों, तो SFR के जोड़ को 5 (वर्ग विस्तार i) से गुणा कर कुल उर्वरता दर ज्ञात की जाती है:

$$TFR = \sum \text{Specific Fertility Rate (SFR)} \times 5$$

कुल उर्वरता दर प्रति 1,000 सित्रयों के प्रजनन काल में प्रत्याशित कुल बच्चों की संख्या बताती हैं। यहां यह समझना आवश्यक है कि सामान्य उर्वरता दर केवल एक वर्ष से संबंधित होती है। जब उर्वरता काल को विभिन्न आयु वर्गों में विभाजित कर दिया जाता है तो किसी स्त्री के उस आयु वर्ग में प्रवेश करने के बाद वह उस आयु वर्ग में उतने वर्ष रहेगी, जो उस आयु वर्ग का विस्तार है। इस प्रकार उस आयु वर्ग में वह स्त्री उतने वर्ष बच्चे उत्पन्न करती रहेगी, जो उस आय वर्ग का विस्तार है। अतः संपर्ण आय वर्ग मं जन्मित शिशओं की संख्या प्राप्त करने के लिए आयु वर्ग की विशिष्ट उर्वरता दर को वर्ग विस्तार से गुणा करना आवश्यक होता है। उदाहरण के लिए, यदि हम 1980 वर्ष के लिए विशिष्ट उर्वरता दर का आगणन कर रहे हैं और विभिन्न आयु वर्ग 15-19, 20-24,25-29, 30-34, 35-39, 40-44, 45-49 है।

अब प्रथम आय वर्ग 15-19 को लीजिए। इसका वर्ग विस्तार 5 है। अतः इस (15-19) संपूर्ण आयु वर्ग में जन्मित बच्चों की संख्या ज्ञात करने के लिए (यह मानते हुए कि वह स्त्री जीवित रहेगी तथा उर्वरता दर में परिवर्तन नहीं होगा) SFR को 5 से गुणा करना आवश्यक हो जाता है।

उदाहरण : उदाहरण के आधार पर कुल प्रजनन दर की गणना कीजिए

हल :

$$TFR = 500 \times 5 = 2500 \text{ प्रति हजार}$$

अर्थात् प्रत्येक एक हजार स्त्रियों के पीछे उनके संपूर्ण उर्वरताकाल में 2,500 शिशुओं का जन्म अपेक्षित है। उपर्युक्त उदाहरण में आयु वर्गांतर समान है, इसलिए SFR के योग को आयु वर्गातर से गुणा किया गया है। यदि प्रश्न में स्त्रियों की कुल संख्या तथा जन्मित बच्चों की संख्या नहीं दी जाती है परंतु विशिष्ट उर्वरता दर दी रहती, तो प्रत्येक आयु वर्ग में स्त्रियों की कोई काल्पनिक संख्या मानकर सामान्य उर्वरता दर ज्ञात की जा सकती है।

उदाहरण :

निम्न समंको के आधार पर GFR, SFR तथा TFR की गणना कीजिए।

Age Group	**Female Population**	**No.of live Births**
15-19	4,000	400
20-29	12000	1800
30-36	16000	3200
37-44	6000	600
45-49	2000	40
Total	40000	6040

हल

Age Group	**Female Population**	**No. of live Births**	**Age Specific Fertility=$\frac{B}{Pf} \times 1000$**
15-19	4,000	400	$\frac{400}{4000} \times 1000 = 100$
20-29	12000	1800	$\frac{1800}{12000} \times 1000 = 150$

30-36	16000	3200	$\frac{3200}{16000} \times 1000 = 200$
37-44	6000	600	$\frac{600}{6000} \times 1000 = 100$
45-49	2000	40	$\frac{40}{2000} \times 1000 = 20$
Total	40000	6040	$\sum SFR = 570$

(i)

$$GFR = \frac{\sum B}{\sum P} \times 1000$$

$$GFR = \frac{6040}{40000} \times 1000 = 151 \text{ प्रति हजार}$$

$$SFR = \frac{Bx}{Pfx} \times 1000$$

$$= \frac{400}{4000} \times 1000 = 100 \text{ प्रति हजार}$$

उपर्युक्त सारणी में इसी प्रकार आयु वर्ग के लिए विशिष्ट उर्वरता दरें ज्ञात की गयी हैं।

(iii) **TFR = 4,300** प्रति हजार होगी। उपर्युक्त उदाहरण में आयु वर्गांतर अतः प्रत्येक आयु वर्ग की विशिष्ट उर्वरता दर को उसके वर्गांतर से अलग-अलग गुणा कर उनका योग प्राप्त किया जाएगा. अत: TFR की गणना निम्न प्रकार करेंगे:

आयु वर्ग	**SFR**	**i*(आयु वर्गांतर)***	**SFR X i**
15-19	*100*	*5*	500
20-29	150	10	1,500
30-36	200	7	1,400
37-44	100	8	800
45-49	20	5	100
$(\sum$ SFR $* i)$ = 4,300			

अतः TFR = 4,300 प्रति हजार होगी।

8.5.1.5 संचयी या योगात्मक प्रजननता दर

यह कुल उर्वरता दर से मिलती-जुलती उर्वरता दर है तथा इसकी गणना भी आयु विशिष्ट जन्म दर के आधार पर ही की जाती हैं। इसमें प्रत्येक आयु समूह की उर्वरता दर में पूर्ववर्ती आयु समूह की उर्वरता दर भी जोड़ ली जाती है। इस प्रकार आयु समूह के क्रम में हम जैसे-जैसे आगे अग्रसर होते जाते हैं, वैसे-वैसे प्रत्येक पूर्ववर्ती आयु समूह की भी आयु विशिष्ट जन्म दर को अनुवर्ती आयु-समूह की आयु विशिष्ट जन्म दर में जोड़ते चलते हैं, लेकिन स्वरूप संचयी योग का होता है।

8.5.1.6 मानकीकृत अथवा प्रमापित जन्म दर

उर्वरता दर साधारणतया स्त्रियों की आयु संरचना से प्रभावित होती है तथा विभिन्न आयु वर्गों की स्त्रियों में भिन्न-भिन्न होती है। प्रायः यह देखा गया है कि 20 वर्ष से कम आयु में उर्वरता कम होती है, 20 से 35 आयु वर्ग में अधिकतम होती है, तत्पश्चात् 35-49 आयु वर्ग में पनः घट जाती है। यदि दो देशों अथवा समाजों की जनसंख्या में

आय के इस वितरण में बहुत असमानता है, तो दोनों की जनसंख्या समान होने पर भी दोनों की उर्वरता में अंतर होगा। दो समाजों की स्त्रियों की जनसंख्या यदि 25-29 आयु वर्ग में अलग-अलग है, अन्य वर्गों में समान होने पर भी उनकी उर्वरता में अंतर होगा। न केवल आयु के वितरण में बल्कि शिक्षा का स्तर, व्यवसाय, जाति, धर्म आदि के अंतर भी उर्वरता को प्रभावित करते है। अतः दो समाजों की उर्वरता की तुलना करने से हम किसी निश्चित निर्णय पर नहीं पहुंच सकते। अतः शुद्ध उर्वरता के अंतर को ज्ञात करने के लिए दो समाजों की तुलना करने में अन्य घटकों को स्थिर रखा जाना आवश्यक है। प्रमापित उर्वरता दर किसी उद्देश्य को पूरा करता है। इस दर की गणना के लिए हम सर्वप्रथम एक मानक या जनसंख्या स्वीकार कर लेते हैं, तदनंतर जिन समाजों अथवा भिन्नताओं के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता होती है, उनकी जनसंख्याओं को प्रामाणिक संख्या के आधार पर विभिन्न आयु–समूहों में विभाजित कर लेते हैं। इन आयु-समूहों की आयु ।

। विशिष्ट जन्म दर के अनुसार हम इनसे संबंधित संतानों की संख्या मालम कर लेते हैं। ऐसा करने के लिए आयु विशिष्ट जन्म दर को संबंधित आयु समूह की मानक या प्रामाणिक जनसंख्या के आधीन, संपूर्ण जनसंख्या से गुणा करके एक हजार से भाग दे देते हैं। इस प्रकार प्राप्त विभिन्न आयु वर्गों से संबंधित कुल जन्म संबंधी घटनाओं का योग कर लिया जाता है। इस योग को प्रमापित जनसंख्या से भाग देकर एक हजार से गुणा कर दिया जाता है। इस प्रकार प्रति हजार प्रमापित जनसंख्या ज्ञात हो जाती है। इसकी गणना निम्न सूत्र के अनुसार की जाती है:

$$\text{मा. ज. द} = \frac{\text{आयु विशिष्ट जन्म दर के आधार पर जन्मे कुल बच्चों की संख्या}}{10{,}00{,}000 \text{ पर मानी हुई मानक जनसंख्या}} \times 1000$$

प्रत्याशित जन्मों का योग

प्रमाणिक प्रजनन दर =.....X 1,000

जनसंख्या प्रमाणिक विवरण

कुल प्रजनन दर भी एक प्रकार से प्रमाणिक प्रजनन दरें ही होती हैं, क्योंकि उनकी गणना 1,000 स्त्रियों के प्रत्येक आयु वर्ग पर की जाती है तथा कुल प्रजनन दरों में स्त्रियों की आयु संरचना एक सी होती है। इस दर को निम्न तालिका के आधार पर सरलता से समझा जा सकता है:

उदाहरण: प्रमाणीकृत जन्म दर,

माताओ के आयु समूह	**प्रामाणिक जनसंख्या (दस लाख)में स्त्री संख्या**	**आयु विशिस्ट जन्म दर**	**कैलिफोर्निया गणना किये गए जन्मो की संख्या**	**आयु विशिष्ट जन्म दर**	**न्युयोर्क गणना किये गए जन्मो की सन संख्या**
15-19	33,893	102.8	3,484	56.5	1,915
20-24	33,787	267.3	9,031	225.7	7,626

25-29	33,655	189.1	6,364	195.3	6,573
30-34	33,477	103.4	3,462	113.6	3,803
35-39	33,225	48.3	1,605	54.4	1,807
40-44	32,857	13.0	426	13.1	430
45-49	32,306	0.7	23	0.6	19
			24,396		**22,173**

प्रति हजार जनसंख्या

$$\text{प्रमाणीकत जन्म दर } = \frac{24396}{10,00,000} \times 1000 = 24.4$$

उपर्युक्त सारणी में आयु संरचना के आधार पर कैलिफोर्निया एवं न्यूर्याक की उर्वरता प्रवृत्तियों की तुलना के लिए प्रमापित जन्म दरों की गणना की गयी है। दस लाख की प्रमापित जनसंख्या मानकर इसके विभिन्न आयु समूहों की स्त्री जनसंख्या की गणना की गयी है तथा संबंधित आयु समूह की आयु विशिष्ट दरों के आधार पर इनसे संतानों की संख्या ज्ञात की गयी है। संतानों की इस संख्या को मानक या प्रामाणिक जनसंख्या से भाग देकर प्रति हजार प्रमापीकृत जन्म दरें प्राप्त की गयी है।

8.5.1.7 वैवाहिक जन्म दर

वैवाहिक जन्म दर किसी जनसंख्या में एक वर्ष की अवधि में वैधानिक रूप

प से जन

न लेने वाली संतानों का उस जनसंख्या की प्रजनन काल आयु से संबंधित संपूर्ण विवाहित स्त्रियों के साथ स्थापित प्रति हजार अनुपात है। सूत्र के रूप में:

$$\text{वै. ज. द.} = \frac{\text{एक वर्ष में उत्पन्न वैध संतानों की कुल संख्या}}{\text{जनन योग्य आयु की विवाहित स्त्रियों की कुल संख्या}} \times 1000$$

इस प्रकार जन्म दर की गणना के लिए किसी निश्चित जनसंख्या में एक वर्ष की अवधि में वैधानिक जन्म संबंधी घटनाओं को उस जनसंख्या की प्रजनन योग्य विवाहिता स्त्रियों की संख्या से भाग देकर एक हजार से गुणा कर दिया जाता है। वैवाहिक जन्म दर वैधानिक एवं अवैधानिक प्रजनन प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालती है।

8.5.1.8 संशोधित जन्म दर

जब हम अशोधित जन्म दर की गणना करने लगते है तो कुछ ऐसे जन्मों को उसमें सम्मिलित नहीं कर पाते हैं जिनकी सूचना का पंजीकरण नही होता है। प्रायः ग्रामीण क्षेत्रों मे लोंग जन्में बच्चों का पंजीयन नहीं कराते हैं। अतः प्रजनन सम्बन्धी आंकड़ों का सही - सही ज्ञान नही हो पाता है। ऐसी दशा में सही जन्म दर की संख्या में जोड़ दिया जाता है। यह अनुमानित संख्या सम्पूर्ण पंजीकृत संख्या का एक छोटा हिस्सा हो सकती है। संशोधित जन्म दर सदैव अशोधित जन्म दर से अधिक होती है।

Corrected Birth Rate = [(B+b)/P]*100

संशोधित जन्म दर (Corrected Birt rate)

जहाँ B=वर्ष विशेष में पजीकृत जन्मों की संख्या

b=वर्ष विशेष में अपजीकृत जन्मों की संख्या

P=वर्ष विशेष की सम्पूर्ण जनसंख्या

K=स्थिरांक 1000 को दर्शाता है।

8.5.2 प्रजनन या पुनरूत्पादन दरें

8.5.2.1 कुल पुररूत्पादन या प्रजनन दर

जनसंख्या वृद्धि की उचित माप के लिए जनसंख्या के आयु-लिंग की संरचना के बारे में जानकारी प्राप्त करना आवश्यक होता है। चूकि हम जनसख्या वृद्धि की माप करना चाहते हैं अतः इसके लिए यह उचित होगा कि हम स्त्री जन्म अर्थात् कन्याओं के जन्म पर ही विचार करें क्योंकि आज की नवजात कन्याएं ही कल की माताएं होती है अतः जनसंख्या वृद्धि सही अर्थों में कन्याओं की संख्या पर ही निर्भर करती है। यही कारण है कि जनसंख्या वृद्धि की माप के लिए सकल पुनरूत्पादन दर की गणना की जाती है। "सकल प्रजनन दर 15-49 वर्ष आयु वर्ग वाली स्त्रियों की केवल कन्या जन्म पर आधारित आयु विशिष्ट प्रजनन दरों का योग है।" हम कन्याओं के जन्म पर आधारित आयु-विशिष्ट प्रजनन दरों को इस प्रकार लिख सकते

$$\mathrm{F1} = \frac{\mathrm{FB}}{\mathrm{FP}} \times 1000$$

जहां, FB, = किसी समुदार विशेष की आयु – X की स्त्रियों द्वारा किसी दिए गए समय में जन्म दी गयी कन्याओं की संख्या।

FP, = दिए गए समुदाय की समय विशेष पर आयु – X की स्त्रियों की कुल संख्या।

F1 = आयु - x पर स्त्री जन्म दर । यदि पूरे पुनरूत्पादन काल के समस्त आयु-वर्ग की इन दरों का योग कर लिया जाय तो जनसंख्या वृद्धि की माप की जो दर प्राप्त होगी वह सकल पुनरूत्पादन दर कही जाती है। सूत्रानुसार,

$$GRR = \sum_{W1}^{W2} F1$$

(W1, तथा W2, स्त्रियों के पुनरूत्पादन काल की क्रमशः निम्नतम एवं उच्चतम आयु सीमा है। समान्यतया w, -15 वर्ष तथा w, -49 वर्ष होती है।)

इस तरह, सकल प्रजनन दर इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि प्रत्येक आयु वर्ग की स्त्रियों आयु वर्ग की स्त्रियों द्वारा औसत रूप से कितनी कन्याओं को जन्म दिया जाएगा। अर्थात् किस दर पर माताएं, कन्याओं तथा पुरानी पीढ़ी, नयी पीढ़ी द्वारा प्रतिस्थापित की जाएंगी बशर्ते यदि यह मान लिया जाए कि सभी स्त्रियां अपनी शिशु-जनन आयु (अर्थात 49 वर्ष) तक जीवित रहती हैं, परदेशगमन नहीं करतीं तथा अपनी यह चालू प्रजनन दर F1 बनाए रखती हैं। यदि आयु-विशिष्ट प्रजनन दर 5 वर्षीय आयु वर्गो के लिए है तब इसे इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है:

$$\mathrm{F1} = \frac{\mathrm{FB}}{\mathrm{FP}} \times 1000$$

F1 = FB

F.P.

GRR का मूल्य होगाः

GRR = 5 x2F1

यहां, सभी पांच वर्षीय आयु वर्गो की स्त्री प्रजनन दर का योग किया गया है। GRR को TFR की सहायता से भी ज्ञात किया जा सकता है। सूत्रानुसार, GRR = TFR x sex – ratio या GRR = कुल प्रजनन दर x लिंग

अनुपात यदि किसी जनसंख्या में GRR का मूल्य 1 है तो इसका अर्थ यह होता है कि सम्बन्धित लिंग (अर्थात स्त्री जनसंख्या) अपने आपको पूरी तरह से प्रतिस्थापित कर रहा है और जनसंख्या स्थिर है। यदि GRR >1 तो इसका अर्थ है भविष्य में जनसंख्या बढ़ेगी तथा यदि GRR < 1 तो जनसंख्या में कमी होगी क्योंकि भविष्य में माताओं की संख्या में निरन्तर कमी होती जायेगी।

8.5.2.2 शुद्ध पुररूत्पादन या प्रजनन दर

यदि हम GRR पर ध्यान दे तो उसमें एक महत्वपूर्ण कमी यह दृष्टिगोचर होती है कि इसमें चालू प्रजननशीलता पर तो ध्यान दिया जाता है। परन्तु चालू मृत्युक्रम को नजरन्दाज कर दिया जात है अर्थात GRR में इस दोषपूर्ण मान्यता को स्वीकार कर लिया जाता है कि शिशु जनन की उच्चतम सीमा पर पहुंचने तक किसी स्त्री की मृत्यु नहीं होती है। जबकि हो सकता है कि कुछ कन्याएं अपना दाम्पत्य जीवन प्रारम्भ करने के पूर्व अर्थात 15 वर्ष की आयु पूरी होने से पूर्व ही मर जाती हों तथा कुल 15 तथा 16 वर्ष के बीच में मर जाती हों। इसी प्रकार कुछ अन्य स्त्रियों की मृत्यु पुनरूत्पादन काल के मध्य हो सकती हैं। अतः प्रजननशीलता की सही दर ज्ञात करने के लिए मरण तत्व का समायोजन करना आवश्यक होता है। GRR की इसी कमी को दूर करने के लिए हम NRR का अध्ययन करते हैं। इस तरह, "शुद्ध पुररूत्पादन दर से आशय चालू प्रजनन दर के आधार पर और मरण दरों के समायोजन के पश्चात्, 1000 नवजात कन्याओं द्वारा अपने सम्पूर्ण प्रजनन काल में उत्पन्न की जाने वाली कन्याओं की संख्या से है।" यह दर इस तथ्य की जानकारी देती है कि किस हद तक माताएं उन कन्याओं को जन्म देती हैं जो स्वयं उन्हें माताओं को प्रतिस्थापित करने के लिए पूरे प्रजनन काल तक जीवित बनी रहती हैं। NRR की गणना सामान्यतया निम्न सूत्र की सहायता से की जाती है:

NRR -LFI.F.P. जहां 2 Fl, - GRR तथा F.P. = F = स्त्रियों का जीवित-अनुपात (1, उन व्यक्तियों की संख्या है जो ठीक आयु x तक जीवित रहते हैं तथा 1, कुल जन्मों की संख्या है। स्पष्टतया NRR= (GRR) X (Survival ratio) इस तरह NRR एक काल्पनिक संख्या है जो यह प्रदर्शित करती है कि किसी समूह की स्त्रियों के सम्पूर्ण प्रजनन काल में कुल कितनी कन्याओं का जन्म होता है यदि प्रजनन काल के दौरान उत्पत्ति एवं मृत्युक्रम को ध्यान में रखा जाय। यहां यह बात उल्लेखनीय है कि NRR का मूल्य GRR से अधिक नहीं हो सकता अर्थात GRR वह ऊपरही सीमा है जिससे अधिक NRR नहीं हो सकता क्योंकि मृत्यु होने से कुल जन्मी स्त्रियों की संख्या में कमी आ जाती है। यदि NRR का मूल्य एक के बराबर है अर्थात् NRR = 1 तो यह कहा जा सकता है कि वर्तमान उत्पत्ति क्रम एवं मृत्युक्रम इस प्रकार है कि नयी जन्मी कन्याएं भविष्य में अपने आपको पूर्णतया प्रतिस्थापित कर लेंगी अर्थात् वर्तमान पीढ़ी अगली नयी पीढी के बराबर होगी। ऐसी स्थिति में जनसंख्या में स्थिर रहने की प्रवृत्ति होती है। NRR>1 की दशा में जनसंख्या में वृद्धि की प्रवृत्ति तथा NRR < 1 की दशा में जनसंख्या में कमी की प्रवृत्ति होती है। क्योंकि NRR > 1 की स्थिति में अगली पीढी में स्त्री जनसंख्या का प्रतिस्थापन वर्तमान स्त्री जनसंख्या से अधिक होगा तथा NRR < 1 की स्थिति में स्त्री जनसंख्या का प्रतिस्थापन, वर्तमान स्त्री जनसंख्या से कम होगा।

8.5.3 यथार्थ पुनरोत्पादन इतिहास

इस विधि के अंतर्गत स्त्रियों के एक समूह में वास्तविक रूप से जन्म लिये हुए शिशुओं की संख्या का आगणन किया जाता है। यह विधि अत्यन्त सरल और स्पष्ट है।

इस विधि मे आगणन की अवधि (14-49) 35 वर्ष की होती है। अंतिम आंकड़ों को एक औसत के रूप में दर्शाया जाता है, अर्थात् प्रति परिवार में जन्म लिये हुए औसत शिशुओं की संख्या, जिसे परिवार का औसत आकार कहते हैं। इसमें किसी प्रकार के कृत्रिम सहगण (Artificial Cohort) के निर्माण की कोई आवश्यकता नहीं होती है, बल्कि किसी यथार्थ सहगण के अनुभवों का अवलोकन किया जाता है; अर्थात किसी स्त्री समूह द्वारा उनके संपूर्ण

उर्वरता योग्य आयु में किए गये पुनरोत्पादन को मापा जाता है। इस विधि में निम्नलिखित स्त्रोतों से उर्वरता को मापने के लिए समंक प्राप्त किए जाते है:

1. व्यक्तिगत स्त्रियों की संपूर्ण प्रजनन योग्य आयु में जन्मित कुल शिशुओं की संख्या पंजीयन के लेखे से यथार्थ पुनरोत्पादन की संगणना करना।

2. वार्षिक आंकड़ों के आधार पर क्रमानुसार तिथियों में परंपरागत आयु विशिष्ट जन्म दरों की गणना करना। यदि कम से कम 30 से 35 वर्ष की अवधि के जन्म दर उपलब्ध हों, तो साधारण पंजीयन एवं जनगणना के आधार पर इसकी गणना की जाती है।

3. किसी विशेष सर्वेक्षण द्वारा प्रत्येक स्त्रियों के भूतकाल में जन्मित शिशुओं की संख्या के विषय में जानकारी प्राप्त करके पुनरोत्पादन इतिहास की संगणना करना। इस विधि में सबसे बड़ी कठिनाई यह हैं कि इसमें 35 वर्षों के लिए जन्म दर से संबंधित आंकड़ों का लेखा रखना पड़ता है, जो साधारणतः उपलब्ध नहीं होता है। जन्मांतर एवं जन्मक्रम दो जन्मों के बीच की समयावधि को जन्मांतरण कहा जाता है। सामान्यतया जितना ही अधिक जन्मांतर होता है, उतनी ही कम उर्वरता दर होती है। जन्मांतर का उर्वरता दर पर प्रभाव मालूम करने के लिए जन्म क्रम संबंधी एकत्र किए जाते है। नीचे दिए गये तरीकों से किसी स्थान विशेष में एक वर्ष में होने वाले जन्मों को माता की आयु एवं जन्म क्रम में वर्गीकृत किया जा सकता है: यदि आंकड़े उपर्युक्त सारणी के अनुसार उपलब्ध हों, तो औसत जन्म क्रम (Average Parity) एवं 'उच्च क्रम के जन्मों का अनुपात' मालूम किया जा सकता है। यदि शादीशुदा महिलाओं की आयु एवं जन्मों की संख्या के अनुसार वर्गीकरण प्राप्त हो, तो औसत जन्म क्रम सरलता से मालूम किया जा सकता है। जो महिलाएं सन्तानोत्पादन योग्य सीमा पार कर चुकी हैं, उनकी उर्वरता की माप के लिए औसत जन्म क्रम बहुत उपयुक्त दर हैं। यह एक ऐसी सूची है जिससे महिलाओं की आपस में तुलना करने के लिए पैरिटी प्रोग्रेसन रेशिओ मालूम किया जाता है, इस जनसंख्या में विभिन्न आयु वर्गो के व्यक्तियों अनुपात अपरिवर्तनीय रहता है'; अर्थात् जनसंख्या का आयु संबंधी वर्गीकरण प्रारंभिक आयु संबंधी वर्गीकरण से प्रभावित नहीं होता है और एक सा ही बना रहता है। यह आयु संबंधी वर्गीकरण केवल वर्तमान उर्वरता एवं मृत्यु दर से प्रभावित होता है।

Y1 स्थायी जनसंख्या

स्थिर जनसंख्या

समयावधि

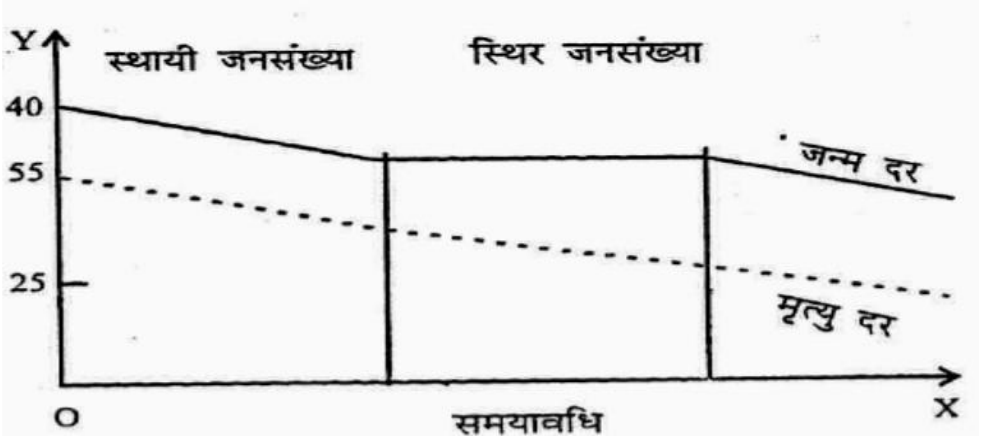

यदि किसी जनसंख्या में आयु संबंधी वर्गीकरण का अनुपात अपरिवर्तनीय हो और वृद्धि दर शून्य हो, तो ऐसी

जनसंख्या को स्थिर जनसंख्या कहा जाता है। जीवनसारणी में Lx का तात्पर्य स्थिर जनसंख्या से है। यदि किसी जनसंख्या में कुछ लंबे समय तक आयु विशिष्ट उर्वरता दर अपरिवर्तनीय रहे
और आयु विशिष्ट मृत्यु दर में बहुत मामूली परिवर्तन होते रहें, तो आयु वर्गीकरण लगभग एक रहेगा। इस वर्गीकरण को अर्द्ध-वर्गीकरण (Quasi Age Distribution) कहते है तथा जनसंख्या को अर्द्धस्थायी जनसंख्या (Quasi stable Population) कहते है। निम्नांकित चित्र से इस प्रकार की जनसंख्या में उर्वरता दर का महत्व स्पष्ट हो जाता है:

8.6 वार्षिक घातांक वृद्धि दर (Annual Exponential Growth Rate)

वार्षिक घातांक वृद्धि दर को संदर्भित समयावधियों के बीच यौगिक गणना दो जनसंख्या में होने वाली सतत वृद्धि को प्रदिर्शित करता है। इसकी गणना दो जनगणना वर्षों के बीच जनसंख्या में होने वाली औसत वार्षिक वृद्धि दर को ज्ञात करने के लिए की जाती है।

$$r = \frac{\ln(P2011/2001)}{10}$$

r = जहाँ वार्षिक धातांक वृद्धि दर

In = प्राकृतिक लधु गणक

P2011 = वर्ष 2011 की जनसंख्या

P2001 = वर्ष 2001 की जनसंख्या

8.7 अभ्यास प्रश्न

1. from the following information find out (i) CBR (ii) GFR (iii) TFR.

आयु वर्ग	Female Population (in thousands)	No. of live Births
15-19	17	340
20-24	18	1.980
25-29	20	2.900
30-34	15	1500
35-39	12	840
40-44	10	100
45-49	8	40
Totals	**100**	**8,000**

Total populations are 4, 00,000

हल:

आयु वर्ग	Female Population (in thousands)	No. of live Births	SFR
15-19	17	340	340/17000 x 1000 = 20

20-24	18	1.980	1980/18000 x 1000 = 110
25-29	20	2.900	2900/20000 x 1000 = 145
30-34	15	1500	1500/15000 x 1000 = 100
35-39	12	840	840/12000 x 1000 = 70
40-44	10	100	400/10000 x 1000=40
45-49	8	40	40/8000 x 1000 = 5
Totals	**100**	**8,000**	**490**

(i) $\text{CBR} = \frac{\text{Total Live Birth}}{\text{Total Population}} \times 1{,}000 = \frac{8{,}000}{4{,}00{,}000} \times 1{,}000 = 20$ प्रतिहजार

(ii) $\text{GFR} = \frac{\Sigma Bx}{\Sigma Pfx} \times 1{,}000 = \frac{8{,}000}{1{,}00{,}000} \times 1{,}000 = 80$ प्रतिहजार

TFR = ΣSFR x i = 490 x 5 = 2,450 प्रतिहजार

2. Calculate G.F.R., T.F.R. and G.R.R. from the following information. You may assume female births at 600 for the calculation of G.R.R.

आयु वर्ग	स्त्रियों संख्या (000)	जवित जन्म लेने वाले शिशुओं की संख्या	S.F.R. %
15-19	20	600	30.0
20-24	18	1200	66.7
25-29	14	800	57.1
30-45	8	96	12.0
TOTAL	**60**	**2696**	**165.8**

$\text{GFR} = \frac{\Sigma Bx}{\Sigma Pf} \times 1{,}000 = \text{or} \frac{2{,}696}{60{,}000} \times 1{,}000 = 44.93\%$

T.F.R. = Σ SFR x i

= Σ [(30 x 5) + (66.7 x 5) + (57.1 x 5) + (12 + 15)]

= 150 + 333.5 + 285.5 + 180 = 949.0%

T.F.R. Per woman = 5 x Σ SFR ÷ 1,000 = 949 ÷ 1,000 = 0.95

$$\text{G.R.R.} = \frac{\text{No. of Female Births}}{\text{No. of Births}} \times \text{Total fertility rate}$$

$$= \frac{1,600}{2,696} \times 0.95 = 0.564$$

3. Compute the General Specific and Total Fertility Rate from the following data:

आयु वर्ग	स्त्रियों की संख्या	NO. of live birth
15-19	25000	800
20-24	20000	2400
25-29	18000	2000
30-34	15000	1500
35-39	12000	500
40-44	6000	120
45-49	4000	10
TOTAL	**100000**	**7330**

हल : कुल स्त्री जनसंख्या (15-49 वर्ष) = 1,00,000 कुल बच्चों की संख्या

(1) सामान्य उर्वरता-दर (G.F.R.)= $\frac{7,330}{1,00,000} \times 1,000 = 73.30\%$

(2) आयु वर्ग विशेष की उर्वरता-दर (S.F.R.) = $\frac{Bx}{Pfx} \times 1,000\%$

सूत्र में मूल्य प्रतिस्थापित करने पर:

15-19 आयु वर्ग की उर्वरता दर = $\frac{800}{25,000} \times 1,000 = 32$

20-24 आयु वर्ग की उर्वरता दर = $\frac{2,400}{20,000} \times 1,000 = 120$

25-29 आयु वर्ग की उर्वरता दर = $\frac{2,000}{18,000} \times 1,000 = 111.1$

30-34 आयु वर्ग की उर्वरता दर = $\frac{1,500}{15,000} \times 1,000 = 100$

35-39 आयु वर्ग की उर्वरता दर = $\frac{500}{12,000} \times 1,000 = 41.7$

40-44 आयु वर्ग की उर्वरता दर = $\frac{120}{6,000} \times 1,000 = 20$

45-49 आयु वर्ग की उर्वरता दर = $\frac{10}{4,000} \times 1,000 = 25$

(3) कुल उर्वरता दर (T.F.R.)
(32+120+111.1+100+41.7+20+2.5) x 5 =427.3 x 5 =2136.5%

(4) Compute the crude birth rate, general fertility rate, specific fertility rate and total fertility rate from the following data:

Age group	**15-19**	**20-24**	**25-29**	**30-34**	**35-39**	**40-44**	**45-49**	
No. of women (000)	: 25	20	18	15	12	6	4	= 100
No. of live Births .	800	2,400	2,000	1,400	480	110	10 -	=7,200

हल :

C.B.R. = $\frac{\Sigma B}{\Sigma P} \times 100$ or $\frac{7,200}{4,00,000} \times 1,000 = 18\%$

G.F.R. = $\frac{\Sigma B}{\Sigma Pf} \times 100$ or $\frac{7,200}{1,00,000} \times 1,000 = 72\%$

आय विशिष्ट उर्वरता (S.F.R.) का परिगणन

आयु वर्ग (वष)।	**स्त्री जनसंख्या**	**जनसंख्या**	**आयु विशिष्ट उर्वरता दर**
15-19	25,000	800	800:25,000x 1,000 = 32.0
20-24	20,000	2,400	24,00:20,000 x 1,000 = 120.0
25-29	18,000	2,000	2,000:18,000 x 1,000 = 111.1
30-34	15,000	1,400	1,400:15,000 x 1,000 = 93.3
35-39	12,000	480	480:12,000x 1,000 = 40.9

40-44	6,000	110	1106,000 x 1,000 = 18.3
45-49	4,000	10	10:4,000 x 1,000 = 2.5
	100000	**7200**	**417.2**

T.F.R. = ΣSFR x i = 417.2 x 5 = 2086.0%

T.F.R. per women = 5 x Σ S.F.R. ÷ 1000

= 2,086 ÷ 1,000 = 2.086

आयु वर्ग	प्रति हजार स्त्रियां	पैदा हुए शिशुओं की संख्या
15-19	55	20
20-24	70	180
25-29	65	200
30-34	64	170
35-39	60	120
40-44	58	60
45-49	50	10

नीचे दिये गये आंकड़ों से: (अ) सामान्य उर्वरता दर (ब) विशिष्ट उर्वरता दर तथा (स) कुल उर्वरता दर मालूम कीजिए।

उर्वरता दर का आगणन

आयु वर्ग	प्रति हजार स्त्रियों की संख्या	पैदा हुए शिशुओं की संख्या हजार में	विशिष्ट उर्वरता दर
15-19	55	20	$\frac{20}{55}$ x 1,000 = 363.6
20-24	70	180	$\frac{180}{70}$ x 1,000 = 2571.4
25-29	65	200	$\frac{200}{65}$ x 1,000 = 3076.9
30-34	64	170	$\frac{170}{64}$ x 1,000 = 2656.3
35-39	60	120	$\frac{120}{60}$ x 1,000 = 2000.0
40-44	58	60	$\frac{60}{58}$ x 1,000 = 1034.5
45-49	50	10	$\frac{10}{50}$ x 1,000 = 200.0
	422	**760**	**11902.7**

सामान्य उर्वरता दर $(GFR) = \frac{\text{पैदा हुए शिशुओं की संख्या}}{15-49 \text{ आयु वर्ग में स्त्रियों की संख्या}}$ x 1,000

$= \frac{760}{422}$ x 1,000 = 1,800

(2) आयु विशिष्ट उर्वरता दर (SFR) = हल ऊपर सारणी के कालम चार में दिखाए गये है।

(3) कुल उर्वरता दर (TFR) = 11902.7 x 5 = 59513.5 प्रति हजार।

इसका अर्थ यह हआ कि प्रजनन काल अर्थात 15-49 वर्ष की आय में किसी स्त्री की मत्य न हों, तो 1,000 स्त्रियों द्वारा 59513 शिशुओं को जन्म दिए जाने की संभावना है। यदि प्रति स्त्री कुल उर्वरता दर ज्ञात करना हो तो कुल उर्वरता दर को 1,000 से भाग दे दिया जाता है। यहां पर प्रति स्त्री कुल उर्वरता दर = 59513.5 ÷ 1,000 = 59.5135.

(4) From the following table calculate G.F.R. and T.F.R. if the sex ratio is (M: F) is = 52:48. Also calculate G.R.R.

Age	Female Population in thousands	S.F.R. per thousand
15-19	88	120

20-24	86	2,400
25-29	83	3,000
30-34	82	2,000
35-39	78	1,000
40-44	76	500

हल : Calculation of G.F.R., T.F.R.and G.R.R.

Age group	**Female Population in thousands**	**S.F.R. per thousand**	**Total Number of Children Born**
15-19	88	120	120 x 88 = 10,560
20-24	86	2,400	2,400 x 86 = 2,06,400
25-29	83	3,000	3,000 x 83 = 2,49,000
30-34	82	2,000	2,000 x 82 = 1,64,000
35-39	78	1,000	1,000 x 78 = 78,000
40-44	76	500	500 x 76 = 38, 000
Total	493	$\sum SFR$ = 9,020	7,45,960

$$GFR=\frac{\text{Total number of Children born}}{\text{Total number of female}}$$

$$= \frac{7,45,960}{4,93,000} \text{ x } 1,000 = 1,513 \text{ per thousand}$$

$$\text{T.F.R} = \sum S.F.R. \text{ x i}$$

= 9,020 x 5 = 45,100 per thousand

$$\text{G.F.R.} = \frac{\text{TFR} \times \frac{\Sigma Bf}{\Sigma B}}{1,000}$$

$$= \frac{45,000 \times \frac{48}{100}}{1,000} = \frac{21,648}{1,000}$$

(5) The annual birth rate in a certain town is 30 per 1,000 females in the child bearing age (15-50). The of females within the child bearing age group is 60% of the total number of females and the sex composition of the population is 950 females per 1,000 males. The toal population in the town is estimated to be 10,000. Estimate the total number of children born in the town during the year.

Solution: •

कुल जनसंख्या= 10,000

तथा लिंग अनुपात =M : F = 1, 000 : 950 ..

कुल जनसंख्या $=10{,}000 \times \frac{950}{1{,}950}$

=4, 872 (लगभग)

प्रजनन उम्र वाली (15 से 50 वर्ष) स्त्रियों की संख्या कुल स्त्रियों का 60% है। अतः प्रजनन उम्र वाली स्त्रियों की संख्या

$4,872 \times \frac{60}{1{,}00} = 2{,}923$ स्त्रियां

जन्म दर = 30 बच्चे प्रति 1,000 प्रजनन उम्र वाली स्त्रियां

अतः 2,923 स्त्रियों के जन्में बच्चों की संख्या

$2{,}923 \times \frac{30}{1{,}000} = 88$ बच्चे (लगभग)

(6) The number of live births occurring in a city in a certain year is shown below. Classify according to age of mother, along with the female population in each quinquennial age group of the child bearing period.

Age-group years	Female Population in (000)	No. of live births in a year
15-19	16	400
20-24	15	1,700
25-29	14	2,100
30-34	13	1,430
35-39	12	960
40-44	11	330
45-49	9	36

The total population of the city was 3,00,000.

Solution:

Age-group years	Female Population in (000)	No. of live births in a year	S.F.R=[(3)/3]*1000
15-19	16	400	25

20-24	15	1,700	114
25-29	14	2,100	150
30-34	13	1,430	110
35-39	12	960	80
40-44	11	330	30
45-49	9	36	4
TOTAL	**90000**	**6966**	**513**

(i) Crude Birth Rate

$$C.B.R. = \frac{6,966}{3,00,000} \times 1,000 = 23.22$$

(ii) General Fertility Rate

$$G.F.R. = \frac{6,966}{90,000} \times 1,000 = 77.73$$

(iii) Specific Fertility Rate

$$S.F.R. = \frac{\text{Number of live Births}}{\text{Number of women (for a harticular age group)}}$$

Thus S.F.R. The age group 15-19 is 25 etc.

(iv) Total Fertility Rate

T.F.R. = 513 x 5 = 2565

T.F.R. per women will be $\frac{2,565}{1,000} = 2565$

8.8 शब्दावली

- प्रजननता: साधारणतः प्रजननता का अभिप्राय किसी स्त्री या उनके समूह के द्वारा किसी समयावधि में कुल सजीव जन्मे बच्चों की वास्तविक संख्या से है।
- उर्वरता: संतानोत्पादक औरतों में से जो औरतें विवाह करती है तथा जिनके विवाह के उपरांत बच्चे हो जाते है, उन्ही में उर्वरता होती है।

- स्वाभाविक प्रजननता : यह एक ऐसी उर्वरता है, जिसमें व्यक्ति अपने परिवार का आकार नियंत्रण करने के लिए सजग नहीं है।
- नियंत्रित प्रजननता : यह इस प्रकार की प्रजननता है जिसके अंतर्गत लोग परिवार नियोजन के आदर्श को स्वीकार करते हैं।
- बन्धाकरण : बन्धाकरण संतति नियमन का एक स्थायी उपाय है। पुरूषों मे बन्ध्याकरण को वैसेक्टोमी तथा स्त्रियों में बन्ध्याकरण को ट्यूबैक्टोमी कहा जाता है।
- अशोधित जन्म दर : यह प्रजनन शीलता को मापने की सबसे सरल विधि है। किसी विशेष वर्ष में जन्में कुल बच्चों की संख्या तथा उस वर्ष की कुल जनसंख्या के मध्य अनुपात को व्यक्त करता है। प्रायः इसे प्रति हजार में व्यक्त किया जाता है।
- सामान्य प्रजननता : सामान्य प्रजननता दर का अभिप्राय प्रजनन योग्य आयु अथवा गर्भधारण काल की प्रति हजार स्त्रियों द्वारा जन्मित कुल जीवित शिशुओं की संख्या से है। यह दर कुल ऐसी स्त्रियों की किसी एक वर्ष या अवधि में सामान्य उर्वरता के स्वरूप का दिग्दर्शन कराती है।
- कुल प्रजननता दर :भिन्न भिन्न आयु वर्गों की विशेष उर्वरता दरों के कुल जोड़ को कुल उर्वरता दर कहते है। यह दर यह बतलाती है कि यदि प्रजनन योग्य आयु में किसी स्त्री की मृत्यु हो जाती है, तो इस काल में 1,000 स्त्रियों द्वारा जन्मित शिशुओ की कुल प्रत्याशित संख्या क्या होगी।
- संचयी या योगात्मक प्रजननता दर :यह कुल उर्वरता दर से मिलती-जुलती उर्वरता दर है तथा इसकी गणना भी आयु विशिष्ट जन्म दर के आधार पर ही की जाती हैं। इसमें प्रत्येक आयु समूह की उर्वरता दर में पूर्ववर्ती आयु समूह की उर्वरता दर भी जोड़ ली जाती है।
- वैवाहिक जन् वाहिक जन्म दर किसी जनसंख्या में एक वर्ष की अवधि में वैधानिक रूप से जन्म लेने वाली संतानों का उस जनसंख्या की प्रजनन काल आयु से संबंधित संपूर्ण विवाहित स्त्रियों के साथ स्थापित प्रति हजार अनुपात है।
- संशोधित जन्म दर : जब हम अशोधित जन्म दर की गणना करने लगते है तो कछ ऐसे जन्मों को उसमें सम्मिलित नहीं कर पाते हैं जिनकी सचना का पंजीकरण नही होता है। प्रायः ग्रामीण क्षेत्रों मे लोंग जन्में बच्चों का पंजीयन नहीं कराते हैं। अतः प्रजनन सम्बन्धी आंकड़ों का सही – सही ज्ञान नही हो पाता है। ऐसी दशा में सही जन्म दर की संख्या में जोड़ दिया जाता है। यह अनुमानित संख्या सम्पूर्ण पंजीकृत संख्या का एक छोटा हिस्सा हो सकती है।

8.9 संदर्भ सहित ग्रन्थ

- सिन्हा, बी. सी. एंव पुष्पा सिन्हा (2011), "जनांकिकी के सिद्धान्त', मयूर पेपरबैक्स, नई दिल्ली।
- चौबे, पी. के. (2000), "भारत में जनसंख्या नीति', कनिष्ट प्रकाशन, नई दिल्ली।
- मिश्र, प्रकाश (2012), "जनांकिकी', साहित्य भवन पब्लिकेशन, दिल्ली।
- दत्त, रूद्र एवं के. पी. एम. सुन्दरम (2010), "भारतीय अर्थ व्यवस्था", एस. चन्द __एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।
- कुमार, वी. (2007): जनांकिकी, साहित्य भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.)
- लि., आगरा।

- सिन्हा एवं सिन्हा (2005) : जनसंख्या के सिद्धान्त, मयूर पेपरबैक्स, नोएडा।
- गुप्त, एस. एन (2009) : जनांकिकी के मूल तत्व, वृंदा पब्लिकेशन्स प्रा. लि.,
- दिल्ली।

8.10 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री

- Leibenstien Harvey: Economic Backwardness and Economic Growth, pp. 161-165.
- Clifford, W.B.: "Modern and Tranditional Value Orientations and Fertility Behaviour. A Social Dmographic study, Demography, 1 Feb., 1971, p. 38.
- Jaffe, A.P. & Azumi : The Birth Rate and Cottage Industry in Underdeveloped Countries, Economic Development andCultural & Change, 9, 1, 1960-61, Oct. 1960, p. 62.
- Ryder J.R.: Fertility a Hanser & Duncar (Ed), p. 423.
- Rele J.R.: Fertility Differentials in India, Millvank M.F.O. April, 1963, pp. 183-199.
- Ryder N.B., Fertility a Hanser and Duncar (Ed.) Ibid. pp. 411-12.
- Rele, J. R., Fertility Differentials in India, pp.91-92.
- James, W., The Effects of Altitude on Fertility in Andean countries Population Studies, July, 1966, p. 100-101.

8.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. उर्वरता से आप क्या समझते है? इसके मापने की विभिन्न दरों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।What do you understand by fertility? Describe in brief various rates of its measurements.

2. अन्तर कीजिए:

(i) उर्वरता एवं बहु उर्वरता

(ii) उर्वरता दरें एवं पुनरूत्पादन दरें

(iii) सामान्य उर्वरता दर एवं सकल पुनरूत्पादन दर

(iv) सकल पुनरूत्पादन–दर एवं शुद्ध पुनरूत्पादन दर

3. क्या आप इस विचार सहमत है कि जनसंख्या वृद्धि की दर का अनुमान लगाने के लिए उर्वरता-दरें उपयुक्त नहीं है?

4. उर्वरता को परिभाषित कीजिए। उर्वरता के प्रमुख निर्धारकों की व्याख्या कीजिए।

5. उर्वरता को प्रभावित करने वाले कौन से प्रमुख कारक है? भारत में यह कारक प्रजनन शक्ति को किस प्रकार ऊंचा बनाए रखते हैं?

6. अग्रलिखित आंकड़ों की सहायता से सामान्य उर्वरता दर, आयु विशिष्ट उर्वरता दरें तथा कुल उर्वरता दर ज्ञात कीजिए।

Age group	Female Population	No.of live Births
15-19	20,000	400
20-24	24,000	2.400
25-29	40,000	6,000
30-34	44,000	4,400
35-39	32,000	2,200
40-44	30,000	1,500
45-49	10.000	100

[Answer:
G.F.R. = 85.20 per thousand
S.F.R = 20,100, 150, 100, 70, 50 and 10 per thousand for respective age group.
T.F.R. = 2,500 per thousand]

7. From the following data, calculate the General Fertility Rate and the Total Fertility Rate.

Age Group	**Fertility Rate (Per 1000)**
15-19	30
20-24	240
25-29	300
30-34	210
35-39	180
40-44	60
45-49	30

[Answer: G.F.R. = 50 per thousand, T.F.R= 1750 per thousand]

8. The following table shows the number of women of child bearing ages and yearly births by quinquennial age group for a city (Rewa) in Madhya Pradesh.

Age group	Female Population in thousands	No.of live Births
15-19	16	400
20-24	15	1,710
25-29	14	2,100
30-34	13	1,430
35-39	12	960
40-44	11	330
45-49	9	36

Calculate the General Fertility Rate, Total Fertility Rate and Gross Reproduction Rate. You may assume that the ratio of male to female children is 13:12.

निम्नलिखित समंको से सामान्य उर्वरता दर तथा कुल उर्वरता दर ज्ञात कीजिए:

Age Group (years)	No. of Females	Specific Fertility Rate (per thousand)
15-19	1,200	20
20-24	1,250	200
25-29	1,150	210
30-34	1,100	160
35-39	1,000	150
40-44	980	60
45-49	950	5

[Answer: G.F.R. = 1186%, T.F.R. = 4,025 per thousand]

9. The age specific fertility rates (A.S.F.R.) and the female population in the reproductory age in a village together with the female population in the same age groups for the whole destrict are given above:

Age groups	A.S.F.R. per 1,000 in the village	Female Population in ('000) in the village	Female Population (in '000) in the district
15-19	61	16	2,136
20-24	285	26	2,304
25-29	322	21	1,920
30-34	260	18	1,621
35-39	125	11	1,305
40-44	51	10	906

Calculate the General Fertility Rate for the village. Also compute a standardized rate for the village using the district female population as a standard population.

10. From the following data calculate GFR and TFR.

Age Group	Female Population	Age Specific Fertility Rate (per 1,000)
15-19	15,000	100
20-29	35,000	200
30-36	20,000	150
37-44	25,000	50
45-49	5,000	20

[Answer: G.F.R. = 128.50 per thousand T.F.R. = 40.50 per thousand]

11. From the following information, calculate GFR and TFR.

Age Group	**SFR of Annual Fertility Rate (per 1,000)**
15-19	20
20-29	37
30-36	30
37-44	25
45-49	10

[Answer: G.F.R. = 26.57 per thousand, T.F.R. = 930 per thousand]

इकाई-9 मापन 2 :- कुल मृत्यु दर, शिशु मृत्यु दर, बाल मृत्यु दर, मातृत्व मृत्यु दर, जीवन-प्रत्याशा एवं अन्तर्सम्बन्ध

(Measurement-2 Total Mortality Rate, Infant Mortality Rate, Child Mortality Rate, Maternal Mortality Rate)

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 मृत्युक्रम: एक परिचय

9.3.1 मृत्युक्रम से आशय

9.3.2 मृत्युक्रम की विशेषताएँ

9.3.3 मृत्युक्रम को प्रभावित करने वाले तत्व

9.4 मृत्युक्रम का मापन

9.5 विभिन्न मृत्यु-दरें

9.5.1 कुल मृत्यु-दर

9.5.2 अशोधित मृत्यु-दर

9.5.3 आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर

9.5.4 शिशु मृत्यु-दर

9.5.5 बाल मृत्यु-दर

9.5.6 मातृत्व मृत्यु-दर

9.6 जीवन-प्रत्याशा

9.7 मृत्यु-दर एवं जीवन प्रत्याशा में अन्तर्सम्बन्ध

9.8 अभ्यास प्रश्न

9.9 सारांश

9.10 शब्दावली

9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

9.13 सहायक /उपयोगी पाठ्य सामग्री

9.14 निबन्धात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

जनांकिकी से सम्बन्धित यह नवी इकाई है। इससे पूर्व आपने प्रजननशीलता एवं उसके मापन की विभिन्न विधियों को पढ़ा होगा।

जनांकिकी के अन्तर्गत मृत्यु जीवन की एक प्रमुख घटना मानी जाती है जिससे जनसंख्या के आकार, गठन और वितरण में कमी आती है। प्रजनन दर की भांति मृत्यु-दर का भी जनांकिकीय विश्लेषण में महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि जनसंख्या वृद्धि प्रजनन दर एवं मृत्यु-दर दोनों पर ही समान रूप से निर्भर करती है। प्रस्तुत इकाई में मृत्यु-दर एवं इसके मापन से सम्बन्धित इन बिन्दुओं का विस्तार से विश्लेषण प्रस्तुत है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप विभिन्न जनांकिकीय मापक जैसे- कुल मृत्यु-दर, अशोधित मृत्यु-दर, आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर, शिशु मृत्यु-दर (नवजात शिशु मृत्यु-दर एवं नवजन्मोत्तर काल मृत्यु-दर), बाल मृत्यु-दर, मातृत्व मृत्यु-दर, जीवन–प्रत्याशा एवं मृत्यु-दर से इसके अन्तर्सम्बन्ध को समझ सकेंगें तथा इनकी सहायता से जनसंख्या का समग्र विश्लेषण कर सकेंगे।

9.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- ✓ बता सकेंगे कि मृत्युक्रम से क्या आशय है।
- ✓ स्पष्ट कर सकेंगे कि मृत्युक्रम का मापन कैसे किया जाता है।
- ✓ समझ सकेंगे कि जीवन–प्रत्याशा एवं मृत्यु दर में क्या अन्तर्सम्बन्ध है।
- ✓ बता सकेंगे कि जनसंख्या के विश्लेषण में यह दरें किस प्रकार महत्वपूर्ण हैं।

9.3 मृत्युक्रम: एक परिचय

9.3.1 मृत्युक्रम से आशय

जनांकिकी के अन्तर्गत मृत्यु जीवन की एक प्रमुख घटना मानी जाती है जिससे जनसंख्या के आकार, गठन और वितरण में कमी आती है। जनांकिकी में मृत्यु का सम्बन्ध व्यक्ति विशेष से न होकर व्यक्तियों के समूह से होता है, जिसे मृत्युक्रम कहते हैं। वास्तव में, मृत्यु बीमारी, शारीरिक शक्ति एवं सामान्य स्वास्थ्य स्तर में गिरावट, हिंसा, दुर्घटना आदि का परिणाम है। प्रजनन दर की भांति मृत्यु-दर का भी जनांकिकीय विश्लेषण में महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि जनसंख्या वृद्धि प्रजनन दर एवं मृत्यु-दर दोनों पर ही समान रूप से निर्भर करती है। मृत्युक्रम का प्रमुख उद्देश्य जनसंख्या के आकार में कमी करना जबकि प्रजननशीलता का उद्देश्य इस कमी की पूर्ति करना है। मृत्यु जीवन की समाप्ति की एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। यह व्यक्ति में निहित जैविकीय शक्ति की समाप्ति का सूचक है। जनसंख्याशास्त्री इसे एक रहस्य अथवा दैवी नियन्त्रण के रूप में न देखकर एक जनांकिकीय घटना के रूप में देखते हैं। आज के तीव्र तकनीकी परिवर्तन वाले वैज्ञानिक युग में मृत्यु-दर को कम करना जन्म-दर को कम करने से अधिक आसान है। परन्तु, मृत्यु-दर को कभी शून्य नहीं किया जा सकता है।

मृत्यु सम्बन्धी समंकों के पंजीकरण का प्रारम्भ निश्चित नहीं है। विभिन्न प्रारम्भिक अध्ययनों में इन समंकों के एकत्रीकरण का उद्देश्य धार्मिक एवं आर्थिक प्रतीत होता है।

मृत्यु सम्बन्धी समंको को आधुनिक रूप में एकत्र करने, वर्गीकरण करने एवं विश्लेषण करने का श्रेय इंग्लैण्ड के कैप्टन जॉन ग्राउण्ट (John Graunt : 1620-1674) को है। सन् 1662 में प्रकाशित इनकी प्रसिद्ध कृति 'Natural and Political Observations Mentioned in the Index and Made upon the Bills of

Mortality' में कुछ स्थानों की मृत्यु के आंकड़े एवं उनके कारणों का विश्लेषण था। इस सम्बन्ध में जॉन ग्राउण्ट द्वारा किये गये प्रयासों को जनांकिकी के विकास में मील का पत्थर माना जाता है। इसी कारण से इन्हें जनांकिकी का जनक कहा जाता है। जन्म-मृत्यु समंकों के आधार पर जीवन–तालिकाओं का निर्माण करने में एडमण्ड हैली, रिचर्ड प्राइस आदि का नाम भी प्रमुखता से लिया जाता है।

9.3.2 मृत्युक्रम की विशेषताएँ

मृत्युक्रम की विभिन्न विशेषताएँ हैं जैसे- (1) सामान्यतया मृत्युक्रम और मृत्यु का प्रयोग समानार्थक रूप में किया जाता है। (2) जनसंख्याशास्त्री इसे एक रहस्य अथवा दैवी नियन्त्रण न मानकर एक जनांकिकीय घटना के रूप में देखते हैं। (3) मृत्युक्रम का सम्बन्ध व्यक्ति विशेष से न होकर व्यक्तियों के समूह से होता है। (4) मृत्युक्रम जनसंख्या के आकार, गठन और वितरण में कमी लाती है। (5) उच्च मृत्यु-दर निम्न विकास का संकेतक है। (6) मृत्युक्रम में दीर्घकाल में स्थिर रहने की प्रवृत्ति पाई जाती है। (7) जनसंख्या वृद्धि की दृष्टि से भी मृत्युक्रम महत्वपूर्ण है। मृत्यु-दर में कमी के कारण भी देश में जनसंख्या बढ़ सकती है।

9.3.3 मृत्युक्रम को प्रभावित करने वाले तत्व

किसी समाज या देश में मृत्युक्रम को प्रभावित करने वाले विभिन्न तत्वों में प्रजननता का स्तर, आय-स्तर, जनस्वास्थ्य का स्तर, शिक्षा का स्तर, चिकित्सा सुविधाएं एवं उनका प्रयोग, पर्यावरण प्रदूषण की स्थिति, महामारियों का प्रभाव, सन्तुलित आहार उपलब्धता, नशीली एवं हानिकारक वस्तुओं का प्रयोग, कार्य की प्रकृति, आवास सुविधाएं, जनसंख्या की सघनता, प्राकृतिक प्रकोप आदि प्रमुख हैं।

9.4 मृत्युक्रम का मापन

मृत्यु-दरें दो या दो से अधिक देशों, क्षेत्रों अथवा समयों के बीच मृत्यु के दबाव का तुलनात्मक अध्ययन करती हैं। मृत्यु का जनसंख्या पर दबाव मापने के लिए दो प्रकार की माप होती हैं- प्रथम, जीवन तालिका एवं द्वितीय, मृत्युक्रम दरें। मृत्यु-दर का मापन जीवन तालिकओं के माध्यम से आसानी से किया जा सकता है, परन्तु सामान्यतया किसी भी देश में जीवन तालिकाओं का अभाव पाया जाता है। अतः मृत्यु-दर को मापने के लिए अन्य प्रचलित विधियों का सहारा लिया जाता है। मृत्यु सम्बन्धी आंकड़े सामान्यतया मृत्यु प्रमाण-पत्र जारी करने वाले कार्यालयों द्वारा एकत्रित किये जाते हैं जहां मृत्यु का पंजीकरण किया जाता है। सम्बन्धित कार्यालयों द्वारा एकत्रित किये गये मृत्यु समंकों के आधार पर ही विभिन्न प्रकार की मृत्यु दरों की गणना की जाती है।

9.5 विभिन्न मृत्यु-दरें

9.5.1 कुल मृत्यु-दर

कुल मृत्यु दर से आशय एक वर्ष में एक हजार जनसंख्या पर मृत्युओं की संख्या से है। इसे निकालने के लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है:

D T.D.R. = (D/P) x 1000

T.D.R. = कुल मृत्यु दर

D = किसी देश में किसी वर्ष विशेष में मृतकों की संख्या

P = उस वर्ष में देश की कुल जनसंख्या

उदाहरण के लिए, यदि किसी वर्ष विशेष में देश की कुल जनसंख्या 5 लाख है तथा इनमें से उस वर्ष में 25 हजार व्यक्तियों की मृत्यु होती है तो कुल मृत्यु दर,

(25000/500000) x 1000 = 50 प्रति हजार होगी।

एक देश की जनसंख्या को जन्म दर के साथ ही मृत्यु दर पर भी महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करती है। मृत्युदर के

अधिक होने की स्थिति में देश के लोग अधिक मृत्यु की क्षतिपूर्ति हेतु जन्म दर को बढ़ा देते हैं, जिससे जनसंख्या में वृद्धि हो जाती है। भारत में विकास प्रक्रिया के कारण मृत्यु दर में कमी आ रही है। 1911-20 की अवधि में यह 47.2 प्रति हजार थी। इसके बाद भारत में मृत्यु दर में निरन्तर गिरावट आयी है। 1941-50 में यह 27.4 थी जो वर्तमान में घटकर 6.4 प्रति हजार हो गयी। भारत में मत्य दर में कमी के प्रमख कारण हैं- शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार बीमारियों एवं महामारियों में कमी, अन्धविश्वास में कमी, जीवन स्तर का ऊँचा होना, मनोरंजन के साधनों का विस्तार, महिलाओं की स्थिति में सुधार होना आदि।

9.5.2 अशोधित मृत्यु-दर अशोधित मृत्यु-दर (Crude Death Rate) मृत्यु-दर की अत्यन्त सरल एवं सुविधाजनक माप है। मृत्यु को मापने की यह सर्वाधिक प्रचलित विधि है। इसकी गणना हेतु किसी वर्ष विशेष में कुल मृत्युओं की संख्या को उस वर्ष की मध्यवर्षीय जनसंख्या से भाग देकर 1000 से गुणा कर दिया जाता है। इसकी गणना करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है:

C.D.R. = (D/P) x 1000

C.D.R. = अशोधित मृत्यु-दर

D = किसी वर्ष विशेष में मृतकों की कुल संख्या

P = उस वर्ष की मध्यववर्षीय कुल जनसंख्या

उदाहरण के लिए, यदि किसी देश की मध्यवर्षीय जनसंख्या 8,00,000 है तथा उस वर्ष में इनमें से 40,000 व्यक्तियों की मृत्यु हो जाती है तो अशोधित मृत्यु-दर,

(40,000/800000) x 1000 = 50 प्रति हजार प्रति वर्ष होगी।

अशोधित मृत्यु-दर की गणना कुल मृत्यु-दर की तरह ही की जाती है। इन दोनों में अन्तर मात्र इतना है कि जहाँ अशोधित मृत्यु-दर की गणना मध्यवर्षीय जनसंख्या के आधार पर की जाती है, वहीं कुल मृत्यु-दर की गणना पूरे वर्ष में कुल जनसंख्या के आधार पर की जाती है। अशोधित मृत्यु-दर के अनेक गुण हैं। जैसे- प्रथम, यह मृत्यु-दर को प्रदर्शित करने वाली एक सरल विधि है। द्वितीय, इसके द्वारा आम जनता को मृत्यु के सम्बन्ध में आसानी से जा सकती है। ततीय, इसमें मृत्यु की बारम्बारता को मात्र एक संख्या से व्यक्त किया जा सकता है। इसी कारण से विभिन्न वार्षिक अंकों एवं सांख्यिकीय प्रकाशनों में इसी का उल्लेख होता है। चतुर्थ यह तुलनात्मक अध्ययन में सहायक है। इससे ग्रामीण-शहरी, स्त्री-पुरूष, विभिन्न जातियों, विभिन्न आय-वर्गों अथवा विभिन्न देशों के मध्य मृत्यु की तुलना की जा सकती है। परन्तु, इसकी विभिन्न कमियाँ भी हैं, जैसे- प्रथम, इसमें जनसंख्या की संरचना पर ध्यान नहीं दिया जाता है। जनसंख्या के विभिन्न समुदायों में मृत्यु-दरें अलग-अलग होती हैं; जबकि अशोधित मृत्यु-दर की गणना में जनसंख्या के विभिन्न समुदायों को शामिल कर लिया जाता है। अतः तुलनात्मक दृष्टि से इसका उपयोग नहीं किया जाना चाहिये। द्वितीय, अशोधित मृत्यु-दर निकालने के लिए समंक दो भिन्न-भिन्न स्रोतों से लिये जाते हैं। जैसे- मृतकों की संख्या का स्रोत पंजीकरण होता है जबकि जनसंख्या सम्बन्धी समंक जनगणना से लिये जाते हैं। दो अलग-अलग स्रोतों से सूचनाएं लेकर सांख्यिकीय विश्लेषण किया जाना वैज्ञानिकता की दृष्टि से उचित नहीं है क्योंकि दो स्रोत से ली गई सूचनाएं समान नहीं होती हैं।

9.5.3 आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर अशोधित मृत्यु-दर केवल प्रति हजार व्यक्तियों पर मृत्युओं की सम्भावना को बताती है। यह आयु, लिंग, निवास स्थान आदि कारकों को ध्यान में नहीं रखती है। आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर (Age-Specific Death Rate) किसी स्थान अथवा क्षेत्र विशेष के निवासियों की भिन्न-भिन्न आयु-वर्गों में मृत्यु के सम्बन्ध में जानकारी देती है। सामान्यतया मृत्यु के आंकड़ों में आयु के अनुसार विचलन होता है। कम आयु में मृत्यु का दबाव अधिक, युवावस्था पर कम तथा वृद्धावस्था पर पुनः मृत्यु का दबाव अधिक होता है। अतः किसी जनसंख्या में मृत्यु का दबाव ज्ञात करने के लिए आयु वर्ग के अनुसार मृत्यु-दर की गणना की जानी चाहिये। आयु-

विशिष्ट मृत्यु-दर द्वारा जनसंख्या पर मृत्यु के दबाव का अध्ययन आयु-वर्ग के अनुसार ही किया जाता है। इसकी गणना हेतु यह आवश्यक है कि हमें विभिन्न आयु-वर्गों की मध्यवर्षीय जनसंख्या तथा विभिन्न आयु-वर्गों में मृतकों की संख्या की जानकारी हो। इस दर को ज्ञात करने के लिए प्रत्येक आयु-वर्ग में मृतकों की संख्या को उसी आय वर्ग की मध्यवर्षीय जनसंख्या से भाग देकर 1000 से गणा कर दिया जाता है। सूत्र के रूप में,

A.S.D.R. = (D_i/P_i) x 1000

A.S.D.R. = आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर

Bi = विशिष्ट आयु-वर्ग में मृतकों की संख्या

Pi = उसी आयु वर्ग की मध्यवर्षीय जनसंख्या

उदाहरण के लिए, यदि किसी नगर में 10-30 आयु वर्ग के लोगों की संख्या 10,000 है और उसमें से 500 व्यक्तियों की मृत्यु हो जाती है, तो आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर (10-30 आयु-वर्ग हेतु),

(500/10000) x 1000 = 50 प्रति हजार प्रति वर्ष होगी।

उपरोक्त उदाहरण में 10-30 आयु–वर्ग की आयु–विशिष्ट मृत्यु-दर की गणना की गई है। इसी प्रकार से सम्पूर्ण जीवन-काल को विभिन्न आयु-वर्गों में विभक्त कर अलग-अलग आयु-वर्गों की आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर की गणना की जाती है। आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर में मृत्युक्रम की माप आयु–वितरण के आधार पर की जाती है। इसके विभिन्न गुण हैं, जैसे- प्रथम, इसके अन्तर्गत मृत्य-दर को सामान्यतया प्रत्येक वर्ष के लिए ज्ञात न करके 0-5 अथवा इसी प्रकार के अन्य आयु–अन्तराल लेकर ज्ञात किया जाता है। द्वितीय, यह मृत्यु की अच्छी माप मानी जाती है और जीवन तालिका के निर्माण में सहायक होती है, क्योंकि यह इस सम्बन्ध में तथ्यपूर्ण जानकारी देती है कि किसी विशेष समूह के व्यक्ति की एक विशिष्ट समय में मरने की सम्भावना है। तृतीय, आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर का वक्र U आकार का होता है। इसका कारण है कि जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में बच्चों की मृत्यु की सम्भावना अधिक होती है। आयु बढ़ने अर्थात् युवावस्था में यह सम्भावना कम हो जाती है और बाद के वर्षों में यह बढ़ जाती है। 60 वर्ष की आयु के पश्चात् यह तेजी से बढ़ती है। चतुर्थ, इस दर की गणना पुरूषों एवं स्त्रियों के लिए अलग-अलग हो सकती है। ऐसी स्थिति में गणना की गई दरें आयु-लिंग विशिष्ट मृत्यु-दरें कहलाती हैं। उदाहरण 1.

निम्नलिखित आँकड़ों से सभी आयु–समूहों के लिए आयु-विशिष्ट मृत्यु-दरों की गणना कीजिए तथा अशोधित मृत्यु-दर भी ज्ञात कीजिए : |

आयु-वर्ग (वर्षों में) Age-Group (In Years)	**जनसंख्या (Population)**	**मृत्यु संख्या (Number of Deaths)**
0-10	8,000	400
10-30	15,000	300
30-50	18,000	180
50-60	12,000	240
60-75	9,000	500
75 एवं अधिक	4,000	600
योग	**66,000**	**2,220**

हल:

1. आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर (Age Specific Death Rate)

$$A.S.D.R = \frac{Di}{Pi} \times 1000$$

(i)

$$A.S.D.R(0-10) = \frac{400}{8000} \times 1000 = 50 \text{ प्रति हजार प्रति वर्ष}$$

(ii)

$$A.S.D.R(10-30) = \frac{300}{1500} \times 1000 = 20 \text{ प्रति हजार प्रति वर्ष}$$

(iii)

$$A.S.D.R(30-50) = \frac{180}{18000} \times 1000 = 10 \text{ प्रति हजार प्रति वर्ष}$$

(iv)

$$A.S.D.R(50-60) = \frac{240}{12000} \times 1000 = 20 \text{ प्रति हजार प्रति वर्ष}$$

(v)

$$A.S.D.R(60-75) = \frac{500}{9000} \times 1000 = 55.56 \text{ प्रति हजार प्रति वर्ष}$$

(vi)

$$A.S.D.R(75 \text{ and above}) = \frac{600}{4000} \times 1000 = 150 \text{ प्रति हजार प्रति वर्ष}$$

2. अशोधित मृत्यु-दर (Crude Death Rate)

$$C.D.R = \frac{D}{P} \times 1000$$

$$C.D.R = \frac{2220}{66000} \times 1000$$

= 33.63 प्रति हजार प्रति वर्ष।

9.5.4 शिशु मृत्यु-दर

शिशु मृत्यु-दर (Infant Death Rate) से आशय प्रथम वर्ष की मृत्युओं से है। यह वर्ष जीवन तालिका को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण वर्ष होता है क्योंकि सामान्यतया प्रथम वर्ष में होने वाली मृत्यु वृद्धावस्था को छोड़कर किसी अन्य आयु–वर्ष पर होने वाली मृत्यु से अधिक होती है। इसकी गणना में किसी निश्चित वर्ष एवं निर्धारित क्षेत्र के एक वर्ष से कम आयु के शिशुओं की मृत्यु संख्या को उसी वर्ष एवं क्षेत्र में सजीव जन्मित शिशुओं की कुल संख्या से भाग देकर 1000 से गुणा कर दिया जाता है। सूत्र के रूप में,

$$I.D.R = \frac{\text{D0} - 1}{B}\text{x}1000$$

I.D.R. = शिशु मृत्यु-दर

Do-1 = किसी विशिष्ट वर्ष एवं क्षेत्र में एक वर्ष से कम आयु के मृतशिशुओं की संख्या

B = उसी वर्ष एवं क्षेत्र में सजीव जन्मे शिशुओं की संख्या

उदाहरण के लिए, यदि किसी देश में वर्ष 1998 में मृत शिशुओं की संख्या 4,000 है तथा सजीव जन्मे शिशुओं की संख्या 80,000 है तो शिशु मृत्यु-दर,

$I.D.R = \frac{4000}{80000}\text{x}1000 = 50$प्रति हजार प्रति वर्ष होगी।

शिशु मृत्यु-दर (Infant Death Rate) तथा शिशु मृत्युक्रम (Infant Mortality Rate) को सामान्यतया एक ही अर्थ में लिया जाता है, जबकि इसमें अन्तर होता है। बार्कले ने इनमें अन्तर स्पष्ट करने का प्रयास किया है। उनका मानना है कि शिशु मृत्यक्रम में मृत्यु की माप का सन्बन्ध एक सहगण (Cohort) से होता है जबकि शिशु मृत्यु-दर के अन्तर्गत सजीव उत्पन्न एवं मृत शिशुओं का सम्बन्ध किसी सहगण से न होकर एक वर्ष से होता है। अर्थात् शिशु मृत्यु-दर में किसी वर्ष विशेष में मृत शिशुओं की संख्या को वर्ष विशेष में उत्पन्न होने वाले शिशुओं की संख्या से भाग दे दिया जाता है। स्पष्ट है कि शिशु मृत्यु-दर में वर्ष का महत्व होता है जबकि शिशु मृत्युक्रम में सहगण का महत्व होता है। भारत में शिशु मृत्यु-दर वर्ष 1960 में अपने उच्चतम् स्तर 159.3 प्रति हजार जीवित जन्म थी जो वर्ष 2010 में अब तक के अपने न्यूनतम् स्तर 48.2 प्रति हजार जीवित जन्म पर आ गई है। विकास के साथ इसके भविष्य में और भी कम होने की सम्भावना है। विकसित देशों में यह दर काफी कम है। उदाहरण के लिए, वर्ष 2010 में संयुक्त राज्य अमेरिका में यह दर 6.15 प्रति हजार जीवित जन्म थी। शिशु मृत्यु-दर को आयु के आधार पर दो भागों में विभाजित किया जाता है : प्रथम, नवजात शिशु मृत्यु-दर एवं द्वितीय, नवजन्मोत्तर काल शिशु मृत्यु-दर।

9.5.4.1 नवजात शिशु मृत्यु-दर नवजात शिशु मृत्यु-दर (Neo-Natal Mortality Rate) वास्तव में एक आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर है जिसके अन्तर्गत चार सप्ताह अथवा एक माह से कम आयु के शिशुओं की मृत्यु-दर की गणना की जाती है। इसकी माप हेतु किसी निश्चित वर्ष एवं निर्धारित क्षेत्र के चार सप्ताह अथवा एक माह से कम आयु के शिशुओं की मृत्यु संख्या को उसी वर्ष एवं क्षेत्र में सजीव जन्मित शिशुओं की कुल संख्या से भाग देकर 1000 से गुणा कर दिया जाता है। सूत्र के रूप में :

$$Neo - Natal\ Mortality\ Rate = \frac{\text{D0} - 28}{B}\text{x}1000$$

Do-28 = किसी विशिष्ट वर्ष एवं क्षेत्र में 28 दिन अथवा एक माह से कम आयु के मृत शिशुओं की संख्या

B = उसी वर्ष एवं क्षेत्र में सजीव जन्मे शिशुओं की संख्या

भारत में नवजात शिशु मृत्यु-दर वर्ष 1991 में 47 प्रति हजार जीवित जन्म थी जो वर्ष 2010 में घटकर 32 प्रति हजार जीवित जन्म हो गई है।

9.5.4.2 नवजन्मोत्तर काल शिशु मृत्यु-दर नवजन्मोत्तरकाल शिशु मृत्यु-दर (Post Neo-Natal Mortality Rate) भी एक प्रकार की आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर ही है जिसके अन्तर्गत एक माह अथवा प्रथम चार सप्ताह से

अधिक परन्तु एक वर्ष अथवा शेष 48 सप्ताह से कम आयु के शिशुओं की मृत्यु का सम्मिलित किया जाता है। इसकी गणना हेतु किसी निश्चित वर्ष एवं निर्धारित क्षेत्र के एक माह अथवा प्रथम चार सप्ताह से अधिक परन्तु एक वर्ष अथवा शेष 48 सप्ताह से कम आयु के शिशुओं की मृत्यु संख्या को उसी वर्ष एवं क्षेत्र में सजीव जन्मित शिशुओं की कुल संख्या से भाग देकर 1000 से गुणा कर दिया जाता है। सूत्र के रूप में :

$$Post\ Neo - Natal\ Mortality\ Rate = \frac{\text{D28 } weeks\ to\ 1\ year}{B} \text{x1000}$$

D 28 weeks to 1 year = एक माह अथवा प्रथम चार सप्ताह से अधिक परन्तु एक वर्ष अथवा शेष 48 सप्ताह से कम आयु के मृत शिशुओं की संख्या

B= उसी वर्ष एवं क्षेत्र में सजीव जन्मे शिशुओं की संख्या

सामान्यतया प्रथम चार सप्ताह में जिन शिशुओं की मृत्यु होती है, वह पूर्व-परिपक्व जन्मों के कारण उत्पन्न होने वाली विभिन्न शारीरिक एवं इन्द्रिय सम्बन्धी विकारों के कारण होती हैं। प्रथम चार सप्ताह के पश्चात् अगले 48 सप्ताह में शिशुओं की होने वाली मृत्यु अधिकतर खराब आवासों, गन्दगी, कुपोषण तथा विभिन्न सुविधाओं के अभाव आदि के कारण होती हैं। बोग का मानना है कि नवजन्मोत्तर काल शिशु मृत्यु की दृष्टि से अधिक घातक होता है। इसका प्रमुख कारण है कि जन्मित शिशु प्रथम चार सप्ताह तक मां के दूध पर जीवित रहता है जिससे वह पर्यावरण प्रदूषण से अप्रभावित रहता है। इसलिए इस काल में मृत्यु की सम्भावना कम होती है। परन्तु द्वितीय काल अर्थात् अगले 48 सप्ताह में शिशु मां के दूध के अतिरिक्त अन्य आहार भी लेता है जिसमें अशुद्धता सम्भव है। इसके साथ ही शिशु को बाहरी वातावरण की कठोरता एवं प्रदूषण का सामना भी करना पड़ता है। नवजन्मोत्तर काल में शिशु मृत्यु-दर विकसित देशों में कम जबकि विकासशील देशों में अधिक है। इसका प्रमुख कारण विकसित देशों में विशिष्ट सुविधाओं की उपलब्धता है।

9.5.5 बाल मृत्यु-दर

बाल मृत्यु-दर (Child Mortality Rate) से आशय प्रति हजार जीवित जन्मों पर 5 वर्ष से कम आयु के बच्चों की होने वाली मृत्युओं की संख्या से है। इसकी गणना में किसी निश्चित वर्ष एवं निर्धारित क्षेत्र के 5 वर्ष से कम आयु के शिशुओं की मृत्यु संख्या को उसी वर्ष एवं क्षेत्र में सजीव जन्मित शिशुओं की कुल संख्या से भाग देकर 1000 से गुणा कर दिया जाता है। सूत्र के रूप में,

$$C.M.R = \frac{\text{D0} - 5}{B} \text{x1000}$$

C.M.R. = बाल मृत्यु-दर

Do-5 = किसी विशिष्ट वर्ष एवं क्षेत्र में 5 वर्ष से कम आयु के मृत शिशुओंकी संख्या

B= उसी वर्ष एवं क्षेत्र में सजीव जन्मे शिशुओं की संख्या

भारत में बाल मृत्यु-दर वर्ष 1960 में 238.9 प्रति हजार जीवित जन्म थी जो वर्ष 2010 में कम होकर 62.7 प्रति हजार जीवित जन्म हो गई है।

9.5.6 मातृत्व मृत्यु-दर

स्त्रियों की मृत्यु-दर आयु के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। विवाहित स्त्रियों में प्रजनन आयुवर्ग में प्रसव के कारण मृत्यु की सम्भावना अधिक होती है। इसके लिए मातृत्व मृत्यु-दर की गणना की जाती है। मातृत्व मृत्यु-दर (Maternal Mortality Rate) का आशय सन्तानोत्पत्ति आयु-वर्ग (अर्थात् 15-49 वर्ष की आयु) में शिशु जन्म अथवा प्रसव के कारण (प्रसव के 6 सप्ताह के अन्दर) मरने वाली स्त्रियों की कुल जनसंख्या से है। इसकी गणना हेतु शिशु जन्म के कारण होने वाली स्त्री मृत्यु की संख्या को कुल शिशु जन्म से भाग दे दिया जाता है। सूत्र के रूप में,

$$M.M.R = \frac{\text{Df}15-49}{B} \text{x}1000\text{B}$$

M.M.R. = मातृत्व मृत्यु-दर

DF 15 - 49 = किसी निश्चित वर्ष एवं क्षेत्र में सन्तानोत्पादन आयु-वर्ग की महिलाओं की शिशु जन्म के कारण हुई कुल मृत्यु संख्या

B = उसी वर्ष एवं क्षेत्र की महिलाओं द्वारा जन्में शिशुओं की संख्या मातृत्व मृत्यु-दर में सामान्यतया प्रसव के कारण 6 सप्ताह के अन्दर होने वाली माताओं की मृत्यु की घटनाओं को शामिल किया जाता है। भारत में वर्ष 2010 में मातृत्व मृत्यु-दर 2 प्रति हजार जीवित जन्म थी। यह दर शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक है। भारत में मातृत्व मृत्यु-दर के अधिक होने के अनेक कारण हैं, जैसे- बाल विवाह, स्त्रियों में शिक्षा का अभाव, गर्भवती स्त्रियों के लिए पौष्टिक आहार का अभाव, चिकित्सकीय सुविधाओं का अभाव, अन्धविश्वास एवं सामाजिक कुरीतियाँ, दो सन्तानों के जन्म के बीच कम समयान्तराल, समाज में स्त्रियों की उपेक्षा आदि।

9.6 जीवन-प्रत्याशा

जीवन-प्रत्याशा (Expectancy of Life) से आशय जीवित रहने की आयु से है। जब देश में एक शिशु जन्म लेता है तो उसके औसतन कितने वर्ष तक जीवित रहने की आशा की जाती है, इस जीवित रहने की आशा को ही जीवन–प्रत्याशा अथवा प्रत्याशित आयु अथवा औसत आयु कहा जाता है। किसी देश में जीवन-प्रत्याशा मुख्य रूप से मृत्युदर एवं 'विभिन्न आयुवर्गों पर मृत्यु के दबाव' पर निर्भर करता है। देश में मृत्यु दर के कम होने पर जीवन–प्रत्याशा अधिक होती है जबकि मृत्य दर के अधिक होने पर जीवन–प्रत्याशा कम होती है। वास्तव में, जीवन–प्रत्याशा किसी देश के नागरिकों के स्वास्थ्य तथा सभ्यता एवं आर्थिक विकास का सूचक है। जीवन–प्रत्याशा जन्म-दर एवं मृत्यु-दर पर प्रकाश डालता है साथ ही इससे किसी समाज में नागरिकों को मिलने वाली सुविधाओं का भी पता लगाया जा सकता है। एक देश जितना तीव्र गति से विकास करेगा, वहां जीवन–प्रत्याशा उतनी ही अधिक होगी। प्रो. ओरगैन्स्की का मत कि यदि आप किसी देश के रहन-सहन के स्तर को जानना चाहते हैं तो उसकी जीवित रहने की प्रत्याशा पर दृष्टिपात कीजिए, क्योंकि उससे अच्छी कोई भी माप नहीं है कि कोई सभ्यता प्रत्येक व्यक्ति को जीवन के कितने वर्ष देती है। जीवन-प्रत्याशा के महत्व को दर्शाते हुए प्रो. डौन ने कहा है कि दीर्घायु जीवन का अध्ययन जीव विज्ञान का विषय है। जनांकिकीवेत्ता की रूचि इस विषय में इसलिये है कि दीर्घायु जीवन मानव समूह एवं उसकी संरचना हो प्रभावित करता है। भारत में जीवित रहने की आयु में निरन्तर वृद्धि हुई है परन्तु यह गति बहुत धीमी रही है। देश में लोगों की जीवन–प्रत्याशा 1911 में 22.9 वर्ष थी जो 1951 में 32.1 वर्ष तथा 1991 में बढ़कर 59.9 वर्ष हो गयी। वर्ष 2009 में यह 69.89 वर्ष आंकलित की गई है। इसी वर्ष पुरूषों की जीवन–प्रत्याशा 67.46 वर्ष तथा महिलाओं की 72.61 वर्ष रही। विकसित देशों की तुलना में भी भारत में जीवन-प्रत्याशा कम है। उदाहरण के लिए, वर्ष 2010 में जापान में जीवन-प्रत्याशा 82.73 वर्ष, कनाडा में 80.5 वर्ष, आस्ट्रेलिया में 81.44 वर्ष तथा अमेरिका में 78.7 वर्ष एवं इंग्लैण्ड में 79.53 वर्ष थी। सम्पूर्ण विश्व में औसत रूप में यह 67.88 वर्ष थी।

9.7 मृत्यु-दर एवं जीवन प्रत्याशा में अन्तर्सम्बन्ध

एक देश में मृत्युदर एवं जीवन-प्रत्याशा में विपरीत सम्बन्ध होता है। जीवन-प्रत्याशा मुख्य रूप से मृत्युदर एवं विभिन्न आयुवर्गों पर मृत्यु के दबाव' पर निर्भर करती है। यदि देश में मृत्युदर गिर रही है तो ऐसी स्थिति में लोगों के जीवित रहने की आयु में वृद्धि होगी। मृत्यु दर के कम होने पर जीवन-प्रत्याशा अधिक होती है जबकि मृत्यु दर के अधिक होने पर जीवन–प्रत्याशा कम होती है। पिछले वर्षों में भारत सहित विश्व के विभिन्न देशों में जीवन–

प्रत्याशा में वृद्धि दर्ज की गई है। इसका प्रमुख कारण मृत्यु के दबाव का धीरे-धीरे कम होना है। इसे हम आंकड़ों की सहायता से भी देख सकते हैं। भारत में मृत्युदर 1911-20 की अवधि में 47.2 प्रति हजार थी। इसके बाद यहां मृत्यु दर में निरन्तर गिरावट आयी है। 1941-50 में यह 27.4 थी जो वर्तमान में घटकर 6.4 प्रति हजार हो गयी है। देश में जीवन-प्रत्याशा 1911-20 की अवधि में यह 20.1 वर्ष थी। इसके बाद यह निरन्तर बढ़ती गयी है। 1941-50 में यह 32.1 वर्ष थी जो वर्तमान में बढ़कर लगभग 70 वर्ष हो गयी है। भारत में जीवन–प्रत्याशा में वृद्धि तो हुई है परन्तु यह वृद्धि धीमी गति से हुई है। इसका कारण यहां सामाजिक-आर्थिक विकास के कम होने के कारण मृत्युदर का अधिक होना है। यदि देश में सामाजिक-आर्थिक विकास पर अधिक ध्यान दिया जाये तो जीवन–प्रत्याशा तेजी से वृद्धि सम्भावित है।

9.8 अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 01 : मृत्युक्रम को प्रभावित करने वाले तत्व कौन से हैं ?

प्रश्न 02 : मातृत्व मृत्यु-दर की गणना किस प्रकार की जाती है ?

प्रश्न 03 : जीवन-प्रत्याशा तथा मृत्यु-दर में क्या सम्बन्ध है ?

प्रश्न 04 : रिक्त स्थान भरिए।

(क) मृत्यु सम्बन्धी समंको को आधुनिक रूप में एकत्र करने, वर्गीकरण करने एवं विश्लेषण करने का श्रेय..... को है।

(ख) उच्च मृत्यु-दर ..... विकास का संकेतक है।

(ग) नवजात शिशु मृत्यु-दर के अन्तर्गत..... से कम आयु के शिशुओं की मृत्यु-दर की गणना की जाती है।

9.9 सारांश

मृत्यु जीवन की एक प्रमुख घटना मानी जाती है जो जनसंख्या के आकार, गठन और वितरण को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करती है। जनांकिकी में मृत्यु का सम्बन्ध व्यक्ति विशेष से न होकर व्यक्तियों के समूह से होता है, जिसे मृत्युक्रम कहते हैं। प्रजनन दर की भांति मृत्यु-दर का भी जनांकिकीय विश्लेषण में महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि जनसंख्या वृद्धि प्रजनन दर एवं मृत्यु-दर दोनों पर ही समान रूप से निर्भर करती है। मृत्युक्रम का प्रमुख उद्देश्य जनसंख्या के आकार में कमी करना जबकि प्रजननशीलता का उद्देश्य इस कमी की पूर्ति करना है। मृत्यु-दरें दो या दो से अधिक देशों, क्षेत्रों अथवा समयों के बीच मृत्यु के दबाव का तुलनात्मक अध्ययन करती हैं। मृत्यु का जनसंख्या पर दबाव मापने के लिए दो प्रकार की माप होती हैं- प्रथम, जीवन तालिका एवं द्वितीय, मृत्युक्रम दरें। मृत्यु-दर का मापन जीवन तालिकओं के माध्यम से आसानी से किया जा सकता है, परन्तु सामान्यतया किसी भी देश में जीवन तालिकाओं का अभाव पाया जाता है। अतः मृत्यु-दर को मापने के लिए अन्य प्रचलित विधियों का सहारा लिया जाता है। जैसे- कुल मृत्यु-दर, अशोधित मृत्यु-दर, आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर, शिशु मृत्यु-दर (नवजात शिशु मृत्यु-दर एवं नवजन्मोत्तर काल मृत्यु-दर), बाल मृत्यु-दर, मातृत्व मृत्यु-दर आदि। जीवन–प्रत्याशा, जिसका आशय जीवित रहने की आयु से है, नागरिकों के स्वास्थ्य तथा सभ्यता एवं आर्थिक विकास का सूचक है। एक देश में मृत्युदर एवं जीवन-प्रत्याशा में विपरीत सम्बन्ध होता है। जीवन-प्रत्याशा मुख्य रूप से मृत्युदर एवं 'विभिन्न आयुवर्गों पर मृत्यु के दबाव' पर निर्भर करती है। देश में मृत्युदर के कम होने पर जीवन–प्रत्याशा अधिक होती है जबकि मृत्युदर के अधिक होने पर जीवन–प्रत्याशा कम होती है। पिछले वर्षों में भारत सहित विश्व के विभिन्न देशों में जीवन–प्रत्याशा में वृद्धि दर्ज की गई है। इसका प्रमुख कारण मृत्यु के दबाव का धीरे-धीरे कम होना है।

9.10 शब्दावली

- मृत्युक्रम : मृत्युक्रम के अन्तर्गत मृत्यु की घटनाओं के समूह का अध्ययन किया जाता है। इसमें मृत्यु का सम्बन्ध व्यक्ति विशेष से न होकर व्यक्तियों के समूह से होता है।
- जीवन-प्रत्याशा : जीवन-प्रत्याशा से आशय जीवित रहने की आयु से है। जब देश में एक शिशु जन्म लेता है तो उसके औसतन कितने वर्ष तक जीवित रहने की आशा की जाती है, इस जीवित रहने की आशा को ही जीवन-प्रत्याशा अथवा प्रत्याशित आयु अथवा औसत आयु कहा जाता है।

9.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर01 : किसी समाज या देश में मृत्युक्रम को प्रभावित करने वाले विभिन्न तत्वों में प्रजननता का स्तर, आय-स्तर, जनस्वास्थ्य का स्तर, शिक्षा का स्तर, चिकित्सा सुविधाएं पर्यावरण प्रदूषण, महामारियों का प्रभाव, सन्तुलित आहार उपलब्धता, नशीली एवं हानिकारक वस्तुओं का प्रयोग, कार्य की प्रकृति, आवास सुविधाएं, जनसंख्या की सघनता, प्राकृतिक प्रकोप आदि प्रमुख हैं।

उत्तर02 : मातृत्व मृत्यु-दर की गणना हेतु किसी निश्चित वर्ष एवं क्षेत्र में सन्तानोत्पादन आयु-वर्ग (अथोत् 15-49 वर्ष की आयु) की महिलाओं की शिशु जन्म अथवा प्रसव के कारण हई कल मत्य संख्या को उसी वर्ष एवं क्षेत्र की महिलाओं द्वारा जन्में शिशओं की संख्या से भाग दे दिया जाता है। मातृत्व मृत्यु-दर में सामान्यतया प्रसव के कारण 6 सप्ताह के अन्दर होने वाली माताओं की मृत्यु की घटनाओं को शामिल किया जाता है।

उत्तर03 : एक देश में जीवन-प्रत्याशा एवं मृत्युदर में विपरीत सम्बन्ध होता है। जीवन-प्रत्याशा मुख्य रूप से मृत्युदर पर निर्भर करती है। यदि देश में मृत्युदर गिर रही है तो ऐसी स्थिति में लोगों के जीवित रहने की आयु में वृद्धि होगी। अर्थात् मृत्यु दर के कम होने पर जीवन-प्रत्याशा अधिक होती है जबकि मृत्यु दर के अधिक होने पर जीवन–प्रत्याशा कम होती है।

रिक्त स्थान भरिए।

उत्तर : (क) कैप्टन जॉन ग्राउण्ट, (ख) निम्न, (ग) चार सप्ताह अथवा एक माह।

9.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची।

- सिन्हा, बी. सी. एंव पुष्पा सिन्हा (2011), "जनांकिकी के सिद्धान्त", मयूर पेपर बैक्स, नई दिल्ली।
- चौबे, पी. के. (2000), "भारत में जनसंख्या नीति', कनिष्ट प्रकाशन, नई दिल्ली। • मिश्र, प्रकाश (2012), "जनांकिकी', साहित्य भवन पब्लिकेशन, दिल्ली।
- दत्त, रूद्र एवं के. पी. एम. सुन्दरम (2010), "भारतीय अर्थ व्यवस्था', एस. चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।
- कुमार, वी. (2007): जनांकिकी, साहित्य भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.)लि., आगरा।
- सिन्हा एवं सिन्हा (2005) : जनसंख्या के सिद्धान्त, मयूर पेपरबैक्स, नोएडा।
- गुप्त, एस. एन (2009) : जनांकिकी के मूल तत्व, वृंदा पब्लिकेशन्स प्रा. लि., दिल्ली।

9.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची।

- Level & Trends in Child Mortality, Report 2011. Estimates Developed by the UN Inter-agency Group for Child Mortality Estimation (UNICEF, WHO, World Bank,

UN DESA, UNPD).

9.14 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 01 : मृत्युदर को परिभाषित करते हुए इसकी माप की विधियों को विस्तार से समझाइये।

प्रश्न 02 : निम्नलिखित को उदाहरण देते हुए समझाइये :

(1) आयु-विशिष्ट मृत्यु-दर,

(2) बाल मृत्यु-दर तथा

(3) जीवन–प्रत्याशा।

प्रश्न 03 : निम्नलिखित आँकड़ों से अशोधित मृत्यु-दर तथा आयु-विशिष्ट मृत्यु-दरों की गणना कीजिए : |

आयु वर्ग (वर्षों में) Age-Group(In Year)	**जनसंख्या (population)**	**मृत्यु संख्या (Number of deaths)**
0-10	6000	500
10-20	10000	400
20-40	18000	360
40-50	12000	300
50-70	10000	500
70 एवं अधिक	5000	600

प्रश्न 04 : शिशु मृत्यु-दर से आप क्या समझते हैं? नवजात तथा नवजन्मोत्तर काल शिशु मृत्यु-दर की गणना किस प्रकार की जाती है ?

इकाई-10 जनसंख्या प्रक्षेपण- स्थाई, स्थैतिक एवं अर्ध-स्थैतिक जनसंख्या
(Population Projection- Stable, Stationary and Quasi-Stationary)

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 मुख्य भाग
  10.3.1 जनसंख्या प्रक्षेपण का अर्थ एंव परिभाषाएं
  10.3.2 अनुमान भविष्यवाणी तथा प्रक्षेपण मे अंतर
  10.3.3 प्रक्षेपण के प्रकार
10.4 जनसंख्या प्रक्षेपण की विधियां
  10.4.1.गणितीय विधि
    10.4.1.1अंकगणित प्रक्षेपण
    10.4.1.2 रेखीय आन्तर्गणन
    10.4.1.3 चक्रवृद्धि नियम
    10.4.1.4 गुणोत्तर- वृद्धि
    10.4.1.5 वृद्धि घात चक्र
    10.4.1.6 बिन्दुरेखीय बिधि
10.5 प्रक्षेपण के स्वरूप
  10.5.1 उच्च प्रक्षेपण
  10.5.2 मध्यम प्रक्षेपण
  10.5.3 निम्न प्रक्षेपण
10.6 प्रक्षेपण की शुद्धता
10.7 जनसंख्या प्रक्षेपण की सीमाएं
10.8 जनसंख्या प्रक्षेपण का महत्व
  10.8.1 जीवन सतंको का अभाव व अपर्याप्तता
  10.8.2 समंको का नष्ट हो जाना
  10.8.3 जनगणना तिथियों के मध्य जनसंख्या की जानकारी हेतु
  10.8.4 राष्टीय योजना में महत्व
10.9 भारतीय जनसंख्या प्रक्षेपण (2001-2026)
10.10. अभ्यास प्रश्न
10.11. सारांश
10.12 शब्दावली
10.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
10.14 संदर्भ ग्रन्थ सूचि
10.15 सहायक/उपयोगी सामग्री
10.16 निबंधात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

भविष्य संबंधी जनसंख्या गणना में पर्याप्त अनिश्चितता रहती है। मृत्युक्रम, उर्वरता, विवाह तथा देशांतरण में परिवर्तन लाने वाली शक्तियों के संबंध मे हमारा ज्ञान अपूर्ण है तथा किसी संदेहास्पद तत्व के प्रभाव को निश्चित रूप से आंकना संभव नहीं है। यदि भूतकाल के संबंध में हमारा ज्ञान पूर्ण भी हो जाये, तो भी भविष्य आवश्यक रूप से अनिश्चित ही रहेगा। अतः पूर्ण सत्यता के साथ भविष्यवाणी करना न तो संभव है और न कभी संभव रहेगा। इसलिए अनुमान अथवा भविष्यवाणी जैसे शब्दों का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए ताकि यह धारणा ही जन्म न ले कि प्रक्षेपण धुंधले भविष्य को साफ साफ देखने की प्रविधि है। प्रक्षेपण तो कुछ मान्यताओं के आधार पर परिकलन की एक विकसित विधि मात्र है। जनसंख्या प्रक्षेपण व्यापारिक पूर्वानुमान का ही एक विशिष्ट रूप है, जिसमें वर्तमान एवं भूतकालीन जनसंख्या और जनसंख्या दरों के आधार पर कुछ भविष्य के संबंध में उपकल्पनाएं अथवा मान्यताएं की जाती हैं, फिर इन्हीं मान्ताओं के आधार पर जनसंख्या को प्रक्षेपण किया जाता है। किस दर से जनसंख्या में वृद्धि हो रही है, विवाह की आयु क्या है, उर्वरता आयु वर्ग में कितनी महिलाएं हैं, और वे अपने जीवनकाल में कितनी लड़कियों को अपने स्थान पर प्रतिस्थापित करेंगी, आदि अनेक समंकों की सहायता से भविष्य की जनसंख्या को प्रक्षेपण किया जाता है।

10.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से हम समझ सकेंगें कि

- ✓ जनसंख्या प्रक्षेपण का विष्लेशण किस तकनीक पर आधारित है।
- ✓ जनसंख्या प्रक्षेपण का महत्व और उसका उपयोग करके यह अनुमान लगाना कि भविष्य में क्या होगा।
- ✓ जनसंख्या प्रक्षेपण किस प्रकार होता है।
- ✓ जन्म से किसी विशिष्ट आयु तक के संभावित म्रत्यु प्रभाव की जानकारी
- ✓ आने वाले वर्षों में जनसंख्या का पूर्वानुमान लगा सकते हैं।
- ✓ समंकों की सहायता से भविष्य की जनसंख्या का प्रक्षेपण

10.3 मुख्या भाग

10.3.1 जनसंख्या प्रक्षेपण का अर्थ एंव परिभाषाएं

जनसंख्या के प्रक्षेपण का अभिप्राय किसी देश, क्षेत्र या स्थान विशेष की जनसंख्या के
पर यह बतलाते हैं कि किसी देश, क्षेत्र, क्षेत्र या स्थान की जनसंख्या का किसी भविष्य की तिथि पर किसी प्रकार के आकार का गठन होगा।

जनसंख्या प्रक्षेपणके संबंध में दी गयी कुछ प्रमुख परिभाषाएं निम्नलिखित है:

1. संयुक्त राष्ट्र संघ बहुभाषीय जनांकिकी शब्दकोश के अनुसार, "जनसंख्या प्रक्षेपण ऐसी गणनाएं है जो उर्वरता, मृत्यु तथा प्रवास के भविष्य के स्वरूप को स्पष्ट करती है। ये सामान्यतया औपचारिक गणनाएं हैं, जो मान्यताओं के अंतर्निहित तत्त्वों के विकसित स्वरूप को प्रस्तुत करती है।

2. थाम्पसन व हैल्पटन के कथनानुसार, "जनसंख्या प्रक्षेपण भविष्य की जनसंख्या के आकार की भविष्यवाणी नहीं है, न ही इसे लिंग तथा आयु–संरचना का सूचक माना जाना चाहिए। वास्तविक अर्थों में यदि प्रजननता, मृत्युक्रम तथा प्रवास आदि विशिष्ट प्रवृत्तियों का अनुसरण करें, तब भविष्य की किसी तिथि के संदर्भ में जनसंख्या के __ आकार तथा आयु-संरचना के संबंध में यह कथन मात्र है।"

10.3.2 अनुमान भविष्यवाणी तथा प्रक्षेपण मे अंतर प्रायः अनुमानों, भविष्यवाणियों एवं प्रक्षेपणों को पर्यायवाची मान लिया जाता है, किंतु उनमे स्पष्ट अंतर है। अनुमानों का उद्देश्य भविष्य में घटने वाली समस्याओं को व्यक्ति करना सिम्पसन तथा काफका के अनुसार, "संख्यात्मक तथ्यों के भूतकालीन व्यवहार के आधार पर पूर्वानुमान कहलाती है। "लुइस तथा फौक्स के मतानुसार, "जो ज्ञान हमारे पास उपलब्ध है, इस प्रकार पूर्वानुमान व्यवसार तथा वाणिज्य को भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं की समय से पूर्व सूचना प्रदान करता है। इसे व्यापारी भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं के प्रति सजग तथा सचेत हो जाते है। वास्तव में यह एक समंक विश्लेषण है, जिसको यथासंभव वैज्ञानिक आधार प्रदान किया जाता है। इसके विपरीत भविष्यवाणी की कोई वैज्ञानिकता नहीं है। यह बहुत कुछ ग्रह दशा, भाग्यवादिता अथवा किसी रहस्यपूर्ण शक्ति की कल्पना पर आश्रित कथन है, जिनकी मनोवैज्ञानिक तो हो सकती है, पर इनका कोई सांख्यिकी आधार नहीं है। संयुक्त राष्ट्र संघ बहुभाषीय जनांकिकी शब्द कोश ने भविष्यवाणियों को परिभाषित करते हुए लिखा है कि "जनसंख्या भविष्यवाणियां ऐसा प्रक्षेपण है जिसमें मान्ताओं के द्वारा भविष्य में जनसंख्या विकास के वास्तविक चित्र को प्रस्तुत किया जा सकता है।" स्क्रिप्स फाउन्डेशन ने 1947 में, “Population India' का संपादन करते हुए लिखा है कि "यह संशोधित अनुमान भविष्यवाणियां नहीं हैं। यह प्रक्षेपण हैं।" स्पेंग्लर के शब्दों में, "भविष्यवाणियां, अनुमान, प्रक्षेपण आदि में बहुत ही कम अंतर है तथा जनांकिकी समंकों का प्रयोगकर्ता ही सावधानी के साथ इनका प्रयोग करता है। जब तक कि भविष्य की जनसंख्या के संबंध में इस प्रकार की जानकारियां प्रकाशित होती रहेंगी, तब तक उनको भविष्यवाणियां ही माना जाता रहेगा, भले ही जनसंख्याशास्त्री जिन्होंने उसकी
कालक्रम की दृष्टि से जनसंख्या के प्रक्षेपणों को तीन भागों में बांटा जा सकता है:

1. अंतर्जनन गणना: इसका आशय उस प्रक्षेपण से है जो दो विगत जनगणना काल के बीच की अवधि से संबंधित है।
2. परवर्ती जनगणना: इसके अंतर्गत वे प्रक्षेपण आते हैं जो अंतिम जनगणना की अवधि से लेकर अब तक के किसी वर्ष विशेष से संबंधित हैं।
3. भावी प्रक्षेपण: इसका अभिप्राय भावी वर्षों के अनुमान से है।

10.4.0 जनसंख्या प्रक्षेपण की विधियां

जनसंख्या के प्रक्षेपण की विधियों को मोटे तौर पर दो श्रेणियों में विभाजित किया जा

10.4.1 गणितीय विधि प्रक्षेपण की गणितीय विधियों के अन्तर्गत प्रायः अन्तर्वेशन तथा बहिर्वेशन विधियों का प्रयोग किया जाता है। दिए हुए समंकों के आधार पर किसी विशिष्ट रीति द्वारा किसी बीच की तिथि के लिए आंकड़ो का अनुमान लगाना अन्तर्वेशन कहलाता है। यदि इससे बाहर के आंकड़ों का अनुमान लगाया जाता है तो यह बहिर्वेशन कहलाता है। अन्तर्वेशन तथा बहिर्वेशन की प्रक्षेपण विधियां निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित हैं।

(i) दी हुई समययावधि के अन्तर्गत किसी तरह का कोई आकस्मिक उच्चावचन नहीं

(ii) परिवर्तन की दर यथावत रहती है। जनसंख्या प्रक्षेपण की गणितीय विधि के अंतर्गत निम्नलिखित को सम्मिलित किया जाता है:

10.4.1.1 अंकगणितीय प्रक्षेपण

यह जनसंख्या प्रक्षेपण की सरलतम विधि है। इसके अन्तर्गत यह मान लिया जाता है कि जनसंख्या में परिवर्तन की दर प्रक्षेपण समयावधि में समान रहती है और यह एक सरल सीधी रेखा के अनुसार बढ़ती या घटती है। अतः इसे रेखीय अन्तर्गणन विधि भी कहा जाता

इस विधि द्वारा जनसंख्या प्रक्षेपण का सूत्र इस प्रकार है:

$$P_n = P_0 + \frac{n(P_0 - P_m)}{m}$$

जहां, P, = किसी मध्यवर्ती वर्ष के लिए जनसंख्या का अनुमान

P. = वर्तमान जनसंख्या

n = पिछली जनगणना तथा अन्तर्गणना के बीच वर्ष अथवा माह की संख्या

m = दो जनगणनाओं के बीच वर्षों अथवा महीनों की संख्या।

उदाहरण :- यदि सन् 1971 की जनसंख्या 55 करोड़, 1981 की जनसंख्या 85 करोड़ तो1976 की जनसंख्या बताइये

हल – 1976 की जनसंख्या = $= 55 + \frac{5}{10}(85 - 55)$

$= 55 + \frac{5}{10} \text{x} 30$

$= 70$ करोड़

10.4.1.2 रेखीय आन्तर्गणन: जनसंख्या के आधार में होने वाले वार्षिक परिवर्तनों को की सहायता से मालूम किया जा सकता है। इसका

$$P_e = P_1 + \frac{n}{N}(P_2 - P_1)$$

P_e = किसी मध्यवर्ती वर्ष के लिए जनसंख्या का अनुमान।

P_2 = मध्यवर्ती वर्ष के आगे और पीछे वर्षों की जनगणनाओं में

N = दो जनगणनाओं के बीच के वर्षों या महीनों की संख्या

n = पिछली जनगणना व आंतर्गणना वर्ष के बीच वर्ष या माह की संख्या

यदि 1971 की जनसंख्या 30 करोड़ तथा 1981 की जनसंख्या 55 करोड़ हो, तो 1996 की जनसंख्या का अनुमान कीजिए।

हल

1996 की जनसंख्या

$= 30 + \frac{15}{30}(55 - 30)$

$= 30 + \frac{1}{2}(25) = 42.5$ करोर

यदपि यह रीती सरल और बौध्गाम्य है परन्तु अवास्तविक होने के कारण अधिक उपयोगी नही है|

10.4.1.3 चक्रवृद्धि नियम: माल्थस का जनसंख्या का सिद्धांत इस मान्यता पर आधारित है कि जनसंख्या वृद्धि गुणोत्तर अनुपात से बढ़ती है। इस वृद्धि को प्रदर्शित करने वलो घातीय चक्र पर आधारित चक्र का समीकरण इस

प्रकार है:

$$P n = P_0 (1+r)^n$$

जहाँ $P_{\circ}$ = पिछली अवधि के अंत में जनसंख्या।
r= प्रतिवर्ष जनसंख्या परिवर्तन वृद्धि और कमी की दर |
n=वर्षो की संख्या
व्यवहार में अधिकतर इसी सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

उदहारण

यदि 1971 तथा 1981 की जनसंख्या क्रमशः 40 करोड़ तथा 48 करोड़ है तो 1995 की जनसंख्या का अनुमान कीजिए।

हल:

$$r = \sqrt{\frac{P_n}{P_0}} - 1$$

$$= 10 \sqrt{\frac{48}{40}} - 1$$

$$= 10 \sqrt{1.2 - 1}$$

= 1.018 – 10.018 अथवा 18 प्रति हजार (लघुगणन के प्रयोग से)

1995 की जनसंख्या = $P_n = P_0 (1+r)^n$

$= 48 (1+0.018)^4$

$= 48 (1.018)^4$

= 48 x 1.077 = 51.696 करोड़

10.4.1.4 गुणोत्तर– वृद्धि: इस विधि के अनुसार: (अ) जब दो जनगणनाओं की जनसंख्या मालूम हो, और (ब) किसी मध्यवर्ती वर्ष के लिए जनसंख्या का अनुमान लगाना हो, तो (स) दोनों अनुमानों का गुणोत्तर माध्य उस मध्यवर्ती वर्ष की जनसंख्या का अनुमान होगा सूत्र के

$$P_m = \sqrt{P_1 \times P_2}$$

P = मध्यवर्ती वर्ष की अनुमानित जनसंख्या उदाहरण यदि 1971 तथा 1971 तथा 1981 की जनसंख्या क्रमशः 40 करोड़ तथा 50 करोड़ है, तो 1996 की जनसंख्या का अनुमान कीजिए।

1996 की जनसंख्या = $\sqrt{40 \times 50}$

$= \sqrt{2,000}$

= 44.72 करोड़

10.4.1.5 वृद्धि घात चक्र: पर्ल एवं रीड नामक जनांककों ने 1920 में एक S आकार वाले वृद्धि घातीय जनसंख्या वक्र की रचना की और उसके प्रयोग को जनसंख्या प्रक्षेपण के लिए
इसका समीकरण इस प्रकार है:

$$Yx = \frac{K}{1+10a+bx}$$

$$K = \frac{2Y_0Y_1Y_2 - Y_1^2(Y_0+Y_1)}{Y_0Y_2 - Y_1^2}$$

$$a = \log \frac{(K-Y_0)}{Y_0} \quad b = \frac{1}{n} \log \left[\frac{Y_0(K-Y_1)}{Y_1(K-Y_0)}\right]$$

यह विधि अधिक वैज्ञानिक नहीं है। स्वयं पर्ल ने इस बात को स्वीकार किया है कि जहाँ आर्थिक सामाजिक परिवर्तन अतिशीघ होते हों, वहाँ यह प्रक्षेपण रीति कार्य नहीं करती।

10.4.1.6 बिन्दुरेखीय बिधि:- यह जनसंख्या प्रक्षेपण की सरल विधि है। इसके अन्तर्गत समय को क्षैतिज अक्ष पर तथा जनसंख्या को ऊर्ध्वाधर अक्ष पर प्रदर्शित किया जाता है।
जनसंख्या का वक्र बनता है। अब जिस समय के लिए जनसंख्या प्राप्त करनी हो वहां से एक लम्ब, चक्र की ओर खींचा जाता है। यह लम्ब वक्र को जिस बिन्दु पर काटता है वहां से ऊर्ध्वाधर अक्ष (OY- अक्ष) पर लम्ब द्वारा प्राप्त मूल्य ही प्रक्षेपण जनसंख्या होगी। यही जनसंख्या का अन्तर्वेशन मूल्य भी कहा जाता है। बहिर्वेशन ज्ञात करने के लिए उसी गति
अधिक विश्वसनीय होता है। बहिर्वेशन में वक्र को आगे बढ़ाते समय पर्याप्त सावधानी तथा सतर्कता की आवश्यकता होती है अन्यथा पक्षपात का प्रभाव परिणाम को दूषित कर देता है।

10.4.2 संगठन विधि

जनसंख्या प्रक्षेपण में इस विधि का उपयोग आधुनिक समय में बहुत अधिक किया जा रहा है। इस रीति में जनसंख्या की आयु संरचना, मृत्युक्रम, प्रवास तथा आवास आदि विभिन्न किसी जनसंख्या के स्वरूप, आकार एवं संरचना को किसी तिथि पर लेकर भावी तिथि पर जनसंख्याके स्परूप व आकार को मालूम करने के लिए हम निम्नलिखित तीन तरीकों से गणनाएं कर सकते है:
3. स्वतंत्र रूपसे आयु एवं लिंग वर्ग के आकार को प्रक्षेपित करके। उपर्युक्त प्रथम दो रीतियाँ तो सापेक्ष रूप से अशोधित दर हैं। जबकि अंतिम रीति में आयु, लिंग आदि के अनुसार जन्म और मृत्यु के अनुमान के अनुसार जनसंख्या प्रक्षेपित की जाती है। अतः मान्यताओं का स्परूप भली-भांति परिभाषित होना चाहिए, क्योंकि ये प्रक्षेपण में बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होते हैं।
यदि किसी समय विशेष के जन्म-मृत्यु और देशांतरण के समंक उपलब्ध हों तो आधारित जनसंख्या में उनका उचित समावेश करके उस समय की जनसंख्या अनुमानित की जा सकती है। इस वर्ष बाद की जनसंख्या निम्नलिखित सूत्र के द्वारा आगणित की जा सकती

(P+ DB + PM) (D + P)

जहां पर

P = आधारित जनसंख्या,

M देशांतरण है।

उपर्युक्त सूत्र से जनसंख्या का केवल एक मोटा अनुमान ही लगाया जा सकता है। साथ ही इस सूत्र के द्वारा जनसंख्या प्रक्षेपण आयु वर्ग में प्राप्त नहीं किया जा सकता। इस विधि द्वारा भविष्य की जनसंख्या एकाकी वर्ष, पांच वर्षीय आयु वर्ग एवं 10 वर्षीय आयु वर्ग मे मालूम की जा सकती है। इस विधि के उपयोग के लिए निम्नलिखित समंकों का होना अनिवार्य है:

1. आधारभूत वर्ष में आयु वर्गों एवं लिंग के अनुसार जनसंख्या।
2. आधारभूत वर्ष में विशिष्ट प्रजनन दर तथा जन्म के साथ का लिंग अनुपात और उसके बाद के वर्षों का अनुमान
3. आयु वर्ग में लिंग के अनुसार आधारभूत वर्ष में केंद्रीय मृत्यु दर अथवा उत्तरजीविता अनुपातों एवं उसके बाद के वर्षों के अनुमान।
4. आयु एवं लिंग के अनुसार भविष्य के वर्षों में शुद्ध देशांतरण दर।

नीचे सारणी में दर्शाए गये सूत्र के द्वारा यह मालूम किया जा सकता है कि संगठन विधि द्वारा जनसंख्या का प्रक्षेपण कैसे किया जा सकता है।

सारणी 1 : संगठन द्वारा जनसंख्या प्रक्षेपण का सूत्र

आयु वर्ग	आधारभूत वर्ष में प्रत्येक आयु वर्ग में पुरूषों की जनसंख्या	5 वर्ष के पश्चात् की प्रक्षेपित जनसंख्या
0-4	P_0^0	$P_0^5 = Bm^0.S_B^{25},0 + M_0^5$
5-9	P_5^0	$P_5^5 = P^0 50^{15},5 + M_5^5$
10-14	P_{10}^0	$P_{10}^5 = P_5^0 S_5^{25},10 + M^5_{10}$
15-19	P_{15}^0	$P_{15}^5 = P_{10}^0 S_{10}^{25},15 + M_{15}^5$

$P^{x^t} = Px' = t$ समय पर आयु x से x + 4

$Bm^0 =$ आधारभूत वर्ष से आगे के 5 वर्षों में पुरूषों बच्चों के जन्म की संख्या

$BM^5 =$ आधारभूत वर्ष के 5 वर्षों के आगे के वर्षों में पुरूषों बच्चों की संख्या

$S^t_B., 0 =$ जन्म से 0-4 वर्ष के आयु वर्ग तक जीवित पहुँचने वाले बच्चों का अनुपात

अर्थात

$S^1_B., 0 = 4\ L0^1/5\ \ 1^l_0$ (संदर्भ के लिए जीवन सारिणी का अध्याय देखें)

$Sx^1, X + 5 =$ आयु X से X + 4 में 't' वर्ष के अंत तक संभावित शुद्ध देशांतरण की संख्या

अर्थात

$S_x t, x + 5 = 5^{Lt} x + 5/5x^{Lt}$

$M^{+}{}_{x}$ = आयु X से X+4 में t वर्ष के अंत तक संभावित सुद्ध देशांतरण की संख्या

ऊपरलिखित सूत्र में पुरूष बच्चों के जन्म की संख्या नीचे लिखे तरीके से पता लगाई जा सकती है:

$$Bm^{0} = 5\left(\frac{\sum_{1}^{9} W^{2.5} f^{2.5}}{X = 35 \times 5 \times}\right)$$ (जन्म के समय पुरूषों के जन्म का अनुपात)

$$Bm^{5} = 5\left(\frac{\sum^{9} W^{7.5} f^{7.5}}{X = 35 \times 5 \times}\right)$$ (जन्म के समय पुरूषों के जन्म का अनुपात)

जहां पर Wr का तात्पर्य है = पाँच वर्ष के बीच के समय पर 't' पर 5X से 5X+ 4 वर्ष के आयु वर्ग की स्त्रियों की संख्या f'sr = पाँच वर्ष के बीच के समय पर 't' पर 5X से 5X + 4 वर्ष की स्त्रियों के लिए विशिष्ट प्रजनन दर ऊपर दिए हुए विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि आधारभूत जनसंख्या, प्रजनन, मृत्यु और देशांतरण के सभी आंकड़े उपलब्ध हों, तो प्रक्षेपण बहुत ही आसान कार्य है।

संगठन विधि द्वारा जनसंख्या प्रक्षेपण के लिए आवश्यक है कि आदि के संबंध में सही गणनाएं कर ली जाएं। जन्म दर, मृत्यु दर और देशांतरण के सही आगणन के लिए हमें कई कार्य करने होंगे, जैसा कि निम्न विवरण से स्पष्ट हो जायेगाः ।

(i) जन्म दर: भावी प्रवृत्ति को मालूम करने के लिए हमें कई बातों के अनुमान लगाने होंगे, जैसेः

(अ) प्रक्षेपण के समय आने तक प्रजनन योग्य आयु में कितनी स्त्रियां होंगी।

(ब) उनमें से कितने की मृत्यु हो जाने की संभावना है।

(स) यह स्थिति इस वर्ग की विवाह

बात का भी अनुमान लगाना होगा कि कितनी स्त्रियां बांझ निकल सकती हैं, कितने पुरूष नपुंसक हो सकते हैं आदि। (य) इस प्रकार की मान्यताएं भी माननी होंगी कि समाज का आर्थिक-सामाजिक परिवर्तनों, जैसे-शिक्षा का विकास, वेधव्य विवाह आदि का जन्म दर पर प्रक्षेपण में प्रायः यह पाया जाता है कि प्रजनन संबंधी मान्यताएं इस प्रकार की हो जाती हैं कि प्रजनन दर के घटने का अनुमान लगा लिया जाता है अर्थात् इसका अति अनुमान हो जाता है।

(ii) मृत्यु दर: के संबंध में प्रायः यह देखा गया है कि मृत्यु दर के गिरने की संभावनाओं के बारे में अधिकतर अनुमान इस प्रकार के होते हैं कि वास्तव में जितनी मृत्यु दर घटती है, उससे कम आंका जाता है। मृत्यु दर की संभवनाओं पर न केवल जनसंख्या वृद्धि दर निर्भर रहती है बल्कि इस पर आयु सरंचना भी निर्भर रहती है।

(iii) देशांतरण: किसी देश के बाहर जाने और बाहर से आने वालों के संबंध में प्रक्षेपण अब सरल हैं, क्योंकि अधिकांश देशों ने इससे संबंधित नियम बना लिये हैं और स्वतंत्र प्रवास अब पुरानी बात हो चुकी है।

10.5.0 प्रक्षेपण के स्वरूप

चूंकि इन सब बातों के संबंध में कोई सुनिश्चित मान्यता नहीं होती, इसलिए कई वैकल्पिक मान्यताओं पर तीन तरह के प्रक्षेपण किए जाते हैं। इन्हें क्रमशः ऊंचा, मध्यम एवं नीचा मान्यताओं को जनांकिकीवेत्ताओं ने अग्रलिखित रूप से बांटा है:

सारणी 2 : जनसंख्या वृद्धि संबंधित मान्यताएँ (प्रचलित)

घटक	क्रम		
	उच्च	मध्यम	निम्न
1- जन्म दर	अधिक दर से वृद्धि	मध्यम दर से वृद्धि	कम डर से वृद्धि
2- मृत्यु दर	अधिक दर से वृद्धि	मध्यम दर से वृद्धि	कम डर से वृद्धि
3- प्रवास	अधिक दर से वृद्धि	मध्यम दर से वृद्धि	कम डर से वृद्धि
4- अप्रवास (आवास)	अधिक दर से वृद्धि	मध्यम दर से वृद्धि	कम डर से वृद्धि

उपर्युक्त मान्यताओं के आधार पर ही हम प्रक्षेपित जनंसख्या को ऊंची, मध्यम या नीचे की श्रेणी मे रखते हैं, जिसे हम निम्न तालिका से स्पष्ट दर्शाते है:

सारणी 3 : जनसंख्या प्रक्षेपण (मान्यताएँ के आधार पर)

प्रक्षेपित मान	जन्म दर	मृत्यु दर	प्रवास	अप्रवास
ऊंचा	ऊँची होगी	कमी रहेगी	कम होंगे	अधिक होंगे
मध्यम	मध्यम होगी	मध्यम रहेगी	मध्यम स्तर	मध्यम स्तर पर
निचा	निम्नतम	उच्चतम	पर अधिक	कम

10.5.1 उच्च प्रक्षेपण

इस प्रक्षेपण में हम यह मानकर चलते है कि जनसंख्या में वृद्धि की दर अधिक रहेगी और मृत्यु दर उससे कम रहेगी। बाहर से आकर आवास करने वालों की दर अधिक होगी और देश को छोड़कर प्रवास करने वालों की दर कम होगी। (i) इस प्रकार का प्रक्षेपण उन अर्द्धविकसित देशों में होगा, जहां मृत्यु दर में कमी आ

(ii) वे देश प्रायः संक्रामक काल के देश कहे जाते हैं, जिनमें कि प्रत्येक 25 वर्ष बाद जनसंख्या दुगुनी हो जाती है। इस अवस्था में आज भारत, पाकिस्तान और चीन देश

आते हैं।

10.5.2 मध्यम प्रक्षेपण: जैसा कि नाम से स्पष्ट है, इस प्रक्षेपण में हम यह मान्यता करते है कि जन्म दर, मृत्यु दर, आवास और प्रवास दरें न अधिक होती हैं और न कम। ये मध्यम प्रवृत्ति रहती है। यह प्रक्षेपण उन देशों के लिए उपयोगी है, जिनमें परिवार नियोजन तथा स्वास्थ्य सेवाओं का पर्याप्त प्रसार हो चुका है।

10.5.3 निम्न प्रक्षेपण : यह प्रक्षेपण इस मान्यता पर आधारित है कि देश में यदि जन्म दर अधिक रहेगी, तो मृत्यु दर भी अधिक रहेगी। इसी प्रकार यदि प्रवासियों की दर अधिक होगी, तो बाहर से आकार देशों में बसने वालों की दर भी अधिक होगी। अतः जनसंख्या में वास्तविक वृद्धि बहुत कम होगी। यह प्रक्षेपण उन देशों के लिए उपयोगी है जहाँ जनसंख्या 45 से 50 वर्षों मे दुगुनी होने की प्रवृत्ति रहती है। यदि जन्म दर, मृत्यु दर, आवास और प्रवास सभी दरें ऊंची हैं, तो प्रक्षेपण अर्द्धविकसित देशों के लिए होता है। इसके विपरीत यदि जन्म दर, मृत्यु दर, आवास सभी की दरें निम्न हैं, तो प्रक्षेपण विकसित देशों के लिए होता है।

10.6.0 प्रक्षेपण की शुद्धता

जनसंख्या प्रक्षेपण में केवल गणितीय आगणन ही नहीं होता है, अपितु ये अनुमान पर भी आधारित होते हैं। अतः यह आशा करना कि वे पूर्णरूपेण शुद्ध होंगे, ठीक नहीं है। जनसंख्या के शुद्ध व यथार्थ प्रक्षेपण के लिए कुछ बातें आवश्यक होती हैं। इनमें मुख्य बातें अग्रलिखित हैं, जिनका ध्यान रखना प्रक्षेपण पूर्व आवश्यका होता है।

1.प्रक्षेपण के लिए गणितीय आकलन ही आवश्यक नहीं है, बल्कि जनांकिकी परिवर्तनों के संबंध में सही मान्यताओं को निश्चित करना भी आवश्यक होता है। उदाहरण के लिए जन्म दर के संबंध में सही मान्यता निश्चित करने के पूर्व आर्थिक विकास का स्तर तथा नियोजित परिवार संबंधी व्यक्तियों की अभिरूचि का सही ज्ञान होना भी आवश्यक है।

2. जनसंख्या घटकों से संबंधित सभी प्रकार के उच्च्वाचानो का सही सही ज्ञान हों अछ्ये |

3.जनसंख्या घटकों से संबंधित अवयवों, वातावरण तथा अन्य प्रकार से इनको प्रभावित करने वालो तत्त्वों का सही सही ज्ञान होना चाहिए।

4.सही प्रक्षेपण के लिए तकनीकी जानकारी भी आवश्यक होती है। व्यक्तिगत अभिरूचि द्वारा परिणाम प्रभावित नहीं होने चाहिए। साथ ही प्रक्षेपण की अवधि लंबी नहीं होनी चाहिए।

5.प्रक्षेपण को बहुत छोटे क्षेत्र के बारे में नहीं होना चाहिए। छोटे क्षेत्र बाह्य प्रभावों से अधिक प्रभावित होते हैं। इसके अतिरिक्त छोटे क्षेत्र को प्रक्षेपण जनांकिकी अध्ययनों की दृष्टि से अधिक उपयोगी नहीं होते।

6.प्रक्षेपण विधि का चुनाव इस प्रकार करना चाहिए कि जिससे आवश्यकता पड़ने पर परिणामों की शुद्धता की जांच की जा सके।

7.प्रक्षेपण को स्वतंत्र रूप से कार्य करने तथा परिणामों को प्रकाशित करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

प्रक्षेपण मे आगणन संबंधी मान्यताएं

प्रक्षेपण में प्रयुक्त गणितीय विधियां निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित हैं:

1. पदमाला के मूल्य में आकस्मिक उतार-चढ़ाव का अभाव: जनसंख्या को प्रक्षेपण का दमाला के मूल्यों में कोई आकस्मिक परिवर्तन नहीं होता है।

2. परिवर्तन में एकरूपता: दी हुई अवधि में समंकों में जो परिवर्तन हुए हैं, उनके संबंध में यह मान लिया जाता है कि वे नियमित हैं और उनमें एकरूपता है।

3. पदमालाओं का पारस्परिक संबंध: श्रेणी में जनसंख्या जन्म दर या मृत्यु दर प्रथम पद पूर्णरूपेण स्वतंत्र होता है और अन्य पदों में पारस्परिक निर्भरता होती है।

4. विभिन्न वर्गों की परिस्थितियों में समानता: प्रक्षेपण में प्रयुक्त विभिन्न वर्गों की परिस्थितियां भी एकरूप तथा समान होनी चाहिए। परिस्थितियों में किसी प्रकार की विषमता प्रक्षेपण में अशुद्धि का कारण बन सकती है। दीर्घकालीन जनसंख्या प्रक्षेपणों की गणना में प्रजनन दर में होने वाली कमी को मान लेना उचित नहीं है। यह संभव है कि प्रजननता में हास की प्रवृत्ति कुछ समय पश्चात् रूक जनसंख्या प्रक्षेपणों के अंतर्गत बढ़ते हुए वैज्ञानिक प्रभाव तथा उसके परिणामस्वरूप घटती कमी होती रहेगी-यह मान लेना भंयकर भूल है। हो सकता है कि प्रजननता में यह गिरावट की प्रवृत्ति कुछ समय बाद रूक जाये। प्रजननता नियंतत्र के स्वैच्छिक कारक न केवल जनसंख्या घटा सकते हैं, वरन् बढ़ा भी सकते हैं

समकालीन जनांकिकी वेत्ताओं के प्रति सहानुभूति तथा उनके द्वारा निकाले गये निष्कार्षों को यथावत् स्वीकार करने से भी बड़ी भूल होती रहती है।

10.7.0 जनसंख्या प्रक्षेपण की सीमाएं

भविष्य में जनसंख्या के सम्बन्ध में अनुमान लगाना तथा भविष्यवाणी करना जनांकिकी विश्लेषण का एक अभिन्न अंग है। परन्तु जनसंख्या को प्रभावित करने वाले घटकों में इतनी अधिक विविधता व विरोधाभास है कि जो भी

प्रक्षेपण किए जाते है वे एक अंश तक ही सही होते हैं। **जोसेफ एस. डेबिस** ने जनसंख्या प्रक्षेपण पर टिप्पणी करते हुए लिखा है, ***"यदि कोई विनियोजक जनसंख्या प्रक्षेपण पर विश्वास करके कार्य करने लगे तो वह शीघ्र ही दिवालिया हो जाएगा। यहां तक कि अमेरिका में कम्प्यूटरों की सहायता से निकाले गए जनसंख्या सम्बन्धी प्रक्षेपण भी सही नहीं निकलते। अब समय आ गया है कि हमें यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि इस कार्य में समस्त विशेषज्ञ असफल होंगे।"*** प्रक्षेपण प्रायः ठीक नहीं निकलते फिर भी जनसंख्याशास्त्री इनका प्रयोग स्वतन्त्रता एवं **डब्ल्यू. जी. बर्कले** करते हैं, ***"भविष्य की जनसंख्या से सम्बन्धित किसी प्रकार की गणना प्रकृति से ही काल्पनिक है। यह अनुमान प्रायः गलत साबित होते हैं। भविष्य के सम्बन्ध में विश्वसनीय अनुमान लगाने के लिए हमें भविष्य में जनांकिकी विधियों को प्रभावित करने है।"*** **जान. वी. गाउमैन** ने प्रक्षेपण की सीमाओं की व्याख्या बड़े ही सुन्दर ढंग से करते हुए लिखा है कि ***"जनांकिकी प्रक्षेपण की भविष्यवाणी उतनी ही अनिश्चित है जितनी मौसम सम्बन्धी भविष्यवाणी। जनसंख्या सम्बन्धी प्रक्षेपण कुछ मान्यताओं पर आधारित होते हैं। ये मान्यताएं तथ्यों पर निर्भर रहती हैं। यदि तथ्य बदल जाते हैं तो प्रक्षेपण के परिणाम भी सही नहीं होते।"*** **साइमन कूण्ट्ज** के अनुसार, ***"खगोलशास्त्रियों, रसायनशास्त्रियों तथा भौतिकशास्त्रियों को अपने व्यावहारिक कार्यों मे जो सफलता मिलती है, उनसे उन्हें प्रसिद्धि मिलती है। वे चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण के बारे मे सही भविष्यवाणियां कर सकते हैं, या अणुबम बना सकते है, परन्तु समाजशास्त्री इतने सही रूप से कुछ नहीं कह सकता है।"***

जाता था कि वृद्धिघात वक की सहायता से जनसंख्या का प्रक्षेपण किया जा सकता है, परन्तु आज यह सिद्ध हो गया है कि जनसंख्या के प्रक्षेपण के लिए यह सन्तोषप्रद विधि नहीं है। वास्तव में, यह कठिनाई इसलिए आती है कि विश्व में कोई भी एक सन्तोषप्रद 'जनसंख्या का नियम

प्रो. जोसेफ जे. स्पेंगलर ने प्रक्षेपणों की सत्यता पर सन्देह करते हुए लिखा है कि 'आर्थिक विश्लेषण की संरचना, वास्तविकता के अनुरूप नहीं है। अर्थशास्त्री समंकों को एकत्रित करने तथा उनका विश्लेषण करने में, अवास्तविकता से कार्य करने के अभ्यस्त हो चुके हैं। वे कृत्रिम विश्लेषणों द्वारा निष्कर्ष निकालते हैं। संक्षेप में, जनसंख्या प्रक्षेपण की निम्नलिखित सीमाएं है:

1. अध्ययन विषय की दृष्टि से जनसंख्या प्रक्षेपण के दो दोष या सीमाएं इस प्रकार है:

(अ) जनसंख्या में समरूपता का अभाव, और

(ब) जनसंख्या की प्रावैगिक प्रकृति।

2.जनसंख्या प्रक्षेपण के गलत होने की संभावना इसलिए भी रहती है, क्योंकि जन-संख्यात्मक परिवर्तन नियंत्रण से परे होते है।

3.जनसंख्या प्रक्षेपण में एक अन्य दोष यह है कि ये दीर्घकालीन होत हैं, जो उपयुक्त नहीं है।

4.जनसंख्या प्रक्षेपण उतने ही अनिश्चित होत हैं, जितने कि मौसम के बारे में भविष्यवाणियाँ

5.पूरी तरह सही प्रक्षेपण बंद अर्थव्यवस्था और स्थिर अर्थव्यवस्था में किए जा सकते हैं। किंतु व्यावहारिक रूप से कोई अर्थव्यवस्था बंद और स्थिर नहीं होती। अर्थव्यवस्था में निरंतर किसी-न-किसी प्रकार के परिवर्तन होते रहते हैं। ऐसी स्थिति में प्रक्षेपण गलत रहते हैं।

10.8.0 जनसंख्या प्रक्षेपण का महत्व

जनांकिकी तथा आर्थिक अध्ययन की दृष्टि से जनसंख्या प्रक्षेपण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जनसंख्या प्रक्षेपण के महत्व को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत रखा जा सकता है:

10.8.1 जीवन सतंको का अभाव व अपर्याप्तता – जनांकिकी में जीवन समंको का बहुत महत्व है। यदि विभिन्न देशों में जीवन समंको की स्थिति का अध्ययन किया जाय तो पता चलता है कि वे न केवल अपर्याप्त है

बल्कि उनका अभाव भी है। प्रायः अल्पविकसित देशों में जहां जनगणना के क्षेत्र में पर्याप्त उन्नति नहीं हुई है वहां भूतकालीन समंक या तो

मिलते ही नहीं, यदि मिलते भी हैं तो वे इतने अपर्याप्त होते हैं कि उनकी सहायता से किसी निश्चित व विश्वसनीय परिणाम पर नहीं पहुंचा जा सकता है। ऐसी दशा में प्रक्षेपण

10.8.2 समंको का नष्ट हो जाना - अनेक बार ऐसा प्रतीत होता है कि किसी अनुसन्धान से सम्बन्धित समंक वर्षा, बाढ़, दीमक, चोरी अथवा आग लगने के कारण नष्ट हो जाते हैं अथवा खो जाते हैं। ऐसी दशा में प्रक्षेपण आवश्यक हो जाता है।

10.8.3 जनगणना तिथियों के मध्य जनसंख्या की जानकारी हेतु - जनगणना 10 वर्षों के अन्तराल पर होती है और तभी जनसंख्या के सही समंक उपलब्ध हो पाते हैं। परन्तु जनसंख्या सम्बन्धी समंकों की आवश्यकता दो जनगणनाओं की मध्यवर्ती तिथियों में कभी

10.8.4 राष्टीय योजना में महत्व - योजना के लक्ष्यों के निर्धारण में प्रक्षेपित जनसंख्या की महत्पपूर्ण भूमिका होती है। योजनाओं का लक्ष्य निर्धारित करते समय देश की भावी आवश्यकताओं का अनुमान लगाना पड़ता है। शिक्षा, रोजगार, औद्योगिक एवं आर्थिक प्रक्षेपण द्वारा की जा सकती है।

10.8.5 तुलनात्मक अध्ययन – दो स्थानों, समयों एवं अर्थव्यवस्थाओं के बीच तुलना करने में प्रक्षेपण की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। चीन की प्रक्षेपित जनसंख्या के अनुमानों से ज्ञात होता है कि अभी भी हम चीन की तरह प्रभावी परिवार नियोजन नहीं अपना सकेंगे। इसके अतिरिक्त, श्रम शक्ति, बेरोजगारी, भविष्य में भूमि पर जनसंख्या का दबाव, व्यावसायिक संरचना में सम्भावित परिवर्तन का अनुमान प्रक्षेपण से सम्भव है। जनसंख्या प्रक्षेपण के महत्व को स्पष्ट करत हुए प्रो. हजनाल ने लिखा है, "प्रक्षेपण में चाहे कितनी ही कमियां क्यों न हों, कुछ आंकड़ों का होना, न होने से तो अच्छा है, प्रक्षेपण की उपयोगिता में चार चांद लगा देता है।" इसी तरह, डेगान्स ने लिखा है कि " प्रक्षेपण हमारी नीतियों के निर्धारण में भले ही पूर्णरूपेण महत्वपूर्ण न हो, परन्तु हम अपनी स्थिति

10.9.0 भारतीय जनसंख्या प्रक्षेपण (2001-2026)

जनसंख्या पर राष्ट्रीय आयोग द्वारा जनसंख्या प्रक्षेपणों पर तकनीकी ग्रुप ने अपनी रिपोर्ट मई 2006 में प्रस्तुत की। भारतीय जनगणना ने दिसम्बर 2006 को इसमें संशोधन भारतीय

लिए जनसंख्या की प्रवृत्ति और इसके कारणतत्वों को स्पष्ट किया। रिपोर्ट देश के राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय आयोजन के लिए महत्वपूर्ण है। इस रिपोर्ट में निम्नलिखित मान्यताएं की गयीः

1.1981-2000 के दौरान कुल प्रजनन दर में गिरावट की अनुभव की गयी प्रवृत्ति अगले वर्षों में भी बनी रहेगी|
स्रोतः भारत और राज्यों के लिए जनसंख्या प्रक्षेपण पर तकनीकी ग्रुप की रिपोर्ट, संशोधित, दिसम्बर 2006

2.सभी राज्यों में लिंग अनुपात भावी वर्षों में भी स्थिर रहेगा।

3.जैसे-जैसे जीवन-प्रत्याश का स्तर उन्नत होता है, इसकी वृद्धि-दर मन्द होती चली

4.अन्तः राज्यीय प्रवसन जो 1991-2001 में अनुभव किया गया, वह समग्र प्रक्षेपण काल में स्थिर रहेगा।

5. 1991-2001 की अवधि के शहरी-ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि के अन्तर 2026 तक ऐसे ही बने रहेंगे

तलिका 12: 2001-26 के बीच भारत की प्रेक्षेपित जनसंख्या के लक्षण

	2001		2006		2011		2016		2021		2026
जनसंख्या (करोड़)	102.9		111.2		119.2		126.9		134.0		140.0
पुरूष (करोड़)			57.5		61.7		65.7		69.4		72.5
स्त्रियां (करोड़)	49.6		53.7		57.5		61.2		64.6		67.5

लिंग अनुपात	933	932	932	931	930	930
शहरी जनसंख्या (करोड़)	28.6	32.1	35.8	39.5	43.3	46.8
जनसंख्या घनत्व (प्रति वर्ग किलोमीटर	313	338	363	386	408	426
आयु वर्गों के अनुसार जनसंख्या प्रतिशत)						
0 - 14	35.5	32.1	29.1	26.8	25.1	23.3
15-64	60.1	62.9	65.4	67.1	67.8	68.4
65 और अधिक	4.4	5.0	5.5	6.1	7.1	8.3

रिपोर्ट को इस बात का बोध है कि "प्रजनन और मृत्यु की भावी प्रवृत्ति का पूर्वानुमान कोई आसान काम नहीं है जबकि कुछ समय के उपरान्त चिकित्सीय और स्वास्थ्य, नीतियां, खाद्यान्न उत्पादन और इसकी न्यायोचित उपलब्धि, जलवायु में परिवर्तन, सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थति, राजनीतिक-आर्थिक परिस्थितियां और अन्य बहुत से कारण जनसंख्या की वृद्धि-दर को प्रभावित करते है। इन सीमाओं को ध्यान में रखते हुए

- भारत की जनसंख्या 102.9 करोड़ से बढ़ कर 2026 में 140 करोड़ हो जाएगी अर्थात् इन 25 वर्षों में इसमें 26 प्रतिशत की वृद्धि होगी अर्थात् 1.2 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से। परिणामतः जनसंख्या घनत्व 313 से बढ़कर 426 प्रति वर्ग कि.मी. हो जाएगा।
- लिंग अनुपात (प्रति एक हजार पुरूषों पर स्त्रियों) में 2001-26 के दौरान मामूली गिरावट हो कर यह 933 से 930 हो जाएगा।
- बाल जनसंख्या (o-14 आयु वर्ग) 35.3 प्रतिशत से गिर कर 2001-26 के दौरान 23.3
- कार्यकारी आयु वर्ग 15-64 वर्ष में 25 वर्षों के दौरान 60.1 प्रतिशत से बढ़ कर 68.4 प्रतिशत हो जाने की संभावना है। कुल जनसंख्या के अनुपात के रूप में इसके 2001 में 28 प्रतिशत से बढ़ कर 33 प्रतिशत हो जाने की संभावना है। देश में 2001-2026 के बीच कुल जनसंख्या में 37.1 करोड़ की
- 15-24 वर्षों के आयु-वर्ग में युवक जनसंख्या जो 2001 में 19.5 करोड़ थी बढ़ कर 2011 में 24 करोड़ और फिर और बढ़ कर 2026 में 22.4 करोड़ हो जाएगी। कुल जनसंख्या के प्रतिशत के रूप में यह 2001 में 19 प्रतिशत से गिर कर 2026 में 16 प्रतिशत हो जाएगी।

	2001-05	**2006-10**	**2011-15**	**2016-20**	**2021-25**
जनसंख्या वृद्धि दर	1.6	1.4	1.3	1.1	.9
रुक्ष जन्म दर	23.2	21.3	16.6	18.8	16.0
रुक्ष मृत्यु दर	7.5	7.3	7.2	7.1	7.2
शिशु मृत्यु दर	61.3	54.3	49.2	44.0	40.2
5 वर्ष के निचे मृत्यु दर	82.0	72.8	65.9	59.0	54.0
कुल प्रजनन दर	2.9	2.6	2.3	2.2	2.0
पुरुषों की जीवन प्रत्याशा	63.8	65.8	67.3	68.8	69.8

स्त्रियों की जीवन प्रत्याशा	66.1	68.1	69.6	71.1	72.3

स्रोत: भारत और राज्यों के लिए जनसंख्या प्रक्षेपण पर तकनीकी ग्रुप की रिपोर्ट, दिसम्बर 2006

जनांकिकीय संकेतक

• जनसंख्या की वृद्धि में कमी होने की लगातार प्रत्याशा है और यह 2001-05 के दौरान

• रूक्ष जन्म दर 2001-05 के दौरान 23.2 प्रतिशत से गिर कर 2021-25 के दौरान 16 प्रतिशत हो जाएगी। इसका कारण कुल प्रजनन दर में गिरावट है। इसके विरूद्ध रूक्ष मृत्यु दर में मामूली कमी होकर यह 2001-05 के दौरान 7.5 प्रतिशत से कम होकर 2021-25 में

तालिका 14: वर्ष जिस तक कुल प्रजनन दर 2.1 प्राप्त कर ली जाएगी

भारत और मुख्य राज्य	**वर्ष जिस तक प्रक्षेपित कुल प्रजनन दर 2.1 हो जाएगी**
भारत	2015
केरल	1988 में प्राप्त
तमिलनाडू	2001 में प्राप्त
हिमाचल प्रदेश	2002 में प्राप्त
आंध्र प्रदेश	2002
पश्चिम बंगाल	2003
कर्नाटक	2005
पंजाब	2006
महाराष्ट्र	2009
उड़ीसा	2010
गुजरात	2011
हरयाणा	2012
झारखण्ड	2012
असम	2018
बिहार	2019
राजस्थान	2021
उत्तराखण्ड	2021
छत्तीसगढ़	2022
मध्यप्रदेश	2022
उत्तर प्रदेश	2025
	2027

नोट:- राज्यों को वर्ष के आधार पर प्रत्याशित कुल प्रजनन दर 2.1 के अनुसार बढ़ते हुए क्रम में व्यवस्थित किया गया है।

स्रोत: भारत की जनगणना, भारत और राज्यों के जनसंख्या प्रक्षेपण, 2001-2026.

• शिशु मृत्यु दर के 2001-05 के दौरान 61 प्रतिशत से कम होकर 2021-25 की अवधि के अन्त तक 40

प्रतिशत हो जाने का अनुमान है। • कुल प्रजनन दर 2001-05 में 2.9 से कम होकर 2021-25 के दौरान 2.0 हो जाएगी। इसके साथ भारित प्रजनन के 2015 तक प्रतिस्थापन दर का अनुमान है। राज्य स्तर पर, जैसा कि तालिका 13 से विदित है, चार राज्य अर्थात् केरल, तमिलनाडू, दिल्ली और हिमाचल प्रदेश पहले ही कुल प्रजनन दर के प्रतिस्थापन स्तर पर पहुंच गए। इस सम्बन्ध में पिछड़े हुए हैं झारखण्ड, असम, बिहार, राजस्थान, उत्तराखण्ड, छत्तीसगढ़,

37.1 करोड़ की प्रक्षेपित जनसंख्या वृद्धि में से 18.7 करोड़ सात राज्यों में हाने की संभावना है। ये राज्य हैं: बिहार, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और उत्तरखंड। इन राज्यों को बीमार राज्य भी कहते हैं। इसका अर्थ यह कि अगले 25 वर्षों में भारत की जनसंख्या वृद्धि का 57 प्रतिशत इन राज्यों में होगा। केवल उत्तर प्रदेश में ही कुल जनसंख्या की 22 प्रतिशत वृद्धि होगी। राज्य स्तर की जनसंख्या के प्रक्षेपण तालिका 15 मे समग्र काल 2001-06 दो भागों में विभक्त किए गए हैं- एक 10 वर्ष का काल 2001-2011 और दूसरा 15 वर्षों का काल 2011-2012 इस अध्ययनको अग्रगामी राज्यों और पिछड़े राज्यों को प्रति व्यक्ति शुद्ध देशीय उत्पाद के आधार पर विभक्त किया गया है। |

तलिका 15: 2001-2026 के लिए भारत और मुख्य राज्यों में जनसंख्या प्रक्षेपण

	कुल जनसंख्या (करोड़)			**प्रतिशत वृद्धि**			**औसत वार्षिक वृद्धिदर।**
	2001	2011	2026	2001-2011	2011-2026	2001-2011	2011-2026
भारत	102.9	119.3	140.0	15.9	17.3	1.5	1.1
अग्रगामी राज्य							
पंजाब	2.44	2.78	3.13	13.9	12.6	1.3	.8
महाराष्ट्र	9.69	11.27	13.33	16.3	22.7	1.5	1.3
हरियाणा	2.11	2.54	3.14	20.3	23.6	1.8	1.4
गुजरात	5.07	5.90	6.93	16.4	17.4	1.5	1.0
पश्चिमबंगाल	8.02	8.95	10.05	11.6	12.3	1.1	08
कर्नाटक	5.29	5.94	6.69	13.3	12.6	1.2	.8
केरल	3.18	3.46	3.73	8.8	7.8	0.9	0.5
तमिलनाडु	6.24	6.74	7.19	8.0	6.7	0.8	0.5
आंद्रप्रदेश	7.62	6.74	7.19	8.0	6.7	0.8	0.5
उपयोग	**49.66**	**56.00**	**63.60**	**12.9**	**13.5**	**1.2**	**0.8**
पिछड़े राज्य							
छत्तीसगढ़	2.08	2.43	2.86	16.6	17.6	1.6	1.1
मध्यप्रदेश	6.03	7.22	8.77	19.7	21.5	1.8	1.3
असम	2.67	30.6	3.56	14.6	16.3	1.4	1.0
उत्तरप्रदेश	16.625	20.08	24.80	20.8	23.9	1.9	1.4
राजस्थान	5.65	6.78	8.15	12.0	20.2	1.1	1.2

उडीशा	3.68	4.07	4.53	10.6	11.3	1.0	1.2
बिहार	8.30	9.77	11.38	17.7	16.4	1.7	1.0
झारखण्ड	2.69	3.15	3.74	17.1	18.7	1.6	1.2
उपयोग	**47.42 (46.4)**	**56.56 (47.4)**	**67.87 (48.4)**	**18.5**	**19.9**	**1.1**	**1.2**

नोट:- 0 में दिए आंकड़े अखिल भारतीय जनसंख्या में इस समूह के भाग को व्यक्त करते है। स्रोत: भारत की जनगणना, भारत और राज्यों के जनसंख्या प्रक्षेपण (2001-2026)

9 अग्रगामी राज्यों की जनसंख्या कुल जनसंख्या का 48.2 प्रतिशत थी परन्तु जैसे ही जनसंख्या वृद्धिदर मन्द हो कर 2001-11 में 1.2 प्रतिशत और फिर 2011-26 में 0.8 प्रतिशत हो जाएगी इस का कुल जनसंख्या में भाग 2026 में कम होकर 45.4 प्रतिशत हो जाएगा। केवल हरयाणा और महाराष्ट्र को छोड़ जिनमें 2001-2006 के दौरान जनसंख्या की वृद्धिदर क्रमशः 1.4 प्रतिशत और 1.30 प्रतिशत के उच्च स्तर तक रहने का अनुमान है, अन्य सभी राज्यों में जनसंख्या वृद्धिदर 1 प्रतिशत से कम हो जाने का संकेत है और केरल एवं तमिलनाडू में यह 2011-26 के दौरान 0.5 प्रतिशत के निम्न स्तर तक कम हो जाने

पिछड़े राज्यों की जनसंख्या जो 2001 में 47.7 करोड़ थी बढ़ कर 2026 में 67.9 करोड़ हो जाएगी- 25 वर्षों के दौरान 20.2 करोड़ की वृद्धि। इसके विरूद्ध, 8 अग्रगामी राज्यों की जनसंख्या जो 2001 में 49.7 करोड़ थी, बढ़कर 2026 में 63.6 करोड़ हो जाएगी- 13.9 करोड़ की वृद्धि। चाहे पिछड़े राज्यों में जनसंख्या की वृद्धिदर 2001-2011 के दौरान 1.7 प्रतिशत थी यह मन्द होकर 1.2 प्रतिशत हो जाएगी, फिर भी परिवार नियोजन कार्यक्रम का

और अधिक प्रभाव होना आवश्यक है ताकि यह प्रतिस्थापन स्तर पर आ जाए। इसमें मुख्य दोषी मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश हैं जिनमें 2011-26 के दौरान भी जनसंख्या वृद्धि की कहीं अधिक ऊंची दरें बनी रहेंगी। इन दो राज्यों की जनसंख्या 2026 में 33.7 करोड़ होगी

10.10.0 शब्दावली

- **परिवर्तन में एकरूपता** : दी हुई अवधि में समंकों में जो परिवर्तन हुए हैं, उनके संबंध में यह मान लिया जाता है कि वे नियमित हैं और उनमें एकरूपता है।
- **जनसंख्या प्रक्षेपण:** जनसंख्या के प्रक्षेपण का अभिप्राय किसी देश, क्षेत्र या स्थान विशेष की जनसंख्या के पूर्वानुमानों या पर्व आकलनों से है। भावी प्रक्षेपण : इसका अभिप्राय भावी वर्षों के अनुमान से है।
- **पूर्वानुमान** : संख्यात्मक तथ्यों के भूतकालीन व्यवहार के आधार पर भविष्य के लिए काल श्रेणी को विस्तृत अथवा विक्षेपित करने की प्रक्रिया सांख्यिकी में पूर्वानुमान कहलाती है।
- **भविष्यवाणी** : यह बहुत कुछ ग्रह दशा, भाग्यवादिता अथवा किसी रहस्यपूर्ण शक्ति की
- **अंतर्जनन गणना** : इसका आशय उस प्रक्षेपण से है जो दो विगत जनगणना काल के बीच की अवधि से संबंधित है।
- **परवर्ती जनगणना** : इसके अंतर्गत वे प्रक्षेपण आते हैं जो अंतिम जनगणना की अवधि से लेकर अब तक के किसी वर्ष विशेष से संबंधित हैं।

- **उच्च प्रक्षेपण** : जनसंख्या में वृद्धि की दर अधिक रहेगी और मृत्यु दर उससे कम रहेगी। बाहर से आकर आवास करने वालों की दर अधिक होगी और देश को छोड़कर प्रवास करने वालों की दर कम होगी।
- **निम्न प्रक्षेपण :** यह प्रक्षेपण इस मान्यता पर आधारित है कि देश में यदि जन्म दर अधिक रहेगी, तो मृत्यु दर भी अधिक रहेगी। इसी प्रकार यदि प्रवासियों की दर अधिक होगी, तो बाहर से आकार देशों में बसने वालों की दर भी अधिक होगी। अतः जनसंख्या में वास्तविक
- **मध्यम प्रक्षेपण** : जैसा कि नाम से स्पष्ट है, इस प्रक्षेपण में हम यह मान्यता करते है कि जन्म दर, मृत्यु दर, आवास और प्रवास दरें न अधिक होती हैं और न कम। ये मध्यम स्तर पर रहती है

10.11 संदर्भ सहित ग्रन्थ

- सिन्हा, बी. सी. एंव पुष्पा सिन्हा (2011), "जनांकिकी के सिद्धान्त", मयूर पेपर बैक्स, नई
- चौबे, पी. के. (2000), "भारत में जनसंख्या नीति', कनिष्ट प्रकाशन, नई दिल्ली।
- मिश्र, प्रकाश (2012), "जनांकिकी', साहित्य भवन पब्लिकेशन, दिल्ली।

10.12 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री

- अग्रवाल, एस. एन. (1972), "भारत की जनसंख्या समस्या", टाटा मैक्ग्रा हिल कम्पनी,
- दत्त, रूद्र एवं के. पी. एम. सुन्दरम (2010), "भारतीय अर्थ व्यवस्था", एस. चन्द एण्ड

10.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. किसी देश की जनसंख्या के आकार में भविष्य में होने वाले परिवर्तनों की शुद्धता से पूर्वानुमान करने का कौन सा ढंग उपयुक्त है? उसका वर्णन कीजिए।
2. जनसंख्या की वृद्धि का माप करने का पूर्वानुमान लगाने की प्रविधियों का विवेचन
3. मध्य वर्ष की जनसंख्या का अनुमान करने की विभिन्न विधियों का वर्णन कीजिए।
4. जनसंख्या प्रक्षेपण कैसे बनाया जाता है? इसके महत्त्व को पूरी तरह समझाइए तथा इसकी सीमाएं इंगित कीजिए। आप जनसंख्या प्रक्षेपण कैसे करते है ? किन्हीं दो महत्त्वपूर्ण प्रक्षेपण विधियों की व्याख्या कीजिये

इकाई -11 जीवन सारणी, जन्म-मृत्यु सांख्यिकी,एवं लाजिस्टिक वक्र

(Life Tables, Birth and Death Statistics and Logistic Curve)

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 मुख्य भाग
  11.3.1 जीवन तालिका का अर्थ एवं परिभाषा
  11.3.2 जीवन सारिणी के प्रकार
  11.3.3 जीवन सारिणी की मान्यताएं
  11.3.4 जीवन सारिणी की रचना
  11.3.5 संक्षिप्त जीवन सारिणी
  11.3.6 जीवन सारणियों का उपयोग
11.4 जन्म मृत्यु सांख्यिकी
  11.4.1 निश्चल जनसंख्या
  11.4.2 स्थिर जनसंख्या
11.5 लाजिस्टिक वक
  11.5.1 रेमण्ड पर्ल एवं रीड का लाजिस्टिक वक सिद्वान्त
  11.5.2 सिद्वान्त की मान्यताएं
  11.5.3 सिद्वान्त का स्पष्टीकरण
11.6 अभ्यास प्रश्न
11.7 सारांश
11.8 शब्दावली
11.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
11.10 संदर्भ सहित ग्रंथ
11.11 उपयोगी / सहायक ग्रंथ
11.12 निबन्धात्मक प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

प्रमापों की उपलब्ध तकनीकों में जीवन–तालिका सर्वाधिक व्यापक एवं प्रभावशाली मानी जाती है। इस सांख्यिकीय प्रविधि की सहायता से किसी समाज की जनसंख्या की औसत आयु एवं मृत्यु की सम्भावनाओं का अनुमान लगाया जा सकता है। इस तरह, जीवन-तालिका किसी जनसंख्या द्वारा अनुभव की गयी मृत्यु दरों के संक्षेपीकरण की एक सरलतम रीति है। जीवन-तालिका जीवन बीमा व्यवसाय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जीवन बीमा व्यवसाय के अन्तर्गत एक अवधि विशेष में जीवित व्यक्तियों का अनुपात, औसत जीवन प्रत्याशा, जन्म के समय जीवित रहने की प्रत्याशा तथा किसी आयु विशेष पर मरने वाले व्यक्तियों की सम्भावित संख्या सम्बन्धी आंकडों की आवश्यकता महसूस की जाती है। जीवन बीमा व्यवसाय यह जानना चाहता है कि किसी वर्ग विशेष के व्यक्तियों की किस आयु विशेष तक मरने की सम्भावना होती है। इस सबकी जानकारी जीवन-तालिका द्वारा सहजता से प्राप्त की जा सकती है। क्योंकि जीवन-तालिका उन लोगों के जीवन का इतिहास है जिनको कि एक निश्चित संख्या में लेकर जीवन-तालिका में तब तक अध्ययन करते हैं जब तक कि एक निश्चित संख्या में लेकर जीवन-तालिका में तब तक अध्ययन करते हैं जब तक कि एक भी व्यक्ति जीवित रहता है अथवा सब व्यक्ति मर नहीं जाते। अन्य शब्दों में, जीवन-तालिका के अन्तर्गत विभिन्न आयु वर्ग के व्यक्तियों के जीवत रहने तथा उनकी मृत्यु की सम्भावनाओं को व्यक्त किया जाता है।

11.2 उददेश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से हम समझ सकेंगें कि

- ✓ जीवन सारिणी का विष्लेशण इस तकनीक पर आधारित है।
- ✓ जीवन सारिणी किस प्रकार निर्मित होता है।
- ✓ जन्म से किसी विशिष्ट आयु तक के संभावित म्रत्यु प्रभाव की जानकारी
- ✓ जीवन सारिणी का प्रयोग शुद्ध प्रजनन दर की गणना करने में किया जाता है जो जनसंख्या वृद्वि का सर्वोत्तम माप है।
- ✓ आने वाले वर्षों में जनसंख्या का पूर्वानुमान लगा सकते हैं।

11.3 मुख्य भाग

11.3.1 जीवन - सारणी का अर्थ एंव परिभाषाएं

जीवन सारणी की अवधारणा सम्भवतः सर्वप्रथम **ग्रांट (Graunt)** की पुस्तक **"Natural and Political observations.Made upon the Bills of mortality"** में 1962 में क्रमवद्ध रूप में विकसित की गयी। ग्रांट ने इस पुस्तक के माध्यम से न केवल इंग्लैण्ड की जनसंख्या की जीवन सारणी प्रस्तुत करने को श्रेय प्राप्त किया, बल्कि जनांकिकी में सर्वप्रथम सांख्यिकी के उपयोग के कारण उन्हे इस शास्त्र में सांख्यिकी के जनक के रूप में भी माना जाता है। जीवन सारणी को वैज्ञानिक रूप प्रदान करने वालों में ग्रांट के साथ ही विलियम पैटी को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। जीवन सारणी के प्राथमिक स्वरूप को यूलर तथा शुशमिल्क ने संशोधित किया तथा इसे आधुनिकतम स्वरूप प्रदान करने का श्रेय हेती को प्राप्त होता है। जनांकिकी प्रमापों की उपलब्ध तकनीकों में जीवन - सारणी सर्वाधिक व्यापक एंव प्रभावशाली मानी जाती हैं। इस सांख्यकीय प्रविधि की सहायता से किसी समाज की जनसंख्या की औसत आयु एंव मृत्यु की सम्भावनाओं का अनुमान लगाया जा सकता हैं। जीवन – सारणी उन लोगों के जीवन का इतिहास है जिनको कि एक निरिचित संख्या में लेकर जीवन - सारणी में तब तक अध्ययन करते हैं जब तक कि एक भी व्यक्ति जीवित रहता है अथवा सब व्यक्ति मर नही जाते। अन्य शब्दों में,

जीवन - सारणी के अन्तर्गत विभिन्न आयु वर्ग के व्यक्तियों के जीवित रहनें तथा उनकी मृत्यु की सम्भावनाओं को व्यक्त किया जाता है। अर्थात किसी समाज में किसी समयावधि में जनंसख्या के विभिन्न आयु वर्गो में मृत्यु दर के आधार पर जीवन तथा मृत्यु की प्रवृत्ति तथा संभावनाओं के गणितीय स्वरूप को तथा उसके सारणी वद्ध प्रस्तुतीकरण को जीवन सारणी कहा जाता
है।

विभिन्न जनांकिकीविदों द्वारा जीवन – सारणी की दी गयी प्रमुख परिभाषाएं इस प्रकार हैं : **बर्कले** के शब्दों में, ***"जीवन - सारणी एक काल्पनिक समह अथवा सहगण का जीवन इतिहास है जो मृत्यु के कारण शनैः - शनैः घटता जाता है। यह अभिलेख प्रत्येक सदस्य के जन्म से प्रारम्भ होता है और तब तक चलता रहता है जब तक कि एक भी व्यक्ति जीवित रहता हैं।"*** **प्रो. बोग** शब्दों में, ***"जीवन -सारणी एक गणितीय प्रतिमान है, जो जनसंख्या की किसी विशिष्ट समय में मृत्यु सम्बन्धी दशाओं का चित्रण करती है तथा जीवन की प्रत्याशा के माप का आधार प्रस्तुत करती है।"*** **लुइस हेनरी** का कथन है कि ***"किसी दी हुई जनसंख्या के लिए एक अथवा अधिक वर्षों के लिए विभिन्न आयु वर्गों में मृत्यु की सम्भावनाओं के समूह को उस जनसंख्या की जीवन - सारणी कहते हैं।"*** **प्रो. थॉम्पसन** एवं **लेबिस** के अनुसार, ***" जीवन - सारणी किसी विशिष्ट जनसंख्या में व्यक्तियों की सम्भावित जीवन अवधि तथा उसकी मृत्यु की सम्भावित आयु दर्शाने के लिए की गयी उद्देश्यपरक जनांकिकीय सारणी है।"*** । जीवन - सारणी सामान्यतया प्रत्येक जनगणना के पश्चात मृत्यु सम्बन्धी दशाओं का अध्ययन करने के लिए तैयार की जाती हैं। विस्तृत अध्ययन एवं विश्लेषण की दृष्टि से इन तालिकाओं का निर्माण देश के भौगोलिक उपविभाजन अथवा जनसंख्या के विभिन्न खण्डों के लिए भी किया जाता है। इस तरह, स्त्रियों एवं पुरूषों के लिए अलग – अलग सारणी बनाई जाती है क्योंकि दोनों की मृत्यु दरों में अन्तर होता है।

11.3.2 जीवन सारणी के प्रकार

(1) पूर्ण जीवन - सारणी:- पूर्ण जीवन - सारणी से तात्पर्य एक ऐसी तालिका से है जिसमें मृत्युक्रम एकवर्षीय वर्गों में प्रदर्शित किया जाता है।

(2) संक्षिप्त जीवन - सारणी:- संक्षिप्त जीवन - सारणी के अन्तर्गत मृत्युक्रम को एकवर्षीय वर्ग में न रखकर एक से अधिक (प्रायः पांच वर्ष) वर्षीय वर्गों में प्रदर्शित किया जाता है।

11.3.3 जीवन - सारणी की मान्यताएं

जीवन - सारणी का निर्माण निम्न पूर्व धारणाओं के आधार पर किया जाता है :

• जीवन - सारणी के अन्तर्गत जिस समूह या सहगण का अध्ययन किया जाता है उसमें कमी केवल मृत्यु के कारण होता है। जीवन सारणी के लिए व्यक्तियों का समुदाय आने और जाने वाले प्रवासियों से अप्रभावित रहता है।

• व्यक्तियों की मृत्यु केवल पूर्व निश्चित अनुमानो के अनुसार ही होती है।

मृत्यु की दर व सम्भावना समान व स्थिर रहती है।

मृत्यु दर प्रायः आयु – विशिष्ट मृत्यु दर होती है तथा यह अधिक प्रामाणिक और उच्चस्तरीय शुद्धता रखती है। मृत्यु का दबाव पूरे वर्ष समान रूप से वितरित रहता है। प्रत्येक आयु पर मृत्यु संख्या एक जन्म दिवस से अगले जन्म दिवस के बीच समान रूप से वितरित होती है। इस काल्पनिक जन - समूह में एक ही लिंग के व्यक्ति होते हैं क्योंकि पुरूषों एवं स्त्रियों की आयु – विशिष्ट मृत्यु दरों में भिन्नता पाई जाती है।

• जीवन – सारणी एक सुविधाजनक प्रमाप जनसंख्या जैसे 1,000 या 10,000 अथवा 1, 00,000 से प्रारम्भ होती है जिसको जीवन - मूलांक (radix) कहा जाता है।

इससे तुलनात्मक अध्ययन में सुविधा होती है। उपर्युक्त मान्यताओं के आधार पर जिन प्रचलित जीवन सारणियों

का निर्माण किया जाता है

उनसे आपकों निम्न बातों का सहजता से ज्ञान हो सकता है:

• किसी वर्ष विशेष में मृत्युओं की सम्भावना। नवजात शिशु की औसत आयु की सम्भावना।

• किसी व्यक्ति का किसी आयु विशेष पर प्रत्याशित जीवन काल।

• किसी आयु – अवधि में जीवन प्रत्याशा।।

• किसी आयु विशेष के व्यक्तियों का किन्हीं विशेष वर्षों में जीवित रहने की प्रत्याशा।

इसके अतिरिक्त किसी भी जीवन - सारणी में वे सभी सूचनाएं दी जाती हैं जिनकी कि जनसंख्या का स्थित (stationary) अवस्था में मृत्यु क्रम की विवेचना एवं विश्लेषण करते समय आवश्यकता पडती हैं।

11.3.4 जीवन - सारणी की रचना

जीवन - सारणी में 8 स्तम्भ होते हैं जिनकी रचना नीचे दी गयी रीति के अनुसार की जाती है :

(i) **प्रथम – पंक्ति (x):-** में आयु को प्रदर्शित किया जाता है जो 0, 1, 2, 3 .....99 तक पूर्णांक वर्षों के रूप में होता है।

(ii) **पंक्ति – दो (l_x)**:- इस स्तम्भ में उन व्यक्तियों की संख्या को प्रदर्शित किया जाता है जो जन्म की कल्पित संख्या (1) में से x आयु प्राप्त कर चुके हैं या प्राप्त करने की आशा रखते हैं। इसे जीवन सारणी का मूलांक भी कहा जाता है।

(iii)**पंक्ति - तीन (d_x)** :- यह स्तम्भ 1 व्यक्तियों में से, आयु x तथा उससे अगले एक वर्ष की आयु अर्थात आयु (x + 1) के बीच मरने वालों की संख्या को प्रदर्शित करता है। इस तरह, $d_x = l_x - l_{x+1}$

(iv) **पंक्ति - चार** (q_x):- यह स्तम्भ व्यक्तियों में आयु x तथा x+1 के मध्य मृत्यु की सम्भाविता को व्यक्त किया जाता हैं। सूत्रानुसार, $q_x = \frac{d_x}{l_x}$

(v) **पंक्ति – पांच (p_x:)**:- यह स्तम्भ में किसी व्यक्ति के वर्ष x तथा उसके अगले जन्म दिवस x+1 के बीच जीवित रहने की सम्भावना को व्यक्त किया जाता है। pr प्राप्त करने के लिए 1 में से 4 घटा दिया जाता है। सूत्रानुसार, px = l-qx

(vi) **पंक्ति – छः (L_x)**:- यह स्तम्भ आयु x तथा x+1 वर्षों के मध्य lo व्यक्तियों के सहगण द्वारा सामूहिक रूप से जिए हुए जीवन वर्षों को व्यक्त करता है। L की मान्यता यह भी है कि मृत्यु संख्या का वितरण पूरे वर्ष भर समान बना रहता है। सूत्रानुसार, $L_x = \frac{l_x + l_{x+1}}{2}$

अथवा $L_x = \frac{l_x + l_{x+1}}{2} = l_x - \frac{1}{2} d_x$

आप के लिए एक महत्वपूर्ण प्रश्न उल्लेखनीय है कि शैशवावस्था में विशेषकर एक वर्ष की आयु तक मृत्यु दर में तेजी से उतार – चढ़ाव आता है। अतः ऐसी स्थिति में उपरोक्त सूत्र का प्रयोग करना उचित नहीं माना जाता क्योंकि विभिन्न आयु वर्गो में मृत्यु का वितरण समान नहीं रहता। चूंकि मृत्यु की सम्भावना प्रारम्भ के वर्षों में अधिक होती है और इस तरह सहगण अपेक्षाकृत अधिक व्यक्ति वर्षों को खो बैठता है। अतः जब मृत्यु का वितरण समान न हो तब $\mathbf{L_x}$ तथा l_{x+1} के मध्य बिन्दु वाला सूत्र अर्थात $L_x == \frac{l_x + l_{x+1}}{2} = l_x - \frac{1}{2} d_x$.

L_x की प्राप्ति के लिए एक महत्वाकांक्षी अनुमान सिद्ध होगा। यद्यपि $\mathbf{L_x}$ तथा l_{x+1} के सापेक्ष भारांकन का प्रत्यक्ष विधि (बाल्यावस्था में मासिक आयु मृत्यु दर) द्वारा आगणन किया जा सकता है परन्तु यह एक जटिल प्रक्रिया है। अतः प्रारम्भिक आयु वर्गों में L_x, की गणना हेतु निम्न संशोधन – समायोजन करना आवश्यक समझा जाता है :

$L_0 = 0.3\ l_0 + 0.7\ l_1$

$L_1 = 0.4\, l_1 + 0.6\, l_2$

$L_2 = 0.5\, l_2 + 0.5\, l_3 = \frac{1}{2} d_x \left(l_2 + l_3\right)$

जीवन–तालिका के स्तम्भ 1, में 0 से 4 वर्ष की आयु तक के मूल्य उपर्युक्त संशोधित आधार पर आगणित किए जाते हैं। जबकि x = 5 और इससे आगे मृत्यु संख्या का वितरण समान हो जाने पर सूत्र $l_x - \frac{1}{2} d_x$, का प्रयोग किया जा सकता है।

(vii) **पंक्ति – सात (T_x)**:: - यह स्तम्भ किसी सहगण द्वारा आयु x से मृत्यु होने तक व्यतीत किए जाने वाले जीवन – वर्षों की कुल संख्या को प्रदर्शित करता है। इस तरह, यह स्तम्भ किसी आयु वर्ग में जीवित व्यक्तियों की भविष्य में कुल वर्ष जीवित रहने की सम्भावना व्यक्त करता है। इसकी गणना का सूत्र निम्न प्रकार है: $T_x = L_x + L_x + 1 + L_x + 2 + ...$

अथवा $T_x + 1 = T_x - L_x$

(viii) पंक्ति – आठ (e_x^0):- यह स्तम्भ x वर्ष की आयु पर जीवन – प्रत्याशा को प्रदर्शित करता है। इसकी गणना का सूत्र इस प्रकार है :

$$e_x^0 = \frac{T_x}{l_x}$$

कोल तथा डेमिनी ने जीवन सारणी में एक अतिरिक्त पंक्ति भी दर्शाया है। इससे आयु-विशेष पर जीवित व्यक्तियों में से अलग वर्गातंर पूर्ण होने तक मृत व्यक्तियों की दर को दर्शाया गया है। सूत्र के रूप में

$$Mx = \frac{d_x}{l_x}$$

जहाँ d_x की गणना पूर्व निश्चित मृतकों के आधार पर न करके यथार्थ मृतकों के आधार पर की जाती है।

(ix) इसके अतिरिक्त कभी - कभी इस सारणी की सहायता से किसी सहगण की आयु विशिष्ट मृत्य दर (mix) तथा आयु विशिष्ट मृत्यु दर की सहयता से q, की गणना की जाती है। गणना का सूत्र इन प्रकार है -

आयु-विशिष्ट मृत्यु दर $(m_x) = \frac{d_x}{L_x} = \frac{l_x - l_{x+1}}{T_x - T_{x+1}}$

अथवा $q_x = \frac{2m_x}{2 + m_x}$

पूर्ण तथा संक्षिप्त जीवन-सारणी में आयु अथवा आयु वर्गों के सामान्यतया आरोही क्रम में प्रथम स्तम्भ में तथा संगति फलनों को पूर्व में बताए गए कमानुसार दाहिनी तरफ रखा जाता है।

उदाहरण1:

एक जीवन तालिका के निम्नलिखित अंश के रिक्त स्तंभो को पूरा कीजिए।

x	q_x	p_x	d_x	l_x	L_x	T_x	e_x
0	–	–	–	100	–	5000	–
1	–	–	–	90	–	–	–
2	–	–	–	81	–	–	–

3	–	–	–	73	–	–	–
4	–	–	6	68	–	–	–

हलः-उपरोक्त सारणी में 1, का मूल्य दिया हुआ है। 1,- 141 के सूत्र से d, का मूल्य मालूम किया जा सकता है।

$$d_x = l_x - l_{x+1}$$

$$d_0 = l_0 - l_1 = 100 - 90 = 10$$

$$d_1 = l_1 - l_2 = 90 - 81 = 9$$

$$d_2 = l_2 - l_3 = 81 - 73 = 8$$

$$d_3 = l_3 - l_4 = 73 - 68 = 5$$

d^x =6 दिया हुआ

$$q_x = \frac{d_x}{I_x}$$

$$q_0 = \frac{d_0}{l_0} = \frac{10}{100} = .1$$

$$q_1 = \frac{d_1}{l_1} = \frac{9}{90} = .1$$

$$q_2 = \frac{d_2}{l_2} = \frac{8}{81} = .099$$

$$q_3 = \frac{d_3}{l_3} = \frac{5}{73} = .68$$

$$q_4 = \frac{d_4}{l_4} = \frac{6}{68} = .088$$

$p_x + 1 - q_x$

$p_0 = 1 - q_0 = 1 - .1 = .9$

$p_1 = 1 - q_1 = 1 - .1 = .9$

$p_2 = 1 - q_2 = 1 - .099 = .901$

$p_3 = 1 - q_3 = 1 - .068 = .932$

$p_4 = 1 - q_4 = 1 - .088 = .912$

$L_x = l_x - .5d_x$

$L_0 = l_0 - .7d_0 = 100 - .7 \times 10 = 100 - 7 = 93$

$L_1 = l_1 - .6d_1 = 90 - .6 \times 9 = 90 - 5.4 = 84.6 = 85$

$L_2 = l_2 - .5d_2 = 81 - .5 \times 8 = 81 - 4 = 77$

$L_3 = l_3 - .5d_3 = 73 - .5 \times 5 = 73 - 2.5 = 70.5 = 70$

$L_4 = l_4 - .5d_4 = 68 - .5 \times 6 = 68 - 3 = 65$

T_x का प्रारंभिक मूल्य T_0 दिया हुआ है जो 5000 है , उसके बाद के मूल्यों को निकालने के लिए , T_x ,एवं L_x के पूर्ववर्ती मूल्यों का अंतर निकलवा लेते हैं |अर्थात :

$T_{x+1} = T_x - L_x$

$T_1 = T_0 - L_0 = 5000 - 93 = 4907$

$T_2 = T_1 - L_1 = 4907 - 85 = 4822$

$T_3 = T_2 - L_2 = 4822 - 77 = 4745$

$T_4 = T_3 - L_3 = 4745 - 70 = 4675$

$$e_x = \frac{T_x}{l_x}$$

$$e_0 = \frac{T_0}{l_0} = \frac{5{,}000}{100} = 50$$

$$e_1 = \frac{T_1}{l_1} = \frac{4{,}907}{90} = 54.52$$

$$e_2 = \frac{T_2}{l_2} = \frac{4{,}822}{81} = 59.53$$

$$e_3 = \frac{T_3}{l_3} = \frac{4{,}745}{73} = 65.0$$

$$e_4 = \frac{T_4}{l_4} = \frac{4{,}645}{68} = 68.75$$

x	q_x	p^x	d^x	1^x	L^x	T^x	e^x
0	.1	.9	10	100	93	5000	50
1	.1	.9	9	90	85	4907	54.52
2	.099	.901	8	81	77	4822	59.53
3	.068	.932	5	73	70	4745	65.00
4	.088	.912	6	68	65	4675	68.75

उदाहरण 2

Age in years	*1x*	*dx*	p_x	q_x	*Lx*	T_x	E^0_x
7	90000	500	?	?	?	4850000	?
8	?	400	?	?	?	?	?

In the usual notations, we have,

$1_8 = 1_7 - d_7 = 90000 - 500 = 89500$

$$p_7 = \frac{1}{1_7} = \frac{89500}{90000} = 0.9943$$

$q_7 = 1 - p_7 = 1 - 0.9943 = 0.0057$

$1_9 = 1_8 - 400 = 89500 - 400 = 89100$

$$p_8 = \frac{1_8}{1_7} = \frac{89100}{89500} = 0.9955$$

$q_8 = 1 - p_s = 1 - 0.9955 = 0.0045$

$$L_7 = \frac{1_7 + 1_8}{2} = \frac{90000 + 89500}{2} = 89750$$

$$L_8 = \frac{1_8 + 1_9}{2} = \frac{89500 + 89100}{2} = 89300$$

$$e^0_7 = \frac{T_7}{1_7} = \frac{4850000}{90000} = 53.89$$

$$T_8 = T_7 - L_7 = 4850000 - 89750 = 4760250$$

$$e_8^0 = \frac{T_8}{1_8} = \frac{4760250}{89500} = 53.18$$

11.3.5 संक्षिप्त जीवन सारणी (Abridged Life Table)

पूर्ण जीवन सारणी न केवल लंबी ही होती है, बल्कि इसमें अनावश्यक विस्तृत सूचनाओं को सम्मिलित कर लिया जाता है। ये विस्तृत सूचनाएं किसी विशेष संदर्भ में ही उपयोगी हो सकती हैं। पूर्ण जीवन तालिकाओं के निर्माण में त्रुटियां होने की संभावना ज्यादा होती है। पूर्ण जीवन तालिकाओं से जन-अनावश्यक विस्तार हटाकर मात्र जीवन के प्रमुख वर्षों का जीवन इतिहास इसमें लिखा जाता है, इसलिए यह संक्षिप्त जीवन-तालिका कहलाती है। विशेषताएं संक्षिप्त जीवन सारणी की कुछ प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार है:

1. यदि जीवन सारणी में दो आयु वर्गों में अंतर हो तो उसे संक्षिप्त जीवन तालिका कहते हैं। अधिकतर संक्षिप्त जीवन तालिका 5 वर्ष के आयु के वर्ग के लिए बनाई जाती है।

2.संपूर्ण सारणी में जो चिह्न प्रयोग किये जाते हैं, उनमें ही थोड़ा-सा परिवर्तन करके संक्षिप्त जीवन तालिका में प्रयोग किया जाता है। यह परिवर्तन केवल आयु एवं वर्ग को सूचित करने के लिए किए जाते हैं, जैसे-n,qx, npx, ndy, nL |चिह्न निश्चित आयु के सूचक हैं, उनमें कोई परिवर्तन नहीं किया जाता है, जैसे- $_nq_x$, $_np_x$, $_nd_x$, $_nL_x$ केवल L पंक्ति को छोड़कर अन्य सभी पंक्तियां पहले की तरह ही मालूम की जा सकती हैं।

3. संक्षिप्त जीवन सारणी की पंक्तियों में कुछ महत्त्वपूर्ण संबंध निम्न हैं:

$$nd_x = \frac{l_0 + 4}{l_x}$$

$$np_x = l_x \times p_x$$

$$nd_x = l_x, bq_x = l_x - l_x + 4$$

अतः आयु वर्ग को बढ़ा देने से पंक्तियों के पारस्परिक संबंध में कोई परिवर्तन नहीं होता है। यदि आयु वर्ग में अंतर 5 वर्ष का हो, तो 5 L की संख्या निम्नलिखित सूत्र से मालूम की जा सकती है:

$$_5L_x = \frac{5}{2}(l_2 + 5)$$

$$_nL_x = \frac{n}{2}(l_x + l_x + n)$$

परंतु संक्षिप्त जीवन सारणी के निर्माण में उपरोक्त सूत्र के प्रयोग से nL, की संख्या विश्वसनीय प्राप्त नहीं होती है। चूंकि जीवन- सारणी की अंतिम पंक्ति nl इस पंक्ति पर निर्भर करती है, इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि किसी दूसरे तरीके से 1, की संख्या ज्ञात की जाये।

4. डी. एन. ए. ग्रिबिल ने मालूम करने का एक संशोधित सूत्र दिया है:

$$nL_x = \frac{n}{2}(l_x + l_x + n) + \frac{4}{24}(nd_x + 4 - nd_x - 4)$$

इसमें दूसरी विधि यह है कि सामान्य जनसंख्या की आयु विशिष्ट मृत्यु दर में सहगण के बचे हुए सदस्य के जीवित रहने वाले वर्षों का अनुमान लगाया जाये। इस प्रकार की मृत्यु दर को जीवन तालिका में nm, के चिह्न द्वारा दर्शाते हैं। जहां पर:

$$nm_x = \frac{nd_x}{nL_x}$$

अतः यदि nm, और nd की संख्या मालूम हो, तो nL, को भी ज्ञात किया जा सकता है क्योंकि:

$$nL_x = \frac{nd_x}{nm_x}$$

परंतु बिना nL, के nm, की संख्या मालूम नहीं हो सकती। अतः वास्तविक जनसंख्या के अनुरूप मृत्यु दर को ज्ञात किया जा सकता है, जिसे nm, के चिह्न से प्रदर्शित किया जाता है। यदि यह मान लिया जाये कि वास्तविक जनसंख्या और जीवन की तालिका जनसंख्या की मृत्यु दर एक ही है, तो nL, को निम्न सूत्र से आगणित किया जा सकता है:

$$nL_x = \frac{nd_x}{nm_x}$$

संक्षिप्त जीवन सारणी के विशिष्ट लाभ संक्षिप्त जीवन सारणी के निम्नांकित विशिष्ट लाभ है:

1.इस सारणी के निर्माण में कम समय और कम खर्च लगता है।

2.इस सारणी में जिन वर्षों का जीवन इतिहास सम्मिलित नहीं किया गया है, उनका अन्तर्वेशन भी संभव है, यदि इसकी आवश्यकता उपयोगकर्ता को हो।

3.इस सारणी में कम सूचनाएं होने के कारण त्रुटियों की संभावनाएं कम हो जाती हैं। 4.इस सारणी द्वारा जीवन के सभी प्रमुख वर्षों के संबंध में सभी स्तंभ की सूचनाएं प्राप्त हो जाती हैं। इस प्रकार की सूचनाएं जो आवश्यक हैं, इस सारणी में सम्मिलित नहीं की जाती हैं।

11.3.6. जीवन - सारणी का उपयोग

व्यावहारिक जीवन में जीवन– सारणी के अनेक उपयोग हैं और इन्ही उपयोगिताओं के कारण जीवन - सारणी का जनांकिकी के अध्ययन में महत्व बढ़ता जा रहा है। संक्षेप में, जीवन- सारणी के उपयोग को निम्न प्रमुख शीर्षकों के अन्तर्गत रखा जा सकता है :

1. जन्म के समय जीवन की प्रत्याशा:- जीवन– सारणी की सहायता से इस बात की जानकारी प्राप्त की जा सकती है कि एक सजीव जन्मे शिशु की औसत रूप से कितने वर्ष तक जीवित रहने की सम्भावना है। इस तरह, जीवन-तालिका का एक महत्वपूर्ण उपयोग जीवन प्रत्याशा की माप है। यह जीवन प्रत्याशा किसी देश के लोगों के रहन-सहन के स्तर तथा उस देश में उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं पर प्रकाश डालती है।

2. प्रजननशीलता के अध्ययन में महत्व :- जीवन- सारणी की सहायता से प्रजननशीलता का अध्ययन भी किया जा सकता है। इसमें विवाहित स्त्रियों को कई उपवर्गों में विभाजित कर दिया जाता है। जिसमें x स्तम्भ के अन्तर्गत स्त्रियों के विवाहित जीवन की अवधि को दर्शाया जाता है। L, स्तम्भ में उन स्त्रियों की संख्या को दर्शाया जाता है जिन्होंने कभी भी किसी बच्चे को जन्म नहीं दिया है। d, स्तम्भ को पुनः di,d., तथा d: आदि भागों में विभाजित किया जाता है। da, में उन स्त्रियों को रखा जाता है जो एक बच्चे वाली है, d.,, में उन स्त्रियों को रखा जाता है जो दो बच्चो वाली हैं तथा d., मे 3 बच्चे वाली स्त्रियां रखी जाती हैं। इस तरह प्रजननशीलता की तालिका को स्ट्रेटीफाइड प्रजनन सारणी (Stratified fertility table) कहा जाता है।

3.जीवन बीमा ब्यवसाय में महत्व :- जीवन बीमा ब्यवसाय में जीवन- सारणी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इन तालिकाओं की सहायता से इस तथ्य की जानकारी प्राप्त हो जाती है कि विभिन्न आयु अथवा आयु वर्ग के व्यक्तियों की जीवन प्रत्याशा कितनी है। जो व्यक्ति जीवन बीमा कराता है उसकी आयु के आधार पर भविष्य में उसके जीवित रहने की सम्भावना (जो e, स्तम्भ में दी हुई रहती है) का पता लगा लिया जाता है। फिर इस आयु

वर्ग में मृत्यु का दबाव ज्ञात कर लिया जाता है। तालिका में यह d, स्तम्भ में प्रदर्शित किया जाता है। बीमा कम्पनियां जीवन प्रत्याशा के आधार पर प्रीमियम की दरें निर्धारित करती है।

4.देशान्तरण के अध्ययन में महत्व :- जिन देशों में प्रवास सम्बन्धी सूचनाओं का पंजीकरण नहीं होता अथवा सूचानाए अपूर्ण रहती हैं अथवा प्राप्त सूचनाएं विश्वसनीय नहीं होतीं तो तरण से सम्बन्धित आंकड़ों को जीवन–तालिका की सहायता से जाना जा सकता है। मान लीजिए 1971 की जनगणना के अनुसार किसी स्थान पर 35 वर्ष के पुरूषों की संख्या - है और 1981 में 45 वर्ष की आयु के पुरूषों की संख्या 1 है। यदि x में से मृत्यु क्रम प्रभाव को घटा दिया जाये तो इसे ' के बराबर अर्थात्, y=x- मृत्यु प्रभाव होना चाहिए। यदि यह) से अधिक है तो इसका अर्थ है कि पुरूषों का आगमन हुआ है और इसके विपरीत यदि यह ए से कम है तो पुरूषों का बहिर्गमन हुआ है।

5.जनसंख्या प्रक्षेपण में महत्व:- जीवन- सारणी जनसंख्या प्रक्षेपण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसकी सहायता से इस बात की जानकारी प्राप्त हो सकती है कि प्रजनन आयु वर्ग की महिलाओं का प्रतिस्थापन किस प्रकार हो रहा है तथा एक दी हुई प्रजनन-शीलता के आधार पर जनसंख्या किस दर से बढ़ेगी।

6.स्वास्थ्य सेवाओं की तुलना:- जीवन- सारणी की सहायता से स्वास्थ्य सेवाओं की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। स्तम्भ L, के आंकड़ों के आधार पर किन्हीं दो या दो से अधिक स्थानों पर उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। जिस क्षेत्र या देश में L, का मूल्य जितना अधिक होगा वहां उतनी ही अधिक स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध होने की सम्भावना हो सकती है।

7. काल्पनिक निश्चल जनसंख्या:- जीवन- सारणी के L तथा T स्तम्भों की सहायता से एक काल्पनिक निश्चल जनसंख्या का नमूना ज्ञात होता है। यह तभी सम्भव है जब किसी समुदाय में मरने वालों तथा जन्म लेने वालों (दोनों की) संख्या समान हो (तालिका के अनुसार, 1, 00,000 हो) । इन स्तम्भों का प्रतिशत वितरण किसी भी वास्तविक जनसंख्या के प्रत्याशित गठन अनुमानों की उस अवस्था का आभास कराता है जबकि जन्मकम और मृत्युक्रम दीर्घ काल तक एक समान बने रहते हैं।

8. मृत्युकम का प्रभाव:- जीवन– सारणी का प्रयोग दो जनसंख्याओं में मृत्यु स्थिति की तुलना करने और उसके प्रभाव का अध्ययन करने के लिए भी किया जाता है।

9. नीति निर्माण में सहायक:- जीवन– सारणी की सहायता से शुद्ध प्रजनन दर, भविष्य में श्रम शक्ति, विधवाओं एवं विधुरों की संख्या, अनाथों की संख्या, स्कूल जाने वाले बच्चों की संख्या, अशोधित मृत्यु दर तथा देशान्तरण आदि का अनुमान लगाया जा सकता है। अतः इन समस्याओं के समाधान हेतु उपयुक्त नीतियां बनाई जा सकती हैं। इस तरह, जीवन तालिकाओं का मानव संसाधन विकास एंव नियोजन में विशेष महत्व है।

10. इसके अतिरिक्त जीवन - सारणी की सहायता से आयु प्रत्याशा के अन्तर से रंग एवं वर्ग भेद की नीति का अंदाजा लगाया जा सकता है। जिस समाज में जीवित रहने की सम्भावना कम और मृत्यु का दबाव अधिक रहता है वह समाज का गरीब वर्ग हो सकता है।

11.जीवन–तालिकाओं की सहायता से निश्चल (Stationary) तथा स्थिर (Stable) जनसंख्या के काल्पनिक मॉडलों का निर्माण किया जा सकता है।

11.4 जन्म मृत्यु सांख्यिकी

जीवन–तालिकाओं की सहायता से काल्पनिक जनसंख्या मॉडलों का सर्वप्रथम निर्माण लोका (A. J. Lotka) ने 1925 में किया। उसके उपरान्त कोल (A. J. Coale) तथा ग्लास (D. V. Glass) ने पृथक - पृथक विधियों का प्रयोग कर स्थिर जनसंख्या के काल्पनिक मॉडलों का निर्माण किया जिनकी सहायता से जनसंख्या वृद्धि दर आदि का पता लगाया जाना सम्भव हो सका है। इस मॉडलों का निर्माण करते समय इस आधारभूत मान्यता को स्वीकार

किया गया है कि जन्म एवं मृत्यु दरें स्थिर एवं निश्चित है तथा प्रवासन पूर्णरूपेण बन्द है। इस तरह दोनों ही काल्पनिक जनसंख्या मॉडल विभिन्न आय - वर्गो के आधार पर निर्मित किया जाता है। यद्यपि न दोनों मॉडलों में पर्याप्त समानता देखने को मिलती है फिर भी इनमें कुछ आधारभूत अन्तर भी है यही कारण है कि इनका अलग - अलग अध्ययन करना उचित माना जाता है।

11.4.1 निश्चल जनसंख्या

यदि किसी जनसंख्या के प्रत्येक आयु वर्ग पर जन्म दर एवं मृत्यु दर स्थिर और बराबर रहे तथा प्रवासन का कोई प्रभाव न पड़े तो जनसंख्या का आकार निश्चल हो जाता है। इस तरह, प्रत्येक आयु वर्ग पर व्यक्तियों की ही औसत संख्या जीवन तालिका के प्रारम्भिक सहगण के बराबर ही रहेगी। अतः जनसंख्या, हर आयु वर्ग पर प्रारम्भिक सहगण के बराबर ही मानी जाएगी। इस प्रकार, "किसी जनसंख्या का काल्पनिक मॉडल जो जन्म दर, मृत्यु दर तथा सम्पूर्ण जनसंख्या की अपरिवर्तित दशाओं पर आधारित होता है, निश्चल जनसंख्या मॉडल कहा जाता है।" इस निश्चल जनसंख्या मॉडल का निर्माण जीवन–तालिका की सहायता से किया जा सकता है। इस तरह का मॉडल पुरूषों तथा स्त्रियों दोनों के लिए एक साथ बनाया जा सकता है। यदि जीवन–तालिका में प्रयुक्त संकेत 1, किसी आयु x पर जीवित रहने वाले व्यक्तियों की संख्या, d,इसी आयु पर मृत्युओं की संख्या L, अथवा nL, मध्यवर्गीय जनसंख्या, T, निश्चल संख्या है जो इस स्तम्भ के मूल्य T. पर निर्भर है और इसे हम यथावत निश्चल जनसंख्या मानकर चलें तो निश्चल जनसंख्या की अवधारणाओं के आधार पर जन्म दर तथा मृत्यु पर

चुंकि जीवन प्रत्याशा, e = To

अतः जन्म दर = मृत्यु दर = -.K

eo इस मॉडल में जन्म दर तथा मृत्यु दर बराबर होने के कारण जनसंख्या अपरिवर्तित रहती है अतः इस निश्चल जनसंख्या मॉडल का व्यावहारिक जीवन में कोई महत्व नहीं है। वास्तविक जगत में यह स्थिति देखने को नही मिलती कि जन्म तथा मृत्यु दरें पूर्ण रूपेण बराबर हो जाये। इस मॉडल का मात्र सैद्धान्तिक महत्व है जिसका प्रयोग यह अध्ययन करने हेतु किया जा सकता है कि इन स्थिर दशाओं पर आधारित जनसंख्या की संरचना क्या हो सकती है। इसके अतिरिक्त इसकी तलना इस वास्तविक जनसंख्या से की जा सकती है जिसमें मृत्यु एवं जन्म दरें परिवर्तनशील होती हैं या जन्म दर को स्थिर एवं मृत्यु दर को परिवर्तनशील अथवा मृत्यु दर को स्थिर एवं जन्म दर को परिवर्तनशील मानकर भी निश्चल जनसंख्या की संरचना का अध्ययन किया जा सकता है। यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि निश्चल जनसंख्या का अध्ययन करते समय प्रत्येक आयु पर प्रारम्भिक जनसंख्या को 1,00,000 या 10,000,000 से ही प्रारम्भ किया जाता है।

11.4.2 स्थिर जनसंख्या

स्थिर जनसंख्या को निश्चल जनसंख्या की सहायता से जाना जा सकता है। इस काल्पनिक मॉडल में जनसंख्या का निश्चल रहना आवश्यक नहीं होता। इसके अन्तर्गत काल्पनिक जनसंख्या, मृत्यु एवं जन्म की एक निश्चित तालिका, जिसमें प्रतिवर्ष कुछ परिवर्तन होता रहता है, के द्वारा प्रभावित होती है। इस प्रकार, "स्थिर जनसंख्या काल्पनिक जनसंख्या के उस स्थायी स्वरूप का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें पूर्वकल्पित आयु-विशिष्ट जन्म दरें एवं मृत्यु दरें अपरिवर्तित एवं यथावत बनी रहती है। यह इन्हीं जन्म एवं मृत्यु दरों से पर्णतया परिकलित की जाती है, यहां प्रवासन पूर्णतया वर्जित है और यह किसी निश्चल जनसंख्या की संरचना पर निर्भर नहीं करता। स्थिर जनसंख्या एक स्व-पर्याप्त योजना द्वारा जन्म दर एवं मृत्यु दर दोनों को ही एक साथ लेकर तैयार की जाती है।" इसके अन्तर्गत निश्चल जनसंख्या की तरह नए सहगण का कोई निश्चिल आकार नहीं होता. क्योंकि इसकी रचना नए सहगण का कोई आकार नही होता, क्योंकि इसकी रचना जन्म दर के साथ – साथ पुनरूत्पादित आयु के व्यक्तियों की संख्या के द्वारा होती है। अतः मान्यताओं के स्थिर रहते हुए भी जनसंख्या के आकार में परिवर्तन हो सकता है। स्थिर

जनसंख्या की अपनी एक आयु संरचना होती है जो कि स्थिर जन्म एवं मृत्यु दर तालिका पर निर्भर करती है। इस तरह, इसकी सहायता से दी हुई दशाओं के अन्तर्गत जनसंख्या के विकास एवं आयु संरचना से दी हुई दशाओं के अन्तर्गत जनसंख्या के विकास एवं आयु संरचना के स्वरूप की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। स्थिर जनसंख्या का भी शुद्ध पुनरूत्पादन-दर की ही तरह, किसी वास्तविक जनसंख्या से सम्बन्ध नहीं होता। इस तरह यह काल्पनिक मॉडल निश्चित एवं विशिष्ट दशाओं में जनसंख्या के ढांचे का संज्ञान कराने में सफल हो जाता है। जीवन-दरों का वास्तविक जनसंख्या में प्रभाव का ज्ञान सम्भव नहीं हो पाता जबकि इसका इस काल्पनिक मॉडल की सहायता से सहजता से अध्ययन किया जा सकता है।

11.5 लॉजिस्टिक वक्र सिद्धांत

जनसंख्या वृद्धि के अध्ययन में गणितीय सिद्धांत के निर्माण के सर्वप्रथम **क्यूटेलेट** (1835) का नाम लिया जाता है। क्यूटेलेट के अनुसार जनसंख्या की रूकावटों का विरोध करने पर जनसंख्या वृद्धि दर अधिक तीव्र हो जातीहै। अपरिवर्तनीय सामाजिक अवस्थाओं के फलस्वरूप जनसंख्या की वृद्धि दर धीमी रहती है। क्यूटेलेट के इस सुझाव का अध्ययन पाश्चात्य विद्वान बारहुस्ट ने सन् 1838 ई. में किया और यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि जनसंख्या वृद्धि के लिए क्रमबद्ध सैद्धांतिक वक्र रेखा उपयुक्त होगी, जिसका उन्होने वृद्धिघात नाम दिया। इसी वक्र का उपयोग उन्होंने बेल्जियम की जनसंख्या का अनुमान लगाने में किया। उन्होंने लिखा कि जिस अनुपात में जनसंख्या बढ़ती है, उसी अनुपात में जनसंख्या वृद्धि पर लगने वाले अवरोध भी बढ़ते हैं। आंकड़ो के अभाव के कारण इस सिद्धांत का अधिक समय तक प्रयोग न हो सका। शनैः शनैः 1920 तक बारहस्ट के कार्य को भुला दिया गया।

11.5.1 रेमण्ड पर्ल एवं रीड का लॉजिस्टिक वक सिद्वान्त

सन् 1920 में पर्ल तथा रीड ने वृद्धिघात सिद्धांत को नवीन रूप से प्रतिपादित किया, जिसका पिछले सिद्धांत से कोई संबंध नहीं था |उन्होंने अमरीका में जनसंख्या वृद्धि के समकों का अध्ययन कर एक गणितीय समीकरण दिया तथा एकत्रित समकों को समय के साथ ग्राफ पर अंकित करने पर लॉजिस्टिक कर्व प्राप्त किया। उनका विचार था कि जनसंख्या में चक्रीय प्रवृत्ति से वृद्धि होती है। उन्हीं के शब्दों में, **"किसी क्षेत्र विशेष में किसी निश्चित अवधि में जनसंख्या निम्नतम सीमा से उस उच्चतम सीमा की ओर बढ़ती है, जिसे सांस्कृतिक स्थितियों एवं उत्पादन की रीतियों को दृष्टिगत रखते हुए वह जनसंख्या सहन कर सकती है।"** जनसंख्या की यह वृद्धि चक्रों होती है। चक्र के प्रारंभ में जनसंख्या की वृद्धि धीरे धीरे होती है, किंतु जनसंख्या वृद्धि की निरपेक्ष दर प्रति समय इकाई के साथ चक्र में मध्य बिंदु तक उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है। इस बिंदु के बाद जनसंख्या वृद्धि की दर समय की प्रति इकाई के साथ चक्र की समाप्ति तक शनैः शनैः घटती जाती है। यदि इस प्रवृत्ति ककको चित्र के रूप में व्यक्त किया जाये तो लॉजिस्टिक वक्र की आकृति बन जाती है।

11.5.2 सिद्धांत की मान्यताएं।

यह सिद्धांत निम्नलिखित मान्यताओं पर आधारित है:

1.भौतिक परिवेश यथा स्थिर रहता है।

2. किसी विशिष्ट समय (x) की (N) जनसंख्या निम्नतम अनंत स्पर्शीय सीमा से उच्चतम अनंत स्पर्शीय सीमा (K) तक बढ़ती है। यह उच्चतम अनंत स्पर्शीय सीमा वह सीमा है, जिसका निर्धारण अपेक्षित पर्यावरण द्वारा होता है, जो प्रचलित सांस्कृतिक दशाओं तथा उत्पादन की विधियों द्वारा होता है।

3.जनसंख्या वृद्धि को आनुपातिक दर R तेजी के साथ घटती है, क्योंकि जनसंख्या घनत्व में वृद्धि इस प्रवृत्ति को हतोत्साहित करती है। इस प्रकार प्रति वर्ष अथवा निश्चिता समयावधि में कुल जनसंख्या वृद्धि को ग्राफ पर अंकित करने से घंटी के आकार का समरूप वक्र प्राप्त हो जायेगा, जो उस शीर्ष बिंदु तक बढ़ती है जहां N== होती है, अर्थात् वास्तविक जनसंख्या अधिकतम सम्भाव्य जनसंख्या की आधी होती है तथा फिर नीचे शून्य की ओर मुड़

जाती है। इस प्रकार जनसंख्या 'S'आकार के वक्र का अनुकरण उस सयम करती है, जबकि वह निम्नतम बिंदु से अधिकतम बिंदु 'K' तक पहुंचती है।

11.5.3 सिद्धांत का स्पष्टीकरण

इस सिद्धांत का निर्माण उन प्रयोगों के आधार पर किया गया है जो **पर्ल** ने '**फल की मक्खियों'** पर किए थे। पर्ल के अनुसार इन मक्खियों की संख्या में आंरभ में तीव्रता से वृद्धि होती है, फिर वृद्धि की गति मंद पड़ जाती है। उसके बाद वह धीरे-धीरे घटती है ओर अंत में तीव्रता के साथ घटती है और स्थिर हो जाती है, जहां से फिर इसमें वृद्धि होने लगती है। विशेषता यह है कि घटने के पश्चात् भी मक्खियों की संख्या उस स्तर से अधिक रहती है। जहां से इसने बढ़ना आरंभ किया था। पर्ल का मत था जो नियम फल-मक्खियों पर लागू होता है, वह मनुष्यों के बारे में भी सत्य है। प्रो पर्ल ने बताया कि जनसंख्या सदैव तीव्र गति से नहीं बढ़ती है, बल्कि जनसंख्या पहले तेजी के साथ बढती है, फिर बढ़ने की गति धीमी हो जाती है, उसके पश्चात् वह धीरे-धीरे घटने लगती है और अंत में तेजी के साथ घटती है (घटने के कारण जनसंख्या कुछ मक अवश्य हो जाती है, परंतु घटने के पश्चात् भी वह बिंदु से ऊंची ही रहती है, जिससे इसने आरंभ में बढ़ना शुरू किया था)। एक निम्नतम बिंदु पर पहुंचने के पश्चात् जनसंख्या फिर बढ़ने लगती है- पहले तेजी के साथ, फिर धीरे धीरे फिर घटने लगती है और यह क्रम बराबर चलता रहता है। कुल मिलाकर जनसंख्या की प्रवृत्ति बढ़ने की ही रहती है। आर्थिक विवेचन की दृष्टि से हम इस प्रकार कह सकते है कि जनसंख्या वृद्धि वक्र का निचला भाग ज्यामितीय-गति से जनसंख्या वृद्धि की दर्शाता है, परंतु वक्र का ऊपरी भाग यह दिखलाता है कि जनसंख्या की वृद्धि की दर काफी घट गयी है। इसका कारण यह हो सकता है कि किसी देश के विकास के प्रारंभिक चरणों में, किसी प्रकार का रोक या प्रतिबंध न होने के कारण जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ती है, परंतु जैसे-जैसे देश का विकास होता जाता है, 'प्रतिबंध' दृष्टिगोचर होने लगते हैं, जिस कारण जनसंख्या की वृद्धि दर घट जाती है। वह स्थिति अमरीका, इंग्लैंड, फ्रांस तथा अन्य यूरोपीय देशों में पायी जाती है। जनसंख्या के जैविकीय सिद्धांत का प्रमुख निष्कर्ष हम इस प्रकार व्यक्त कर सकते हैं, "जनसंख्या घटती-बढ़ती है, ऊपर-नीचे जाती है, तेजी के साथ बढ़ती है अथवा नीचे गिरती है, परंतु अंततोगत्वा इसमें वृद्धि ही होती है।"

11.6. अभ्यास प्रश्न

1- , 1.एक जीवन तालिका के निम्नलिखित भाग को पूरा कीजिए:

x	q_x	p_x	d_x	I_x	L_x	T_x	e_x
15	-	-	-	100	-	5000	-
16	-	-	-	90	-	-	-
17	-	-	-	78	-	-	-
18	-	-	-	63	-	-	-
19	-	-	7	55	-	-	-

हल $d_x = l_x - l_{x+1}$ then find the values of q_x

2. in the following table fill in the blanks which are marked with a quarry (?):

Age x	I_x	d_x	p_x	q_x	L_x	T_x	e_x^0
10	74600	?	?	?	?	32,66,067	?
11	74340	-	-	-	-	?	?

हल

Age x	I_x	d_x	p_x	q_x	L_x	T_x	e_x^0
10	74600	200	0.99651	0.00349	74,470	32,66,067	43.78
11	74340	-	-	-	-	3,191597	42.93

3- ,एक जीवन तालिका के निम्नलिखित अंश के रिक्त स्तंभ को पूरा कीजिए।

x	q_x	p_x	d_x	l_x	L_x	T_x	e_x
18	–	–	15	–	–	–	–
19	–	–	10	–	–	–	–
20	–	–	–	90	–	–	40
21	–	–	–	80	–	–	–
22	–	–	–	70	–	–	–

उत्तरः $l_x = L_{x+1} + d_x$

11.7 शब्दावली

- **पूर्ण जीवन**– पूर्ण जीवन से तात्पर्य एक ऐसी तालिका से है जिसमें मृत्युक्रम एकवर्षीय वर्गो में प्रदर्शित किया जाता है।
- **संक्षिप्त जीवन-** संक्षिप्त जीवन के अन्तर्गत मृत्युक्रम को एकवर्षीय वर्ग में न रखकर एक से अधिक (प्रायः पांच वर्ष) वर्षीय वर्गों में प्रदर्शित किया जाता है।
- **प्रजननशीलता** – प्रजननशीलता का अभिप्राय किसी स्त्री या उनके समूह के द्वारा किसी सजीव जन्मे बच्चों की वास्तविक संख्या से है।
- **जनसंख्या प्रक्षेपण** -जनसंख्या के प्रक्षेपण का अभिप्राय किसी देश, क्षेत्र या स्थान विशेष की जनसंख्या के पूर्वानुमानों या पर्व आकलनों से है।
- **निश्चल जनसंख्या** -किसी जनसंख्या के प्रत्येक आयु वर्ग पर जन्म दर एवं मृत्यु दर स्थिर और बराबर रहे तथा प्रवासन का कोई प्रभाव न पड़े तो जनसंख्या का आकार निश्चल हो जाता है।
- **स्थिर जनसंख्या** -स्थिर जनसंख्या काल्पनिक जनसंख्या के उस स्थायी स्वरूप का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें पूर्वकल्पित आयु-विशिष्ट जन्म दरें एवं मृत्यु दरें अपरिवर्तित एवं यथावत बनी रहती है।

11.8 संदर्भ सहित ग्रन्थ

- सिन्हा, बी. सी. एंव पुष्पा सिन्हा (2011), "जनांकिकी के सिद्धान्त", मयूर पेपर बैक्स, नई दिल्ली।
- चौबे, पी. के. (2000), "भारत में जनसंख्या नीति", कनिष्ट प्रकाशन, नई दिल्ली।
- मिश्र, प्रकाश (2012), "जनांकिकी', साहित्य भवन पब्लिकेशन, दिल्ली।

11.9 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री

- अग्रवाल, एस. एन. (1972), "भारत की जनसंख्या समस्या', टाटा मैक्ग्रा हिल कम्पनी, मुम्बई।
- दत्त, रूद्र एवं के. पी. एम. सुन्दरम (2010), 'भारतीय अर्थ व्यवस्था', एस. चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।

11.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. जीवन सारणी क्या है ? जीवन सारणी के विभिन्न भाग क्या है। जनसंख्या के अध्ययन में इसकी क्या उपादेयता है?
2. जनांकिकी विश्लेषण में जीवन सारणी के उपयोग की व्याख्या कीजिए।
3. जीवन सारणी किसे कहते है? इसकी मान्यताएं क्या है? जीवन सारणी के विभिन्न स्तंभों में अंतसंबंध स्पष्ट कीजिए।
4. एक जीवन सारणी कैसे तैयार की जाती है? समझाइए। जनांकिकीय विश्लेषण में विभिन्न जीवन सारणी फलन के महत्व की विवेचना कीजिए।

इकाई-12 मानव संसाधन विकास

(Human Resource Development)

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 मुख्य भाग
  12.3.1 मानवीय संसाधनों की अवधारणा
  12.3.2 अर्थ
  12.3.3 मानवीय संसाधनों के विकास के आवश्यक तत्त्व
  12.3.4 मानवीय पूंजी निर्माण का आर्थिक विकास में महत्त्व
12.4 आर्थिक विकास में मानव संसाधन अथवा जनसंख्या का योगदान
12.5 मानव संसाधन निर्माण का क्षेत्र
  12.5.1 शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधाएं
  12.5.2 स्वास्थ्य, पोषण एवं आवास व्यवस्था
12.6 अर्द्धविकसित देशों में मानव पूंजी का स्तर निम्न होने के कारण
12.7 मानव संसाधन निर्माण अथवा शिक्षा की कसौटियां
12.8 अर्द्धविकसित देशों में मानव संसाधन निर्माण के उपाय
12.9 मानव पूंजी संबंधी नीति का निर्धारण
12.10 अभ्यास प्रश्न
12.11 सारांश
12.12 शब्दावली
12.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
12.14 संदर्भ सहित ग्रंथ
12.15 उपयोगी / सहायक ग्रंथ
12.16 निबन्धात्मक प्रश्न

12.1.0 प्रस्तावना

किसी देश के आर्थिक विकास में मानव संसाधनो की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यद्यपि आर्थिक विकास में प्राकृतिक संसाधनो तथा पूंजी की मात्रा की विशेष महत्वपूर्ण भूमिका होती है फिर भी ये आर्थिक विकास के निजीव साधन है। वास्तव में मानव ही वह शक्ति है जा इन ससांधनो को अपनी कार्यकुशलता तथा बौद्विक क्षमता द्वारा वांक्षित दिशा में गतिशील कर इनका कुशलतक उपयोग करती है तथा विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। कुछ विद्वानो की धारणा है कि आर्थिक विकास के लिए मानव संसाधन प्राकृतिक संसाधनों की अपेक्षा महत्वपूर्ण है

12.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से हम समझ सकेंगें :

- ✓ मानवीय संसाधनों की अवधारणा।
- ✓ मानवीय संसाधनों के विकास के आवश्यक तत्त्व।
- ✓ मानवीय पूंजी निर्माण का आर्थिक विकास में महत्त्व एवं प्रभाव की जानकारी
- ✓ राष्ट्रीय मानव विकास सूचकांक का परिकलन।
- ✓ आर्थिक विकास में मानव संसाधन अथवा जनसंख्या का योगदान।
- ✓ आर्थिक विकास की प्रक्रिया में मानवीय संसाधन के कार्यों का संपादन।

12.3 मुख्य भाग:

12.3.1 मानवीय संसाधनों की अवधारणा:

मानवीय संसाधन से आशय किसी देश की जनसंख्या और उसकी शिक्षा, कुशलता, दूरदर्शिता तथा उत्पादकता से होता है। किसी देश की मानवीय शक्ति का अनुमान हम केवल वहां की जनसंख्या के आधार पर ही नहीं लगा सकते, इसके लिए जनसंख्या के गुणों पर भी विचार करना होगा। हार्बिसन और मायर्स के अनुसार, 'मानवीय साधन का विकास ज्ञान, कुशलता तथा समाज के व्यक्तियों की कार्यक्षमता में वृद्धि होने वाली एक प्रक्रिया है। आर्थिक अर्थों में यह कहा जा सकता है कि यह मानवीय पूंजी का ऐसा संचय है जिसको अर्थव्यवस्था के विकास में प्रभावशाली विनियोग के रूप में लाया जा सकता है।"

12.3.2 अर्थ:

मानवीय पूंजी निर्माण अथवा मानव विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत मानव शक्ति के विकास हेत भारी मात्रा में विनियोग किया जाता है ताकि देश की जन शक्ति प्राविधिक ज्ञान, योग्यता एवं कशलता की दष्टि से विशिष्टता प्राप्त कर सके। **प्रो. हार्बिन्सन** के अनुसार ***"मानवीय पूंजी निर्माण से अभिप्राय ऐसे व्यक्तियों को उपलब्ध कराना और उनकी संख्या मे वृद्धि करना जो कुशल, शिक्षित व अनुभवपूर्ण हों, जिनकी देश की आर्थिक एवं राजनीतिक विकास के लिए नितांत आवश्यकता होती है। मानव पूंजी निर्माण इस प्रकार मानव में नियोजन ओर उसके सृजनात्मक उत्पादन साधनों के रूप मे संबद्ध है।"*** मानव पूंजी शब्द का प्रयोग संकुचित और विस्तृत दोनों ही अर्थों में किया जाता है। संकुचित अर्थ में मानव पूंजी में विनियोजन का अर्थ शिक्षा एवं प्रशिक्षण पर व्यय करना है, जबकि व्यापक अर्थ मे स्वास्थ्य, शिक्षा तथा सभी सामाजिक सेवाओं पर व्यय करने से लगाया जाता है। सरल शब्दों में, **"मानव पूंजी में किया गया ऐसा कोई भी विनियोग जो जन शक्ति की शिक्षा, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य व जीवन स्तर में वृद्धि करता हो, मानवीय पूंजी निर्माण का एक सक्रिय विनियोग माना जायेगा।"**

12.3.3 मानवीय संसाधनों के विकास के आवश्यक तत्त्व

प्रो. शुल्ज ने मानवीय संसाधनों के विकास के लिए निम्नलिखित चार तरीकों का उल्लेख किया है:

(i) ऐसी नियोजित स्वास्थ्य सुविधाएं, जिनमें वे सब व्यय सम्मिलित हों, जो लोगों की जीवन प्रत्याशा, शक्ति और तेज तथा जीवन शक्ति को प्रभावित करते हैं।

(ii) कार्यरत प्रशिक्षण, जिसमें फर्मों द्वारा संगठित पुराने ढंग की शिक्षुत शामिल हो।

(iii) प्रारंभिक, माध्यमिक एवं उच्चतर स्तरों पर औपचारिक रूप से संगठित शिक्षा।

(iv) वयस्कों के लिए अध्ययन प्रोग्राम जिन्हें, फार्म संगठित न करें, विशेषरूप से कृषि संबंधी विस्तार प्रोग्राम शामिल हो।

12.3.4 मानवीय पूंजी निर्माण का आर्थिक विकास में महत्व

महत्त्व मानव पूंजी में विनियोग की विचारणा हाल ही में विकसित हुई है। आर्थिक विकास की प्रक्रिया में भौतिक पूंजी के संचय को महत्त्व देना व्यावहारिक है। अब अधिकतर यह माना जाने लगा है कि व्यवहार में पूंजी स्टॉक की वृद्धि पर्याप्त सीमा तक मानव पूंजी निर्माण पर निर्भर रहती है जो कि "देश के सब लोगों का ज्ञान, कुशलता व क्षमताएं बढ़ाने की प्रक्रिया है।" शुल्ज, हार्बिन्सन, मोसिज अब्रामोविट्ज, बैक्कर, डेनिसन, केण्ड्रिक मेरी बोमैन कुजनेट्स और अन्य अर्थशास्त्रियों के दल के अध्ययनों से स्पष्ट है कि अमरीकी अर्थव्यवस्था की द्रुत वृद्धि के लिए उत्तरदायी आवश्यक साधनों में से एक शिक्षा पर बढ़ते हुए सापेक्ष उद्व्यय हैं। संक्षेप में, मानव पूंजी का महत्त्व निम्नलिखित बिंदुओं से स्पष्ट हो जायेगाः

12.3.4.1- आर्थिक विकास की क्रियाओं का संपादन

आर्थिक विकास की प्रक्रिया में मानवीय संसाधन निम्नलिखित कार्यों का संपादन करते हैं:

(i)प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन,

(ii) पूंजी जुटाना,

(iii) वस्तुओं की मांग प्रस्तुत करना और

(iv) व्यापार प्रणाली को बढ़ावा देना।

12.3.4.2 आर्थिक विकास की गति:

आर्थिक विकास की गति तेजी करे के लिए देश को प्रशिक्षण प्राप्त अध्यापकों, डॉक्टरों, इंजीनियरों, अर्थशास्त्रियों, प्रबंधकों, कलाकारों, लेखकों, शिल्पकारों आदि की आवश्यकता होती है। ये सब मानवीय पूंजी के ही अंग है।

12.3.4.3 उत्पादकता व कुशलता में वृद्धि:

देश के निवासियों की उत्पादकता और कुशलता में वृद्धि करने के लिए आवश्यक है कि उनकी शिक्षा, प्रशिक्षण व स्वास्थ्य आदि पर विनियोग किया जाये, ताकि मानवीय संसाधनों की किस्म में सुधार हो सके। वस्तुतः मानवीय संसाधनों की किस्म में सुधार हो सके। वस्तुतः मानवीय संसाधनों की कुशलता एवं दक्षता पर ही आर्थिक विकास का ढांचा खड़ा किया जा सकता है।

12.3.4.4 लाभपूर्ण रोज़गार:

अद्धविकसित देशों के सामने मानव शक्ति से संबंधित दा भिन्न समस्याएं हैं। उनमें उद्योग क्षेत्र के लिए आवश्यक क्रांतिक कुशलताओं का अभाव और श्रम शक्ति का अतिरेक होता है। अतिरेक श्रम शक्ति का पाया जाना पर्याप्त सीमा तक क्रांतिक कुशलताओं की कमी के कारण होता है। इसलिए वे पृथक् समस्याएं परस्पर संबद्ध हैं। मानव पूंजी निर्माण का लक्ष्य है उत्पादक साधन के रूप में मानव में आवश्यक दक्षता का निर्माण, और उसे लाभपूर्ण रोजगार प्रदान करके इन समस्याओं को हल करना।

12.3.4.5 श्रम शक्ति के दृष्टिकोण में परिवर्तन : आर्थिक विकास की प्रक्रिया में श्रम शक्ति का सामाजिक

व्यवहार भी महत्वपूर्ण होता है। क्योंकि जब तक श्रम शक्ति के दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं होगा आर्थिक विकास की प्रक्रिया शुरू नहीं हो सकती। कहा जाता है कि इस बुलडोजर जंगल को साफ कर सकता है लेकिन मानव शक्ति के परंपरागत विचारों और कुंठाओं को नष्ट नहीं कर सकता। इस हेतु शिक्षा और प्रशिक्षण आवश्यक है, अतः परंपरागत समाज में परिवर्तन की प्रक्रिया के लिए महत्त्वपूर्ण मानव पूंजी की बहुत बड़ी मात्राएं आवश्यक हैं। प्रो. अजित दास गुप्ता के इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि **"शिक्षा को आवंटिक किये गये साधन उत्पादकीय क्षमता को बढ़ाने में सहायक होते हैं, अतः भविष्य में उत्पादन और उपभोग को बढ़ाते हैं। इसलिए, शिक्षा या अन्य प्रकार के सामाजिक आधारिक संरचना निवेश सिद्धान्त के आवश्यक अंग हैं।"**

12.3.4.6 औद्योगीकरण का आधार:

अर्द्धविकसित देशों में औद्योगीकरण के अधार रखने के लिए भी मानव पूंजी निर्माण में विनियोग की आवश्यकता होती है जैसा कि **प्रो. गॉलबेंथ** ने लक्ष्य किया है, ***"अब हमें हमारी औद्योगिक वृद्धि का अधिक पूंजी के निवेश में नहीं बल्कि मनुष्यों में निवेश और परिष्कृत मनुष्यों द्वारा लाये गये सुधारों से प्राप्त होता है।"*** उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि **"आज के युग में मानव पूंजी में विनियोग अथवा मानव में विनियोग आर्थिक विकास की एक प्रमुख शर्त एवं पूर्व आवश्यकता बन चुकी है जब तक अद्धविकसित देश में उपलब्ध श्रम शक्ति का पूर्णरूपेण विकास नहीं होगा तब तक आर्थिक विकास रहेगा।"**

12.4.0 आर्थिक विकास में मानव संसाधन अथवा जनसंख्या का योगदान

किसी देश के आर्थिक विकास में मानव संसाधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यद्यपि आर्थिक विकास में प्राकृतिक संसाधनों तथा पूंजी की मात्रा की विशेष महत्वपूर्ण भूमिका हो है फिर भी ये आर्थिक विकास के निर्जीव साधन है वास्तव में मानव ही वह शक्ति है जो इन संसाधनों को अपनी कार्यकुशलता है बौद्धिक क्षमता द्वारा वांक्षित दिशा में गतिशील कर इनका कुशलतम उपयोग करती है तथा विकास का मार्ग प्रशस्त करती है कुछ विद्वानों की धारणा है कि आर्थिक विकास के लिए मानव संसाधन प्राकृतिक संसाधनों की अपेक्षा अधिक महत्वपर्ण है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित विद्वानों के विचार उल्लेखनीय है: **हार्बिन्सन** एंव **मायर्स** के अनुसार, ***"आधुनिक राष्ट्रों का निर्माण मनुष्यों के विकास एंव मानवीय क्रियाओं के संगठन पर निर्भर करता है। निःसंदेह पूंजी, प्राकृतिक संसाधन, विदेशी सहायता और अन्तर्रराष्ट्रीय व्यापार आर्थिक विकास में अपनी भूमिका निभाते है, परन्तु इनमें से कोई इतना महत्वपूर्ण नही जितना मानव शक्ति है।" "The building of modern nations depends upon the development of people and the orgainisation of human activity. Capital, natural resources, foreign aid the international trade, of course, play importatant role in economic growth but none is more important than man power"***

-Harbinson and Myres: Education, Manpower and Economic Growth **पो0 हिपल (Whipple)** के अनुसार,' ***एक राष्ट्र की वास्तविक सम्पत्ति उसकी भूमि, जल, वनों, खानों, पशु-पक्षियों अथवा डॉलरों में निहित होती है, बल्कि उस राष्ट्रके समृद्ध तथा प्रसन्नचित पुरूषों, स्त्रियों एंव बच्चो में निहित है।"*** **प्रो० रिचर्ड टी0 गिल (R.T. Gill)** के अनुसार,***"आर्थिक विकास एक यन्त्रीक प्रक्रिया नही है यह एक मानव उपक्रम है तथा अन्य समस्त मानवीय उपक्रमों की तरह है जिसका परिणाम उन व्यक्तियों की योग्यता, गुण एंव दृष्टिकोण पर निर्भर करता है जो इसे अपने हाथों में लेते है।"*** इस तरह, मानव संसाधन आर्थिक विकास के अन्य संसाधनों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। आज आर्थिक विकास के नए-नए संसाधनों की खोज, गगनचुम्बी इमारतों व विशालकाय फैक्ट्रीयों का निर्माण, पर्वतों का वक्ष छेदन, सागर एंव अन्तरिक्ष विजय, वेगवती नदियों के जल को नियन्त्रित करने वाले बांध, पृथ्वी के गर्भ से निकली गयी खनिज सम्पदा आदि सब मानवीय

प्रयासों एंव संकल्प शक्ति की देन है स्पष्टयता, जनसंख्या आर्थिक विकास को गतिशील बनाने में सहायक है। जनसख्यां वृद्धि प्रारम्भ में आर्थिक विकास पर अनुकूल प्रभाव डालती है। इससे श्रमशक्ति में वृद्धि होती है जिससे प्राकृतिक संसाधन का उचित विदोहन होने लगता है देश के कुल उत्पादन एंव प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है। और देश आर्थिक विकास के पथ पर अग्रसर होता है जनसख्या आर्थिक विकास में सहायक है। इस मत को व्यक्त करने वालों में प्रमुख हैं-(प्रो० हेन्सन, आर्थर लुईस, कोलिन क्लार्क तथा ई. एफ. पेनरोज आदि) प्रो. हेन्सर के अनुसार, जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास की एक पूर्व शर्त है।**"प्रो0 हर्ष मेंन** के अनसार***"जनसख्या का दबाव आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करता है।"*** किसी देश की समृद्धि में वहां की जनसंख्या सहायक होती है परन्तु इस तस्वीर का दूसरा रूख भी है। यदि जनसख्यां आर्थिक विकास का एक प्रभावी श्रोत है तो कुछ दशाओं में वह आर्थिक विकास के मार्ग में आने वाली बाधा भी है। जब जनसख्यां तीव्र गति से बढ़ने लगती है तो अर्थव्यस्था आर्थिक विकास के आदर्श अनुपात से दूर हट जाती है जिससे देश में नयी समस्याएं उत्पन्न हो जाती है तथा पूर्व में छोटी- छोटी समस्याएंव वृहद तथा जटिल हो जाती है इस तरह जनसंख्या आर्थिक विकास में सहायक तत्व के रूप में होने के सीन पर बाधक तत्व बन जाती है। **रिचर्ड गिल** के अनुसार,***"जनसंख्या वृद्धि का राष्ट्रीय उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति आय पर अन्तिम प्रभाव धनात्मक, ऋणात्मक अथवा तटस्थ होगा, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि जनसख्यां में तीव्र गति से वृद्धि हो रही है। जिसके कारण देश में आश्रितों की संख्या बढ़ रही है तो इससे उत्पादक जनसख्या की बजाय देश में उपभोगताओं की संख्या अधिक होगी और कुल मिलाकर प्रति व्यक्ति उत्पादन पर, ऋणात्मक प्रभाव पड़ेगा। इसके विपरीत, यदि जनसख्या की आयु संरचना अनुकूल है तो इसका आर्थिक विकास पर धनात्मक प्रभाव पड़ेगा। पुनः जनसख्या वृद्धि का आर्थिक विकास पर प्रभाव इस बात पर भी निर्भर करता है कि देश में प्रोद्योगिक स्तर, विकास की अवस्था, पूंजी निर्माण की दर, जनशक्ति का स्वरूप, नवपरिवर्तन के लिए प्रेरणा और बाजार का स्वरूप क्या है। तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसख्या आर्थिक विकास के मार्ग में एक प्रर्बल वाधा के रूप में खड़ी हो जाती है।*** **प्रो0 सिगर** के अनुसार,***"जनसंख्या वृद्धि आर्थिक विकास पर नकारात्मक प्रभाव डालती है, बचत की दर को कम करती है तथा विनियोजन की उत्पादकता को कम करती है।"*** प्रो0 सिंगर यह मत व्यक्त करते है कि आर्थिक विकास तभी हो सकता है, जबकि उत्पाकता और जनसख्यां वृद्धि की दर जनसख्यां विकास की दर से अधिक हो। उन्होने आर्थिक विकास की दर, बचतों की दर, विनियोग की उत्पादकता और जनसख्यां वृद्धि की दर के बीच के सम्बन्ध को व्यक्त करने के लिए अग्र समीकरण को प्रस्तुत किया है:

D=S.P-r

उपर्युक्त समीकरण में,

D= आर्थिक विकास की दर

S= शुद्ध बचतों की दर (अथवा बचत- आय अनुपात)

P= नए विनियोग की उत्पादकता

R= जनसख्यां वृद्धि की दर

इस तरह, आर्थिक विकास के लिए यह आवयश्क है कि बचतें बढ़े विनियोग बढ़े उत्पादन बढ़े तथा जनसख्यां में वृद्धि की दर घटे।

12.5.0 मानव संसाधन निर्माण का क्षेत्र

प्रायः मानवीय संसाधनों में विनियोग का अर्थ शिक्षा, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य, उपयुक्त भोजन और उचित आवास की व्यवस्था आदि पर व्यय करने से लगाया जाता है। परंतु प्रो. टी. डब्ल्यू. शूल्ज का मत है कि सैद्धांतिक दृष्टि से कौशल निर्माण हेतु अथवा मानवीय क्षमताओं में सधार हेत मुख्य रूप से निम्न मदों पर व्यय/विनियोग करना

अधिक आवश्यक समझा जाता है:

12.5.1शिक्षा एवं प्रशिक्षण सुविधाएं:

प्रो. रिचार्ड टी. गिल के मतानुसार, "शिक्षा पर किया गया विनियोग आर्थिक विकास की दृष्टिसे सर्वाधिक सार्थक विनियोग माना जायेगा।" इसी प्रकार के विचार प्रो. जन कैनेथ गैलब्रेथ द्वारा भी रखे गये हैं। उनकी दृष्टि में शिक्षा उपभोग एवं विनियोग दोनों ही हैं। भौतिक संपत्तियों के निर्माण में किये गये विनियोजन की भांति शिक्षा व प्रशिक्षण भी एक प्रकार का विनियोग है। अमरीका के अर्थशास्त्रियों का विचार है कि उनके देश में शिक्षा पर किये जाने वाले विनियोग पर वार्षिक प्रतिफल की दर लगभग 10 प्रतिशत है। जॉन कैनेथ गैलब्रेथ के अनुसार, "संयुक्त राज्य अमरीका में अन्य लोगों के साथ साथ थियोडोर शुल्ट्ज द्वारा किये गये अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो गयी है कि शिक्षा पर किये गये व्ययों से । बहुत वृद्धि हो सकती है। जिस प्रकार की गणना से कार्लाइल को सबसे अधिक घृणा थी, उसी के द्वारा उन्होंने यह दिखा दिया है कि मानवीय प्राणियों के बौद्धिक सुधार में लगाये गये एक डालर या एक रूपये से प्रायः राष्ट्रीय आय मे उसकी अपेक्षा अधिक वृद्धि होती है, जितनी एक डालर या रूपये को रेलों, बांधों, मशीन के पुर्जी या अन्य स्पष्ट दिखाई पड़ने वाली पूंजीगत वस्तुओं में लगाने से होती है।" जब शिक्षा को इस रूप में देखा जाता है, तब वह एक प्रकार का अत्यधिक उत्पादनशील विनियोग बन जाती है। शिक्षा पर किस सीमा तक व्यय किया जाना चाहिए। इस संबंध में स्टोनियर एवं हेग का विचार है, "राष्ट्रीय दृष्टिकोण से शिक्षा पर किया जाने वाला व्यय, चाहे वह स्कूल पर किया जाये या कॉलेज पर या विश्वविद्यालय पर किया जाये, उस समय तक बढ़ाया जाना चाहिए जब तक कि उस पर प्राप्त किया गया प्रतिफल अर्थव्यवस्था में अन्यत्र लोगों से प्राप्त होने वाले प्रतिफल के बराबर न हो जाये।" शिक्षा पर विशुद्ध आर्थिक दृष्टिकोण से विचार करने पर हम निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि शैक्षणिक कार्यक्रम उसी आधार पर बनने चाहिए, जिस आधार पर औद्योगिक योजनाएं बनायी जाती हैं। शिक्षा में किये जाने वाले विनियोग के संबंध में लागत एवं लाभ का एक युक्तिसंगत हिसाब लगाया जाना चाहिए। यह एक निश्चित उत्पादक विनियोग है। जर्मनी और जापान जैसे देशों का, जो द्वितीय महायुद्ध में युद्ध के कारण बरबाद हो गये थे, 5 या 10 वर्षों की अवधि में लगभग पुनर्निर्माण हुआ है। वहां पर भौतिक दृष्टि से पुनर्निमाण की प्रक्रिया आश्चर्यजनक गति से बढ़ी है। लेकिन यदि जर्मन और जापानी लोगों का संचित ज्ञान तथा चातुर्य किसी तरह से नष्ट कर दिया जाता, तो पुनर्निर्माण की प्रक्रिया में निःसंदेह कई सदियां लग जातीं। भारत के संदर्भ में **डॉ. राव** ने लिखा है, ***"आज हमारे देश पर चरित्र संकट मंडरा रहा है और इसका मुकाबला हम केवल इस तरह की शिक्षा देकर कर सकते हैं, जो मानवता और चरित्र निर्माण की दिशा में प्रवृत्त हो। निःसंदेह अर्थव्यवस्था की अवस्थाएं पूरी करना शिक्षा का कर्तव्य है हमारे विश्वविद्यालयों में उन कौशलों और मनोवृत्तियों तथा अनुसंधान कार्यों को प्रश्रय दिया जाना चाहिए, जिनकी हमारी सुनियोजित अर्थव्यवस्था की आवश्यकता पूरी करने तथा आर्थिक वृद्धि की दी तीव्रतर करने के लिए आवश्यकता है।"*** अतः आज के लिए योजनाकारों, शिक्षाविदों, अध्यापकों, माता-पिता और युवकों सभी को शिक्षा के नवीनतम दृष्टिकोण के प्रति सजग होने की आवश्यकता है। तभी सामाजिक और आर्थिक विकास सचारू ओर समन्वित रूप से हो सकेगा। इस प्रकार शिक्षा के महत्त्व को विस्मृत नहीं किया जा सकता है।

12.5.2 स्वास्थ्य, पोषण एवं आवास व्यवस्था : मानव पूंजी निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार, पोष्टिक आहार की उपलब्धता तथा उचित आवास व्यवस्था हेतु उचित विनियोग किया जाना चाहिए। अतः शिक्षा, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य सेवाओं, पोषण तथा आवास व्यवस्था पर व्यय मानवीय पूंजी निर्माण के क्षेत्रों में आते हैं। व्यक्तियों को स्वास्थ्य सुविधाओं, संतुलित भोजन व उचित आवास प्राप्त होने से उनकी प्रत्याशित आयु और उनकी कार्यकुशलता में वृद्धि होती है। औसत आयु बढ़ने से अर्थव्यवस्था पर बहुत लाभदायक प्रभाव पड़ता है जैसा कि निम्न विवरण से स्पष्ट होता है:

(i) औसत आयु बढ़ने से एक व्यक्ति का कार्यकाल बढ़ जाता है, जिसमें राष्ट्रीय उत्पादन आयु में वह अधिक वृद्धि कर सकता है। उदाहरण के लिए, भारतवर्ष में प्रत्याशित आयु 58 वर्ष है और अमरीका में 78 वर्ष है।
(ii) अल्प औसत आयु के कारण नागरिकों के पालन-पोषण, शिक्षा तथा प्रशिक्षण आदि पर किये गये व्यय का पूरा प्रतिफल नहीं मिल पाता। अधिकांश नागरिक 60 वर्ष से पूर्व ही मर जाते हैं। अतः मनुष्यों पर लगाये गये धन का पूर्ण लाभ उठाने के लिए यह आवश्यक है कि जीवनकाल में वृद्धि हो।
(iii) राष्ट्रीय आय का बहुत बड़ा भाग ऐसे शिशुओं पर व्यय होता है, जो उत्पादक आयु में पहुंचने से पूर्व ही मौत के शिकार बन जाते है। अतः अल्प औसत आयु से बच्चों के पालन-पोषण के लिए किये गये प्रयत्न और विनियोजन की व्यर्थता सूचित करती है। प्रो. अल्फ्रेड बोने के अनुसार,' आर्थिक दृष्टि से अर्द्धविकसित देशों में इन असंख्य युवा वर्ग के भरण-पोषण और शैक्षणिक विकास में भौतिक-अभौतिक दोनों तरह के विनियोग की हानि होती है, जो अपने जीवन की परिपक्व अवस्था तक नहीं पहुंच पाती है। भले ही वहां पश्चिमी देशों की तुलना में प्रति व्यक्ति, शिक्षा, कपड़े तथा खाद्य पदार्थों में विनियोग कम हो, परंतु फिर भी कुल व्यय की हानि अत्यधिक है। एक जीविकोपार्जक पश्चिमी देशों में सरलता से अपने भरण-पोषण, प्रशिक्षण आदि की लागत समाज को चुका देता है, क्योंकि उसे अपने जीवन के उत्पादक वर्षों तक पहुंचने के अवसर रहते हैं औ इसलिए वह अपना योगदान 40 या अधिक वर्षों तक देता है।"
(iv) अल्प औसत आयु के कारण देश में अनुभवी लोगों की कमी रहती है। उदाहरण के लिए, भारतवर्ष में औसत जीवन अवधि कम होने के कारण कार्यशील अनुभव सिद्ध बुजुर्गों 55 से ऊपर का अनुपात 2001 में केवल 10 प्रतिशत था, जबकि अमरीका में यही अनुपात 18.0 प्रतिशत है। 24.6.0 अर्द्धविकसित देशों में मानव पूंजी का स्तर निम्न होने के कारण भारत जैसे अर्द्धविकसित देशों में मावन पूंजी का स्तर निम्न होता है। इसके प्रमुख कारण निम्नलिखित है:
1. विदेशी विनियम कोषों की कमी: अर्द्धविकसित देशों में विदेशी विनियम कोषों की कमी होती है। फलस्वरूप ये देश विदेशी आयात करने में असमर्थ होते हैं और बिना विदेशी तकनीक के ज्ञान के उनका स्तर ऊपर नहीं उठ पाता है।
2. मानव पंजी निर्माण एक सतत लंबी प्रक्रियाः मानव पूंजी निर्माण एक सतत लंबी प्रक्रिया है ती इसके सुखद परिणाम भी दीर्घकाल में प्राप्त होते हैं। अर्द्धविकसित देशों के पास संसाधनों का अभाव होता है। अतः वे भौतिक विकास जो कि शीघ्रगामी तथा परिस्थितिजन्य भी होते हैं, में अधिक ध्याय देते हैं फलतः मानव पूंजी निर्माण का स्तर निम्न बना रहता है।
3.रूढ़िवादिताः अर्द्धविकसित देशों में व्याप्त रूढ़िवादी विचार तकनीकी ज्ञान को अपनाने व उसे लागू करने में बाधक सिद्ध होते हैं। परिणमतः मानव पूंजी निर्माण का स्तर निम्न बना रहता है।
4. इच्छा शक्ति का अभावः अर्द्धविकसित देशों में व्याप्त रूढ़िवादी विचार तकनीकी ज्ञान को अपनाने व उसे लागू करने मे बाधक सिद्ध होते हैं। परिणमतः मानव पूंजी निर्माण का स्तर निम्न बना रहता है।
5. कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था: अर्द्धविकसित देशों की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान होती है तथा कृषि में नव-प्रवर्तन तथा तकनीकी के प्रयोग की संभावनाएं अपेक्षाकृत सीमित होती है।
6.मानवीय साधनों के आयोजन के अभाव: मानवीय साधनों के उचित आयोजन के अभाव देश में बेरोजगारी बढ़ती जा रही है। मानवीय साधनों की मांग तथा पूर्ति के मध्य कोई विशेष संतुलन स्थापित नहीं किया जा सकता है। इसके फलस्वरूप एक ओर तो श्रम शक्ति नष्ट हो रही है तथा दूसरी ओर श्रम का उत्पादन में योगदान कम होता हा रहा है।
7.क्षेत्रीय विषमताएं: जीवन प्रमाण में सुधार के लिए जिन सेवाओं को उपलब्ध करवाया गया है वे देश के विभिन्न

क्षेत्रों में असंतुलित रूप से वितरित हैं। ये विषमताएं ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में विशेष रूप से देखने का मिलती हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य आदि की विभिन्न सेवाएं शहरी क्षेत्रों में ही उपलब्ध हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में इनकी घोर कमी है।

8.निम्न उत्पादकता: जीवन प्रमाण में सुधार के लिए जो विनियोग किया जाता है इसके बदले में तत्काल ही आय प्राप्त नहीं होती, बल्कि इस प्रकार के लाभों को प्रत्यक्ष रूप से नहीं मापा जा सकता है। अतः इस तरह के विनियोग को अनुत्पादक विनियोग समझा जाता है और निजी उपक्रमी इस क्षेत्र मे विनियोग करने के लिए प्रेरित नहीं होता।

9.निजी क्षेत्र की उदासीनताः मानवीय साधनों में निवेश का फल काफी समय बाद प्राप्त होता है। इसीलिए निजी क्षेत्र इसके विकास मे कोई रूचि नहीं लेता। इसका सारा भार सरकार को ही संभालना पड़ता है। सरकार के साधन सीमित होते हैं। अतएव मानवीय साधनों के विकास पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता है

10.जनसंख्या में वृद्धिः भारत में जनसंख्या की वृद्धि बड़ी तीव्र गति से हो रही है तथा जनसंख्या पहले से ही बीत अधिक है। इतनी अधिक जनसंख्या के विकास के लिए बहुत अधिक साधनों की आवश्यकता होती है। भारत जैसे निर्धन देश के लिए इतने साधनों की व्यवस्था करना संभव नहीं है।

12.7.0 मानव संसाधन निर्माण अथवा शिक्षा की कसौटियां

मानव पूंजी निर्माण में और विशिष्ट रूप से शिक्षा में निवेश की उत्पादकता का आगणन एक बहुत पेचीदा समस्या है। अर्थशास्त्रियों ने इसके लिए निम्नलिखित मापदंड अथवा कसौटियां प्रस्तुत की है:

12.7.1 प्रतिफल की दर की कसौटी:

विनियोग के रूप में शिक्षा के दो अंश है: प्रथम, भावी उपभोग अंश; द्वितीय, भावी अर्जन अंश। कुशलता तथा ज्ञान में विनियोग भावी आयों या अर्जनों को बढ़ाता है जबकि शिक्षा से प्राप्त संतुष्टि उपभोग अंश है। चूंकि उपभोग अंश के रूप में शिक्षा राष्ट्रीय आय के योग में सम्मिलित नहीं होती इसलिए शिक्षा में विनियोजन के प्रतिफल का आगणन करते समय केवल इसके भावी अर्जन अंश पर ही ध्यान देना चाहिए। इसके लिए एक विधि यह है कि एक जैसे पेशों में लगे ऊंची शिक्षा प्राप्त लोगों की औसत जीवन कालिक कमाई की तुलना कम शिक्षा प्राप्त लोगों की औसत जीवन कालिक कमाई से की जाती है। उदाहरण के लिए, बैक्कर ने हिसाब लगाया था कि एक गोरे शहरी पुरूष के लिए संयुक्त राज्य अमरीका में कॉलिज शिक्षा पर विनियोग के प्रतिफल की दर सन् 1940 में 12.5 प्रतिशत और 1950 में 10 प्रतिशत थी। परंतु कर काट लेने के बाद सन् 1940 और 1950 में वह 9 प्रतिशत थी। इस आगणन में विद्यार्थी पर पड़ने वाली प्रत्यक्ष लागत, अध्ययन काल में परिव्यक्त कमाई और कॉलिज की लागत का अंश शामिल थे। सीमाएं : इस मापदंड की निम्नलिखित सीमाएं व कठिनाइयां हैं:

(i) बाह्य मितव्ययिताएं: इस विधि के अंतर्गत केवल प्रत्यक्ष भौतिक मौद्रिक लाभों को ही मापा जाता है जबकि शिक्षा की बाह्य मितव्ययिताओं जैसे-शिक्षा के स्तर में सुधार के फलस्वरूप देश को प्राप्त होने वाला प्रत्यक्ष एवं परोक्ष लाभ की गणना नहीं हो पाती है।

(ii) व्यक्तिगत गुण: मनुष्य की अर्जन शक्ति पर केवल उसकी शिक्षा की डिग्रियों का ही नहीं बल्कि उसके कार्य प्रशिक्षण योग्यता, अनुभव, पारिवारिक संअंधों का भी प्रभाव पड़ता है।

(iii) सामूहिक प्रयत्न: यह मापदंड विधि वर्गों के सामूहिक प्रयत्नों का सही आगणन नहीं कर पाता है।

(iv) अर्थव्यवस्था उत्पादन क्षमता: कौशल निर्माण हेतु किए गये विनियोजन के कारण

द्ध व्यक्तियों की आय ही नहीं बढ़ती बल्कि इससे कार्य व्यवस्था की कुल उत्पादन क्षमता में भी वृद्धि होती है जिसका इस मापदंड में ध्यान नहीं दिया गया।

(v) शिक्षा का स्वरूपः मापदंड में इस बात का स्पष्ट नहीं किया गया है कि आर्थिक विकास के लिए 'कितनी और किस प्रकार शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है।

12.7.2 सकल राष्ट्रीय आय की शिक्षा के योगदान की कसौटी:

इस कसौटी के अनुसार शिक्षा में विनियोजन करने पर निश्चित अवधि में सकल राष्ट्रीय आय में जितनी वृद्धि होती है उसका आगणन कर लिया जाता है। प्रो. सकार पोलस : शिक्षा की योग्यता को ज्ञान करने के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग करते

(i) प्रतिफल की सामाजिक दर: $= \frac{\text{अपक्षय (स्थिर वार्षिक अर्जन भिन्नता)}}{\text{दो वर्ष अवसर लागत} + \text{रेकरेंट लागत} + \text{वार्षिक पूंजी लागत}}$

= 21 प्रतिशत

(ii) प्रतिफल की व्यक्तिगत दर: $= \frac{\text{अक्षय (स्थिर वार्षिक अर्जन भिन्नता} - \text{कर भिन्नता)}}{\text{दो वर्ष (अवसर लागत} + \text{सीधी लागत)}}$

= 50 प्रतिशत

प्रो. शुल्ज ने सन् 1900 से 1956 तक की अवधि में अमेरिका की राष्ट्रीय आय में वृद्धि में शिक्षा के योगदान का विश्लेषण किया और निष्कर्ष पर पहुंचा कि "शिक्षा को आवंटिक संसाधन डालरों में उपभोक्त आय की सापेक्षता में और डालरों में भौति पूंजी के सकल निर्माण की सापेक्षता में 3.5 गुणा बढ़े। दूसरे शब्दों में भौतिक पूंजी में निवेश की अपेक्षा शिक्षा में निवेश ने 3.5 गुणा अधिक योगदान दिया।

भारत में इस मापदंड का प्रयोग **प्रो.पंचमुखी** द्वारा शिक्षा में लागत लाभ विश्लेषण की दृष्टि से किया जा चुका है। गुणः (i) शिक्षा पर प्रतिफलों के अनुमानों की अपेक्षा इस मापदंड के अनुमान अधिक वास्तविक हैं, क्योंकि ये अर्थव्यवस्था पर शिक्षागत् निवेश पर पड़ने वाले प्रभावों का भी मापन करते हैं। (ii) यह अनुमान शिक्षा की अवसर लागत पर आधारित है, अर्थात् इसमें विद्याध्ययन के दौरान, यानी विद्यार्थी जीवन में परितयक्त आय और शिक्षा पर किए गये व्यय दोनों का हिसाब लगाया जा सकता है। अवगुण : (i) इस कसौटी की सबसे बड़ी समस्या परित्यक्त आय की गणना करने से संबंधित है। परित्यक्त आय की गणना लगाना कठिन है। क्योंकि: (अ)अर्द्धविकसित देशों मे गंभीर बेरोज़गारी पाई जाती है। ऐसी परिस्थिति में परित्यक्त कमाई का आकलन मनमाना या स्वैच्छिक होगा। क्योंकि श्रम की बढ़ रही पूर्ति वास्तविक आय को घटा देती है। (ब)अर्द्धविकसित देशों में अधिकांश युवकों को स्कूल की शिक्षा नहीं मिलती। पर वे परिवार के व्यवसायों में धन अर्जित करते हैं। ऐसे युवकों की परित्यक्त आय को हिसाब लगाना कठिन है। इस कसौटी में स्कली शिक्षा की सामाजिक लागतों को ध्यान में नहीं रखा गया है।

उपर्युक्त कठिनाइयों के कारण ही **बेलोग** ने कहा है, ***"शिक्षा की लाभदायकता के संबंध में किये गये आंकलन तकनीकी व आर्थिक रूप से न केवल त्रुटिपूर्ण हैं, बल्कि राजनैतिक तौर से अनैतिक भी हैं।"***

12.7.3 अवशेष साधन कसौटी:

कुजनेट्स, कंद्रिक, ग्रिलिचिज, जार्गेन्सन, सोजो तथा अन्य अर्थशास्त्रियों ने यह मापने का प्रयास किया है, कि समय की एक अवधि के दौरान सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP) में वृद्धि का (अ) कितना अनुपात पूंजी तथा श्रम की माप योग्य आगतों के योगदान द्वारा हो सकता है। तथा (ब) GNP में वृद्धि का कितना अनुपात अन्य साधनों (जिनकी अवशेष में रखा जाता है) के योगदान द्वारा हो सकता है। अवशेष साधन प्रमुख रूप से हैं: शिक्षा, अनुसंधान, प्रशिक्षण, पैमाने की बचतें तथा मानों उतपादकता को प्रभावित करने वाले अन्य घटक। **प्रो. डेनिसन** ने सन् 1929-57 के बीच अमेरिका में इस संबंध में अनुमान लगाया जिसके अनुसार कुल वास्तविक राष्ट्रीय आय की वृद्धि में शिक्षा का योगदान 23 प्रतिशत था। शिक्षा के अतिरिक्त जहां तक अन्य अवशेष साधन के योगदान की बात थी, डेनिस ने इसे राष्ट्रीय आय के कुल वृद्धि के 31 प्रतिशत के लिए उत्तरदायी माना इसमें 20 प्रतिशत ज्ञान

के उन्नत प्रभाव के कारण और 11 प्रतिशत बाजारों की वृद्धि दर के परिणामस्वरूप पैमाने की बचतों के कारण था। इसके विपरीत सोलो सन् 1909–49 की अवधि के दौरान अपने संयुक्त अपने संयुक्त राज्य अमेरिका के अध्ययन में 90 प्रतिशत प्रति व्यक्ति उत्पादन की औसत वृद्धि दर को अवशेष साधन का योगदान मानता है जो तकनीकी परिवर्तन के सामान्य शीर्षक में आता है। अवगुण :अवशेष साधन कटौती में निम्नलिखित कमियां हैं: (i) अवशेष साधन एक बहुत विस्तृत शब्द है जिसमें शिक्षा, अनुसंधान, प्रशिक्षण, पैमाने की बचतें आदि को सम्मिलित किया गया है। फलतः यह कसौटी अत्यंत जटिल है।

(i) यह कसौटी व्यावहारिक तथा अव्यावहारिक शिक्षा तथा शिक्षा की गुणवत्ता या विषय वस्तु में कोई भेद नहीं करती है।

(iii) यह कसौटी पैमाने की स्थिर प्रतिफल नियम पर आधारित है। जबकि एक विकासशील देश में बढ़ते प्रतिफल पाये जाते हैं।

(iv) अवशेष कसौटी में पूंजी का आर्थिक विकास में योगदान कम आंका गया है। क्योंकि यदि ज्ञान की उन्नति में लगाये गये साधनों को विनियोग के अंतर्गत गिन लिया जाये और इस प्रकार के विनियोग को पूंजी स्टॉक की परिभाषा के अंतर्गत सम्मिलित कर दिया जाये, तो आर्थिक विकास वृद्धि दर का अधिक भाग पूंजी स्टॉक की वृद्धि का योगदान माना जायेगा और ज्ञान, कौशल, प्रशिक्षण आदि में वृद्धि के अवशेष वर्ग में कम योगदान रह जायेगा।

(v) सन् 1945-65 के लिए अमेरिका का अर्थव्यवस्था के अध्ययन में जार्गेन्सन तथा ग्रिलिचिज ने पाया कि पूंजी, श्रम, कीमतों आदि के लिए समूहन की अशुद्धियों को ठीक कर देने के बाद वास्तव में कोई 'अवशेष' रहता ही नहीं, जिसकी व्याख्या आपेक्षित हो। इस अशुद्धियों के लिए समायोजन कर लेने के बाद अवशेष का योगदान घटकर 0.1 प्रतिशत प्रतिवर्ष रह जाता है।

12.7.4 सम्मिश्र सूचकांक कसौटी:

हार्बिसन तथा **मायराज** ने कुछ मानों स्त्रोतों के सूचकों के आधार पर सम्मिश्र सूचकांक कसौटी विकसित किया है। सम्मिश्र सूचकांक को 75 देशों को श्रेणीबद्ध करके तथा उनको मानों शोध विकास करके मानों शोध विकास के चार स्तरों का समूह बना कर प्रयुक्त किया जाता है। ये चार समूह हैं: अर्द्धविकसित, आंशिक विकसित, अल्प उन्नत, तथा उन्नत। इसके उपरांत उन्होंने इस सूचकों तथा आर्थिक विकास के सूचकों के संबंधों का अध्ययन करने का प्रयास किया है। हार्बिसन तथा मायरज ने मानव शोध विकासों की निम्नलिखित प्रकार से वर्णित किया है:

(i) प्रति 10,000 जनसंख्या पर प्रथम तथा द्वितीय स्तर के शिक्षकों की संख्या ।

(ii) प्रति 10,000 जनसंख्या पर चिकित्सकों तथा दंत चिकित्सकों की संख्या।

(iii) प्रति 10,000 जनसंख्या पर इंजीनियरों तथा वैज्ञानिकों की संख्या।

(iv) समायोजित प्रथम तथा द्वितीय स्तरों के संयुक्त पाठशाला में दाखिल विद्यार्थियों का अनुपात।

(v) 5 वर्ष से 14 वर्ष आयु वर्ग की अनुमानित जनसंख्या की प्रतिशतता पर प्रथम (प्राथमिक) शिक्षा स्तर पर दाखिल विद्यार्थियों की संख्या ।

(vi) 20 से 24 वर्ष आयु वर्ग की अनुमानित जनसंख्या की प्रतिशतता पर तृतीय (उच्चतर) शिक्षा स्तर पर दाखिल विद्यार्थियों की संख्या।

(vii) 15 से 19 वर्ष आयु वर्ग की अनुमानित जनसंख्या की प्रतिशतता पर द्वितीय (माध्यमिक) स्तर पर दाखिल विद्यार्थियों की वह संख्या जिसे पाठशाला काल पर समायोजित किया गया है।

(viii) एक वर्तमान वर्ष में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शिक्षा संकायों में दाख़िल विद्यार्थियों की प्रतिशतता।

(ix) उसी वर्ष मानविकी, ललित कला एवं विधि संकायों में दाखिल विद्यार्थियों की प्रतिशतता।

सांख्यिकी विश्लेषण के लिए वे आर्थिक विकास के इन सूचकों को लेते हैं: (अ) यू. एस. डॉलर में सकल राष्ट्रीय उत्पादन प्रति व्यक्ति तथा (ब) कषि कार्यों में संलग्न सक्रिय जनसंख्या के प्रतिशतता। इसके अतिरिक्त उन्होंने दो और सूचकों को काम में लिया है:

(क) राष्ट्रीय आय की प्रतिशतता का शिक्षा पर लोक व्यय तथा

(ख) 5 से 14 वर्ष आयु वर्ग तक कुल जनसंख्या की प्रतिशतता।

हार्बिसन तथा **मायरज** का अध्ययन शिक्षा के सभी स्तरों पर नामांकित अनुपात और GNP के बीच एक निकट संबंध को दर्शाता है। सर्वाधिक सहसंबंध गुणांक है। यू. एस. डॉलर में GNP प्रति व्यक्ति तथा मानव स्त्रोत विकास के सम्मिश्र सूचकांक जो कि प्रथम द्वितीय स्तर नामांकित संख्या का अनुपात है, के बीच पाया गया है।

गुण और अवगुण : इस कसौटी के प्रमुख गुण हैं: (अ) यह अर्द्धविकसित देशों मे आर्थिक विकास से संअंधित शिक्षा नीति के निर्धारण के लिए सम्मिश्र सूचकांक विभिन्न स्तरों की शिक्षा के योगदान को मापने की एक लाभप्रद कसौटी है साथ ही (ब) यह आर्थिक विकास सूचकों और मानव शोध विकास सूचकों की मात्रा संबद्धता को व्यक्त करती इस कसौटी का मुख्य दोष यह है, कि ये केवल परिमाणात्मक संबंधों को व्यक्त करती है और गुणात्मक संबंधों की उपेक्षा करती है। इसके अतिरिक्त सम्मिश्र सूचकांक अन्य घटकों के प्रभवों को व्यक्त करने में भी असमर्थ है जैसे कि विपुल प्राकृतिक स्त्रोत या जनसंख्या स्तर जो कि उच्चतर GNP प्रति व्यक्ति की ओर ले जाता है आदि को प्रकट नहीं करते।

12.8.0 अर्द्धविकसित देशों में मानव संसाधन निर्माण के उपाय

अद्धविकसित देशों में मानव पूंजी निर्माण के लिए विशेष ध्यान नहीं दिया गया है जिसके कारण यहां मानवीय संसाधन अधिक होते हुए भी मानव पूंजी अच्छी किस्म की नहीं है। मानव पूंजी निर्माण के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए जा सकते है:

12.8.1 शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन:

शिक्षा प्रणाली में मूलभूत सुधार व परिवर्तन करके ही हम अर्द्धविकसित देशों में मानव पूंजी निर्माण को प्रोत्साहित कर सकते है। एक ओर तो हमें अर्द्धविकसित देशों में साक्षरता कार्यक्रम सक्रिय करके निरक्षरता को दूर करना चाहिए और उच्च शिक्षा केवल उन्हीं व्यक्तियों को दी जानी चाहिए जो इसके योग्य हों। कारण यह है कॉलेजों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों मे स्नातक तथा स्नातकोत्तर शिक्षा प्रदान करने से मानव पूंजी निर्माण नहीं होता । बल्कि वे शिक्षित बेरोजगारी को बढ़ते हैं जिससे युवकों में काफी असंतोष होता है।

12.8.2 तकनीकी शिक्षा पर जोर:

तकनीकी प्रगति तथा प्रशिक्षण की सुविधा आर्थिक विकास का महत्त्वपूर्ण निर्धारण है क्योंकि तकनीकी प्रगति तथा प्रशिक्षण की सुविधा स्वयं उच्च शिक्षा तथा प्रशिक्षित जन शक्ति की उपलब्धता पर निर्भर होता है। अतः अर्द्धविकसित देशों मे तकनीकी शिक्षा पर जोर दिया जाना चाहिए। अर्द्धविकसित देशों में विभिन्न व्यवसायों में शिक्षित व्यक्तियों के रूप में मानव पूंजी की आवश्यकता इसलिए अधिक होती है क्योंकि वे व्यक्ति जटिल तरीके तथा उपकरण हैं। उदाहरणार्थ, उद्यमियों, व्यापार प्रबंधकों, प्रशासकों, वैज्ञानिकों, इंजीनियरों, डॉक्टर आदि की जरूरत पड़ती है। वस्तुतः उर्द्धविकसित देशों में तकनीकी शिक्षा को अनिवार्य कर देना चाहिए।

12.8.3 अनिवार्य शिक्षा:

अर्द्धविकसित देशों में अधिकांश जनसंख्या निरक्षर होती है इसलिए जहां तक संभव हो इन देशों में सभी व्यक्तियों के लिए स्कूल तक शिक्षा अनिवार्य कर देना चाहिए। अफ्रीका, दक्षिण अफ्रीका व एशिया के अधिकांश देशों में प्राथमिक शिक्षा को बहुत अधिक प्राथमिकता दी गयी है तथा प्राथमिक शिक्षा निःशुल्क व अनिवार्य है। परंतु

माध्यमिक शिक्षा को कम प्राथमिकता दी जाती है जो उपयुक्त नहीं है। अनुभव यह बताता है कि माध्यमिक शिक्षा प्राप्त लोग ही वह क्रांतिक कुशलता प्रदान करते हैं, जो विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। माध्यमिक शिक्षा के महत्त्व पर बल देते हुए प्रोफेसर लुईस माध्यमिक शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों को आर्थिक तथा सामाजिक व्यवस्था के अधिकारी तथा अनायुक्त अधिकारी मानता है।

12.8.4 प्रौढ़ शिक्षा:

अर्द्धविकसित देशों में आर्थिक विकास की योजनाओं का सफल क्रियान्वयन में एक बहत बडी रूकावट प्रौढों का अशिक्षित होना है। इसलिए अशिक्षिता के कारण वे नयी योजनाओं का महत्त्व नहीं समझ पाते है फलतः उनके क्रियान्वयन में गतिरोध उत्पन्न करते हैं। ऐसे देशों में प्रोढ़ शिक्षा कार्यक्रमों का सर्वथा अभाव है, अतः आवश्यकता इस बात की है कि प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों को प्रोत्साहित किया जाये क्योंकि प्रौढ़ शिक्षा कृषकों का दृष्टिकोण बदलने में सहायक है, उनकी निर्णयकारी कुशलता बढ़ाती है और यह आधुनिक कृषि प्रथाओं के संबंध में उन्हें आवश्यक जानकारी कराती है। अधिक परिणामों के लिए प्रौढ़ शिक्षा का समस्त प्रोग्राम कृषि अनुसंधान केंद्रों तथा प्रयोगशालाओं से जोड़ देना चाहिए।

12.8.5 प्रशिक्षण का विकास : शिक्षा के साथ साथ प्रशिक्षण भी मानव पूंजी के निर्माण के लिए आवश्यक है क्योंकि प्रशिक्षण द्वारा व्यक्ति की योग्यता, कुशलता एवं निपुणता में ही वृद्धि नहीं होती बल्कि उनमें आत्मनिर्भरता, आदर और आत्मगौरव बढ़ा कर उन्हें जीवन के सबध में एक व्यापक दृष्टिकोण भी प्रदान करता है। यही कारण है कि आजकल प्रशिक्षण एवं विकास कार्यक्रम पर किया गया व्यय एक निवेश समझा जाता है तथा लगभग सभी विकसित संस्थाओं में श्रमिकों तथा प्रबंधकों के लिए नाना प्रकार के कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। जैसे अप्रेन्टिसशिप तथा रिफ्रेशर कोर्स, पुनः प्रशिक्षण, सेल्समैन ट्रेनिंग प्रोग्राम, मैनेजमेट प्रोग्राम, इत्यादि।

12.8.6 स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार : अर्द्धविकसित देशों में मानव पूंजी निर्माण के लिए आवश्यक है कि स्वास्थ्य सेवाओं पर अधिक विनियोग किया जाये क्योंकि मानव की सर्वांगीण उन्नति तथा विकास का आधार स्वास्थ्य ही है। स्वास्थ्य जनता की कार्यक्षमता और शक्ति के मापदंड के साथ ही साथ इस बात का भी संकेतक है कि व्यक्ति कितने समय तक निर्माण कार्य में संलग्न राष्ट्रीय उन्नति में प्रवृत्त रह सकता है। रूग्ण व्यक्ति कुछ नहीं कर सकता। **"बीमारियां किसी समुदाय के हृष्ट-पुष्ट और शक्तिवान लोगों को मार कर और काम करने वालों की संख्या में न काम करने वालों को अधिक बढ़ा कर विनाश कर सकती हैं। दूसरे, यदि बीमारों के प्राण नहीं लेतीं, तो उन्हें आशक्त कर देती हैं और इस प्रकार श्रमिकों की संख्या ही में कमी नहीं, वरन् श्रम की शक्ति में भी कमी कर देती हैं।"** अर्द्धविकसित देशों में स्वास्थ्य स्तर को बढ़ाने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते

(i) जन स्वास्थ्य सेवाओं व सुविधाओं का विकास व विस्तार करना चाहिए।

(ii) चिकित्सा विज्ञान को उन्नत बनाने के साथ ही साथ चिकित्सा सुविधाओं का भी तीव्र विस्तार किया जाना चाहिए।

(iii) सरकार को कृत-संकल्प हो कर निर्धनता का उन्मूलन करने का प्रयास करना चाहिए, ताकि लोगों की आय तथा जीवन स्तर में सुधार हो सके।

(iv) देश में पोष्टिक खाद्यान्नों में तेजी से वृद्धि करके उनका समुचित वितरण किया जाना चाहिए।

(v) मादक व नुकसानदायक वस्तुओं के उपभोग व उत्पादन दोनों पर रोक लगायी जानी चाहिए।

(vi) स्वास्थ्य शिक्षा को पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर इसे अनिवार्य विषय के रूप में प्राथमिक स्तर से उच्च स्तर तक पढ़ाये जाने की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(vii) महिलाओं को स्वास्थ्य शिक्षा, पोषण, प्रसूति व आहार संबंधी शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए, साथ ही इन

विषयों के प्रति उनमें जागरूकता भी उत्पन्न करनी चाहिए।

12.9.0 मानव पूंजी संबंधी नीति का निर्धारण

मानव पूंजी से संबंधित नीति का निर्धारण करते समय महत्त्वपूर्ण कदम यह ज्ञात करना होता है कि मानव पूंजी तथा इसकी विभिन्न मदों पर विनियोग के फलस्वरूप कितनी प्रत्याय अथवा प्रतिफल प्राप्त हुए हैं। इस तथ्य को ज्ञात कर लेने के पश्चात् ही मानवीय पूंजी विनियोग के प्रतिफलों की तुलना भौतिक पूंजी के प्रत्याय या प्रतिफल से करके इस बात का निर्णय लेना होता है कि मानव पूंजी पर वस्तुतः कितना व्यय किया जाये। इसके अलावा मानव पूंजी में विनियोजित कुल राशि में से उसकी कितनी कितनी मात्रा विभिन्न मदों, यथा-प्रारंभिक, माध्यमिक तथा उच्चतर शिक्षा, तकनीकी ज्ञान, चिकित्सकीय शिक्षा तथा स्वास्थ्य आदि पर खर्च की जाये, इस तथ्य को ज्ञात करने के लिए लागत लाभ अनुमान करना होता है किंतु यह अनुमान व्यावहारिक दृष्टि से काफी जटिल प्रकृति जिसका कारण यह है कि मानव पूंजी के लाभ न केवल दृश्य एवं प्रत्यक्ष होते हैं अपितु अदृश्य एवं परोक्ष भी होते है। जिनका अनुमान काफ़ी कठिन होता है। मानव पूंजी पर विनियोग के संबंध में विभिन्न विद्वानों द्वारा अलग अलग विचारधाराएं प्रस्तुत की गयी हैं किंतु अल्प विकसित देशों विशेषकर भारतीय परिस्थितियों हेतु डेविड ओवेन्स की विचारधारा अधिक प्रासंगिक प्रतीत होती है। इस संबंध में डेविड ओवेन्स का मत यह है कि 1 कृषि, डॉक्टरी व तकनीकी शिक्षा, परिवार नियोजन आदि पर हुए व्यय प्रतिफल या प्रत्याय की दृष्टि से उचित हैं किंतु 2 स्नातक स्तर के नीचे तक की कला की शिक्षा पर होने वाले व्यय सतुचित नहीं हैं। फलतः प्रथम प्रकार के व्ययों को और अधिक बढ़ाना श्रेयस्कर होगा तथा दूसरे प्रकार के व्ययों में कमी लानी होगी। अपने दृष्टिकोण को और प्रवर्तित करते हुए ओवेन्स ने यह भी कहा है कि शिक्षित व्यक्तियों को ऐसे क्षेत्रों तक कार्यों में लगाया जाना चाहिए जहां उनकी सेवाएं आर्थिक विकास को अधिकतम योगदान दे सकें। भारतीय संदर्भ में इस दृष्टिकोण के पालनार्थ यहां के शिक्षित लोगों को देश के सुदूर ग्रामीण अंचल में काम करने के लिए प्रोत्साहित करना समीचीन होगा।

12.9.1 राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट (2011)

तालिका 1: मानव विकास सूचक-यू0 एन0 डी0 पी0 सूचकों से भिन्नता

यू० एन० डी० पी० सूचक |	उपलब्धि	राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट के सूचक
जन्म पर जीवन–प्रत्याशा |	जीवन–प्रत्याशा ।	(i) 1 वर्ष की आयु पर जीवन–प्रत्याशा (ii) शिशु मृत्यु दर
बलिग साक्षरता दर, नामांकन जोड़ कर |	शौक्षिक उपलब्धि |	(iii) 7 वर्ष और अधिक आय में साक्षरता दर (iv) औपचारिक शिक्षा की गहनता
वास्तविक सकल देशीय उत्पाद (प्रति व्यक्ति क्रयशक्ति समता के आधार पर यू0 एस0 डालर)	आर्थिक उपलब्धि	(v) प्रति व्यक्ति वास्तविक उपभोग व्यय जिसका समायोजन असमानता के साथ किया गया है।

निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि वास्तव में मानवीय पूंजी पर किये जाने वाले विनियोगों को भी भौतिक पूंजी में विनियोग के फलस्वरूप प्राप्त प्रतिफलों की तरह आंकलित करना होगा तथा इन्हीं प्रतिफलों को आधार

मान कर मानवीय पूंजी परकल विनियोग तथा इसके अंतर्गत आने वाले विभिन्न विनियोग मदों की प्राथमिकताएं निर्धारित करनी होंगी। ऐसा करने पर ही किसी भी देश की मानव पूंजी संबंधी सफल नीति का निर्माण संभव हो सकेगां।। सूचकांक प्रस्तुत किए गए हैं। ये आंकड़े 1981, 1991 और 2001 से सम्बन्धित हैं। आंकड़ों की सभी राज्यों के लिए अनुपलब्धि के कारण, मानव विकास सूचक केवल 15 मुख्य राज्यों के लिए परिकलित किए गए हैं। चाहे राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट मोटे तौर पर उन्हीं आयामों का इस्तेमाल करती है, जो यू0 एन0 डी0 पी0 की मानव विकास रिपोर्ट में प्रयुक्त किए गए हैं अर्थात् जीवन–प्रत्याशा, शौक्षिक उपलब्धि और आर्थिक उपलब्धि, फिर भी इसमें यू0 एन0 डी0 पी सचकों में थोडा परिवर्तन किया गया है। राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट में संग्रथित मानव विकास सूचकांक के परिकलन के लिए विभिन्न सूचकों को महत्व प्रदान किए हैं। उदाहरणार्थ, स्वास्थय सूचक के लिए जीवन-प्रत्याशा को 65 प्रतिशत महत्व दिया गया है जबकि शिशु मृत्यु दर को केवल 35 प्रतिशत। इसी प्रकार, शैक्षिक उपलब्धि का संगथित सूचकांक तैयार करने के लिए साक्षरता दर को 35 प्रतिशत महत्व और औपचारिक शिक्षा की गहनता के सूचक को 65 प्रतिशत महत्व दिया गया है और इसके लिए कक्षा 1 से 12 तक उत्तरोत्तर कक्षाओं में नामांकन को आधार बनाया गया है। आर्थिक उपलब्धि के सूचकांक के लिए प्रति व्यक्ति उपभोग को स्फ्रीति से समायोजित किया गया है, ताकि प्रति व्यक्ति उपभोग के आधार पर अन्तः कालिक और अन्तः राज्यीय तुलना की जा सके।

यू0 एन0 डी0 पी0 की कार्यविधि की भांति राष्ट्रीय मानव विकास सूचकांक के परिकलन में इन तीनों सूचकों अर्थात् जीवन-प्रत्याशा, शौक्षिक उपलब्धि और आर्थिक विकास को समान महत्व प्रदान किया गया है। विभिन्न सूचकों का परिकलन करने के लिए राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट के अनुपात मानदण्ड निर्धारित किए हैं:

तालिका 2: मानव विकास सूचकांक के अनुपात मापदण्ड |

सूचक	न्यूनतम	अधिकतम
उपभोग-व्यय (प्रति व्यक्ति प्रति मास)	65 रूपये	325 रूपये
7 और अधिक आयु के लिए साक्षरता	0	100
औपचारिक शिक्षा की समायोजित गहनता	0	7
1 वर्ष की आयु पर जीवन–प्रत्याशा	50 वर्ष	80 वर्ष
शिशु मृत्यु दर	20 प्रति हजार	

अनुमाप मानदण्ड ऐसे हैं कि वे 1980 से आरम्भ अवधि के पश्चात् काफी समय के लिए अन्तः कालिक तुलना के लिए इस्तमाल किए जा सकते हैं। जिन अनुमाप मानदण्डों को चुना गया है, वे लगभग सन् 2020 तक सत्य प्रमाणित होंगे, भले ही तब तक मानव विकास की गति काफी हो जाएगी। इस रिपोर्ट का एक अनुपम लक्षण यह है कि इसमें ग्राम और नगर क्षेत्रों के लिए 1981 और 1991 के आंकड़ों के आधार पर अलग-अलग मानव विकास सूचक तैयार किए गए हैं। आंकड़ों की अनुपलब्धि के कारण, 2001 के लिए मानव विकास सूचकांक केवल चुने हुए मुख्य राज्यों के लिए परिकलित किए गए हैं।

तालिका 3: मानव विकास सूचकांक के अनुपात मापदण्ड

सूचक	न्यूनतम	अधिकतम
उपभोग-व्यय (प्रति व्यक्ति प्रति	65 रूपये	325 रूपये

मास)		
7 और अधिक आयु के लिए साक्षरता	0	100
औपचारिक शिक्षा की समायोजित गहनता	0	7
1 वर्ष की आयु पर जीवन–प्रत्याशा	50 वर्ष	80 वर्ष
शिशु मृत्यु दर	20 प्रति हजार	

अनुमाप मानदण्ड ऐसे हैं कि वे 1980 से आरम्भ अवधि के पश्चात् काफी समय के लिए अन्तः कालिक तुलना के लिए इस्तमाल किए जा सकते हैं। जिन अनुमाप मानदण्डों को चुना गया है, वे लगभग सन् 2020 तक सत्य प्रमाणित होंगे, भले ही तब तक मानव विकास की गति काफी हो जाएगी। इस रिपोर्ट का एक अनुपम लक्षण यह है कि इसमें ग्राम और नगर क्षेत्रों के लिए 1981 और 1991 के आंकड़ों के आधार पर अलग-अलग मानव विकास सूचक तैयार किए गए हैं।

आंकड़ों की अनुपलब्धि के कारण, 2001 के लिए मानव विकास सूचकांक केवल चुने हुए मुख्य राज्यों के लिए परिकलित किए गए हैं। तालिका 4: ग्राम एवं नगर क्षेत्रों के लिए मानव विकास सूचकांक-अखिल भारत

	1981	**1991**	**2001**
ग्रामीण	0.263	0.340	
नगरीय	0.442	0.511	
संयुक्त	0.302	0.3810	.472

यह बात ध्यान देने योग्य है कि भारत के लिए मानव विकास सूचकांक जो 1981 में 0.302 था उन्नत होकर 1991 में 0.381 और फिर और उन्नत होकर 2007 में 0.467 हो गया। चूंकि 2001 में भी मानव विकास सूचकांक 0.500 से कम था, भारत अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्डों के आधार पर निम्न मानव विकास सूचक वाला देश ही है। तालिका 5 में भारत के 15 मुख्य राज्यों के लिए 1981, 1991, 2001 और 2008 के लिए मानव विकास सूचकांक के मूल्य दिए गए हैं। इन आंकड़ों से रिपोर्ट में निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले गए हैं। 1.मानव विकास सूचकांक सन् 2008 के लिए केरल के लिए 0.790 और उड़ीसा के लिए 0. 362 के बीच घटता-बढ़ता है। जबकि केरल को मध्यम मानव विकास सूचकांक वाला राज्य माना जा सकता है, उड़ीसा और बिहार की स्थिति निम्न मानव विकास सूचकांक वाले देश में भी अतयन्त निराशाजनक है।

2. सम्पन्न राज्यों में पंजाब, तमिलनाडू हरियाणा, गुजरात और महाराष्ट्र का मानव विकास सूचकांक 0.50 से अधिक था। दूसरा ओर, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और बिहार के सूचकांक का मूल्य 0.400 से कम था।

तालिका 5: भारत के विभिन्न मुख्य राज्यों के मानव विकास सूचकांक

	1981 मूल्य	**1981 मूल्य**	**1991 मूल्य**	**क्रम**	**2001 मूल्य**	**2001 क्रम**	**2008 मूल्य**	**2008 क्रम**	**प्रतिव्यक्ति शुद्ध राज्य घरेलू उत्पाद**
केरल	0.500	1	0.591	1	0.638	1	0.790	1	49,873

पंजाब	0.411	2	0.475	2	0.537	2	0.605	2	44,752
तमिलनाडु	0.343	7	0.466	3	0.531	3	0.570	3	51,928
महाराष्ट्र	0.363	3	0.452	4	0.523	4	0.572	4	62,729
हरियाना	0.360	5	0.443	5	0.509	5	0.552	5	59,221
गुजरात	0.360	4	0.431	6	0.479	6	0.527	6	52,708
कर्नाटक	0.346	6	0.412	7	0.478	7	0.519	7	39,301
श्चिम बंगाल	0.305	8	0.404	8	0.472	8	0.492	8	32,228
राजस्थान	0.256	12	0.347	11	0.424	9	0.434	11	26,436
आंद्रप्रदेश	0.298	9	0.377	9	0.416	10	0.473	9	40,336
उडीशा	0.267	11	0.345	12	0.404	11	0.362	15	25,708
मध्यप्रदेश	0.245	14	0.328	13	0.394	12	0.375	13	22,382
उत्तरप्रदेश	0.255	13	0.314	14	0.388	13	0.380	12	17,349
असम	0.272	10	0.348	10	0.386	14	0.444	10	21,406
बिहार	0.237	15	0.308	15	0.367	15	0.367	14	13,632
खिल भारत	0.302		0.381		.472		0.467		35,993

नोट: राज्य सन् 2001 के मानव विकास सूचकांक के आधार पर घटते हुए क्रम में दर्शाये गए हैं।

* 2004-05 की कीमतों पर 2002स्रोतः योजना आयोग, राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट (2001), CSO 2012

3. कुछ राज्यों के अपवाद के साथ, मोटे तौर पर अन्य राज्यों ने अपनी सापेक्ष स्थिति बनाए रखीः

(क) तमिलनाडू ने अपने क्रम में 3 अंकों की उन्नति की और 7 स्थान से बढ़कर न. 4 पर पहुंच गया।

(ख) उड़ीसा की स्थिति 11 से गिरकर 15 तक पहुँच गयी।

(ग) मानव विकास सूचकांक उन्नत करने की दौड़ में बिहार, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश सबसे पीछे ही रहे।

4. आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न राज्य ही हैं जिनमें मानव विकास सूचकांक में निष्पादन सापेक्षतः बेहतर रहा। इसी प्रकार, आर्थिक दृष्टि से निर्धन राज्यों में मानव विकास सूचकांक का निष्पादन घटिया रहा। किन्तु देश के मध्यम आय वाले राज्यों में मानव विकास सूचकांक का आर्थिक विकास-स्तर के अनुरूप सम्बन्ध नहीं था।

5. राज्यों में मानव विकास सूचकांक के आधार पर असमानता आय असमानता की तुलना में अपेक्षाकृत कम है जो शुद्ध राज्य घरेलू उत्पाद से आंकी गयी है। 2007-08 में अधिकतम और न्यूनतम शुद्ध राज्य घरेलू उत्पाद में अनुपात 4.60 था जबकि यह मानव विकास सूचकांक के केवल 2.18 था। इससे यह बात रेखांकित होती है कि आर्थिक उपलब्धि जिसे प्रति व्यक्ति शुद्ध घरेलू उत्पाद या प्रति व्यक्ति मासिक व्यय से अभिव्यक्त किया जाता है,

एक महत्वपूर्ण चल है, परन्तु राज्य अन्य उपलब्धियों अर्थात् जीवन-प्रत्याशा और शिक्षा को इन क्षेत्रों में प्रभावी नीतियों को बढ़ावा देकर प्राप्त कर सकते हैं इससे इस बात की व्याख्या हो जाती है कि केरल जैसे मध्यम आय वाले राज्य में मानव विकास सूचकांक मे सर्वोत्तम स्थान प्राप्त है। यह भी सत्य है कि महाराष्ट्र जिसका शुद्ध राज्य घरेलू उत्पाद में प्रथम स्थान है, मानव विकास सूचकांक में तीसरा स्थान है।

12.9.2 मानव विकास सूचकांक में ग्राम-नगर अन्तर

तालिका 6: 1991 के लिए ग्राम नगर मानव विकास सूचकांक

राज्य	ग्रामीण (2)	**क्रम (3)**	**नगरीय (4)**	**क्रम (5)**	**संयुक्त (6)**	**क्रम (7)**	**4का 2से अनुपात (8)**
चंडीगढ़	0.501	8	0.694	2	0.674	1	1.38
दिल्ली	0.530	4	0.635	6	0.624	2	1.20
केरल	0.576	1	0.628	9	0.591	3	1.09
गोवा	0.534	3	0.658	3	0.575	4	1.23
अंडमान और निकोबार	0.528	5	0.653	4	0.574	5	1.23
पौण्डीचेरी	0.556	2	0.591	13	0.571	6	1.06
मिजोरम	0.464	10	0.648	5	0.548	7	1.40
दमन एवं द्वीप	0.492	9	0.629	8	0.544	8	1.28
मणिपुर	0.503	7	0.618	12	0.536	9	1.23
लक्षद्वीप	0.520	6	0.545	22	0.532	10	1.05
नागालैंड	0.442	13	0.633	7	0.486	11	1.43
पंजाब	0.447	11	0.566	16	0.475	12	1.27
हिमांचल प्रदेश	0.442	12	0.700	1	0.469	13	1.58
तमिलनाडु	0.421	14	0.560	18	0.466	14	1.33
महाराष्ट्र	0.403	16	0.548	21	0.452	15	1.36
हरियाणा	0.409	15	0.562	17	0.443	16	1.37
गुजरात	0.380	18	0.532	23	0.431	17	1.40

सिक्किम	0.398	17	0.618	11	0.425	18	1.55
कर्नाटक	0.367	21	0.523	24	0.425	19	1.43
पश्चिम बंगाल	0.370	19	0.511	26	0.404	20	1.38
जम्मू कश्मीर	0.364	22	0.575	14	0.402	21	1.58
त्रिपुरा	0.368	20	0.551	20	0.389	22	1.50
आंद्रप्रदेश	0.344	23	0.473	29	0.377	23	1.38
मेघालय	0.332	24	0.624	10	0.365	24	1.88
दादर एवं नगर हवेली	0.310	27	0.519	25	0.361	25	1.67
असम	0.326	26	0.555	19	0.348	26	1.70
राजस्थान	0.298	29	0.692	27	0.347	27	1.65
उडीशा	0.328	25	0.469	30	0.345	28	1.43
अरुणांचल प्रदेश	0.300	28	0.572	15	0.328	29	1.90
मध्यप्रदेश	0.282	32	0.491	28	0.328	30	1.74
उत्तरप्रदेश	0.284	31	0.444	32	0.314	31	1.56
fबिहार	0.286	30	0.460	31	0.308	31	1.61
अखिल भारत	0.340		0.511		0.381		1.50

नोट: राज्य संयुक्त मानव विकास सूचकांक के आधार पर घटते हुए क्रमबद्ध किए गए हैं।

स्रोतः योजना आयोग (2002), राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट (2001).

राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट ने भारत में ग्राम-नगर असमानता की ओर ध्यान आकर्षित किय है अखिल भारतीय स्तर पर 1981 में ग्रामीण-मानव विकास सूचकांक 0.263 और नगर-सूचकांक 0.442 था। अतः नगर-ग्राम अनुपात 1.68 था। 1991 में, ग्रामीण-मानव विकास सूचकांक 0.340 था जबकि नगर-सूचकांक0.511 था।

तालिका 7: भारत में संवृद्धि और मानव विकास के चुने हुए सूचकांकः राज्यवार

राज्य	शुद्ध राज्य घेरलू उत्पाद की बार्षिक वृद्धि -दर	गरीबी रेखा के नीचे जनंसख्या	बेरोजगारी (1999-2000)	जन्म दर	मृत्यु दर	शिशु मृत्युदर	साक्षरता दर (2011) |

		का प्रतिशत						
	2004-05 से 2009-10	2009-10	2009-10 |	2010	2010	2010	कुल	स्त्री
पंजाब	7.7	15.9	6..5	16.6	7.0	34	76.7	71.3
महाराष्ट्र	11.5	24.4	6.3	17.1	6.5	28	82.9	75.5
हरियाणा |	10.0	20.1	5.5	22.3	6.6	48	76.6	66.8
पश्चिम बंगाल	10.5	23.0	5.0	21.8	6.7	44	79.3	70.7
कर्नाटक	5.77	26.7	7.0	16.8	6.0	31	77.1	71.2
केरल	8.2	23.6	4.2	19.2	7.1	38	75.6	68.1
तमिलनाडु	8.7	12.0	16.7	14.8	7.0	13	93.9	91.98
आंध्रप्रदेश	10.0	17.1	11.7	15.9	7.6	24	80.3	73.9
मध्यप्रदेश	8.6	21.1	7.0	17.9	7.6	24	80.3	73.9
असम	6.9	36.7	6.5	27.3	8.3	62	70.6	60.0
उत्तर प्रदेश	5.2	37.9	6.5	23.2	8.2	58	73.2	67.3
उड़ीसा	6.7	37.7	5.3	28.3	8.1	61	69.7	59.3
राजस्थान	7.9	37.0	7.9	20.5	8.6	61	73.4	64.4
असम	6.9	24.8	3.3	26.7	6.7	55	67.1	52.7
बिहार	10.0	53.5	5.7	28.1	6.8	48	63.8	53.3
अखिल भारत		29.8	6.6	22.1	7.2	47	74.0	65.5

अतः नगर-ग्राम अनुपात 1.50 था। जाहिर है कि मानव विकास की दृष्टि से नगर-ग्राम असमानता 1.68 से कम होकर 1.50 हो गयी जो चाहे बहुत अधिक तो नहीं, परन्तु महत्वपूर्ण है और इससे यह पता चलता है कि ग्राम-क्षेत्रों की ओर अब सापेक्षतः अधिक ध्यान दिया जा रहा है। किन्तु राज्यों के स्तर पर मानवीय विकास सूचकांकों में तीव्र अन्तर विद्यामान हैं। ऐसे राज्य अथवा संघीय क्षेत्र जिनमें नगर-ग्राम असमानता निम्न है (1.25 से कम), वे है: केरल, गोवा, पाण्डिचेरी, दिल्ली, अण्डमान और निकोबार द्वीप, मणिपुर और लक्षद्वीप। किन्तु वे राज्य जिनमें मध्यम नगर-ग्राम असमानता (1.25 से 1.50 के बीच) विद्यमान है, वे हैं: मिज़ोरम, नागालैण्ड, पंजाब, तमिलनाडू,

महाराष्ट्र, हरियाणा, गुजरात, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश और उड़ीसा। इसके विरूद्ध, उच्च नगर-ग्राम मानव विकास असमानता (1.50 से अधिक) वाले राज्य हैं: हिमाचल प्रदेश, सिक्किम, जन्मू तथा कश्मीर, त्रिपुरा, मेघालय, असम, राजस्थान, अरूणाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और बिहार।। राष्टीय मानव विकास रिपोर्ट ने उस दिशा का संकेत किया जिसकी ओर राजकीय नीतियां चलायी जानी चाहिए ताकि देश में समग्र रूप में मानव विकास सूचकांक में उन्नति हो। इसमें मानव विकास की दृष्टि से विभिन्न राज्यों में नगर-ग्राम असमानता को अभिव्यक्त किया गया है और इस बात पर बल दिया गया है कि मानव विकास को ग्राम क्षेत्रों में बढ़ाना आवश्यक है ताकि मानव विकास के नगर-ग्राम सूचकों में अन्तर को कम किया जा सकें।

12.9.3 नीति की दिशा

विश्वभर का अनुभव, निसमें भारत कोई अपवाद नहीं, यह बताता है कि विकास की संरचना और गुणवत्ता से मांग की जाती है कि वह मानव विकास, रोजगार-जनन, निर्धनता-समाप्ति और दीर्घकालीन पोषणीयता की ओर ध्यान दें। अन्य देशों की भांति भारत में भी दबाव बढ़ रहे हैं कि संसाधनों के संरक्षण, प्रदूषण, असमानता एवं बेरोजगारी के रूप में विकास प्रक्रिया के दुष्प्रभाव को कम करने की जरूरत है। इसी कारण मानव विकास रिपोर्ट (1996) ने इस बात पर बल देत हए उल्लेख किया है: "ऐसा विकास असमानताओं को शाश्वत बनाता है न ही पोषणीय है और न इसे कायम रखा जाना चाहिए।" जैसाकि मानव विकास रिपोर्ट (1996) ने सुझाव दिया है, भारत को विकास के ऐसे ढांचे को अपनाना चाहिए

(i) जो रोजगार-जनन विकास को प्रोन्नत करे

(ii) जिससे समतावादी विकास को बढ़ावा मिले

(iii) जिससे सहयोगी विकास प्रोन्नत हो,

(iv) जिससे जमीनी विकास प्रोन्नत हो सके और

(v) जिससे पोषणीय विकास का बढ़ावा दिया जा सके। यदि विकास के ऐसे ढांचे का अनुसरण किया जाता है, तो इससे उलार-विकास से बचा जा सकता है। मानव रिपोर्ट (1996) में चेतावनी दी गयी है: "पिछले 30 वर्षों का आर्थिक विकास और मानव विकास का रिकार्ड यह स्पष्ट करता है कि कोई भी देश लम्बे समय के लिए उलार विकास का मार्ग अपना नहीं सकता जहां आर्थिक विकास का प्रतितुलन मानव विकास के साथ न किया जाए, और विलोम क्रम भी।" तालिका 12 में भारत के विभिन्न राज्यों में वर्तमान परिस्थिति के बारे में बहुत ही रूचिकर जानकारी प्राप्त होती है। केरल एक ऐसा राज्य है जिसमें निम्न आर्थिक विकास के साथ उच्च मानव विकास का संकेत मिलता है। 2010 में केरल में जन्म दर 14.8 प्रति हजार के निम्न स्तर पर पहंच गयी जोकि विकसित देशों के साथ तलनीय है। स्त्री-साक्षरता 88 प्रतिशत पर पहुंच गयी जबकि समग्र साक्षरता 91 प्रतिशत के उच्च स्तर पर थी। किन्तु 2004-05 और 2009-10 के दौरान राज्यीय घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर 8.7 प्रतिशत रही। दूसरी ओर, हरियाणा में प्रति व्यक्ति शुद्ध उत्पाद 2004-05 की कीमतों 2010-11 में 37,792 रूपये था और 2004-05 से 2009-10 में शुद्ध देशीय उत्पाद की वृद्धिदर 10 प्रतिशत थी। किन्तु मानव विकास के क्षेत्र में हिरयाणा का रिकार्ड घटिया है-2010 में इसमें जन्म दर 22.3 प्रतिशत हजार थी और साक्षरता दर 76.6 प्रतिशत थी, जबकि स्त्री साक्षरता दर केवल 66.8 प्रतिशत थी। एक अन्य अजीब परिस्थिति राजस्थान की थी जिसमें राज्यीय घरेलू उत्पाद में 6.9 प्रतिशत की वृद्धि दर अनुभव की गयी इसमें गरीबी रेखा के नीचे रहने वाजी जनसंख्या भी 1987-88 के 35.2 प्रतिशत से गिरकर 200.-10 में 24.8 प्रतिशत हो गयी। किन्तु मानव विकास के संदर्भ में इसका रिकार्ड भी घटिया है-इसमें 2010 में भी जन्म 26.7 प्रतिहजार थी, शिशु मृत्युदर 55 और स्त्री-साक्षरता दर का स्तर बहुत ही नीचा अर्थात 52.7 प्रतिशत था और समग्र साक्षरता दर भी लगभग 67 प्रतिशत थी। राजस्थान आर्थिक विकास के मार्ग पर तो आगे बढ़ रहा है परन्तु मानव विकास के मार्ग पर बहुत ही पिछड़ गया है। भारतीय परिस्थिति में,

विभिन्न राज्यों में भारी अन्तर पाए जाते है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं

1.उच्च मानव विकास के साथ सापेक्षतः नीची आय–केरल

2.निम्न मानव विकास के साथ उच्च उच्च आय- हरियाणा

3.तीव्र आर्थिक विकास किन्तु निम्न मानव विकास-राजस्थान

4.आर्थिक विकास और मानव विकास एक दूसरे को परस्पर बढ़ाते हुए-पंजाब, गुजरात, तामिलनाडु, महाराष्ट्र और पश्चिम बंगाल।

5.आर्थिक विकास और मानव विकास एक दूसरे पर मन्द प्रभाव डालते हुए-मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा और बिहार। भारतीय अभिदृश्य में भारी असमानताएं विद्यमान है और कई प्रतिरूपों में अन्तर्निहित खतरे भी हैं। ऐसे राज्य जिनमें विकास का उलार ढांचा मानव विकास के विरूद्ध झुका हुआ है, शीघ्र ही गतिरोध की स्थिति में पहुंच जाएंगे। तीव्र आर्थिक विकास भी एक दशक या कुछ अधिक समय के पश्चात् मन्द होना शुरू हो जाएगा जब तक कि राज्य मानव विकास को प्रोन्नत करने का आर्थिक विकास कार्यक्रम लाग नहीं करता। इसी प्रकार केरल को आर्थिक विकास को त्वरित करने का प्रोग्राम चालू करना होगा ताकि मानव विकास के लाभ उच्च उत्पादिता के रूप में प्राप्त किए जा सकें।। आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और बिहार जैसे पिछड़े हुए राज्य निम्न आर्थिक विकास और निम्न मानव विकास के दुष्चक्र में फंस गए हैं। उन्हें इस दुष्चक्र को तोड़ने के लिए पहले विनियोग को बढ़ाना होगा ताकि आर्थिक विकास व्वरित किया जा सके और बाद में मानव विकास को बढ़ावा देना होगा। अन्यथा वे दूसरी दिशा में भी चल सकते हैं और पहले मानव विकास को बढ़ावा दें जिससे बाद में आर्थिक विकास त्वरित करने के लिए दबाव बढ़े। आंध्र प्रदेश ने नब्बे के दशक में इस दुष्चक्र को तोड़ना शुरू कर दिया है।

प्रश्न यह है कि क्या विकास और साम्य में अन्तर्विरोध है? एक समय था जब साइमन कुजनेट्स ने ने यह तर्क दिया कि आर्थिक विकास के आरंभिक चरणों में असमानता बढ़ेगी क्योंकि श्रमिक कृषि को छोड़ उद्योग की ओर चलेंगे और फिर जैसे औद्योगिक उत्पादन अधिक विस्तृत हो जाएगा, यह असमानता कम हो जाएगी। इसी प्रकार, निकोलास काल्डर ने यह तर्क दिया कि आर्थिक विकास को व्वरित करने के लिए बचत उद्योगपतियों की जेबों से प्राप्त होगी और इस वर्ग के लिए अधिक लाभ को बर्दाश्त करना होगा ताकि ये विनियोग के उच्च स्तर को प्रोन्नत करने के लिए बचत उपलब्ध करा सकें जिससे विकास प्रक्रिया त्वरित की जा सके। मानव विकास रिपोर्ट (1996) ने यह बात साफ शब्दों मे कही है: "पारम्परिक विचार कि आर्थिक विकास के आरंभिक चरणों में अनिवार्य आय–वितरण में गिरावट आती है, असत्य प्रमाणित हुआ है। नयी खोज से यह पता चला है कि सर्वजनिक और निजी संसाधनों के समतापूर्वक वितरण से अधिक विकास की संभावना बढ़ती है।" इस संदर्भ में विकास, साम्य और लोकतन्त्र के उद्देश्यों को एक-साथ चलाने की आवश्यकता है क्योंकि वे एक-दूसरे से प्रबल रूप में जुड़े हुए है। विश्व बैंक के 192 देशों के बारे में किए गए अध्ययन से पता चलता है कि विकास के केवल 16 प्रतिशत भाग की व्याख्या भौतिक पूंजी तीव्रता द्वारा की जा सकती है अर्थात्, मशीनरी, बिल्डिंग और भौतिक आधारसंरचना द्वारा, जबकि 20 प्रतिशत के लिए मानव सामाजिक पूंजी को श्रेय दिया जा सकता है। ऐसे विश्वसनीय प्रमाण के होते हुए यह वांछनीय नहीं कि आर्थिक विकास को धीरे-धीरे नीचे की ओर रिसने दिया जाए। नीचे की ओर रिसने वाले दृष्टिकोण का प्रतिस्थापन रोजगार-जनन विकास से किया जाना चाहिए जिसके लिए भारत को पूर्ण रोजगार के प्रति अपनी वचनबद्धता प्रदर्शित करनी होगी। इसके साथ-साथ विकास प्रक्रिया को समतापर्वक विकास के साथ अधिक जनसहयोग को बढ़ावा देना होगा। इसके लिए सामाजिक क्षेत्र अर्थात् स्वास्थ्य और शिक्षा में भारी विनियोग करना होगा ताकि एक बेहतर श्रमशक्ति द्वारा उत्पादिता बढ़ सके जिसके परिणामस्वरूप विकास के लाभों में श्रम को बेहत्तर भाग मिल सके। दूसरे शब्दों, में तीव्र आर्थिक विकास और तीव्र मानवीय विकास में कोई

अन्तर्विरोध नहीं है, दोनों एक दूसरे को पुष्ट करते हैं और जब तक भारत इन दोनों में सन्तुलन स्थापित नहीं कर लेता, विकास साम्य और लोकतंत्र के उद्देश्य प्राप्त नहीं किए जा सकेंगे और विकास देश के गरीब वर्गों के बड़े भाग के लिए अपूर्ण ही रहेगा।

12.10 अभ्यास प्रश्न

12.11 सारांश

12.12 शब्दावली

- **मानव विकास** - मानवीय पूंजी निर्माण अथवा मानव विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत मानव शक्ति के विकास हेतु भारी मात्रा में विनियोग किया जाता है ताकि देश की जन शक्ति, प्राविधिक ज्ञान, योग्यता एवं कुशलता की दृष्टि से विशिष्टता प्राप्त कर सके। स्थिर जनसंख्या -
- **स्थिर जनसंख्या** काल्पनिक जनसंख्या के उस स्थायी स्वरूप का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें पूर्वकल्पित आयु-विशिष्ट जन्म दरें एवं मृत्यु दरें अपरिवर्तित एवं यथावत बनी रहती है।
- **पूर्वानुमान** : संख्यात्मक तथ्यों के भूतकालीन व्यवहार के आधार पर भविष्य के लिए काल श्रेणी को विस्तृत अथवा विक्षेपित करने की प्रक्रिया सांख्यिकी में पूर्वानुमान कहलाती है।
- **भविष्यवाणी** : यह बहुत कुछ ग्रह दशा, भाग्यवादिता अथवा किसी रहस्यपूर्ण शक्ति की पर आश्रित कथन है, जिनकी मनोवैज्ञानिक तो हो सकती है, पर इनका कोई सांख्यिकी आधार नहीं है।
- **वैवाहिक जन्म दर :**वैवाहिक जन्म दर किसी जनसंख्या में एक वर्ष की अवधि में वैधानिक रूप से जन्म लेने वाली संतानों का उस जनसंख्या की प्रजनन काल आयु से संबंधित संपूर्ण विवाहित स्त्रियों के साथ स्थापित प्रति हजार अनुपात है।
- **संशोधित जन्म दर** : जब हम अशोधित जन्म दर की गणना करने लगते है तो कुछ ऐसे जन्मों को उसमें सम्मिलित नहीं कर पाते हैं जिनकी सूचना का पंजीकरण नही होता है। प्रायः ग्रामीण क्षेत्रों मे लोंग जन्में बच्चों का पंजीयन नहीं कराते हैं। अतः प्रजनन सम्बन्धी आंकड़ों का सही - सही ज्ञान नही हो पाता है। ऐसी दशा में सही जन्म दर की संख्या में जोड़ दिया जाता है। यह अनुमानित संख्या सम्पूर्ण पंजीकृत संख्या का एक छोटा हिस्सा हो सकती है।

12.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

12.14 संदर्भ सहित ग्रंथ

- सिन्हा, बी. सी. एंव पुष्पा सिन्हा (2011), "जनांकिकी के सिद्धान्त', मयूर पेपर बैक्स, नई दिल्ली।
- चौबे, पी. के. (2000), "भारत में जनसंख्या नीति", कनिष्ट प्रकाशन, नई दिल्ली।
- मिश्र, प्रकाश (2012), "जनांकिकी', साहित्य भवन पब्लिकेशन, दिल्ली।

12.15 उपयोगी / सहायक ग्रंथ

- अग्रवाल, एस. एन. (1972), "भारत की जनसंख्या समस्या', टाटा मैक्ग्रा हिल कम्पनी, मुम्बई।
- दत्त, रूद्र एवं के. पी. एम. सुन्दरम (2010), "भारतीय अर्थ व्यवस्था', एस. चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।

12.16 निबन्धात्मक प्रश्न

1. आर्थिक विकास में मानवीय संसाधनों की भूमिका का विवेचन कीजिए।
2. आर्थिक उन्नति में मानव साधनों के विकास के महत्व की गणना कीजिए। क्या विकासशील देशों में इसको पूंजीवाद से अधिक महत्व देना चाहिए?

इकाई-13 जनसंख्या एवं आर्थिक विकास
(Population and Economic Development)

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 जनसंख्या एवं आर्थिक विकास
13.3.1 जनसंख्या का आर्थिक विकास पर प्रभाव
13.3.1.1 जनसंख्या के आकार का प्रति व्यक्ति आय पर प्रभाव
13.3.1.2 जनसंख्या में वृद्धि दर का प्रति व्यक्ति आय पर प्रभाव
13.3.1.3 जनसंख्या और पूंजी निर्माण
13.3.1.4 मानवीय संसाधनों का आर्थिक विकास में उपयोग
13.3.1.4.1 रेगनर नर्क्स की विचारधारा
13.3.1.4.2 आर्थर लुईस की विचारधारा
13.3.1.4.3 प्रो0 लैबिन्स्टीन की विचारधारा
13.3.1.4.4 जनांकिकीय संक्रमण का सिद्धान्त
13.3.1.4.5 भारत में जनसंख्या का आकार और वृद्धि दर
13.3.2 आर्थिक विकास का जनसंख्या पर प्रभाव
13.3.2.1 जनसंख्या और राष्ट्रीय एवं प्रतिव्यक्ति आय की वृद्धि दर
13.3.2.2 जनसंख्या और खाद्य संभरण
13.3.2.3 जनसंख्या और बेरोजगारी
13.3.2.4 जनसंख्या और शिक्षा, डाक्टरी सहायता तथा आवास का भाग
13.3.2.5 जनसंख्या वृद्धि और पूंजी निर्माण
13.4 जनसंख्या नीति
13.4.1 आपात काल के दौरान जनसंख्या नीति
13.4.2 राष्ट्रीय जनसंख्या नीति
13.6 अभ्यास प्रश्न
13.7 सारांश
13.8 शब्दावली
13.9 अभ्यस प्रश्नों के उत्तर
13.10 संदर्भ सहित ग्रंथ
13.11 उपयोगी/सहायक ग्रंथ
13.12 निबंधात्मक प्रश्न

13.1.0 प्रस्तावना

किसी भी देश के लिए उसकी जनसंख्या उसके आर्थिक विकास का 'साधन' तथा 'साध्य' दोनों होती है। समस्त उत्पादन का मूल साधन मनुष्य ही है। वही अपनी शारीरिक और बौद्धिक शक्ति तथा भौतिक साधनों का प्रयोग करके, नई रीतियों और प्रक्रियाओं की खोज करके, उत्पादन की प्रक्रिया को जन्म देता है और आर्थिक विकास के लिए मार्ग प्रशस्त करता है। मानव ही सभी साधनों को जुटा कर उन्हें समन्वित करता है और सेवा तथा माल में परिवर्तन करके राष्ट्रीय धन के अधिकाधिक उत्पादन में सहायक बनता है। किसी देश के प्राकतिक साधन अत्यंत ही पर्याप्त हों, तो भी वह देश गरीब ही रह सकता है, यदि उसके जनसमूह पर्याप्त एवं कार्य-कुशल न हों।

13.2.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से हम समझ सकेंगें:

- ✓ जनसंख्या और आर्थिक विकास में अंतर्संबंध ।
- ✓ कुल जनसंख्या का प्रति व्यक्ति आय पर प्रभाव ।
- ✓ मानवीय संसाधनों का आर्थिक विकास में महत्त्व
- ✓ मानवीय संसाधनों का आर्थिक विकास में उपयोग।
- ✓ आर्थिक विकास में जनसंख्या का योगदान ।
- ✓ आर्थिक विकास की प्रक्रिया में मानवीय संसाधन के कार्यों का संपादन।।

13.3.0 जनसंख्या एवं आर्थिक विकास

जनसंख्या और आर्थिक विकास में घनिष्ठ अंतर्संबंध है। इनके अंतर्संबंधों को हम निम्नलिखित दो शीर्षकों के अंतर्गत अध्ययन कर सकते हैं:

1. जनसंख्या का आर्थिक विकास पर प्रभाव
2. आर्थिक विकास का जनसंख्या पर प्रभाव

13.3.1 जनसंख्या का आर्थिक विकास पर प्रभाव : साधारणतया आर्थिक विकास की माप राष्ट्रीय आय के संदर्भ में की जाती हैं, परंतु राष्ट्रीय आय आर्थिक विकास के स्तर उचित संकेतक नहीं है, क्योंकि इसमें जनसंख्या संबंधी पहलू पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। राष्ट्रीय आय में वृद्धि होने से यह संभव है कि जनसमूह की निर्धनता बढ़ जाये। ऐसा उस समय होता है जब जनसंख्या में वृद्धि की गति राष्ट्रीय आय में वृद्धि की गति से अधिक तेजी से होती है। अतः आर्थिक विकास की माप अधिक अच्छा निर्देशांक प्रति व्यक्ति आय है, जो कि कुल राष्ट्रीय आय की जनसंख्या से भाग देने से प्राप्त होती है।

$$\text{अर्थात् प्रति व्यक्ति आय} = \frac{\text{सकल राष्ट्रीय आय}}{\text{जनसंख्या}}$$

यदि प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती जाती है, तो इसका अभिप्राय यह है कि देश का आर्थिक विकास होता जा रहा हैं। अतः जनसंख्या के प्रति व्यक्ति आय पर पड़ने वाले प्रभाव के अध्ययन के द्वारा हम यह जान सकते हैं कि जनसंख्या आर्थिक विकास को किस प्रकार प्रभावित कर रही है। जनसंख्या के प्रति व्यक्ति आय पर पड़ने वाले प्रभाव को निम्नलिखित दो दृष्टिकोणों से विश्लेषण कर सकते हैं:

13.3.1.1 जनसंख्या के आकार का प्रति व्यक्ति आय पर प्रभाव:-

कुल जनसंख्या का प्रति व्यक्ति आय पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता हैं। यदि देश विशेष की जनसंख्या यथास्थिर रहती है, तो राष्ट्रीय आय में वृद्धि के साथ साथ प्रति व्यक्ति आय भी बढ़ती जाएगी। यदि जनसंख्या के आकार में वृद्धि होती है, तो हो सकता है कुल राष्ट्रीय आय बढ़ने पर प्रति व्यक्ति आय समान रहे या कम हो जाये। इस तथ्य को तीन काल्पनिक अर्थव्यवस्थाओं में निम्नलिखित उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया गया है:

सारणी 1: जनसंख्या आकार का प्रति व्यक्ति आय पर प्रभाव

सन् 1994			सन् 2004		
जनसंख्या (करोड में)।	**कुल वास्तविक (आय करोड़ (रू0 में)**	**प्रति व्यक्ति आय (रू0 में)**	**जनसंख्या (करोड में)।**	**कुल वास्तविक (आय करोड़ (रू0 में)**	**प्रति व्यक्ति आय (रू0 में)**
A30	3000	100	36	4200	120
B45	5400	120	48	5760	120
C60	8400	140	75	9750	130

ऊपर के उदाहरण में A, B और C तीनों ही अर्थव्यवस्थाओं में सन् 1994 की कुल राष्ट्रीय आय सन् 2004 की आय से अधिक है, परंतु जनसंख्या में वृद्धि हो जाने के कारण A अर्थव्यवस्था में प्रति व्यक्ति आय बढी है. B में स्थिर रही है और C में घटी है। अतः अर्थव्यवस्था A की प्रगति ऊपर चढ़ रही है, अर्थव्यवस्था B स्थैतिक है, और अर्थव्यवस्था C की प्रगति नीचे गिर रही है। अतः जनंसख्या के आकार का प्रति व्यक्ति आय पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। जनसंख्या में वृद्धि के कारण ही अर्द्धविकसित देशों की प्रति व्यक्ति आय विकसित देशों की अपेक्षा कम बनी रहती है। सारणी 2 के अंको से स्पष्ट होती है कि यद्यपि अर्द्धविकसित देश और विकसित देश दोनों में वार्षिक राष्ट्रीय आय की वृद्धि की दर समान रहती है, परन्तु अर्द्धविकसित देशों में जनसंख्या की वृद्धि की दर तीव्र रहने के कारण प्रति व्यक्ति आय न्यून बनी रहती है।

सारणी 2: जनसंख्या और आय का विकास-विकास की औसत वार्षिक प्रतिशत दरें

	विकसित देश	**अर्द्धविकसित देश**
कुल आय	4.4	4.0
जनसंख्या	1.3	2.6
प्रति व्यक्ति आय	3.1	1.5

इस संदर्भ में सर्वोत्तम जनसंख्या के सिद्धान्त की चर्चा उपयुक्त होगी। सर्वोत्तम जनसंख्या की धारणा जनसंख्या के उस आकार (मात्रा) को बताती है, जिससे किसी देश का एक समय विशेष पर प्राकृतिक साधनों का समुचित दोहन हो सके, जिससे प्रति व्यक्ति आय अधिकतम होती है।

अतः सर्वोत्तम जनसंख्या वह जनसंख्या है, जो प्रति व्यक्ति अधिकतम आय देती है। चित्र में जनसंख्या वक्र पर बिंदु सर्वोत्तम जनसंख्या का सूचक है, क्योंकि इस 'P' बिंदु पर प्रति व्यक्ति आय अधिकतम है।

आदर्श जनसंख्या के बिंदु से कोई भी विचलन जनाभाव या जनाधिक्य को बताता है। यदि देश की जनसंख्या आदर्श (सर्वोत्तम) जनसंख्या से कम है, तो यह 'जनाभाव' कहलाता है और इस जनाभाव को दूर करने के लिए जनसंख्या में वृद्धि वांछनीय होती है। जब वास्तविक जनसंख्या आदर्श जनसंख्या से अधिक हो जाती है, तब दोनों का अंतर जनाधिक्य कहलाता है और इस जनाधिक्य को दर करने के लिए जनसंख्या में कमी वांछनीय होती है।

सर्वोत्तम जनसंख्या से वास्तविक जनसंख्या की कमी या अधिकता को कुसमंजन करते हैं, जो निम्नलिखित सूत्र से जाना जाता है:

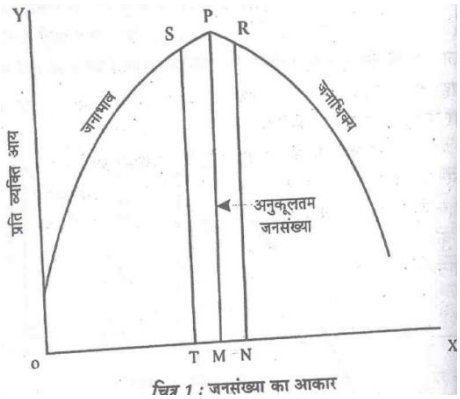

चित्र 1 : जनसंख्या का आकार

$$\text{अनुकूलतम जनसंख्या } (M) = \frac{\text{वास्तविक जनसंख्या } (A) - \text{आदर्श जनसंख्या} (O)}{\text{आदर्श जनसंख्या } (O)}$$

परंतु यह सिद्धांन व्यावहारिक नहीं है, क्योंकि यह इस धारणा पर आधारित है कि 'सर्वोत्तम जनसंख्या' पहले से ही ज्ञात रहती है, जो कि वास्तव में मालूम नहीं रहती। इस 'आकस्मिक और प्रतिक्षण परिवर्तनीय संसार में वस्तुतः अनुकूलतम जनसंख्या की खोज मृगतृष्णा की भाँति है, जो कि हमेशा हमारी समझ को छल करके निकल जाती है। पुनः ऐसा प्रतीत होता है कि यह सिद्धांत इस मान्यता पर आधारित है कि प्रति व्यक्ति आय या उत्पादन जनसंख्या के आकार पर निर्भर रहता है, जनसंख्या के प्रकार पर नहीं। यदि देश की जनसंख्या में अपेक्षित गुणों का अभाव होगा, तो भी उस देश की प्रति व्यक्ति आय अधिकतम नहीं हो सकती। किसी देश के विकास के लिए स्वस्थ, शिक्षित बुद्धिमान तथा उच्च नैतिक स्तर की जनसंख्या का होना भी अति आवश्यक है।

13.3.1.2 जनसंख्या में वृद्धि दर का प्रति व्यक्ति आय पर प्रभाव :- यदि जनसंख्या के विकास की दर अधिक है, तो प्रति व्यक्ति आय के विद्यमान स्तर को बनाए रखने के लिए अधिक पूंजी अथवा विनियोग की आवश्यकता पड़ेगी। उदाहरणार्थ, कल्पना कीजिए कि A देश में जनसंख्या की वृद्धि प्रतिवर्ष 1 प्रतिशत की दर से होती है और B देश में 3 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से। अब यदि यह मान लें कि दोनों देशों में पूंजी-उत्पादन अनुपात 3 : 1 हैं इसका अर्थ है उत्पादन की एक इकाई वृद्धि के लिए 3 इकाई पूंजी आवश्यक है, तो A देश को अपनी प्रति व्यक्ति आय को बनाए रखने के लिए चालू उत्पादन का 3 प्रतिशत भाग विनियोग मे लगाना होगा, जबकि B देश को 9 प्रतिशत। अगर B देश अपने चालू उत्पादन का इतना भाग विनियोग नहीं कर सकता, तो इसका अर्थ यह है कि वहां देश के निवासियों की प्रति व्यक्ति आय में कमी आ जाएगी। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रति व्यक्ति आय बढ़ाने के लिए शीघ्र बढ़ने वाली जनसंख्या की तुलना में अधिक विनियोग की आवश्यकता होती है। इस तथ्य को हम एक संख्यात्मक उदाहरण द्वारा स्पष्ट कर सकते है।

मान लीजिए : जनसंख्या की वृद्धि दर = 2 प्रतिशत प्रतिवर्ष

पूंजी निर्माण की दर = 6 प्रतिशत (वार्षिक राष्ट्रीय उत्पादन का अंश)

पूंजी उत्पादन अनुपात = 3 : 1

ऐसी परिस्थिति में वास्तविक राष्ट्रीय उत्पादन में वार्षिक वृद्धि दर 2 प्रतिशत होगी, क्योंकि प्रति 100 इकाइयों में 6 इकाइयां पूंजीगत वस्तुओं की होंगी (क्योंकि पंजी निर्माण की दर 6 प्रतिशत है)। पूंजी की प्रति तीन इकाइयों से उत्पादन में 1 इकाई की वृद्धि फलित होगी। अतः पूंजी की 6 अतिरिक्त इाकइयों के कारण उत्पादन में 2 इकाइयों की अतिरिक्त वृद्धि होगी। इस प्रकार हमारे वास्तविक राष्ट्रीय उत्पादन में वार्षिक वृद्धि 2 प्रतिशत से होगी और चूंकि जनसंख्या भी इसी गति से बढ़ रही है, इसलिए जीवन स्तर में कोई सुधार न होगा। आर्थिक विकास होगा,

परंतु प्रति व्यक्ति आय पूर्ववत् ही रहेगी। प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि तभी संभव है जब पूंजी निर्माण की दर 6 प्रतिशत से अधिक हो।

प्रो. नर्क्स ने जनसंख्या में वृद्धि के प्रति व्यक्ति आय पर पड़ने वाले प्रभाव को बड़े सुंदर ढंग से इस प्रकार समझाया है: ***"यदि किसी अर्थव्यवस्था में जनसंख्या में वृद्धि नहीं होती, तो वह अपनी अतिरिक्त पूँजी (पूँजी-निर्माण) को विद्यमान श्रमिकों को अच्छे उपकरण, मशीनें, शिक्षा तथा प्रशिक्षण प्रदान करने में प्रयुक्त करेगी। इसे गहन विनियोग कहते हैं। इससे न केवल राष्ट्रीय आय बढ़ेगी, बल्कि प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होगी। पर यदि जनसंख्या बढ़ेती जाती है, तो समस्त अतिरिक्त पूंजी अथवा इसका कुछ अंश अतिरिक्त श्रमिकों (जो जनसंख्या में वृद्धि के कारण फलित होंगे) को वर्तमान उपकरणों को उपलब्ध कराने में लगाना पड़ेगा। अधिक श्रमिकों को चालू प्रकार के उपकरण उपलब्ध कराना विस्तीर्ण विनियोग कहलाता है। अतः यदि जनसंख्या में वृद्धि इतनी तेज है कि समस्त अतिरिक्त श्रमिकों को वर्तमान उपकरणों को उपलब्ध कराने मे ही लग जाती है, तो राष्ट्रीय आय बढ़ेगी, परंतु प्रति व्यक्ति आय नहीं बढ़ेगी।'***

इस प्रकार जनसंख्या में वृद्धि दो तरह से प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि की दर पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

एक तो यह अतिरिक्त पूंजी के उस अंश को हड़प लेती है, जिसे विद्यमान जनसंख्या की सज्जा सुधारने (अर्थात् उन्हें अच्छे उपकरण, मशीनें, शिक्षा आदि उपलब्ध कराना) में प्रयुक्त होता है, और दूसरी ओर शेष पूजी को अधिक श्रमिको को उपकरण उपलब्ध कराने में लगाना पडता है। इस दष्टिकोण से जनसंख्या में प्रत्येक वद्धि प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि की दर को कम करती है। एक अनुमान के अनुसार विभिन्न देशों को अपने राष्ट्रीय उत्पादन का निम्नलिखित प्रतिशत अपनी वर्तमान आय बनाने के लिए विनियोजित करना पड़ता है:

सारणी 3 : विभिन्न देशों द्वारा अपने राष्ट्रीय उत्पादन का अपनी वर्तमान आय में किया गया विनियोग

कुल राष्ट्रीय उत्पादन का भाग	देश
10 प्रतिशत से अधिक	कोलम्बिया, भारत, ब्राजील, घाना, ट्यूनीशिया
7.5-10 प्रतिशत	मलेशिया, पेरू, संयुक्त गणतंत्र अरब, थाईलैण्ड, मैक्सिको
5-7.5 प्रतिशत	फिलीपाइंस, टर्की
5 प्रतिशत से कम	सूडान, पाकिस्तान, नाइजीरिया, इंडोनेशिया, चाइल,यूथोपिया, अमरीका, नार्वे, फ्रांस, स्वीडन, डेनमार्क, पूर्व पश्चिमी जर्मनी, इटली, ब्रिटेन, बेलिजयम, ग्रीस, पुर्तगाल।

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट है कि तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या प्रति व्यक्ति आय को कम कर देती है। पूंजी निर्माण की गति को तीव्र करके और प्राविधिक विकास द्वारा

प्रति व्यक्ति आय को गिरने से रोका जा सकता है, परंतु अंततः उत्पत्ति हास-नियम क्रियाशील हो जाएगा और प्रति व्यक्ति आय घटने लगेगी। कारण यह है कि उत्पादन विभिन्न उत्पत्ति के साधनों (जैसे-भूमि, श्रम, पूंजी आदि) के संयोग से किया जाता है।

अतः यदि देश में जनसंख्या बढ़ती जाती है, तो श्रम अन्य उत्पत्ति के साधनों अर्थात् भूमि तथा पूंजी की अपेक्षा बहुत अधिक हो जात है। परिणामस्वरूप कुल उत्पादन घटती हुई दर से बढ़ता है। इसका अर्थ यह है कि भूमि, श्रम एवं पूंजी के बीच प्रतिस्थापन की लोच असीमित नहीं है- भूमि को स्थिर रखकर श्रम एवं पूंजी की अतिरिक्त इकाइयों का प्रयोग एक सीमा तक ही किया जा सकता है। यदि ऐसा नहीं होता, तो भूमि के एक टुकड़े

पर ही श्रम एवं पूंजी की अधिकाधिक इकाइयों के प्रयोग द्वारा हम संपूर्ण विश्व की जनसंख्या के भोजन के लिए खाद्यान्न उपजा सकते थे और भूमि के बदले में पूंजी तथा श्रम की इकाइयों को लगाकर गगनचुम्बी इमारत बनाकर आश्रय प्रदान कर सकते थे, किन्तु ऐसा संभव नहीं है। अतः बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण अर्थव्यवस्था में उत्पादन हास नियम लागू होने लगता है।

कीन्सियन अर्थशास्त्रियों का विश्वास है कि दीर्घकालीन गतिरोध से बचने के लिए जनसंख्या का तीव्र विकास दर लाभकारी है, क्योंकि बढ़ती हुई जनसंख्या वस्तुओं और सेवाओं के प्रभावपूर्ण मांग में वृद्धि करेगी और उसके द्वारा पूंजी की सीमांत उत्पादकता में वृद्धि होगी, पूंजी की सीमांत उत्पादकता अर्थात् भावी आय में वृद्धि के कारण अधिक से अधिक पूंजी निर्माण एवं पूंजी विनियोजन के लिए प्रोत्साहन प्राप्त होगा। फलतः रोजगार उत्पादन और आय में वृद्धि होगी। इसके अतिरिक्त बढ़ती हुई जनसंख्या उद्योग के वर्तमान क्षमता के शोषण में भी सहायक होती है, परंतु यह तर्क विकसित देशों के संदर्भ में ही ठीक है। परंतु जहां भारत जैसे अर्द्धविकसित देशों का प्रश्न है, बढ़ती हुई जनसंख्या पूंजी निर्माण के लिए हानिकारक सिद्ध होगी, क्योंकि वहां मांग की समस्या नहीं है, बल्कि उत्पादन के साधनों के अभाव की समस्या है और इसलिए उनके वृद्धि करने की समस्या है। अतः अद्धविकसित देशों में अधिक उपभोग नहीं, वरन् अधिक बचत को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है। अधिक बचत के लिए अधिक आय, कम व्यय और कम जनसंख्या आवश्यक है। अन्य शब्दों में, "अधिकांश व विकासोन्मुख देश घने बसे हुए है और बढ़ती हुई जनसंख्या वहां के आर्थिक विकास में न केवल प्रति व्यक्ति आय में कमी लाती है बल्कि निम्नलिखित रूपों में भी बाधक होती है।

ज्ञानचन्द्र के अनुसार, ***"1900 ई0 से 1934 ई0 के बीच देश की जनसंख्या में 21 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी, जबकि कृषि की जाने वाली भूमि के क्षेत्र में केवल 11 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई।"*** **श्री0 पी0 के0 वत्तल** के अनुसार ***"1913-14 से 1934-35 के बीच जनसंख्या में प्रायः प्रति वर्ष औसत रूप से 1 प्रतिशत की वृद्धि हुई, किन्तु खाद्यान्नों के उत्पादन में केवल 0.65 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई।*** भारतीय योजना आयोग के शब्दों में, **"हमारी खाद्य समस्या का प्रमुख कारण खाद्यान्न की मांग तथा पूर्ति का तत्कालीन असंतुलन नहीं, वरन् देश में खाद्यान्न की तुलना में जनसंख्या में निरंतर अत्यधिक वृद्धि है।"**

बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण अर्द्धविकसित देशों में प्रति व्यक्ति कृषि क्षेत्र क्रमशः कम होता जाता है। खाद्यान्न की मांग की लोच अधिक होने के कारण आय में यदि कोई वृद्धि होती है, तो खाद्यान्न की मांग बढ़ती जाती है। फलतः विदेशों से भारी मात्रा में खाद्यान्न आयात करने में सीमित विदेशी विनिमय खर्च करना पड़ता है। यदि विदेशों से खाद्यान्न न आयात करना पड़ता, तो अर्द्धविकसित देश इसी विदेशी विनिमय से आर्थिक विकास के लिए आवश्यक मशीनों तथा अन्य पूंजीगत सामग्री को विदेशों से मांगकर अपने विकास की गति तीव्र कर सकते थे। अतः अत्यधिक जनसंख्या मशीनों को खाद्यान्न उपलब्ध कराने में देश की पूंजी का एक बड़ा भाग उत्पादन कार्यों में प्रयुक्त नहीं हो पाता और स्वभावतः विकास की गति अवरूद्ध हो जाती है।

13.3.1.3 जनसंख्या और पूंजी निर्माण: पूंजी निर्माण का अर्थ है-संपत्ति का सृजन। यदि किसी देश के लोग एक वर्ष मे जितना धन उत्पन्न करते है तथा उस सबका उपभोग कर डालते है, तो वहां उस वर्ष में पूंजी निर्माण नहीं होगा। अतः पूंजी निर्माण के लिए बचत आवश्यक है और उस बचत का पूंजीगत वस्तुओं अर्थात् कारखानों, मशीनों, उपकरणों, बांध, सड़को, रेल, संदेशवाहन के साधन और शक्ति आदि के निर्माण मे विनियोजन आवश्यक है। प्रो0 नर्क्स के शब्दों में, "आर्थिक विकास की प्रक्रिया का तात्पर्य वर्तमान समाज के उपलब्ध साधनों के कुछ भाग को पूंजीगत वस्तुओं के कोष में वृद्धि के लिए लगाना है, जिससे कि भाविष्य में उपभोग की वस्तुओं का विस्तार संभव हो सके।"

अद्धविकसित देशों जैसे- भारत में तेजी से बढ़ने वाली जनसंख्या पंजी निर्माण के लिए हानिकारक होती है, क्योंकि उच्च जन्म दर तथा अति जनसंख्या का अर्थ है-बढ़ता हुआ उपभोग। तेजी से जनसंख्या बढ़ने वाले देश में उपभोक्ताओं की संख्या अधिक होगी। प्रति व्यक्ति उपभोग स्थिर रहने पर भी देश में कुल उपभोग अधिक होगा। अद्धविकसित राष्ट्रों में प्रति व्यक्ति आय से कम होने से बचत तथा पूंजी निर्माण की क्षमता पहले से ही कम होती है। बढ़ता हुआ उपभोग बचत की सीमा को और अधिक नीचे गिरा देता है, जिससे पंजी निर्माण की दर कम हो जाती है। वास्तव में पंजी निर्माण की दष्टि से अर्द्धविकसित अर्थव्यवस्थाओं मे तीन तरह की कमी पाई जाती है। प्रथम, उनकी राष्ट्रीय आय कम है, द्वितीय, वे उसका कम प्रतिशत भाग संचित करते हैं तथा तृतीय उनकी जनसंख्या तुलनात्मक रूप से अधिक है। इन तीनों बातों का संयुक्त परिणाम यह है कि उनकी प्रति व्यक्ति पूंजी निर्माण की दर बहुत ही कम है। संयुक्त राष्ट्र संघ के आर्थिक सर्वेक्षण, 1956 में विभिन्न देशों की पूंजी निर्माण की दरें इस प्रकार दी गयी है:

सारणी 4: पूंजी निर्माण की दर

देश	घरेलू पूंजी निर्माण (आय का प्रतिशत)	देश	घरेलू पूंजी निर्माण (आय का प्रतिशत)
सिंगापुर	33%	जर्मनी	21%
आस्ट्रेलिया	25%	कांगो	8%
जापान	29%	केंया	15%
स्विट्जरलैंड	20%	भारत	24%

गांधी जी ने ठीक ही कहा है, ***"जनसंख्या के तीव्र गति से बढ़ते रहते आयोजित विकास करना बहुत कुछ ऐसी भूमि पर मकान खड़ा करने के समान है, जिसे बाढ़ का पानी बराबर बहा ले जा रहा हो। मैं कहूंगी कि यह बालू की नींव पर मकान खड़ा करने जैसा है। आयोजना और औद्योगिक तथा कृषि विकास के द्वारा जो भी उन्नति होती है, वह आबादी की वृद्धि में डूब जाती है। फलतः जनता के रहन-सहन के स्तर में कोई उल्लेखनीय उन्नति नहीं दिखाई पड़ती। वस्तुतः मुझे अंदेशा है कि हमारे सामाजिक ढांचे के निचले तबकों के लोगों के रहन-सहन में गिरावट आयी है। सामर्थ्य से अधिक बच्चों वाले परिवार की सहायता के लिए कोई भी नहीं दौड़ता, क्योंकि इसे विपत्ति नहीं माना जाता, भले ही इन बच्चों को भोजन और वस्त्र के अभाव में नंगा और भूखा ही क्यों न रहना पड़ता हो। यह स्थिति उस तरह की सहानुभूति अथवा भावना को जन्म नहीं देती, जो उदाहरण के लिए विदेशी आक्रमण के समय पैदा होती है। फिर भी यदि कुछ वर्षों के अंदर आबादी की बढ़ोत्तरी पर अंकुश नहीं लगा, तो हम अपने को एक ऐसी स्थिति में पाएंगे, जिससे शायद ईश्वर ही हमें उबार सकेगा। जरा 100 करोड़ की आबादी-एक अरब-लोगो की कल्पना कीजिए।"***

13.3.1.4.0 मानवीय संसाधनों का आर्थिक विकास में उपयोग

आर्थिक विकास की दृष्टि से मानवीय संसाधनों के उपयोग हेतु विभिन्न विकासवादी अर्थशास्त्रियों द्वारा भिन्न भिन्न उपाय बताए गये हैं। इन सभी विकल्पों का अंतिम उद्देश्य उपलब्ध जनशक्ति के सर्वोत्तम उपयोग द्वारा वांछित आर्थिक विकास को प्राप्त करना है। इस संबंध मे कुछ महत्वपूर्ण विचारधाराएं निम्नलिखित है:

13.3.1.4.1 रेगनर नर्क्स की विचारधारा

प्रो0 नर्स का मत है कि अर्द्धविकसित देशों में औसत रूप से कुल जनसंख्या का लगभग 25 प्रतिशत अदृश्य बेरोजगारी से ग्रस्त है। नर्क्स का कथन है कि 'घनीभूत श्रम' ही पूंजी होती है। अतः अदृश्य बेरोजगारी में निहित श्रम के अपव्यय का पूंजी निर्माण मे उपयोग किया जा सकता है। अतः यह उचित है कि अदृश्य बेरोजगार श्रमिकों को कृषि से हटाकर सिंचाई, रेल, सड़क, मकान आदि विशेष सामाजिक सेवाओं के निर्माण में लगाया जाये। नर्क्स के शब्दों में, "अतिरिक्त श्रमिकों को भूमि से हटाया जाना संभव है। ऐसे लोग जिस भी वस्तु का निर्माण करेंगे, उससे वास्ताविक राष्ट्रीय अया मे वृद्धि होगी। किंतु पूंजी के बिना वे क्या उत्पादन करेंगे? संभवतः बहुत कम। अतः उन्हें वास्तविक पूंजी के उत्पादन में क्यों न लगाया जाये।" अतिरिक्त श्रम शक्ति को भूमि से हटाकर पूंजीगत परियोजनाओं में लगाने में दो समस्याएं

(अ) उपकरणों की उपलब्धि और

(ब) योजनाओं का वित्त प्रबंध

जहां तक अतिरिक्त कृषि श्रम को पूंजीगत योजनाओं में कार्य करने के लिए

उपकरणों तथा अन्य सामान्य उपलब्ध कराने की समस्यां है, उसको हल करना अधिक सरल है। इस संबंध में नर्क्स का सुझाव है कि

(अ) जहां तक संभव हो उत्पादन कार्य में श्रम–प्रधान तकनीक का उपयोग किया जाना चाहिए, जैसे जंगल साफ करने में पेड़ों को गिराने का कार्य श्रमिकों द्वारा होना चाहिए, न कि बुलडोजरों द्वारा,

(ब) कृषि क्षेत्र से अतिरिक्त श्रमिकों के स्थानांतरण से कृषि में प्रयोग किए जा रहे उपकरण जैसे-टोकरियों, बेलचों व हथौड़ों आदि में भी बचत होगी। अतिरिक्त श्रमिक इन फालतू उपकरणों को पूंजीगत योजनाओं में प्रयोग के लिए ले जा सकते हैं।

(स) विकास की प्रारंभिक अवस्था में बहुत ही साधारण किस्म के औजार तथा उपकरणों का प्रयोग किया जा सकता है।

जहां तक दूसरी समस्या की बात है यदि हम परिस्थिति पर ध्यानपूर्वक दृष्टि डालें तो हम देखेंगे कि इन श्रमिकों की 'उपजीविका कोष' वहीं उपलब्ध है, केवल इसे पूंजी निर्माण के लिए प्रयुक्त नहीं किया जा रहा है। ये अतिरिक्त श्रमिक जब तक परिवार में रहते है।, वे भी वस्तुओं का उपभोग करते है, यद्यपि वे वस्तुतः उत्पादन में कोई योगदान नहीं करते। दूसरे शब्दों में, परिवारों के उत्पादक सदस्य अर्थात् वस्तुतः कार्यरत सदस्य जो कुछ उत्पादन करते हैं वह पूर्ण परिवार को प्राप्त होता है और इसका उपभोग परिवार के सभी उत्पादक एवं अनुत्पादक सदस्य करते हैं, चाहे उत्पादन में कोई अंशदान हो या न हो। यदि परिवार यह निर्णय करता है कि अनुत्पादक अतिरिक्त श्रमिकों को, जहां भी वे कार्य करेंगे, उनके हिस्से का अन्न पंहुचा दिया जाएगा, तो जिन श्रमिकों को कृषि से पूंजीगत योजनाओं में स्थानांतरित किया जाएगा, उनके पालन-पोषण की समस्या दूर हो जाएगी। नर्क्स के शब्दों में, "इस प्रकार पूंजी संचय के लिए अदृश्य बेरोजगारी का उपयोग करने के लिए व्यवस्था अपने भीतर से ही वित्त प्रबंध कर सकती है। भूमि पर ही काम करने वाले किसानों को पहले की अपेक्षा कम खाने के लिए कहना व्यर्थ है। आवश्यकता इस बात की है कि शेष रहने वाले उत्पादक किसान अपने पर निर्भर उन लोगो के लिए भोजन की व्यवस्था करते रहें, जो कृषि छोड़कर पूंजीगत योजनाओं में कार्य करने लगते है। इन सबका अर्थ तो पूंजी निर्माण के अर्थ में श्रम का पुनः बंटवारा ही है।" यही नर्क्स की थीसिस है। इस सिद्धांत की सफलता के लिए आवश्यक है कि

(i) कृषि क्षेत्र में बची हुई जनसंख्या के उपभोग स्तर में परिवर्तन नही होना चाहिए

(ii) कृषि क्षेत्र में जिन श्रमिकों को स्थानांतरित किया जाये, उनके लिए तुरन्त वैकल्पिक रोजगार की व्यवस्था होनी चाहिए।

सैद्धांतिक दृष्टिकोण से **प्रो0 नर्क्स** का सिद्धांत अत्यंत महात्वपूर्ण है। अर्द्धविकसित देशों में पाए जाने वाले श्रम अतिरेक का उपयोग उत्पादक कार्यो में किया जा सकता है। विकास की प्रारंभिक अवस्था में अर्द्धविकसित देशों को बाध्य सहायता पर आश्रित रहने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। इस सिद्धान्त के अनुसार देश में अंतर्निहित संभाव्य बचत का प्रभावशाली ढंग से उपयोग करके आर्थिक विकास को संभव बनाया जा सकता है। लेकिन जहां तक सिद्धान्त के अनुसार देश में अंतर्निहित संभाव्य बचत का प्रभावशाली ढंग से उपयोग करके आर्थिक विकास को संभव बनाया जा सकता है। लेकिन जहां तक सिद्धांत की व्यवहारिता का प्रश्न है, अदृश्य बेरोजगारी की सही माप अतिरिक्त श्रम को पूंजीगत परियोजनाओं में स्थानांतरित करना, पर्याप्त मात्रा मे मशीन, औजारों और उपकरणों की व्यवस्था करना साधनों की सही दिशा में गतिशीलता आदि अनेक समस्याएं पूंजी निर्माण मे सभाव्य बचत के योगदान को सीमित कर देती है।

13.3.1.4 .2 आर्थर लुईस की विचारधारा

प्रो० विलियम आर्थर लुईस नमे अपने लेख में एक मॉडल के आधार पर यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है कि श्रमकी असीमित पूर्ति के बावजूद भी तीव्र आर्थिक विकास संभव है। लुईस का यह विश्वास है कि अद्धविकसित देशों में असीमित मात्रा में श्रमिकों की पूर्ति जीवन निर्वाह मजदूरी स्तर पर उपलब्धि है। ऐसी स्थिति में "आर्थिक विकास उस समय होता है जबकि जीवन निर्वाह क्षेत्र से अतिरिक्त श्रमिकों को निकालकर पंजीवादी क्षेत्र में लगाने के कारण पूंजी का संचय का निर्माण होता है।" लुईस का मत है कि अर्द्धविकसित देशों में मानवीय श्रम सस्ता होता है और उसकी पूर्ति आसानी से हो जाती है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि जीवन निर्वाह क्षेत्र से अधिकाधिक मात्रा में मानवीय श्रम प्राप्त किया जाये और उन्हें ऊंची मजदूरी का प्रलोभन देकर औद्योगिक क्षेत्र की ओर स्थानांतरित किया जाये। लुईस के मॉडल की तीन प्रमुख बातें ये है:

(अ) ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा औद्योगिक क्षेत्र में मजदूरी की दर चाहे थोड़ी अधिक हो, पर निश्चित हो।

(ब) औद्योगिक श्रम में विनियोग अधिक किया जाये, भले ही वह जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में न हो, तथा

(स) श्रमिकों को प्रशिक्षित करने की लागत पूरे समय तक समान बनी रहनी चाहिए। यदि हम लुईस के विचार को स्वीकार कर लें तो विकास प्रक्रिया की स्थिति चित्र के अनुसार होगी।

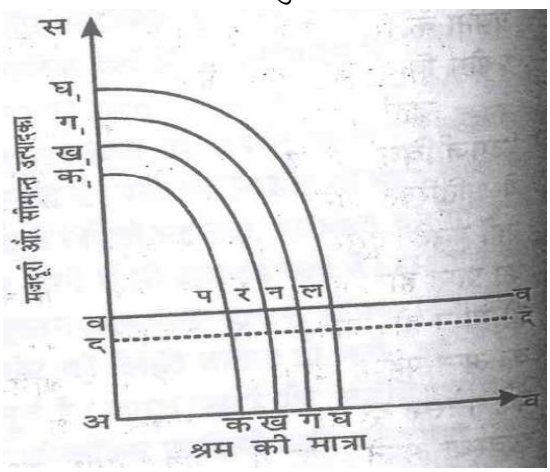

चित्र में, द द रेखा औसत जीवन निर्वाह आय और व व रेखा पूंजीवादी मजदूरी दर है। शुरू में अ क श्रमिकों के लिए औद्योगिक अथवा पूंजीवादी क्षेत्र में श्रम की उत्पादकता क प है। स्पष्ट है कि प्रचलित मजदूरी के ऊपर व प क अतिरेक है। जब इस अतिरेक को पुनः विनियोजित कर दिया जाता है तो उत्पादकता बढ़कर ख र हो जाती है। और अ ब श्रमिकों को रोजगार प्राप्त होता है। अब पूंजीवादी क्षेत्र में अतिरेक की मात्रा व र ख है, जो पहले से

अधिक हैं इसका पुनः विनियोजन उत्पादकता वक्र तथा रोजगार मे वृद्धि लाएगा और यह क्रिया तब तक चलती जाएगी, जब तक श्रम अतिरेक समाप्त नहीं हो जाएगा।

इस प्रकार पूंजीवादियों द्वारा अर्जित लाभों में से पूंजी का निर्माण होता है। परंतु कृषकों और श्रमिकों की प्रति व्यक्ति आय अपरिवर्तित बनी रहती है और विकास के संपूर्ण लाभ पूंजीपतियों को ही प्राप्त होते हैं।

लुईस का मत है कि आर्थिक विकास की ऐसी प्रक्रिया अनिश्चित काल तक नहीं चल सकती। इस प्रक्रिया के रूक जाने के संबंध में लुईस ने अग्रलिखित दशाएं बताई है:

1. यदि पूंजी निर्माण के परिणामस्वरूप कोई अतिरिक्त श्रम न बचे।
2. जबकि पूंजीवादी क्षेत्र का विस्तार इतनी तीव्र गति से हो, जिससे पिछड़े प्राथमिक क्षेत्र या निर्वाह क्षेत्र में जनसंख्या बहुत कम रह जाने से इसकी सीमांत उत्पादकता बढ़ जाये, जिसके फलस्वरूप निर्वाह क्षेत्र और पूंजीवादी क्षेत्र दोनों में मजदूरी का स्तर ऊंचा हो जाये।
3. जबकि निर्वाह क्षेत्र में उत्पादन की नई प्रविधि अपनाई जाये, जिससे पूंजीवादी क्षेत्र में भी वास्तविक मजदूरी बढ़ जाये।
4. जबकि पूंजीवादी क्षेत्र का निर्वाह क्षेत्र की तुलना में तेजी से विस्तार होने पर खाद्यान्न आदि की कीमतें बढ़ जाने के कारण व्यापार की शर्ते पूंजीवादी क्षेत्र में प्रतिकूल हो जाएं और उन्हें श्रमिकों को अधिक मजदूरी देनी पड़े।
5. जबकि पूंजीवादी क्षेत्र में श्रमिक ऊंची मजदूरी के लिए आंदोलन करें और उसमे सफल हो जाएं। उपर्युक्त परिस्थितियों में पूंजीवादी क्षेत्र का आधिक्य, जो अर्द्धविकसित देशों में श्रम की असीमित पूर्ति के कारण उत्पन्न होता है, समाप्त हो जाता है और पूंजी निर्माण की दर कम हो जाती है। **लुईस** के शब्दों में, ***"विकास की यह प्रक्रिया उस समय समाप्त हो जाएगी और वह नीति उस समय प्रभावपूर्ण नहीं होगी, जबकि पूंजी निर्माण की वृद्धि, मात्रा व दर, जनसंख्या व दर, जनसंख्या की वृद्धि दर के बराबर हो जाएगी। अगर मजदूरी बढ़ने दी गयी तो यह नीति और पहले ही प्रभावहीन हो जाएगी।"***

प्रो0 लुईस के मॉडल का प्रधान गुण यह है कि यह बहुत स्पष्ट ढंग से विकास प्रक्रिया की व्याख्या करता है और यह स्पष्ट करता है कि उन अद्धविकसित देशों में पूंजी निर्माण किस प्रकार होता है, जहां श्रम का बाहुल्य और पूंजी की दुर्लभता होती है।

13.3.1.4.3 प्रो0 लैबिन्स्टीन की विचारधारा

प्रो0 हार्वे लैबिन्स्टीन ने पुस्तक में अर्द्धविकसित देशों के संबंध मे एक वाद या थीसिस को जन्म दिया है, जिसे 'न्यूनतम आवश्यक प्रयत्नवाद' कहते हैं। अपने इस ग्रंथ में लैबिन्स्टीन ने भारत, इंडोनेशिया आदि उन अर्द्धविकसित देशों की समस्याओं का अध्ययन किया है, जिनमें जनसंख्या का घनत्व अधिक है। लैबिन्स्टीन का मत है कि अर्द्धविकसित देशों में केवल प्रति व्यक्ति आय बढ़ने पर ही जन्म दर कम होगी अर्थात् पहले आर्थिक विकास होगा फिर जन्म दर घटेगी। लैबिन्स्टीन के शब्दों में, "बिना आर्थिक विकास के कोई भी प्रत्यक्ष तरीके जन्म दर नियंत्रण में सफल नहीं हो सकते।' वास्तव में उनके यह विचार माल्थस के विचारों के ठीक विपरीत है। लैबिन्स्टीन का मत है कि अधिक जनसंख्या वाले अर्द्धविकसित देशों मे तीव्र आर्थिक विकास तभी संभव हो सकता है, जबकि शुरू में अधिक आय उत्पन्न करने वाले विनियोग कार्यक्रमों को शुरू किया जाय। वैसे भी अर्द्धविकसित देशों के प्रारंभिक विकास काल में बड़ी मात्रा में विनियोग करने की आवश्यकता होती है, ताकि राष्ट्रीय आय में तीव्र गति से वृद्धि हो सके। अतः इस दृष्टि से किये गये प्रयासों के दो लाभ होंगेः (अ) जनसंख्या वृद्धि की दर गिरेगी और, (ब) फलस्वरूप इस प्रथम अवस्था के बाद आर्थिक विकास का कार्य सुगम हो जाता है। प्रो0 लैबिन्स्टीन का विचार आर्थिक जगत में 'न्यूनतम आवश्यक प्रयत्न सिद्धान्त' से जाना जाता है। स्पष्टतः लैबिन्स्टीन के मतानुसार जनसंख्या की इस ऊंची दर को नियंत्रित करने और प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि करके

जनसंख्या वृद्धि की दर को घटाने के लिए न्यूनतम आवश्यक प्रयत्नों की आवश्यकता है। इसी तथ्य को नीचे चित्र द्वारा स्पष्ट किया गया है:

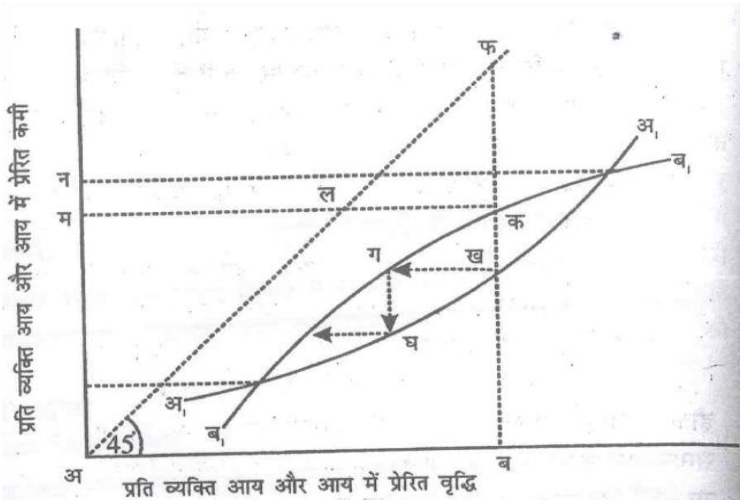

चित्र में

(i) व, ब, रेखा उत्तेजक तत्व को प्रदर्शित करती है जो प्रति व्यक्ति आय को बढ़ाते हैं, अर्थात् आय वृद्धि रेखा या विकासवर्द्धक रेखा है।

(ii)अ, अ, रेखा पीछे धकेलने वाले तत्व को प्रदर्शित करती है अर्थात् जनसंख्या रेखा बाधक रेखा है।

(iii) अ प स्तर जीवन निर्वाह स्तर है, अर्थात् ट बिंदु पर अ, वक्र और ब, वक्र बराबर है तथा अर्थव्यवस्था आर्थिक दुश्चक्र के चंगुल में फंसी रहती है।

(iv) अगर आय में वृद्धि होती है, जैसे अ प से बढ़कर अ म हो जाती है, जो न्यूनतम आवश्यकता प्रयत्न के अनुरूप नहीं हैं, तो जनसंख्या वृद्धि इस आय को समाप्त कर देगी और अर्थव्यवस्था पुन: जीवन निर्वाह स्तर पर आ जाएगी, क्योंकि यहां पर आय में वृद्धि करने वाली शक्तियों की अपेक्षा आय को घटाने वाली शक्तियाँ अधिक प्रभावपूर्ण हैं। जब प्रति व्यक्ति आय अ म हो जाती हैं, तो इस बिन्दु पर आय बढ़ाने वाली शक्ति केवल क फ है, जबकि आय घटाने वाली शक्तियां ख फ हैं। इसलिए आय घटकर ट बिन्दु अर्थात जीवन साम्य बिन्दु पर पुनः आ जाती है।

(v) इस समस्या के हल के लिए प्रति व्यक्ति आय की दर इतनी बढ़नी चाहिए कि राष्ट्रीय आय में वृद्धि की दर, जनसंख्या वृद्धि दर को पीछे छोड़ दे। ऐसा प्रति व्यक्ति आय के स्तर को अ न से अधिक होने पर ही हो सकता है। अतः अगर हम प्रथम बार में ही इतना न्यूनतम आवश्यक मात्रा मे विनियोग कर दें कि प्रति व्यक्ति आय अ न स्तर तक पहुंच जाए, तो हम आर्थिक दुश्चक्र के जाल से निकल जायेंगे। यहाँ से जनसंख्या में वृद्धि की दर कम होना शुरू हो जाती है, अर्थात् च बिंदु के बाद जनसंख्या रेखा पीछे की ओर मुड़ने लगती है। अतः निरंतर आर्थिक विकास की स्थिति मे अर्थव्यवस्था को पहुंचाने के लिए यह आवश्यक है कि पूंजी विनियोग ही निश्चित न्यूनतम स्तर से अधिक हो, जो स्वयं प्रेरित आय घटाने वाली शाक्तियों पर काबू पाने योग्य प्रति व्यक्ति आय का उच्चस्तर प्रदान करे । प्रो0 लैबिन्स्टीन के न्यूनतम आवश्यक प्रयत्न के सिद्धांत ने अर्थशास्त्रियों और अद्धविकसित देशों में योजना बनाने वालो का ध्यान आकर्षित किया है। यह सिद्धांत अधिक व्यावहारिक है क्योंकि अर्द्धविकसित देशों में औद्योगीकरण के लिए पूंजी की कमी के कारण एक बार ही बड़ा धक्का देना कठिन होता है, जबकि अर्थव्यवस्था को सतत् विकास के मार्ग पर लाने के लिए न्यूनतम आवश्यक प्रयत्न सिद्धांन उचित ढंग से समय समय पर थोड़ा थोड़ा विकास करने का समर्थन करता है। यह सिद्धांत प्रजातंत्रात्मक योजना से भी मेल खाता है, जिससे अधिकाशं

अर्द्धविकसित देश सम्बद्ध हैं। परंतु यह सिद्धांत भी बहुत व्यावहारिक नहीं है। अर्द्धविकसित देशों मे न्यूनतम स्तर के आवश्यक प्रयत्नों हेतु वांछिज मात्रा में विदेशी सहायता, प्रशिक्षित श्रम व विकसित तकनीक आदि उपलब्ध न होने के कारण ये देश आवश्यक औद्योगिक विनियोग करने में भी असमर्थ रहते हैं। इसके अतिरिक्त कोई भी अर्द्धविकसित देश जन्म दर को घटाने के लिए प्रति व्यक्ति आय में न्यूनतम आवश्यक स्तर से अधिक वृद्धि होने तक प्रतीक्षा नहीं कर सकता, क्योंकि हो सकता है तब तक देश में जनसंख्या विस्फोट की स्थिति उत्पन्न हो जाये। इतना ही नहीं लैबिन्स्टीन ने जनसंख्या को एक विशुद्ध आर्थिक घटक माना है, जो कि त्रुटिपूर्ण है। कारण यह है कि अर्द्धविकसित देशों में जनसंख्या एक सामाजिक व धार्मिक समस्या है, जिस पर रीति-रिवाज, धर्म व सांस्कृतिक प्रवृत्तियों आदि का प्रभाव पड़ता है। जिस देश में " पुत्र पैदा होने पर पिता को सब कष्टों से छुटकारा मिल जाता हो, पोते के जन्म से वह अमर हो जाता हो और परपोते के अवतार लेते ही व स्वर्ग का अधिकारी बन जाता हो', भला ऐसे देश में आय वृद्धि किस प्रकार जनसंख्या वृद्धि को सीमित कर सकती है।

13.3.1.4.4 जनांकिकीय संक्रमण का सिद्धान्त

जनांकिकीय संक्रमण के सिद्धान्त में आर्थिक विकास से सम्बन्धित जन्म और मृत्यु दरों की तीन अवस्थाएं स्वीकार की गई हैं: जनांकिकीय संक्रमण की प्रथम अवस्था इस सिद्धान्त के अनुसार घटिया भोजन, अविकसित सफाई व्यवस्था और प्रभावशाली डाक्टरी की सहायता के अभाव के कारण कृषि अर्थव्यवस्था की प्रथम अवस्था में मृत्यु-दर ऊंची होती है। इस अवस्था में व्यापक निरक्षरता, परिवार नियोजन के तरीकों के विषय में ज्ञान के अभाव, छोटी आयु में विवाह परिवार के आकार के विषय में दृढ़ सामाजिक विश्वासो और प्रथाओं तथा बच्चों के प्रति मनोभाव इत्यादि के कारण जन्म-दर ऊंची होती है। इसके अतिरिक्त आदिमकालीन समाज में बड़े परिवार के आर्थिक लाभ भी होते हैं, "बच्चे छोटी अवस्था से ही काम में हाथ बटाने लगते हैं और माता-पिता के लिए उनके बुढ़ापे में सुरक्षा का परम्परागत स्त्रोत होते हैं। मृत्यु की, विशेषतः शिशु मृत्यु की ऊंची दर से यह संकेत मिलता है कि अधिक बच्चे उत्पन्न करके ही उक्त सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है।" ऐसे समाज मे जनसंख्या वृद्धि दर वास्तव में अधिक ऊंची नहीं होती क्योंकि उच्च जन्म-दर को उच्च मृत्यु-दर संतुलित कर देती है। यह अवस्था अधिक जनवृद्धि की संभावना की अवस्था है किन्तु इसमें वास्तविक वृद्धि कम होती है। जनांकिकीय संक्रमण की द्वितीय अवस्था । आय के स्तर में वृद्धि के परिणामस्वरूप जनता अपने भोजन में सुधार करने के योग्य हो जाती है। आर्थिक विकास के कारण सर्वांगीण सुधार होता है जिसमें परिवहन का सुधार भी समाविष्ट है। परिवहन के कारण मृत्यु-दर में कमी के कारण प्रथम अवस्था की उच्च-वृद्धि संभावना द्वितीय अवस्था में उच्च वास्तविक वृद्धि बनकर प्रकट होती है। उच्च जन्म-दर और घटती हुई मृत्यु-दर के कारण द्वितीय अवस्था में परिवार का औसत आकार बड़ा हो जाता है। जनांकिकीय संक्रमण की तृतीय अवस्था ठसके अतिरिक्त आर्थिक विकास के कारण अर्थव्यवस्था का स्वरूप कषक से परिवर्तित होकर अंशतः औद्योगिक हो जाता है। औद्योगीकरण में वृद्धि के परिणामस्वरूप जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों से औद्योगिक और वाणिज्यिक केन्द्रों की ओर स्थानान्तरित होने लगती है। शहरी जनसंख्या में वृद्धि और "स्त्रियों के लिए घर से बाहर आर्थिक कार्यों के विकास के परिणामस्वरूप आथिक गतिशीलता की संभावना बढ़ जाती है जिसे छोटे परिवारों के सहारे भली-भांति प्राप्त किया जा सकता है। परिणामतः बड़े परिवार की आर्थिक लाभकारिता कम हो जाती है। आर्थिक विकास का एक लक्षण विशेष रूप से बढ़तस हुआ नगरीकरण है और ग्रामों के विपरीत नगरों में बच्चे अमूल्य निधि नहीं, भार समझे जाते हैं।" उचित जीवन-स्तर बनाये रखने की चेतना औद्योगिक अर्थव्यवस्था में परिवार छोटा करने की प्रेरणा देती है। इस प्रकार तृतीय अवस्था की विशेषताएं हैं: निम्न जन्म-दर, निम्न मृत्यु-दर, छोटा परिवार और जनसंख्या वृद्धि की निम्न दर। यह जनसंख्या में कमी की अवस्था है। इन तीनों अवस्थाओं से उच्च जन्म-दर और उच्च मृत्यु दर वाली अर्थव्यवस्था में रूपान्तर व्यक्त होता है। जब कोई अर्थव्यवस्था जनांकिकीय संक्रमण की प्रथम अवस्था से द्वितीय

अवस्था में प्रवेश करती है तो घटती हुई मृत्यु दर किन्तु अपेक्षाकृत स्थिर जन्म-दर के कारण उनमें असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह देखा गया है कि मृत्यु-दर का नियंत्रण अपेक्षाकृत सरल है क्योंकि मृत्यु-दर घटाने के उपाय बहिर्जात होने के कारण जनता उन्हें तत्परातपूर्वक स्वीकार कर लेती है। किन्तु जन्म-दर में कमी के लिए अन्तर्जात तत्वों को परिवर्तित करना पड़ता है। इसीलिए जनांकिकीय विकास की दूसरी अवस्था को जनसंख्या विस्फोट की अवस्था कहा गया है। विकासमान अर्थव्यवस्था के लिए यह अवस्था सर्वाधिक संकटमय होती है। इसलिए द्वितीय अवस्था में मृत्यु-दर मे कमी होने के कारण असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है जिसे सुधारने के लिए संक्रमण की अवधि अपेक्षित होती है। इस प्रकार इस सिद्धान्त को जनांकिकीय संक्रमण सिद्धान्त कहा गया है:

संक्रमणकाल मे जनांकिकीय तत्वों में असामंजस्य उत्पन्न हो जाता है। नए जनांकिकीय तत्वों उपस्थित होते है जो समाज का स्वरूप परिवर्तित कर देते है। जन्म-दर और मृत्यु-दर निम्न स्तर पर सन्तुलित हो जाती है जिसके परिणास्वरूप जनसंख्या वृद्धि की दर भी कम हो जाती है। इस प्रकार किसी समाज के जनांकिकीय विकास का निर्णय परिवार के आकार और जनसंख्या में वृद्धि की दर के सम्बन्ध मे जन्म और मृत्यु-दर के स्तर और परिवतेनों के रूप में किया जा सकता है।

13.3.1.4.5 भारत में जनसंख्या का आकार और वृद्धि दर

आज भारत के पास विश्व के कुल भू-क्षेत्र का 2.4 प्रतिशत भाग है किन्तु उसे विश्व की कुल जनसंख्या के 16 प्रतिशत का पालन-पोषण करना पड़ता है। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ पर भारत की जनसंख्या 23.6 करोड़ अनुमानित की गई और 1981 की जनगणना के अनुसार यह 68.3 करोड़ आंकी गई। 1991 तक भारत की जनसंख्या 84.4 करोड़ और 2008 में 115.4 करोड़ हो गयी।

तलिका 1: भारत में जनसंख्या की वृद्धि दर |

जनगणना वर्ष	जनसंख्या करोडों में	10 वर्षीय वृद्धि या कमी करोडों में	दशक में प्रतिशत वृद्धि या कमी
1891	23.6		
1901	23.6	0.0	0.0
1911	25.2	+1.6	+5.7
1921	25.1	-0.1	-0.3
(1891-1921)		+1.5	+0.19
1931	27.9	+2.8	+11.0
1941	31.9	+4.0	+14.2
1951	36.1	+7.2	+13.3
1921-1951		+11.0	+1.22
1961	43.9 +	7.8	+21.5
1971	54.8	+10.9	+24.8
1981	68.3	+13.5	BB+24.7
1951-1981		+32.4	+2.14
1991	84.6	+16.1	+23.9
2001	102.9	+18.3	+21.5
2011	121.0	+18.1	+17.6

1981-2011		52.7	+1.91
जनसंख्या वृद्धि दर (वार्षिक)			
1891-1921			0.19
1921-1951			1.22
1951-1981			2.15
1981-1991			2.11
1991-2001			1.93
2001-2011			1.64

भारत की जनसंख्या की वृद्धि दर को चार अवधियों में विभक्त किया जाता है

1891-1921 अवरूद्ध जनसंख्या

1921-1951 : मर्यादित वृद्धि

1951-1981 : तीव्र ऊंची वृद्धि दर

1981-2011: उच्च वृद्धि परन्तु मन्द होने के स्पष्ट चिन्ह

30 वर्षों की पहली अवधि (1891 से 1921) के दौरान भारत की जनसंख्या जो 1891 में 23. 6 करोड़ थी, बढ़कर 1921 में 25.1 करोड़ हो गई इस काल के दौरान जन्म-दर एवं मृत्यु-दर लगभग बराबर थी। इस काल में भारत जनांकिकीय संक्रमण की प्रथम अवस्था में था। 30 वर्षों की दूसरी अवधि में भारत की जनसंख्या जो 1921 में 25.1 करोड़ थी, बढ़कर 1951 मे 36.1 करोड़ हो गई अर्थात् इसमें 11 करोड़ की वृद्धि हुई। जनसंख्या की चक्रवृद्धि दर 1. 22 प्रतिशत प्रति वर्ष थी जो मर्यादित ही समझी जा सकती है। जनसंख्या की वृद्धि दर में उन्नति का मुख्य कारण मृत्यु –दर का 49 प्रति हजार से गिरकर 27 प्रति हजार हो जाना था। मृत्यु-दर में कमी का मुख्य कारण व्यापक महामारियों अर्थात् प्लेग, चेचक, हैजा आदि पर नियंत्रण था जो बड़े पैमाने पर मौतों का कारण बनती थीं। इस काल में भारत ने जनांकिकीय संक्रमण की दूसरी अवस्था में प्रवेश करना आरंभ कर दिया था। 30 वर्षों की तीसरी अवस्था 1951 से 1981 के दौरान, भारत की जनसंख्या जो 1951 में 36. 1 करोड़ शब्दों में इन तीस वर्षों की अवधि में जनसंख्या में 32.2 करोड़ की वृद्धि का रिकार्ड कायम हो गया। इस अवधि में जनसंख्या चक्रवृद्धि दर 2.14 प्रतिशत प्रतिवर्ष थी जो पिछली अवस्था से लगभग दुगुनी थी। आयोजन के प्रारंभ के साथ, अस्पतालों और चिकित्सा सुविधाओं का बड़े पैमाने पर विस्तार किया गया और मृत्यु-दर नियंत्रण के उपायों ने मृत्यु-दर को और तेजी से कम किया और यह 15 प्रति हजार हो गयी, परन्तु जन्म-दर बड़ी सुस्ती से 40 से 36 प्रति हजार ही कम हुई। परिणामतः इस अवधि में जनसंख्या विस्फोट हआ। 1981 और 2001 के दौरान, भारत जनसंख्या वृद्धि के चौथे चरण मे प्रवेश कर गया है। भारत की कुल जनसंख्या जो 1981 में 68.3 करोड़ थी बढ़कर 2001 में 102.7 करोड़ हो गयी जो 20 वर्षों की अवधि में लगभग 50 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाती है। 1981-2001 के दौरान जनसंख्या की औसत वार्षिक वृद्धि दर 2.05 प्रतिशत थी। 1991-2001 के दौरान जनसंख्या की वृद्धि दर कम होकर 1.93 प्रतिशत हो गयी। 2001-2011 के बीच यह दर घटकर 1.64 प्रतिशत प्रतिवर्ष ही रह गई।

तलिका 2: भारत में औसत जन्म व मृत्यु-दर

अवधि	**जन्म-दर** (प्रति हजार)	मृत्यु-दर (प्रति हजार)
1889-1901	45.8	44.4
1901-1911	48.1	42.6
1911-1921	49.2	48.6

1921-1931	46.4	36.3
1931-1941	45.2	31.2
1941-1951	39.9	27.4
1951-1961	740.0	18.0
1961-1971	41.2	19.2
1971-1980	37.2	15.0
1985-1986	32.6	11.1
2009-2010	22.1	7.2

भारत मे जनसंख्या वृद्धि की तीव्र गति की व्याख्या जन्म और मृत्यु की दर के परिवर्तन के आधार पर की जा सकती है। भारत में जन्म-दर और मृत्यु-दर निम्नलिखित रही हैं

तलिका 2 से स्पष्ट हो जाता है कि 1921 से पूर्व भारत में विद्यमान जन्म और मृत्यु की ऊंची दर के कारण जनसंख्या वृद्धि नियंत्रित थी। 1901-1921 के बीच जन्म-दर 46 और 49 के बीच तथा मत्य-दर 42 और 49 के बीच घटती-बढती रही। तदनरूप जनसंख्या वृद्धि बहुत कम या नगण्य नही। किन्तु 1921 के पश्चात् मृत्यु-दर में स्पष्ट गिरावट हुई। 1911-21 में मृत्यु-दर के विपरीत जन्म-दर जन्म-दर में बहुत थोड़ी कमी हुई है। परिणामतः समय के साथ साथ उच्च जन्म-दर और गिरती हुई मृत्यु-दर के बीच अन्तर बढ़ गया जो उच्च जीवित-शेष दर के रूप में प्रकट हुआ। इस प्रकार जनसंख्या वृद्धि की ऊंची दर की व्याख्या जन्म की निरन्तर उच्च दर किन्तु मृत्यु की अपेक्षाकृत तेजी से गिरती हई दर के आधार पर की जा सकती है। परिवार नियोजन अभियान के परिणामस्वरूप, जन्म-दर सन् 2009-10 तक गिर कर 22.1 प्रति हजार हो गयी। इसी काल के दौरान मृत्यु-दर गिर कर 7.2 प्रति हजार के स्तर पर पहुंच गयी। परिणामतः समय के साथ-साथ उच्च जन्म-दर ओर गिरती हुई मृत्यु-दर के बीच अन्तर बढ़ गया और इसके फलस्वरूप जीवित-शेष दर में उच्च वृद्धि हुई। अतः जनसंख्या की तीव्र वृद्धि दर की व्याख्या उच्च जन्मदर एवं गिरती हुई मृत्युदर के रूप में की जा सकती है। चूंकि मृत्यु-दर उन्नत सफाई व्यवस्था, सार्वजनिक स्वास्थ्य उपायों और "इन्लुएंजा, हैजा, प्लेग जैसी महामारियों के नियंत्रण आदि बाहिर्जात तत्वों पर निर्भर रहती है, अतः इसका नियंत्रण अपेक्षाकृत सरलता से किया जा सकता है किन्तु इसकी तुलना में जन्म-दर अन्तर्जात तत्वों पर, यथा विवाह विषयक दृष्टिकोण, परिवार का आकार, गर्भनिरोधकों का प्रयोग, नौकरी मे सन्तोष और यौन सम्बन्धों आदि पर निर्भर करती है। अतः परिवार नियोजन कठिन समस्या है तथा जन्म-दर मे कमी के लिए दीर्घ अवधि और निरन्तर प्रयत्न की आवश्यकता होती है। 1921 से पूर्व भारत जनांकिकीय संक्रमण की प्रथम अवस्था मे था, किन्तु 1921 के पश्चात् भारत जनांकिकीय संक्रमण की दसरी अवस्था में प्रवेश कर चुका है। इस अवस्था में जनसंख्या की उच्च वृद्धि की संभावना वास्तविक वृद्धि के रूप में प्रकट हो रही है। यह आशा की जा रही है कि थोड़े समय के पश्चात् भारत जनांकिकीय संक्रमण की तीसरी अवस्था में प्रवेश कर जाएगा। राज्यों से सम्बन्धित जन्म तथा मृत्यु-दर सम्बन्धी आंकड़ों से पता चलता है कि केरल, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, महाराष्ट्र और गुजरात मे जन्म-दर 25 प्रति हजार से कम हो चुकी है। इस प्रकार से ये राज्य जनांकिकीय संक्रमण की तृतीय अवस्था में प्रवेश कर गए हैं। इसके विरूद्ध, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार और मध्य प्रदेश में जन्म-दर 31-34 प्रति हजार के उच्च स्तर पर कायम है। ये राज्य जनांकिकीय संक्रमण की द्वितीय अवस्था में है परन्तु इनमें भारत की कुल जनसंख्या का 44 प्रतिशत निवास करता है। जब तक इन राज्यों में परिवार नियोजन कार्यक्रमों का प्रभाव व्यक्त नहीं होता, तब तक समग्र भारत जनांकिकीय संक्रमण की तृतीय अवस्था में प्रवेशज्ञ नहीं कर सकता। यह बड़ी अजीब बात है कि हरियाण जो प्रति व्यक्ति आय की दृष्टि से दो नम्बर पर है, वह भी जन्म-दर को कम करने में काफी पीछे है।

13.3.2.0 आर्थिक विकास का जनसंख्या पर प्रभाव

आर्थिक विकास की प्रक्रिया में किसी देश की श्रम शक्ति द्वारा अपने यहां के भौतिक संसाधनों का उपयोग सन्निहित रहता है ताकि देश की उत्पादन संभावना सिद्ध की जा सके। इसमे सन्देह नहीं कि विकास प्रयत्नों में देश की श्रम-शक्ति का सक्रिय योगदान रहता है किन्तु यह भी उतना सत्य है कि तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या विकास प्रक्रिया को मन्द कर देती है। बढ़ती हुई जनसंख्या आर्थिक संसाधनों के लिए अनेक रूप में बाधक सिद्ध होती है। इस सम्बन्ध में समस्या का अध्ययन रोचक विषय होगा।

13.3.2.1 जनसंख्या और राष्ट्रीय एवं प्रतिव्यक्ति आय की वृद्धि दर

980-81 और 2000-01 के दौरान, शद्ध राष्ट्रीय उत्पादन की औसत वार्षिक वद्धि दर 5.4 प्रतिशत और प्रति व्यक्ति उत्पाद आय की वृद्धि दर 3.4 प्रतिशत थी। यह आशा की जा रही है कि आगामी तीन दशकों में जनसंख्या की वृद्धि दर और गिर कर 1.5 प्रतिशत प्रति वर्ष हो जाएगी। परिणामतः प्रति व्यक्ति आय की शुद्ध वृद्धि बढ़ जाएगी। जनसंख्या की उच्च वृद्धि दर पिछले वर्षों में प्रति व्यक्ति आय के स्तर को ऊंचा उठाने में अवरोधक ही रही है।

13.3.2.2 जनसंख्या और खाद्य संभरण

जबसे माल्थस ने अपना प्रसिद्ध ग्रंथ "ऐसे ऑन पापुलेशन' रचा तब से जनसंख्या बनाम खाद्य संभरण की समस्या पर ध्यान केन्द्रित हो गया। इसमें सन्देह नहीं कि भारत में प्रति व्यक्ति कृषि योग्य क्षेत्र क्रमशः कम होता जा रहा है। 1921 से 2001 के बीच प्रति व्यक्ति कृषि क्षेत्र 1.11 एकड़ से घटकर 0.32 एकड़ रह गया जिसका अभिप्राय 71 प्रतिशत की कमी है। आगामी दशकों में जीवित-शेष दर बढ़ने के कारण प्रति व्यक्ति कृषि भूमि काफी कम हो जाएगी। परिणामतः कृषि भूमि व्यक्ति कृषि भूमि काफी कम हो जाएगी। परिणामतः कृषि भूमि-व्यक्ति अनुपात में कमी की क्षतिपूर्ति के लिए उत्पादिता बढ़ाने के लिए प्रयत्न करना अनिवार्य होगा।

तालिका 10

वर्ष	जनसंख्या(करोड़ में)	खाद्यान्नों का शुद्ध उत्पादन (करोड़ टन)	प्रति व्यक्ति उत्पादन (ग्रामों में)	प्रति व्यक्ति उपलब्धि(ग्रामों में)
1961	439	82.0	512	469
1971	543	108.4	547	469
1981	683	129.6	520	455
1991	846	176.4	571	510
2001	1029	196.8	524	146
2011	1210	235.0	532	NA

1956 और 1997 के बीच चाहे खाद्यान्नों का शुद्ध उत्पादन 627 लाख टन से बढ़कर 1,770 लाख टन हो गया अर्थात् इसमे 182 प्रतिशत वृद्धि हुई परन्तु खाद्यान्नों की प्रति व्यक्ति उपलब्धि 431 ग्राम से बढ़कर 509 ग्राम हो गई अर्थात् इसमें 41 वर्षों में केवल 18 प्रतिशत की नाममात्र वृद्धि हुई। चूंकि 1997-2002 के दौरान खाद्यान्न उत्पादन की वृद्धि दर मन्द रही, इसलिए 2011 में खाद्यान्नों का प्रतिव्यक्ति उपभोग कम हो कर 436 ग्राम हो गया। प्रति व्यक्ति उपलब्धि में नाममात्र वृद्धि का कारण जनसंख्या की वृद्धि है। 2011 में खाद्यान्नों की प्रतिव्यक्ति उपलब्धि और कम हो कर 436 ग्राम हो गयी, चूंकि अधिक जनसंख्या वृद्धि गांवो में होती है, इस कारण कुल खाद्य उत्पादन में पारिवारिक उपभोग का भाग बढ़ जाएगा जिसके परिणाम के तौर पर विक्रय अतिरेक काफी कम बचेगा। इन आशंकाओं के कारण परिवार–परिसीमन की आवश्यकता और अधिक प्रबल प्रतीत होती है। उपरोक्त

तालिका से स्पष्ट है कि 1961 और 2011 के बीच खाद्यान्नों (अन्य एवं दालों) का कुल उत्पादन 820 लाख टन से बढ़ कर 2350 लाख टन पहुंच गया, यानि 187 प्रतिशत की वृद्धि। लेकिन इसी कालखंड मे जनसंख्या भी 43.9 करोड़ से बढ़कर 121 करोड़ तक पहुंच गयी, यानि 176 प्रतिशत की वृद्धि । इसलिए कालखंड में प्रति व्यक्ति खाद्यान्नों का उत्पादन 512 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन से बढ़कर मात्र 532 ग्राम तक ही पहुंच पाया। लेकिन यह प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता का सूचक नहीं है। प्रति व्यक्ति उपलब्धता जानने के लिए हमें उत्पादन में आयातों को जोड़ना होगा और सरकारी भंडारों में पड़े खाद्यान्न को घटाना होगा, इसके साथ ही साथ 12.5 प्रतिशत खाद्यान्न पशओं के चारे. बीज और अन्य उपयोगों मे आते हैं, जो खाद्यान्न उपलब्धता में शामिल नहीं होते। इसलिए प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता मात्र 436 ग्राम की आंकी गई है।

13.3.2.3 जनसंख्या और बेरोजगारी

बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ-साथ समाज की श्रम-शक्ति में वृद्धि होती है। परिणामस्वरूप, बेरोजगारी की समस्या और अधिक जटिल हो जाती है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 55 वें रौंद के आधार पर यह पता चला है कि बेरोजगार व्यक्तियों की संख्या जो 1993-94 में 2013 लाख थी बढकर 1999-2000 में 265.8 लाख हो गयी। श्रम-शक्ति के अनुपात के रूप में, बेरोजगारी दर जो 1993-94 में 6.0 प्रतिशत थी, बढ़ कर 1999-2000 में 7.32 प्रतिशत हो गयी। दसवीं योजना की मध्यावधि समीक्षा के अनुसार 2004-05 में बेरोजगारी की दर बढ़ कर 8.3 प्रतिशत हो गयी है। परम एवं सापेक्ष दोनों रूपों में बेरोजगार व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि से जाहिर होता है, कि आयोजन के पिछले 50 वर्षों में अवशिष्ट बेरोजगारों को तो समोने की बात ही क्या. पंचवर्षीय योजनाएं श्रम शक्ति में शुद्ध वृद्धि को खपाने में भी असमर्थ रही है। स्पष्ट है कि राष्ट्रीय साधनों का एक बड़ा अंश रोजगार के अवसरों का विस्तार करने में व्यय हो जाएगा ताकि जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के अनवरत दबाव के परिणामस्वरूप श्रमिकों की बढ़ती हुई संख्या और अवशिष्ट बेरोजगारों को काम में लगाया जा सके।

13.3.2.4जनसंख्या और शिक्षा, डाक्टरी सहायता तथा आवास का भाग

बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण बालकों की संख्या में वृद्धि होती है जिसके परिणामस्वरूप शिक्षा पर अधिक व्यय आवश्यक हो जाता है। इसमें सन्देह नहीं कि शिक्षा पर किया गया व्यय मनुष्यों पर किया गया ऐसा व्यय है जो अन्ततः श्रमिकों की उत्पादिता में वृद्धि करता है किन्तु इस बात पर बल देना होगा कि इस सम्बन्ध में समयान्तर काफी लम्बा होने के कारण विनियोग की प्रति इकाई द्वारा उत्पाद मे वृद्धि पर प्रभाव बहुत कम पड़ता है। प्रत्येक छात्र पर 144 रूपये वार्षिक व्यय का अनुमान लगाया गया है। 1991 में 5 से 14 वर्ष तक के आयु वर्ग में 2,090 लाख व्यक्तियों के होने के कारण शिक्षा व्यय में 3,010 करोड़ रूपये वार्षिक वृद्धि होगी। इसके साथ-साथ यदि माध्यमिक स्तर के स्कूलों से निकलने वाले छात्रों के दबाव के परिणामस्वरूप विश्वविद्यालय शिक्षा पर व्यय में होने वाली वृद्धि को भी जोड़ लिया जाए, तो शिक्षा पर व्यय में वृद्धि और भी अधिक हो जाएगी। इसके अतिरिक्त, डाक्टरी देखभाल और सर्वजानिक स्वास्थय पर भी और अधिक विनियोग करना पड़ेगा। केवल इतना ही नहीं, अतिरिक्त जनसंख्या के लिए आवास की व्यवस्था भी करनी होगी।

13.3.2.5 जनसंख्या वृद्धि और पंजी-निर्माण

प्रति व्यक्ति वास्तविक आय के विद्यमान स्तर को बनाए रखने के लिए रय आवश्यक है कि राष्ट्रीय आय में उसी दर से वृद्धि हो जिस दर से जनसंख्या में वृद्धि हो रही है। भारत में जनसंख्या वृद्धि की वार्षिक वर्तमान दर 1.5 प्रतिशत है। प्रति व्यक्ति वास्तविक आय के विद्यमान स्तर को स्थिर रखने के लिए यह आवश्यक है कि राष्ट्रीयआय में 1.5 प्रतिशत वार्षिक दर से वद्धि हो। इस लक्ष्य की सिद्धि के लिए पंजी निवेश आवश्यक है। भारतीय अर्थव्यवस्था में पूंजी-उत्पाद अनुपात 4.1 आंका गया है जिसका अर्थ यह है कि उत्पाद की एक इकाई की वृद्धि के लिए 4.1 इकाई पूंजी आवश्यक है। इस प्रकार राष्ट्रीय आय में 1.5 प्रतिशत की दर से वृद्धि के लिए

6.2 प्रतिशत (अर्थात् 1.5 x 4.1) पूंजी-संचय आवश्यक है। इस विवेचन से स्पष्ट रूप में यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि जनसंख्या में 1.5 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि संदर्भ में लगभग 6.2 प्रतिशत दर से निवेश अपेक्षित है। इसका अर्थ यह है कि जनता का जीवन स्तर उन्नत करने के लिए बहुत कम पूंजी शेष रह जाती है। इन सब बातों से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि विकास के लाभ भारत की गरीब जनता तक नहीं पहुंच पाते। इसके लिए बहुत से कारण उत्तदायी ठहराये जा सकते है, जैस भूमि तथा अन्य सम्पत्ति के स्वामित्व का अन्यायपर्ण ढांचा. समाज के निर्धन वर्गों के उत्थान के लिए निर्देशित उपायों पर कम बल और भारत में पिछले दो दशकों के दौरान आर्थिक विकास की धीमी गति। परन्तु इस सब कारणों के साथ जनसंख्या की वृद्धि भी एक महत्वपूर्ण कारण है।

13.4 जनसंख्या नीति

जनसंख्या वृद्धि की अधिकता का निर्मण इस तथ्य से किया जा सकता है कि इसमें 1991-2001 में लगभग 18.3 करोड़ की वृद्धि हुई। 2001 में भारत वी जनसंख्या लगभग 102.7 करोड़ हो गई। जनसंख्या वृद्धि की चिन्तनीय दर को देखते हुए यह आवश्यक है कि जनसंख्या वृद्धि की दर को कम करने के लिए ठोस जनसंख्या-नीति अपनाई जाए। परिवार नियोजन कार्यक्रम और पंचवर्षीय योजनाएं चाहे भारत पहला देश था जिसने 1952 में परिवार नियोजन कार्यक्रम को औपचारिक रूप में स्वीकार किया, परन्तु जनसंख्या वृद्धि पर गंभीर चिन्तन तीसरी योजना में आरंभ हुआ और जनसंख्या वृद्धि की दर को उचित समय-अवधि के अन्दर सीमित करने का निर्णय किया गया। इसके पश्चात् विभिन्न नीति सम्बन्धी प्रलेखों में लक्ष्य निर्धारित किए गए। तालिका 12 में निश्चित लक्ष्य और वास्तविक उपलब्धि का सारांश दिया गया है। 1983 में राष्ट्रीय स्वास्थय नीति की घोषणा में सन् 2000 तक रूक्ष जन्मदर को 21, मृत्यु दर को 9 और शुद्ध प्रजनन दर को। तक लाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इसके साथ-साथ शिशु मृत्यु दर को 60 प्रति हजार से कम करने और परिवार नियोजन उपायों का प्रयोग करने वाली दम्पत्तियों का अनुपात 60 प्रतिशत तक बढ़ाने का लक्ष्य तय किया गया। इस नीति को छठी योजना में 1995 तक के लिए लक्ष्य माना गया। तालिका 11 जनसंख्या सम्बन्धी लक्ष्य और वास्तविक उपलब्धि |

वर्ष	रूक्ष जन्मदर निश्चित लक्ष्य	लक्ष्य प्राप्त करने का निर्धारित वर्ष	वास्तविक उपलब्धि
1962	25	1973	34.6
1968	23	1978-79	33.3
1974	30	1979	33.7
1976	30	1978-79	33.3
1977	25	1983-84	33.7

किन्तु हाल ही में की गयी समीक्षा से संकेत मिला कि यह लक्ष्य 2006-11 की अवधि में पूरा हो सकेगा। केवल आठवीं योजना के दौरान 1997 तक रूक्ष जन्म दर को 26 प्रति हजार तक लाने का लक्ष्य लगभग प्राप्त कर लिया गया। परिवार नियोजन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित उपाय अपनाए गए।

(i) परिवार नियोजन सम्बन्धी जानकारी बढ़ाने के लिए प्रेरणा प्रोग्राम परिवार नियोजन का संदेश प्रत्येक नगर तथा गांव में फैलाने के लिए जन प्रचार के सभी माध्यमों अर्थात् समाचार-पत्रों, रेडियो, टी.वी. फिल्मों आदि का विस्तृत रूप में प्रयोग किया गया ताकि परिवार नियोजन परिसीमन सम्बन्धी चेतना जगाई जा सके।

(ii) ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या के सभी वर्गों को गर्भनिरोधकों का संभरण बढ़ाना।

(iii) वन्ध्यकरण या नसबन्दी करवाने वाले व्यक्तियों को नकद इनामों के रूप में वित्तीय प्रोत्साहन देना।

(iv) पुरूषों एवं स्त्रियों पर वन्ध्यकरण या नसबन्दी का विस्तृत प्रयोग। भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम में किसी एक उपाय का ही आश्रय नहीं लिया गया बल्कि कैफेटेरिया प्रणाली अपनाई गई जिसके अधीन गर्भनिरोधक के विज्ञान द्वारा स्वीकृत सभी उपायों का प्रयोग किया गया। इनमें मख्य उपाय थे. वन्ध्यकरण या नस डी., झिल्ली, मौखिक गोली आदि। इन उपायों के अतिरिक्त कुछ हद तक सरकार शिक्षा और करने में विश्वास रखती थीं जनता के शिक्षा स्तर को ऊंचा करने से जन्म-दर को कम करने पर प्रभाव पड़ता है। ऐसा विशेष रूप में स्त्री-जनसंख्या के शिक्षित होने पर होता है। "भारत मे किए गए अध्ययनों से इस तथ्य का समर्थन हुआ है कि जनन-दर का शिक्षा और आर्थिक विकास से सम्बन्ध है। छोटा परिवार रखने और गर्भनिरोधकों को सफलतापूर्वक अपनाने की प्रेरणा उन वर्गों में सबसे अधिक बलवती है जो शिक्षित और आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न है।"

13.4.1 आपात काल के दौरान जनसंख्या नीति

16 अप्रैल, 1976 को सरका ने राष्ट्रीय जनसंख्या नीति की घोषणा की। इस नीति का आधार यह था कि जनसंख्या विस्फोट एक गम्भीर संकट का रूप धारण कर गया है और जनसंख्या को सीमित करना हमारी सबसे महत्वपूर्ण राष्ट्रीय समस्या है। इस समस्या के समाधान के लिए सीधा प्रहार करना होगा। इस जनसंख्या नीति के मुख्य लक्षण थे।

(i) सरकार ने विवाह की न्यूनतम आयु लड़कियों के लिए 18 वर्ष और लड़कों के लिए 21 वर्ष करने का विधान बनाया।

(ii) चूंकि गरीब वर्गों द्वारा परिवार नियोजन की स्वीकार्यता का मौद्रिक क्षतिपूर्ति से महत्वपूर्ण सम्बन्ध है, इस जनसंख्या नीति में मई, 2976 से मौद्रिक क्षतिपूर्ति बढ़ा दी गयी।

(iii) जबरन नसबन्दी के प्रश्न पर सरकार का मत था कि वह देशभर के लिए केन्द्रीय अधिनियम द्वारा जबरन नसबन्दी लागू करने का इरादा नहीं रखती किन्तु यदि कोई राज्य सरकार यह निर्णय करे कि इसके लिए उपयुक्त समय आ गया है तो वह ऐसा कर सकती है। राष्टीय जनसंख्या नीति की घोषणा के फौरन बाद सरकार ने देश में आपातकालीन परिस्थितियों का लाभ उठाने हुए जबरन नसबन्दी का महाभियान चलाया। 1976-77 के दौरान, 43 लाख नसबन्दियों के लक्ष्य के विरूद्ध 82 लाख नसबन्दियों की गयी। जबरन नसबन्दी के प्रोग्राम में यह तेजी एक ओ तो जबरी उपयों और दूसरी ओर प्रोत्साहन की सहायता से लायी गयी। आम जनता ने यह महसूस किया कि प्रशासन का बल जबरन नसबन्दी लागू करने के लिए इस्तेमाल किया गया। चूंकि प्रशासन को लक्ष्य-प्रेरित पद्धति पर कार्य करना पड़ता था, इस कारण प्रशासन द्वारा अपनी शक्ति का बड़े पैमाने पर दुरूपयोग किया गया और बड़े पैमान पर "नसबन्दी शिविरों" पर लोगों को जबरदस्ती घेर कर लाया गया। आपात काल के बाद परिवार नियोजन जबरदस्ती के पक्ष को व्यागकर उसे परिवार कत्याण के साथ जोड़ा गया।

13.4.2 राष्ट्रीय जनसंख्या नीति

राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार ने 15 फरवरी, 2000 को राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 की घोषणा की जिसका उद्देश्य दो-बच्चों के मानक को प्रोत्साहित करना था ताकि सन् 2046 तक जनसंख्या को स्थिर किया जा सके। राष्ट्रीय जनसंख्या नीति के मुख्य लक्ष्य निम्नलिखित है:प्रथम सरकार ने यह निर्णय किया है कि संविधान के 42वें संशोधन के अनुसार 1971 की जनगणना के आधार पर लोकसभा के अनुसार 1971 की जनगणना के आधार पर लोकसभा की सीटों पर लगाए गए प्रतिबन्ध को जो सन् 2001 तक मान्य था, सन् 2026 तक बढ़ा दिया जाए। यह इसलिए किया गया कि तमिलनाडु और केरल जैसे राज्यों जिन्होंने छोटे परिवार के मानक का प्रभावी रूप में अनुसरण किया है को दण्डित न किया जाए और उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और राजस्थान जैसे राज्यों को लोकसभा में अधिक सीटें देकर पुरस्कृत न किया जाए। अतः लोकसभा सीटों को सन् 2026 तक जड़ीकृत करने का उद्देश्य जनसंख्या नीति की उपेक्षा करने वाले राज्यों को पुरस्कार न देना है और जो राज्य छोटे

परिवार के मानक का सफलतापूर्वक पालन करते रहे हैं, उन्हें दण्ड न देना था। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय जनसंख्या नीति में सन् 2046 तक स्थिर जनसंख्या का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित उपायों का उल्लेख किया गया है : 1.प्रति 1000 जीवित जन्मे बच्चों के लिए शिशु मृत्युदर को 30 से कम करना,
2.मातृ मृत्युदर को 1, 00,000 जीवित जन्मों के लिए 100 से भी कम करना,
3.सर्वव्यापक प्रतिरक्षण
4. 80 प्रतिशत प्रसवों के लिए प्रशिक्षित स्टॉफ के साथ नियमित डिस्पेन्सरियों, अस्पतालों और चिकित्सा संस्थाओं का प्रयोग करना,
5.एड्स के बारे में सूचना उपलब्ध कराना, संक्रामिक रोगों का प्रतिबंधन और नियंत्रण करना,
6.दो बच्चों के छोटे परिवार के मानक को अपनाने के लिए प्रोत्साहन देना,
7.सुरक्षित गर्भपात की सुविधाओं को बढ़ाना
8.शिशु विवाह प्रतिबन्ध कानून ओर जन्म–पूर्व लिंग-निर्धारण तकनीक कानून का काड़ई से पालन करना,
9.लड़कियों की विवाह आयु को 18 वर्ष के ऊपर उठाना और बेहतर तो यह है कि इसे 20 वर्ष से भी अधिक करना,
10.ऐसी स्त्रियों को जो 21 वर्ष की आयु के पश्चात् विवाह करें और दूसरे बच्चे के जन्म के पश्चात् गर्भधारण समाप्ति करने के उपाय को स्वीकार कर ले, विशेष पुरस्कार देना,
11.चिकित्सा की भारतीय पद्धति का प्रजनन और बाल स्वास्थ्य सेवाओं का व्यवस्था के लिए समन्वय करना,
12.गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले ऐसे व्यक्तियों को जो दो बच्चों के पश्चात् बन्ध्यकरण या नसबन्दी करवा लेते हैं, स्वास्थ्य बीमा उपलब्ध कराना।
13.जनसंख्या नीति के कार्यान्वयन पर निगरानी रखने के लिए प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में जनसंख्या पर एक राष्ट्रीय आयोग नियुक्त करना। इसका उद्देश्य जनसंख्या नियंत्रण की समस्याओं के बारे में अधिक ध्यान केन्द्रित करना है। चूंकि भारत 100 करोड़ जनसंख्या के निशाने को पहले ही पार कर चुका है इसलिए राष्ट्रीय जनसंख्या नीति सन् 2010 तक परिवार नियोजन उपायों को तेज कर इसे 110 करोड़ तक सीमित करना चाहती है। अगले 10 वर्षों के लिए इसके लिए जो कार्य-योजना तैयार की गयी है, उसमें निम्नलिखित बातें शामिल की गयी है:क.ग्राम पंचायत स्तर पर स्वयं सहायता समूहों जिनमें अधिकतर गृहणियां शामिल हैं, स्वास्थ्य देखभाल करने वाले कामगारों और ग्राम पंचायतों के साथ विचार-विमर्श करना। ख.प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य बनाना होगा। ग.जन्म और मृत्यु के साथ विवाहों और गर्भ के पंजीकरण को अनिवार्य बनाना होगा। सरकार यह आशा करती है कि सन् 2046 तक जनसंख्या स्थिरीकरण के उद्देश्य को प्राप्त कर सकेगी। अभी फौरी रूप में आधारसंरचना को उन्नत करने के लिए 3.000 करोड रूपये का अतिरिक्त प्रावधान किया गया है ताकि गर्भ निरोध का अभी तक न पूरी की गयी जरूरतों की ओर ध्यान दिया जा सके। मोटे तौर पर जनसंख्या नीति को सही दिशा में कदम माना गया है। माईकल ब्लैसौफ, यू. एन. एफ. पी. ए. के प्रतिनिधि ने उल्लेख किया है: "यह नीति सरकार की जनसंख्या सम्बन्धी चिन्ताओं का स्पष्ट प्रमाण हैं।' इस नीति में जबरी उपायों का प्रयोग न करके "सकारात्क उपायों" पर अधिक निर्भरता रखी गयी है। किन्तु आलोचकों का आरोप है कि नयी जनसंख्या नीति परिवार–परिसीमन का सारा भारत "स्त्रियों' पर डाल रही है। भारतीय परिवार नियोजन संस्था की अध्यक्ष डा. नीना पुरी ने सरकार की आलोचना करत हुए कहाः "यह नीति पुरूष-सहयोग पर "नरम" है। नयी नीति का सन्देश यह है कि जनसंख्या नियंत्रण का भार स्त्रियां सहेंगी और पुरूष बड़ी आसानी से इसके द्वारा मुक्त कर दिए गए है।" नीति में केवल स्त्रियों के लिए गर्भधारण की समाप्ति के उपायों को स्वीकार करने के लिए प्रोत्साहनों की व्यवस्था है। यह कहीं बेहतर होता यदि नीति में दो बच्चों के बाद नसबन्दी कराने के लिए पुरूषों को भी इस प्रकार के प्रोत्साहन

उपलब्ध कराए जाते। इस तर्क में काफी बल है और सरकार को प्रोत्साहनों के बारे में संशोधन करना चाहिए ताकि परिवार के दोनों साझीदारों-पुरूष एवं स्त्री पर जनसंख्या नियंत्रण का भार समान रूप से डाला जा सके।

13.6 अभ्यास प्रश्न

1. "अति जनसंख्या वृद्धि आर्थिक प्रगति की समस्याओं में से एक सबसे कठिन समस्या रह जाती है" (डेविड रॉकफैलर) । इस कथन की समीक्षा भारत के संदर्भ में कीजिए।
2. जनसंख्या और आर्थिक विकास पर एक आलोचनात्मक टिप्पणी लिखिए।
3. विकासशील देशों के आर्थिक विकास पर जनसंख्या की भूमिका स्पष्ट कीजिए।

13.7 संदर्भ सहित ग्रंथ

- सिन्हा, बी. सी. एंव पुष्पा सिन्हा (2011), "जनांकिकी के सिद्धान्त", मयूर पेपर बैक्स, नई दिल्ली।
- चौबे, पी. के. (2000), "भारत में जनसंख्या नीति", कनिष्ट प्रकाशन, नई दिल्ली।
- मिश्र, प्रकाश (2012), "जनांकिकी', साहित्य भवन पब्लिकेशन, दिल्ली।
- Quoted by Bhale Rao in Bhartiya Krishi Arthanshastr.
- P.K. Wattal: Population Problem in India.
- 6.Sax Kaal, The Population, Explosion, Foreeign Policy Association.

13.8 उपयोगी / सहायक ग्रंथ

- अग्रवाल, एस. एन. (1972), "भारत की जनसंख्या समस्या', टाटा मैक्ग्रा हिल कम्पनी, मुम्बई।
- दत्त, रूद्र एवं के. पी. एम. सुन्दरम (2010), "भारतीय अर्थ व्यवस्था', एस. चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।